हिन्दी-समिति के प्रकाशन

गुजराती साहित्य का इतिहास	६·५०
पाली साहित्य का इतिहास	५·००
तेलुगु साहित्य का इतिहास	६·००
मलयालम साहित्य का इतिहास	४·००
बंगला साहित्य का इतिवृत्त	५·५०
उर्दू भाषा और साहित्य	७·५०
संस्कृत आलोचना	५·५०
अंग्रेजी उपन्यास का विकास	८·००
अंग्रेजी भाषा और साहित्य	३·५०
फ्रेन्च साहित्य का इतिहास	७·००
रूसी साहित्य का इतिहास	७·००
अंग्रेजी साहित्य का इतिहास	७·००
भारतीय आर्य भाषाएं	१०·००
भारत का भाषा सर्वेक्षण भाग १, ६, ६	१६·५०
पश्चिमी आलोचना शास्त्र	८·५०
ईशावास्य रहस्य	२·५०
तत्वज्ञान	५·००
भारतीय दर्शन	८·००
पश्चिमी दर्शन	४·००
शुद्ध बुद्धि मीमांसा	६·००
आभास और सत्	११·००
मानव बुद्धि संबंधी विवेचन	३·५०
पदार्थ शास्त्र	८·००
मानवीय ज्ञान के सिद्धान्त	८·५०
योग दर्शन	६·००
स्पिनोजा : नीति	६·५०
चिद्बिन्दु विद्या	५·५०
तत्त्व मीमांसा	८·००
प्रतीक शास्त्र	१०·००

हिन्दी-रेखाचित्र

हिन्दी समिति ग्रन्थमाला संख्या—१७१
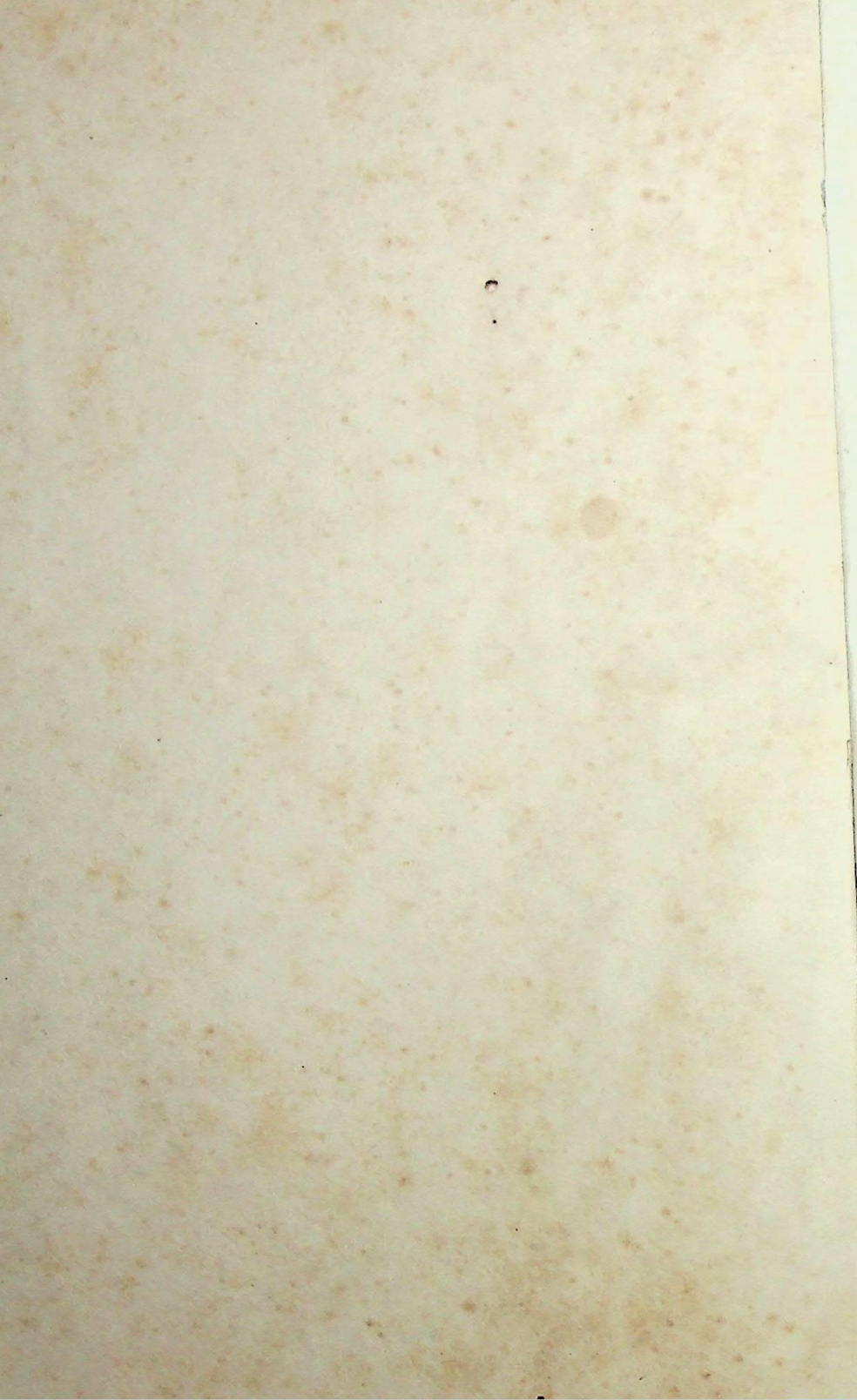
हिन्दी-रेखाचित्र

लेखक
डा. हरवंशलाल शर्मा
एम. ए., पी-एच. डी., डी. लिट्.
अध्यक्ष,
हिन्दी-विभाग, मु. विश्वविद्यालय, अलीगढ़

हिन्दी समिति
सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश
लखनऊ

हिन्दी के मूर्धन्य रेखाचित्रकार

पं. श्रीराम शर्मा

की

पुण्य स्मृति में

प्रकाशकीय

हिन्दी में साहित्यिक गद्य-लेखन अर्वाचीन काल की देन है। विश्वविद्यालयों के स्नातक एवं स्नातकोत्तर शिक्षा-क्रम में हिन्दी साहित्य के एक विषय के रूप में सम्मिलित हो जाने के बाद से हिन्दी-गद्य शैली का उत्तरोत्तर विकास हो रहा है। लेखन की उन विधाओं का अब उसमें समावेश हो चुका है, जो पाश्चात्य देशों की भाषाओं में सदियों पूर्व आ चुकी थीं। ऐसी ही एक विधा 'रेखाचित्र' भी है, जो कहानी, निबंध, एकांकी की भाँति अपने लघु आकार एवं कलात्मकता के कारण हिन्दी लेखकों द्वारा रुचिपूर्वक अपनायी गयी है। अंग्रेजी के 'स्केच' को हिन्दी में 'रेखाचित्र' नाम दिया गया है, जिसमें किसी विशेष व्यक्ति के चरित्र, स्वभाव और गुणों का कलात्मक वर्णन रहता है। व्यक्ति ही क्यों, किसी घटना या दृश्य को लेकर जो शब्द-चित्र तैयार किया जाता है, उसे भी प्रायः यही संज्ञा दी जाती है। वाग्विदग्धता और यथार्थवादिता किसी भी स्केच या रेखाचित्र की विशेषता होती है।

डा. हरवंशलाल शर्मा ने इस पुस्तक में रेखाचित्रों की व्याख्या करते हुए विभिन्न प्रकार के नमूने देकर विषय को बड़े आकर्षक ढंग से समझाया है। साथ ही उन्होंने संक्षेप में यूनान, इंग्लैण्ड आदि देशों में इसके समारम्भ एवं इतिहास तथा भारत की विभिन्न भाषाओं में इसके प्रचलन और लोकप्रियता का परिचय भी कराया है। डा. शर्मा ने हिन्दी गद्य के पूर्व हिन्दी पद्य में रेखाचित्र के काव्यमय रूपों के उदाहरण देकर विषय को रोचकता प्रदान की है। यह पुस्तक हिन्दी साहित्य-प्रेमियों और विद्यार्थियों, दोनों ही के लिए पठनीय एवं ज्ञानवर्धक है।

लीलाधर शर्मा 'पर्वतीय'
सचिव, हिन्दी समिति

प्राक्कथन

हिन्दी में रेखाचित्र के उद्भव और विकास पर स्वतन्त्र रूप से 'हिन्दी-रेखाचित्र' शीर्षक पुस्तक प्रस्तुत करते हुए सन्तोष का अनुभव हो रहा है। पुस्तक का लेखन हिन्दी समिति, उत्तर प्रदेश सरकार की योजनानुसार लगभग चार वर्ष पूर्व प्रारम्भ किया गया था। उस समय तक इस विषय पर कुछ फुटकर लेखों के अतिरिक्त कोई व्यवस्थित सामग्री नहीं थी, यद्यपि बाद में इस विषय पर ही एक लघु प्रबन्ध प्रकाशित हुआ।

हिन्दी में गद्य की नवीन विधाओं में 'रेखाचित्र' का प्रमुख स्थान है। आरम्भ में इसको कहानी, निबन्ध आदि के साथ ही सम्मिलित कर लिया जाता था। इस शताब्दी के तीसरे-चौथे दशक से इसका स्वतन्त्र विकास हुआ है। बनारसीदास चतुर्वेदी, महादेवी वर्मा तथा रामबृक्ष बेनीपुरी इस क्षेत्र में मूर्धन्य स्थान प्राप्त किये हुए हैं। अभी हम यह तो नहीं कह सकते कि हिन्दी में गार्डिनर कौन हैं पर श्रीरामजी की कृति 'बोलती प्रतिमा' को सगर्व विश्वसाहित्य के समक्ष रख सकते हैं। हमें दुःख है कि इस पुस्तक के प्रकाशित होने से पूर्व ही वह हमसे बिछुड़ गये।

हिन्दी में इस विधा का स्वतन्त्र अस्तित्व है और उसके समग्र साहित्य को हमें जुटाना चाहिए। अनेक अच्छे तथा समर्थ लेखकों के रेखाचित्र जो पत्र-पत्रिकाओं में बिखरे पड़े हैं संगृहीत होने चाहिए। हिन्दी में अभी तक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित सामग्री की विषयानुसार तथा लेखकानुसार सूचियां उपलब्ध नहीं हैं।

पुस्तक के प्रारम्भ में 'विधा' को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है, अन्य विधाओं से रेखाचित्र का संबंध भी स्थापित किया गया है। अंग्रेजी में रेखाचित्र विधा काफी आगे बढ़ चुकी है अतएव अंग्रेजी में इस विधा का संक्षिप्त इतिहास प्रस्तुत करने में डा. फूलबिहारीजी ने हमारी सहायता की है।

भारतीय भाषाओं में 'रेखाचित्र' का प्रसार भी पर्याप्त हो चुका है। बंगला में परशुराम, राजशेखर बोस अनुपम तथा अद्वितीय हैं। गुजराती में श्रीमती लीलावती मुंशी के रेखाचित्र बहुत प्रसिद्ध हैं। तमिल में भी पर्याप्त अच्छे रेखाचित्र मिल जाते हैं। चाहते हुए भी हम अधिक विस्तार से इस क्षेत्र में अधिक सामग्री नहीं दे सके। मलयालम तथा कन्नड़ की सूचनाओं के लिए हम क्रमशः डा. अर्जुनन तथा श्री सोमशेखर 'सोम' के आभारी हैं। मराठी में इस विधा में लिखी 'व्यक्ति आणि वल्ली'

(ले. पु. ल. देशपाण्डे) पुस्तक पर भारत सरकार की साहित्य अकादमी ने पुरस्कार प्रदान कर प्रकारान्तर से इस विधा को स्वीकृति प्रदान की है। आवश्यकता इस बात की है कि अब हम भारतीय परिवेश में सोचें और 'भारतीय भाषाओं में रेखाचित्र के उद्भव और विकास' पर स्वतन्त्र पुस्तक की योजना बनायी जाय।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इस दिशा में 'हंस' तथा 'मधुकर' पत्रों ने रेखाचित्र के विशेषांक प्रकाशित किये थे, जिनकी प्रतियाँ इन पत्रों के तत्कालीन संपादकों (श्रीपतिराय, बनारसीदास चतुर्वेदी तथा यशपाल जैन) के पास से भी हमें उपलब्ध नहीं हो सकीं। काफ़ी प्रयास के बाद 'हंस' का रेखाचित्रांक हमें अपने विभागीय सहयोगी डा. फूलबिहारी शर्मा के निजी पुस्तकालय से प्राप्त हुआ। 'मधुकर' का रेखाचित्रांक आगरा, क. मुं. हिन्दी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ के हस्तलिखित विभाग के अधिकारी श्री उदयशंकरजी शास्त्री के निजी संग्रह में मिला। हंस, प्रतीक, हिमालय, मधुकर, सरस्वती आदि की पुरानी फाइलें भी शास्त्री जी के निजी पुस्तकालय से ही प्राप्त की गई, जिनमें से १२५ अच्छे रेखाचित्र हमको प्राप्त हुए जिनका रेखाचित्र के विकास में ऐतिहासिक महत्त्व है। इसके लिए हम दोनों सज्जनों के हृदय से आभारी हैं।

हिन्दी-समिति के अधिकारियों के प्रति भी हम कृतज्ञता प्रकट करना चाहते हैं जिन्होंने इस उपेक्षित विधा पर स्वतन्त्र पुस्तक की योजना स्वीकार की। जिन लेखकों ने अपनी कृतियाँ या सूचनाएँ भेजकर इस पुस्तक को पूर्णता प्रदान करने में योग दिया है उनके प्रति भी हम कृतज्ञता प्रकट करना चाहते हैं। इस विधा के वयोवृद्ध लेखक श्री बनारसीदास जी चतुर्वेदी समय-समय पर अपने सुझाव भेजते रहे हैं जिनसे प्रेरणा मिलती रही है।

पुस्तक के अन्त में रेखाचित्र साहित्य की सूची भी प्रस्तुत कर दी गयी है जिससे इस विधा का महत्त्व स्वयंसिद्ध हो जाता है।

विषय-सूची

प्राक्कथन क–ख

प्रथम अध्याय

भूमिका : रेखाचित्र–स्वरूप और विश्लेषण १–१८

आविर्भाव, रेखाचित्र के लिए प्रयुक्त विभिन्न शब्द—तूलिका-चित्र, व्यक्ति-चित्र, चरित-लेख, शब्द-चित्र, परिभाषा—पाश्चात्य तथा भारतीय।

रेखाचित्र तथा अन्य साहित्यिक विधाएं—रेखाचित्र और कहानी, रेखाचित्र और निबंध, रेखाचित्र और जीवनी, रेखाचित्र और संस्मरण, रेखाचित्र और रिपोर्ताज, रेखाचित्र और आत्मकथा, रेखाचित्र और गद्यकाव्य, रेखाचित्र और मेमोयर्स, निष्कर्ष।

द्वितीय अध्याय

रेखाचित्र–उद्भव और विकास १६–४८

क–पाश्चात्य साहित्य (अंग्रेजी) में रेखाचित्र।

ख–भारतीय साहित्य (हिन्दीतर) में रेखाचित्र—

बंगला, असमिया, उड़िया, गुजराती, मराठी, पंजाबी, सिन्धी, तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम, उर्दू।

तृतीय अध्याय

हिन्दी-रेखाचित्र की पूर्वपीठिका ४६–६८

हिन्दी काव्य में रेखाचित्र।

हिन्दी उपन्यासों में रेखाचित्र।

चतुर्थ अध्याय

हिन्दी-रेखाचित्र का विकास ६९–१६४

प्रारम्भिक रेखाचित्रकार—पद्मसिंह शर्मा, श्रीराम शर्मा, बनारसीदास चतुर्वेदी, रामवृक्ष बेनीपुरी तथा महादेवी वर्मा

रेखाचित्र के विकास में पत्र––पत्रिकाओं तथा संकलनों का योगदान

१. हंस २. मधुकर ३. संकेत ४. विशालभारत ५. स्मृति-चित्र ६. आलोचना

पंचम अध्याय

हिन्दी-रेखाचित्र साहित्य का उत्कर्ष १६५–३१५

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', प्रकाशचन्द्र गुप्त, निराला, सत्यजीवन वर्मा 'भारतीय', राजा राधिकारमण सिंह, सत्यवती मल्लिक, वृन्दावनलाल वर्मा, शिवपूजन सहाय, इन्द्र विद्यावाचस्पति, विनोदशंकर व्यास, शिवचन्द्र नागर, शान्तिप्रिय, मावलंकर, गुलाबराय, श्रीप्रकाश, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, रामनाथ सुमन, जैनेन्द्र, कामेश्वर शर्मा, वासुदेवशरण, अज्ञेय, जर्नादिन झा' द्विज, बलराज साहनी, गंगाप्रसाद पाण्डेय, राय कृष्णदास, कृष्णानन्द गुप्त, विनयमोहन शर्मा, गोविन्ददास, सियारामशरण, देवेन्द्र सत्यार्थी, राहुल सांकृत्यायन, भदन्त आनन्द कौशल्यायन, यशपाल, उदय शंकर भट्ट, अमृतलाल नागर, हजारीप्रसाद द्विवेदी, नगेन्द्र, रामविलास शर्मा, विष्णु प्रभाकर, प्रभाकर माचवे, उपेन्द्र नाथ अश्क, जगदीश चन्द्र माथुर, पहाड़ी, अमृतराय, राम नारायण उपाध्याय, चतुरसेन शास्त्री, रांगेय राघव, भगवतशरण उपाध्याय, सुमित्रानन्दन पन्त, रामधारी सिंह दिनकर, ओंकार शरद, हर्षदेव मालवीय, लक्ष्मीचन्द्र जैन, महेन्द्र भटनागर, रामकुमार 'भ्रमर', महावीर त्यागी, यशपाल जैन, प्रेम नारायण टण्डन, अविनाश चन्द्र, राजेन्द्र लाल हाँडा, माखन लाल चतुर्वेदी, लक्ष्मीकान्त भट्ट, अक्षय-कुमार जैन, बैकुंठ नाथ महरोत्रा, मुक्तिबोध, उग्र, ऋषि जैमिनी कौशिक बरुआ, हिमांशु जोशी, शमशेरसिंह नरूला, अनन्त गोपाल शेवड़े, राम गोपाल विजयवर्गीय, मन्मथ नाथ गुप्त, सूर्य नारायण ठाकुर, निरंजन नाथ आचार्य, मदन वात्स्यायन, विष्णु अम्बालाल जोशी, भिक्खु, कृष्णा सोवती,

गोपीकृष्ण गोपेश, विद्यानिवास मिश्र, रामप्रकाश कपूर, चन्द्रमौलि बख्शी, रासबिहारी लाल, भवानी दयाल संन्यासी, कमलेश, कुमार विमल, कमला रत्नम, रामचन्द्र तिवारी, हंसराज रहबर, कुलभूषण, शिवानी, रसिक बिहारी ओझा 'निर्भीक', हवलदार त्रिपाठी सुहृदय, बी. पी. वैशम्पायन, सुरेन्द्र नाथ दीक्षित, मछिन्द्रनाथ, न. नागप्पा, कुन्दन लाल, कपिल, अमरनाथ, तेजबहादुर चौधरी, प्रकाश कुमार, रामखेलावन चौधरी, कुन्तल गोयल, शिवचन्द्र प्रताप, कृष्णा हठीसिंह, धर्मेन्द्र गुप्त आदि।

अन्य रेखाचित्रकार।

छठा अध्याय

रेखाचित्रों का वर्गीकरण ३१६-३३२

मनोवैज्ञानिक

ऐतिहासिक

तथ्य प्रधान या घटना प्रधान

वातावरण प्रधान

प्रभाववादी-प्रतीकवादी

हास्य-व्यंग्य प्रधान

व्यक्ति प्रधान

आत्मपरक

सातवां अध्याय

उपसंहार ३३३-३३४

परिशिष्ट

रेखाचित्र-साहित्य ३३५-३४२

निबंधों तथा पुस्तकों की सूची

अध्याय १

भूमिका
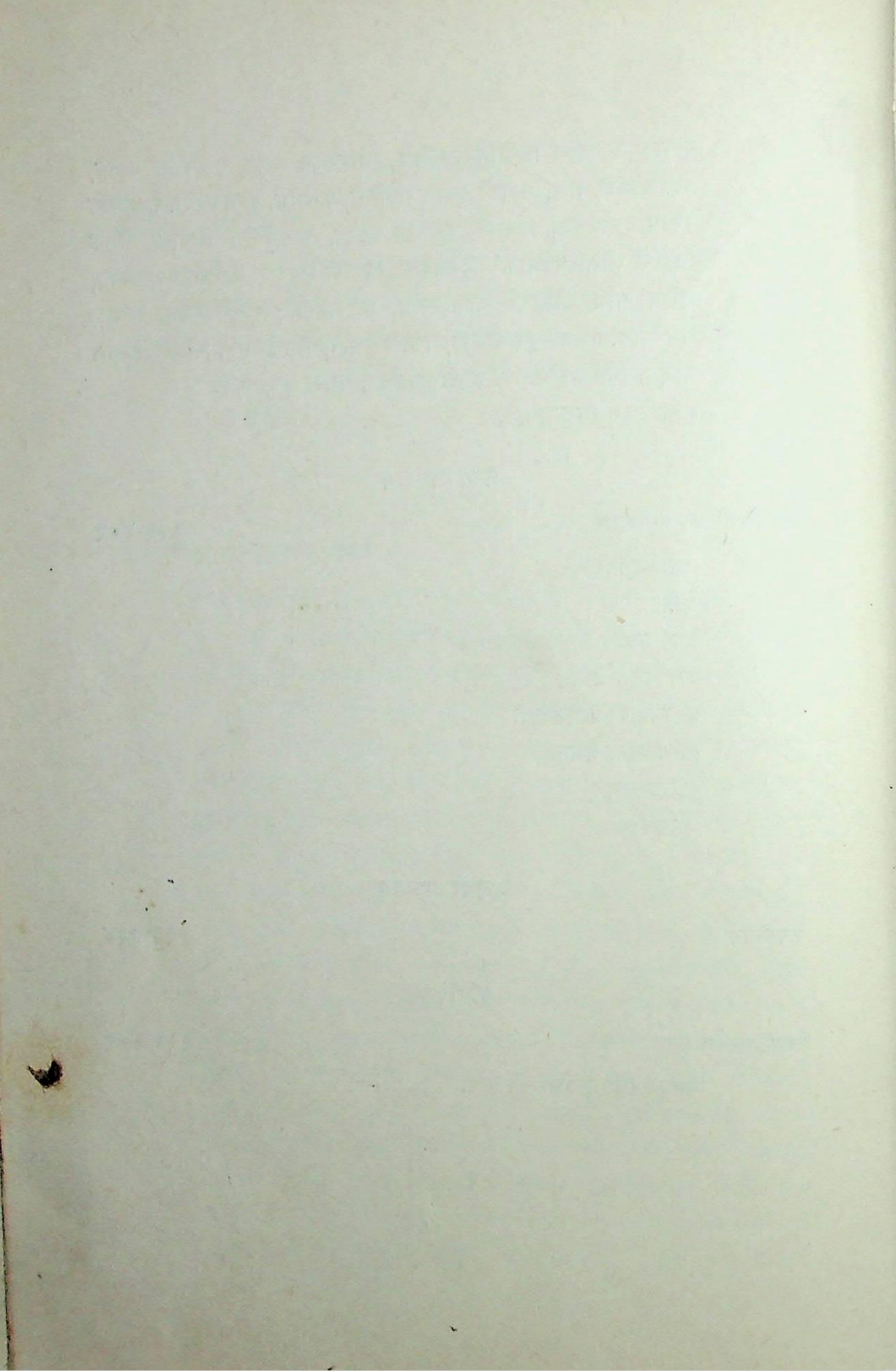
रेखाचित्र-स्वरूप और विश्लेषण

रेखाचित्र गद्य की एक नवीन विधा है जिसका आविर्भाव निबंध, कहानी, जीवनी आदि विधाओं के पश्चात् हुआ है। आधुनिक जीवन की परिस्थिति एवं व्यस्तता ने साहित्यकारों को इस नवीन विधा को अपनाने की प्रेरणा दी है। सामाजिक परिस्थितियां किसी विशेष विधा या उसके स्वरूप को कितना प्रभावित करती हैं, यह रेखाचित्र के विकास से जाना जा सकता है। जब परंपरागत विधाएं कलाकार की भावनाओं की सफल अभिव्यक्ति नहीं कर पातीं तो नवीन विधाओं की खोज की जाती है। इसी खोज के परिणामस्वरूप रेखाचित्र, एकांकी, रिपोर्ताज़, डायरी आदि नवीन विधाओं का प्रयोग किया गया है। इनमें से रेखाचित्र कहानी और निबंध की मध्यवर्तिनी भूमि पर स्थित हैं। रेखाचित्र न पूरी तरह से कहानी है और न निबन्ध, किन्तु इन दोनों के तत्त्वों का कुछ-न-कुछ समावेश उसमें अवश्य है। यही कारण है कि रेखाचित्र को जब तब निबंध की श्रेणी में रख दिया जाता है या उसकी गणना कहानियों में की जाती है।

रेखाचित्र कहानी की अपेक्षा एक ठोस और यथार्थवादी भूमि पर निर्मित होता है। उसमें कल्पना का आश्रय कम लिया जाता है। लेखक उन व्यस्त क्षणों में रेखाचित्र का निर्माण करता है जब अपनी भावनाओं को अलंकृत रूप में प्रस्तुत करने का उसके पास कोई अवकाश नहीं होता। यथार्थ परिस्थितियों से प्रभावित होकर लेखक अपने अनुभव को सीधे शब्दों में तीव्रता के साथ व्यक्त कर देना चाहता है। ऐसी विधाओं का जन्म संक्रान्तिकाल में होता है। यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति के युग में इन विधाओं का विकास हुआ। इसी प्रकार भारत में बीसवीं शताब्दी के तृतीय दशक में आर्थिक उथल-पुथल के समय रेखाचित्रों का आविर्भाव हुआ।

'रेखाचित्र' शब्द का प्रयोग हिन्दी में रेखाओं से बनाये हुए चित्र के लिए होता है। गुजराती में 'रेखाचित्र' का प्रयोग अंग्रेजी के 'Thumb-nail sketch' के लिए

होता है। मलायलन में 'तूलिका चित्र' शब्द भी चलता है। 'रेखाचित्र' के अर्थ में 'व्यक्तिचित्र', 'चरित-लेख', 'शब्द-चित्र' आदि अन्य शब्द भी हिन्दी में चलते हैं, परन्तु 'रेखाचित्र' ही सबसे अधिक उपयुक्त एवं सफल अर्थवाहक लगता है।

पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों ने रेखाचित्र की अनेक परिभाषाएं प्रस्तुत की हैं। रेखाचित्र की आधुनिक परिभाषा प्रस्तुत करते हुए 'ए हैंडबुक आफ़ लिटरेरी टर्म्ज़' में कहा गया है कि "स्केच या रेखाचित्र एक लघु नाटक, कहानी अथवा चरित्र-विवरण होता है।" नाटकीय स्केच, जो रेखाचित्र का एक प्रकार है, प्रायः सामाजिक घटनाओं के विद्रूपात्मक चित्रण से युक्त विशृंखल नाटकों की अथवा वेशभूषा प्रदर्शिनी की वस्तु हैं, जो हल्के, विनोदभव एवं व्यंग्यात्मक होते हैं। इसका ही अन्य प्रमुख प्रकार है साहित्यिक स्केच जो अत्यन्त लघु तथा विवरण प्रधान होते हैं।

इनमें किसी घटना, परिस्थिति अथवा चरित्र का विवरण होता है। चार्ल्स डिकिन्स के लघु लेख जिनका प्रकाशन "स्केचेज बाई बाज़" के नाम से हुआ, चरित्र सम्बन्धी साहित्यिक स्केचों के उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। वे अंग्रेजी साहित्य में सत्रहवीं शताब्दी में लिखे गये चरित्रों के समान हैं।[1]

रेखाचित्र की अधुनातन परिभाषा प्रस्तुत करते हुए 'ए रीडर्स गाइड टू लिटरेरी टर्म्स' में कहा गया है कि रेखाचित्र कहानी, नाटक या निबन्ध आदि विधाओं का अल्प विकसित रूप है, जिसमें इन विधाओं की विशेषताएं नहीं होतीं। इसके अत्यन्त सामान्य प्रकारों में चरित्र प्रधान रेखाचित्र, किसी आकर्षक व्यक्तित्व का लघु विवरण, सामयिक घटनाओं के विद्रूपात्मक चित्रण से विश्रृंखल, नाटक के

[1] Sketch—A short play-story or character description. Dramatic sketches are often used in vandeville, revues and variety shows. They are slight, generally humourous and topical and often satirical. Literary sketches may be narratives (short shorts) but are more often brief descriptions of an incident, a situation or a character. An example of the last is the series of short articles contributed by Dickens to the Evening Chronicle and other papers, and collected and published under the title Sketches by Boz. They resemble the character writing of the seventeenth century. *A Hand book of Literary Terms*—Comp H. L. Yellow etc.Angns & Robertson, London 1959, pp.188-89.

लिए रचित रेखाचित्र सामयिक प्रवृत्ति या घटना का विद्रूपात्मक चित्रण करने वाला सामान्य नाटिका गृहीत है ।[1]

उपर्युक्त परिभाषा के समान 'ए हैंड बुक टू लिटरेचर' में भी रेखाचित्र की परिभाषा दी गई है । इसके अनुसार किसी एक दृश्य, चरित्र या घटना को प्रस्तुत करने वाली सरल और सुगठित लघु रचना को रेखाचित्र माना गया है । इसकी सरलता के कारण इसमें कथानक अथवा चरित्रचित्रण विस्तृत नहीं होता । प्रारंभ में रेखाचित्र को किसी रचना का पूर्व रूप या उसका ढांचा मात्र माना जाता था । किन्तु अब रेखाचित्र से किसी ऐसी रचना का आशय होता है, जिसमें चरित्र अथवा वर्णन का प्राधान्य हो ।[2]

बीसवीं शताब्दी की ये परिभाषाएं, सत्रहवीं शताब्दी की परिभाषाओं से भिन्न हैं । सत्रहवीं शताब्दी में रेखाचित्र का विकास हो रहा था अतः तत्कालीन परिभाषाएं रेखाचित्र के विकाससमान रूप को प्रदर्शित करती हैं । उस समय के प्रसिद्ध रेखा चित्रकार ओवरबरी के मत से रेखाचित्र मिस्री चित्रलिपि के समान होता है, वह प्रभावशाली तथा सांकेतिक होता है क्योंकि इसमें गागर में सागर भरा जाता है । अंग्रेजों के दृष्टिकोण से चरित्र एक बहुरंगी चित्र होता है, जिसका छायांश एक रंग के प्रयोग द्वारा प्रभावशाली बनाया जाता है । यह वीणा के कई तारों पर त्वरित गति से एक

1 **Sketch**—A brief story, play or essay not a fully developed as the typical example of these genres. Among the commonest types are the character-sketch, a short description of an interesting personality, and the sketch composed for a revue, a simple playlet, satirizing some tropical trend or event. Karl Beckson and Arthur Ganz—*A Reader's Guide to Literary Terms,* 1961, pp. 204-5.

2 **Sketch**—A brief composition simply constructed and usually most unified in that it presents a single scene, a single character, a single incident. Its simplicity means that it lacks developed plot or any very great characterization. Originally used in the sense of an artist, sketch as preliminary ground work for more developed work, it is now often employed for a finished product of simple proportions as a character sketch, a vandeville sketch, a descriptive sketch etc. *A Hand book to Literature* by W. F. Thrall and A Hibbard, The Odyssey Press, New York 1961, p. 462.

साथ किये गये कोमल आघात के समान होता है, जिसका अंत एक संगीतमय ध्वनि के साथ होता है। सामान्य गीत में वाग्वैदग्ध्य का समावेश ही रेखाचित्र को जन्म देता है।[1]

किन्तु उसी युग के एक अन्य लेखक साल्टनस्टाल का मत है कि रेखाचित्र को एकदम सरल नहीं होना चाहिए। उसमें कुछ वक्रता भी होनी चाहिए, जिससे कि पाठक स्वयं अपना मार्ग ढूंढ़ने का प्रयत्न करे।[2]

रेखाचित्र की इन परिभाषाओं के सार रूप में मर्फी की परिभाषा को ग्रहण किया जा सकता है। उसने कहा है कि रेखाचित्र किसी विशिष्ट व्यक्ति, स्थान अथवा उपादान की विशेषताओं का संक्षिप्त वस्तुगत विवरण होता है, जिससे समन्वित रूप दे दिया जाता है। इसका प्रभावशाली निदर्शन वहां होता है जहां किसी व्यक्ति के कार्य व्यापार के माध्यम से उसकी विशेषताओं का विवरण दिया जाता है। इसमें सिद्धान्त-निरूपण या समीक्षा के लिए स्थान नहीं होता। इसका उद्देश्य व्यंग्य प्रधान या नीति प्रधान होता है और शैली प्रायः वाग्वैदग्ध्यपूर्ण।[3]

[1] Character is also taken for an Egyptian hieroglyphic for an impress or short emblem in little comprehending much. To square out a character by our English level, it is a picture (real or personal) quaintly drawn in various colours, all of them heightened by one shadowing. It is a quick and soft touch of many strings, all shutting up in one musical close, it is wits' descent on any plain song. Overbury's Characters (1616) *A Cabinet of Characters* Ed. Gwendolen Murphy, Oxford University Press, London. 1925, pp. VI-VII.

[2] It is not the nature of a character to be as smooth as a bullrush, but to have some fast and loose knots, which the ingenious Rader may easily untye.—Wye Saltonostale (1631) *A Cabinet of Characters*, Ed. G. Murphy OUP, 1925 p. VIII.

[3] The character sketch is short, objective account of the properties of a typical person, place or object which are contained together, to make a small whole. The most effective examples illustrate the properties of a person by describing actions, with a minimum of 'theory' or comment. The motive is most often satirical or didactic, and the style generally aims at wit. Gewendolen Murphy—*A Cabinet of Characters* OUP London. 1925, p. viii.

डा. शिवदान सिंह चौहान ने उस समय ही रेखाचित्र की सीमाओं और उसकी आवश्यकता पर प्रकाश डाला जबकि यह विधा हिन्दी में प्रारम्भिक अवस्था में थी—

> "वाणी ने रेडियो और टेलीफोन द्वारा, पैरों ने हवाई जहाज द्वारा, दृष्टि ने दूरवीक्षण यन्त्र द्वारा देशान्तर विजय प्राप्त कर ली है, मशीन और विद्युत् ने काल पर विजय प्राप्त कर उत्पादन में सहस्रगुनी वृद्धि कर दी है। जब समाज बदला और जीवन की रफ्तार तेज हो चली तो उसने उससे सामंजस्य स्थापित करने वाले भावाभिव्यक्ति के अभिनव रूपों को जन्म दिया। ये अभिनव कलात्मक रूप विधान नयी सामाजिक वास्तविकता की वस्तु की कलात्मक अथवा रचनात्मक ग्रहणशीलता का द्योतन करते हैं। जिस प्रकार आधुनिक समाज के अत्यन्त संश्लिष्ट संगठन की अभिव्यक्ति करने वाली सवाक् चित्र और उपन्यास कलाएं विकसित हुईं उसी प्रकार उसकी द्रुतगामिता की अभिव्यक्ति करने वाली आधुनिक कहानी, रेखाचित्र और रिपोर्ताज की कलाओं का विकास हुआ। साहित्य में रेखाचित्रकार एक ऐसा कलाकार है जो अपने पारिपार्श्विक जीवन की वास्तविकता के किसी अंग को पशु, पक्षी, वृक्ष, इमारत, खण्डहर, स्त्री, पुरुष, स्थान, गांव, मुहल्ला, नगर आदि किसी भी जड़ अथवा चेतन वस्तु को एक चित्रकार के समान अंकित करता है, वास्तविकता के उस अंग का कल्पनागत कर उसके मर्म का संक्षेपण और पुनर्गठन द्वारा प्रभावपूर्ण, संगठित और समतल से उभार करके अपनी भावप्रक्रिया से उसके प्रभावों को अतिरंजित कर देता है। किसी व्यक्ति के रेखाचित्र में यह विशेषता होगी कि उसके व्यक्तित्व ने जो विशेष मुद्राएं, चेष्टाएं, शारीरिक अवयवों की बनावट में जो विकृतियां ऊपर को उभार दी हैं, उनके आभास को चित्र में ज्यों का त्यों पकड़ा जाय ताकि लेखक की अनुभूति के साथ उसके व्यक्तित्व की रेखाएं और सघन होकर दिखाई पड़ने लगें।"[1]

जैसाकि 'रेखाचित्र' शब्द से स्पष्ट है, यह शब्द 'कला' के क्षेत्र से साहित्य में आया है। प्रधान रूप से इसमें रूप के साथ 'रेखा' और 'रंग' का महत्त्व है। इस

[1] रेखाचित्र (मार्च १९४१), साहित्यानुशीलन, १९५५।

सम्बन्ध में प्रसिद्ध चित्रकार श्री रामचन्द्र शुक्ल ने अपनी पुस्तक 'कला और आधुनिक प्रवृत्तियां' में विस्तृत तथा सम्यक् अध्ययन प्रस्तुत किया है।

रेखा—रेखाओं का भारतीय चित्रकला में एक मुख्य स्थान है। प्राचीन चित्रकला में रेखाओं का अध्ययन बहुत ही गहरा मिलता है। रेखाओं से चित्रकला में विभिन्न विधियों से कार्य लिया जाता था और उनका स्थान चित्रकला में रंग और रूप से पहले आता था, क्योंकि रेखाओं से ही रूप का निर्माण होता है। इतिहास से पूर्व के जो भी चित्र मिलते हैं उनमें भी रेखाओं की प्रधानता रही है। ब्राह्मण तथा बौद्धकालीन चित्रों में भी रेखा प्रधान थी। अजन्ता की सारी चित्रकला रेखाओं के वितान पर ही निर्मित है। रेखाओं के उतारचढ़ाव में एक आश्चर्यजनक जादू-सा दिखलाई पड़ता है, उनकी रेखाओं में जीवन झलकता है। रेखाओं से चित्र में दिशा-निर्देशन किया जाता है। कभी धीरे-धीरे, कभी वेग से चलकर, ऊपर से नीचे की ओर भारी होकर या अनायास इधर-उधर दौड़कर रेखाएं विभिन्न प्रकार के मनोभावों को इंगित कर सकती हैं, विभिन्न प्रकार के विचारों, भावों, मनोभावों तथा मनोवेगों को उत्पन्न करती हैं। हल्की रेखा अस्पष्ट होकर दूरी का बोध कराती है। गहरी स्पष्ट रेखा निकटता की द्योतिका है। गहरी रेखा से शक्ति तथा दृढ़ता का आभास होता है। रेखाओं में भोलापन, क्षीणता एवं उतारचढ़ाव लाकर कोमलता, सुकुमारता तथा नीरसता का ज्ञान कराया जा सकता है। जब रेखाओं में प्रगति होती है तब ये मनोभावों को ऊपर ले जाती हैं और वीरता या शूरता का बोध कराती हैं। जब रेखाएं क्षीण होकर चलती हैं तो सन्देह, अनिश्चितता तथा दौर्बल्य का भान होता है। रेखाएं मन के विभिन्न भावों को बड़ी सरलता से व्यक्त कर सकती हैं। चित्र में रेखाओं की यह स्थिति हूबहू 'रेखाचित्र' पर भी लागू है।

रंग—चित्रकला में सबसे अधिक महत्त्व रंग को दिया जाता है। इसका कारण यह है कि मनुष्य की दृष्टि रंगीन वस्तुओं पर पहले जाती है, तब सादी वस्तुओं पर। यदि किसी वस्तु की ओर लोगों की दृष्टि आकृष्ट करनी है तो उसमें सबसे पहले अत्यन्त चटकीला, भड़कीला रंग देना पड़ता है। बहुत से लोग किसी का वस्त्र और उसका रंग देखकर ही बड़ी सरलता से उसका स्वभाव और चरित्र जान लेते हैं।

'रेखा और रंग' का रेखाचित्र में कितना अधिक महत्त्व है इसका ज्ञान किसी भी साधारण व्यक्ति को हो सकता है। इस विधा के वरिष्ठ लेखक बनारसीदास चतुर्वेदी जी ने स्पष्टतः इन दोनों का महत्त्व स्वीकार किया है :—

रेखा—थोड़ी-सी रेखाओं के द्वारा एक सजीव चित्र बना देना किसी कुशल कलाकार का काम हो सकता है। इसी प्रकार थोड़े से शब्दों में किसी घटना को

चित्रित कर देना अथवा किसी व्यक्ति का सजीव चित्र उपस्थित कर देना अत्यन्त कठिन कार्य है ।

रंग---जहां रंग के थोड़े गहरे या किंचित् हलके होने से ही तसवीर बिगड़ सकती है वहां पर तूलिका को कितनी सफ़ाई, कितने चातुर्य के साथ चलाना चाहिए, इसका अन्दाज किसी विशेषज्ञ चित्रकार को ही हो सकता है । इसके लिए सरस्वती के मन्दिर की आराधना तो अनिवार्य है ही, पर साथ ही साथ अपने व्यक्तित्व को सजीव तथा उन्मुक्त बनाये रखना भी अत्यन्त आवश्यक है ।

डा. नगेन्द्र ने भी इसकी परिभाषा में चित्रकला का महत्त्व स्वीकार करते हुए लिखा है---

> "चित्रकला का यह शब्द साहित्य में आया तो इसकी परिभाषा भी स्वभावत: इसके साथ आई, अर्थात् रेखाचित्र ऐसी रचना के लिए प्रयुक्त होने लगा जिसमें रेखाएं हों पर मूर्त रूप अर्थात् उतार-चढ़ाव दूसरे शब्दों में कथानक का उतार-चढ़ाव आदि न हों, तथ्यों का उद्घाटन मात्र हो ।"[1]

रेखा और रंग के लेखक

आचार्य विनयमोहन शर्मा के दृष्टिकोण से 'रेखाचित्र' में व्यक्ति, घटना या दृश्य का अंकन होता है । व्यक्ति को रेखांकित करने के लिए (१) कैमरा या तूलिका चित्र के समान शरीरावयवों का विशद विवरण, और (२) उसके स्वभाव की विशेषता को स्पष्ट करने वाले उसके कृत्य अथवा कृत्यों का आकलन, तथा (३) चित्र को सजीव बनाने के लिए देशकालानुरूप भाषा का प्रयोग आवश्यक है । वस्तु तथ्यों को मूर्त बनाने के लिए कल्पना का रंग भरा जा सकता है, भाषा को अलंकृत किया जा सकता है ।[2]

हिन्दी के प्रसिद्ध आलोचक डा. भगीरथ मिश्र ने रेखाचित्र की निम्नलिखित परिभाषा दी है :-- "अपने सम्पर्क में आये किसी विलक्षण व्यक्तित्व अथवा संवेदना को जगाने वाली सामान्य विशेषताओं से युक्त किसी प्रतिनिधि चरित्र के मर्मस्पर्शी स्वरूप की देखी, सुनी या संकलित घटनाओं की पृष्ठभमि में इस प्रकार उभार कर

[1] **डा. नगेन्द्र---विचार और विश्लेषण---तथा नगेन्द्र के सर्वश्रेष्ठ निबन्ध १९६४, पृ. १२९-१४६ ।**

[2] **डा. विनयमोहन शर्मा---रेखा और रंग १९६४, भूमिका, पृ. ७ ।**

रखना कि उसका हमारे हृदय में एक निश्चित प्रभाव अंकित हो जाय, रेखाचित्र या शब्द-चित्र कहलाता है ।[१]

श्रीमती सत्यवती मल्लिक ने रेखाचित्र शब्द का ही प्रयोग किया है । 'अमिट रेखाएं' की भूमिका में वे लिखती हैं "निसंदेह ऐसे रेखाचित्र, घटनाएं अथवा संस्मरण बारह वर्ष क्या सैकड़ों वर्ष, पुराने होकर भी पुराने नहीं हैं और युगयुगान्तर तक मानव-हृदय को स्पर्श करते रहेंगे । यदि सामान्य पाठक के हृदय में इस संग्रह के रेखाचित्र तनिक भी करुणा एवं दैवी भावों का संचार कर सके तो मैं अपने इस अल्प प्रयास को सफल मानूंगी ।"[२]

रेखाचित्र के स्वरूप का विवेचन करते हुए डा. गोविन्द त्रिगुणायत ने कहा है कि "रेखाचित्रकार साहित्यकार के साथ ही साथ चित्रकार भी होता है । जिस प्रकार चित्रकार अपनी तूलिका के कलामय स्पर्श से चित्र-पटल पर अंकित विशृंखल रेखाओं में से कुछ उभरी हुई रेखाओं को संवार कर एक अजीब रूप प्रदान कर देता है, उसी प्रकार रेखाचित्रकार मनःपटल पर विशृंखल रूप में बिखरी हुई शत-शत स्मृति रेखाओं में से उभरी हुई रमणीय रेखाओं को अपनी कला की तूलिका से स्वानुभूति के रंग में रंजित कर जीते जागते शब्द-चित्र में परिणत कर देता है । यही शब्द-चित्र रेखाचित्र कहलाता है ।"

"रेखाचित्रकार की सीमाएं निश्चित हैं । उसे तो कम से कम शब्दों में सजीव रूप-विधान और छोटे से छोटे वाक्य से अधिक से अधिक तीव्र और मर्मस्पर्शी भाव-व्यंजना करनी पड़ती है । अपने इस कार्य में वही कलाकार सफल होता है जिसका हृदय अधिक संवेदनशील और जिसकी दृष्टि सूक्ष्मपर्यवेक्षण-निपुण एवं मर्मभेदिनी होती है । संक्षेप में रेखाचित्र वस्तु, व्यक्ति अथवा घटना का शब्दों द्वारा विनिर्मित वह मर्मस्पर्शी और भावमय रूप-विधान हैं जिसमें कलाकार का संवेदनशील हृदय और उसकी सूक्ष्मपर्यवेक्षण दृष्टि अपना निजीपन उंडेल कर प्राणप्रतिष्ठा कर देती है ।"

> "रेखाचित्र विषय का दूरस्थ (डिस्टेंट) और विषय से अलगाव लिये हुए (डिटैच्ड) चित्र होता है । रेखाचित्र के विषय (आब्जेक्ट) के साथ लेखक का निकट संपर्क आवश्यक नहीं । जैसे चित्रकार किसी व्यक्ति, स्थल या वस्तु को देखकर उसके साथ बिना आत्मिक लगाव स्थापित किये हुए तटस्थ भाव से 'स्केच' रेखाचित्र प्रस्तुत कर देता है

१ डा. भगीरथ मिश्र--काव्यशास्त्र प्र. सं., पृ. ९७ ।

२ सत्यवती मल्लिक--अमिट रेखाएं १९५५, पृ. ८ तथा ९ ।

वैसे ही रेखाचित्र भी। रेखाचित्र विषय का विभिन्न परिप्रेक्ष्य में विभिन्न कोणों (एंगिल्स) से अंकित चित्र है जिसमें वाह्याकृति का रूपात्मक चित्रण अधिक, अंतस का कम, केवल उतना जितना रूपात्मक चित्रण से स्वतः झलक जाता है, जैसे चित्रकार के स्केच की मूक रेखाएँ हृदयस्थ भावों को उभार दे देती हैं। रेखाचित्र में चित्रित 'विषय' के साथ जहां लेखक का अनुभूतिपरक सम्पर्क स्थापित हो जाता है और इस तरह लेखक भी स्वतः उसका एक पात्र बन जाता है। रेखाचित्र के लिए कथाकार में विषय की एक-एक रेखा की गहराई और उभार को देखने समझने की पैनी, गहरी और पारखी दृष्टि होना आवश्यक है। रेखाचित्र सामान्य या विशेष किसी का भी हो सकता है।"

(डा० रामगोपालसिह चौहान : **'आधुनिक साहित्य'** से)

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर रेखाचित्र के स्वरूप के विषय में यह स्पष्ट हो जाता है कि रेखाचित्र किसी एक व्यक्ति, स्थान, घटना, दृश्य या उपादान का ऐसा वस्तुगत वर्णन होता है जो संक्षेप में उसकी बाह्य विशेषताओं को प्रस्तुत करता है। बाह्य विशेषताओं के भीतर ही उसकी आंतरिक विशेषताओं का समाहार हो जाता है। उसके स्वरूप से निबन्ध, कहानी, नाटक, संस्मरण या रिपोर्ताज से भ्रान्ति हो सकती है। रेखाचित्र सरल, सुगठित, लघु तथा वर्णन प्रधान होना चाहिये तभी वह प्रभावशाली बनता है। उसमें थोड़े से शब्दों के द्वारा सजीव रूप-विधान और सफल अभिव्यक्ति करने की आवश्यकता होती है।

रेखाचित्र तथा अन्य साहित्यिक विधाएँ

रेखाचित्र में संस्मरण, रिपोर्ताज, कहानी, निबंध आदि अन्य विधाओं के तत्त्व इस प्रकार मिले हुए हैं कि उसकी विशिष्ट प्रकृति को व्यक्त करना कठिन है। यही कारण है कि रेखाचित्र को कभी निबंध के अन्तर्गत तो कभी कहानी के अन्तर्गत मान लिया जाता रहा है। रेखाचित्र और संस्मरण के बीच सीमा-रेखा खींचना तो और भी कठिन है। सम्भवतः इन्हीं कारणों से रेखाचित्र को कथा, संस्मरण और जीवनी आदि का समन्वित रूप मान लिया जाता है।

किन्तु अन्य विधाओं के तत्त्वों से युक्त होते हुए भी रेखाचित्र के अपने अलग स्वरूप की झलक दिखलाई जा सकती है। गद्य की अन्य विधाओं के साथ तुलना करने से यह स्पष्ट हो जायगा कि रेखाचित्र की प्रकृति, गठन, उद्देश्य तथा भाषा

आदि सभी तत्त्व उसके अलग अस्तित्व के द्योतक हैं। आधुनिक अंग्रेजी लेखक भी यह मानते हैं कि रेखाचित्र-कहानी, नाटक, निबंध आदि विधाओं का अल्पविकसित रूप है, किन्तु उसमें इन विधाओं की विशेषताएँ नहीं होतीं।[१]

रेखाचित्र और कहानी

गद्य की विधाओं में कहानी को प्रायः रेखाचित्र के अधिक निकट माना जाता है, यद्यपि इन दोनों विधाओं में व्यापक अन्तर है। विषय की दृष्टि से इनमें यह अन्तर है कि रेखाचित्र का विषय यथार्थ जगत होता है, जब कि कहानी का विषय यथार्थ और कल्पित दोनों प्रकार का हो सकता है। रेखाचित्र में किसी पात्र का बाह्य चित्रण महत्त्वपूर्ण होता है, यद्यपि आंतरिक प्रवृत्तियां भी उसके सौन्दर्य की वृद्धि करती हैं। कहानी में पात्र की अंत:प्रवृत्तियों का चित्रण उसका विशेष गुण होता है। कहानी में पात्र के चरित्र को विकसित करना होता है, इधर नई कहानी में तो वह भी आवश्यक नहीं रहा है। कहानी में पात्र के चरित्र के उतार-चढ़ाव को समन्वित रूप में प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है, जबकि रेखाचित्र में चरित्र के उतार-चढ़ाव के पार्थक्य से कोई अस्वाभाविकता नहीं आती। कहानी में उनका संबद्ध होना उचित होगा किन्तु रेखाचित्र में वे असंबद्ध भी रह सकते हैं।

कला की दृष्टि से भी इन दोनों विधाओं में अंतर है। कहानी का आस्वादन पढ़ या सुनकर किया जाता है परन्तु रेखाचित्र पाठक के मन पर किसी दृश्य काव्य जैसा प्रभाव डालता है। कहानी में कथा का प्रस्तुतीकरण लेखक अथवा किसी पात्र के द्वारा होता है, किन्तु रेखाचित्र में कलाकार ही प्रमुख वक्ता का स्थान ग्रहण कर लेता है। रेखाचित्र का लेखक अपने भावों और विचारों की सीधी अभिव्यक्ति कर सकता है। इन दोनों विधाओं की अभिव्यक्ति की प्रणाली भी उनके अन्तर को व्यक्त करती है। कहानी में अभिव्यक्ति के प्रवाह पर अधिक बल दिया जाता है, जिससे कि पाठक उस प्रवाह में मग्न हो जाय। रेखाचित्र में चित्रोपम अभिव्यक्ति अपेक्षित होती है जो पाठक की अनुभूति पर प्रभाव डाले।[२]

कहानी और रेखाचित्र में कोई आत्यंतिक अन्तर करना कठिन है। 'रेखाचित्र' चित्रकला का शब्द है और जब यह शब्द साहित्य में आया तो इसकी परिभाषा भी

[१] **कार्ल बेकसन तथा आर्थर गैंज--'ए रीडर्स गाइड टू लिटरेरी टर्म्ज', पृष्ठ २०४-५।**

[२] **गोविन्द त्रिगुणायत--शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त, पृष्ठ ४६२।**

इसके साथ आई। उस परिभाषा के अनुसार रेखाचित्र शब्द ऐसी रेखा-रचना के लिए प्रयुक्त होने लगा जिसमें रेखाएँ हों पर मूर्तरूप-यानी कथानक का उतार-चढ़ाव न हो, केवल तथ्यों का उद्‌घाटन हो। उसमें पूर्व-निश्चित स्वरूप या उसका विकास न हो। रेखाचित्र में तथ्यों का उद्‌घाटन होता है, संयोजन नहीं। उसमें घटना का न होना आवश्यक है। कहानी में घटना का होना आवश्यक नहीं। कहानी में विश्लेषण के लिए कोई स्थान नहीं है, किन्तु रेखाचित्र में उसका होना अनिवार्य है।[१]

जैनेन्द्र कुमार ने इन दोनों विधाओं के अंतर के सम्बन्ध में कहा है कि कहानी गतिमती होती है और रेखाचित्र स्थिर। कहानी में रेखाचित्र से एक पहलू अधिक होता है। यदि रेखाचित्र में एक पहलू है तो कहानी में दो, यदि रेखाचित्र में दो पहलू माने जायँ तो कहानी में तीन मानने होंगे। अर्थात् यदि रेखाचित्र में लम्बाई ही है तो कहानी में लम्बाई के अतिरिक्त चौड़ाई भी होती है। और यदि रेखाचित्र में लम्बाई और चौड़ाई होती है तो कहानी में मोटाई या गोलाई और माननी होगी। रेखाचित्र अपनी स्थिरता में गति-हीन-सा हो जाता है और शेष से कटकर स्वयं में स्वतन्त्र हो जाता है, इससे उसमें रस और तीव्रता की कमी होती है। वह कुछ 'सैक्यूलर' होता है।[२]

उपन्यासकार यशपाल ने शब्द-चित्र (रेखाचित्र) को कहानी से भिन्न विधा मानने पर बल दिया है। उन्होंने कहा है कि शब्द-चित्र (Sketches) तथा गद्य-काव्यों (Prose-poetry), आपबीतियों, विचार-चित्रों (belle lettre) या कथात्मक निबंधों (Personal essays) को कहानी न मानने से उनकी रोचकता, कौशल या कलात्मकता से इंकार नहीं किया जा सकता। यह कहानी की कला से प्रेरणा पाकर, इस कला से ही उत्पन्न हुई कला की नव-विकसित स्वतन्त्र शाखाएँ हैं।

ऐसे ही साहित्य के विभिन्न माध्यमों द्वारा कला सृजन की प्रवृत्ति निबाहने पर उन्हें कहानी ही कहते जाने की जिद्‌द अनावश्यक है।[3]

रेखाचित्र का उद्देश्य लेखक के वास्तविक अनुभव में आये किसी चरित्र की विशेषताओं को मार्मिक रूप से प्रस्तुत करना है। कहानी में अनुभूति के साथ-साथ कल्पना का भी योग रहता है। वैसे तो सभी प्रकार की साहित्यिक रचनाओं के लिए अनुभूति की आवश्यकता होती है, किन्तु रेखाचित्र में उसका उपयोग अत्यन्त अपेक्षित है।

१ डा० नगेन्द्र--विचार और विश्लेषण, पृष्ठ ८१।

२ वही, पृष्ठ ८३-८४।

3 यशपाल--तुमने क्यों कहा कि मैं सुन्दर हूँ, भूमिका, पृष्ठ ६ तथा ७।

रेखाचित्र की तुलना में कहानी अधिक सरस होती है। रेखाचित्र में चरित्र के विवेचन की ओर अधिक ध्यान रहता है, रस की ओर कम। संभवतः इसीलिए कहानी में सामाजिकता अधिक होती है तथा रेखाचित्र में वैयक्तिकता।

रेखाचित्र में थोड़ी-सी रेखाओं, अर्थात् नपे-तुले शब्दों द्वारा प्रभावाभिव्यंजन की चेष्टा की जाती है, अतः उसमें सांकेतिकता का महत्त्व होता है। सांकेतिकता का अभाव यद्यपि कहानी में नहीं होता है, किन्तु फिर भी यह तत्त्व रेखाचित्र का एक अनिवार्य तत्त्व है।

रेखाचित्र और निबंध

रेखाचित्र को प्रायः आत्मपरक या संस्मरणात्मक निबंधों की श्रेणी में रख दिया जाता है। अँग्रेजी साहित्य में भी सत्रहवीं शताब्दी से पहले रेखाचित्र के लिए निबंध शब्द का ही प्रयोग होता रहा। इन दोनों विधाओं में कुछ समान तत्त्व उपलब्ध हैं। डा. जोन्सन की परिभाषा के अनुसार निबंधकार किसी विषय को आधार मानकर अपने भावों और विचारों को विशृंखलित रूप में व्यक्त करता है। यह प्रवृत्ति चार्ल्स लैंब के निबंधों में मिलती है। रेखाचित्रकार किसी व्यक्ति या उपादान को केन्द्र मानकर उसके माध्यम से मन पर पड़े प्रभावों को व्यक्त करता है। निबंध विशेष की विशृंखलित अभिव्यक्ति और रेखाचित्र के प्रभावाभिव्यंजन में साम्य होने के कारण आत्म-परक या संस्मरणात्मक निबंध रेखाचित्र की श्रेणी में रख दिये जाते हैं। इसके अतिरिक्त यदि निबंध में उन्मुक्त भाव-प्रवाह उमड़ने लगता है या रेखाचित्र में गंभीर चिंतन का समावेश हो जाता है तो ये दोनों विधाएँ एक दूसरे के निकट आ जाती हैं। किन्तु आधुनिक दृष्टिकोण से निबंध को एक सुगठित सुनिर्मित लघु रचना माना जाता है, मन की उन्मुक्त तरंग की अभिव्यक्ति नहीं। इसमें विवेचन तथा पालिश की अपेक्षा होती है। बाबू गुलाबराय ने उस गद्य-रचना को निबंध माना है जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी विषय का वर्णन या प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छन्द सौष्ठव, सजीवता संगति और संबद्धता के साथ किया गया हो।

निबंध के विभिन्न तत्त्वों के अवलोकन से ज्ञात होता है कि निबंधकार का व्यक्तित्व निबंध का प्रमुख तत्त्व होता है लेखक की अपनी अनुभूति निबंध पर उसके लेखक के व्यक्तित्व की छाप होती है, वह अपनी विशिष्ट दृष्टि से विषय का अध्ययन करता है। निबंध किस विषय पर लिखा जाय, इस संबंध में नियमों का कोई बंधन नहीं—निबंध किस विषय पर लिखा जा सकता है। जिस विषय में लेखक का मन

रम जाय वही विषय निबंध के योग्य है। अपने चुने हुए विषय के संबंध में विचार व्यक्त करने की लेखक को पूरी स्वतन्त्रता रहती है। निबंधों की भाषा-शैली भी उसी समय प्रभावशाली होती है जब उस पर लेखक के व्यक्तित्व की छाप हो। उसमें लेखक के भावों के उतार-चढ़ाव को व्यक्त करने की पूरी सामर्थ्य हो। प्राणवान भाषा और वक्र अभिव्यक्ति की शैली भाव-संप्रेषण में सहायता देती है।

निबंध अपने स्वरूप में बहुत कुछ निर्बंध होता है, किन्तु रेखाचित्र किसी एक व्यक्ति या स्थान से संबद्ध होता है। निबंध में विषय वस्तु प्रधान होने के कारण भावात्मकता नहीं आती जो रेखाचित्र में मिलती है, यद्यपि रेखाचित्र यथार्थ का चित्रण भी करता है। सरलता तथा अभिव्यक्ति का सीधापन रेखाचित्र की अपनी विशेषता है, रेखाचित्र मानव हृदय पर सीधी चोट करता है, और उसकी यह मुखरता निबंध की गंभीरता से एकदम भिन्न वस्तु है।

निबंध में लेखक का व्यक्तित्व ओट में रहता है, किन्तु रेखाचित्र में उसके व्यक्तित्व की झलक कहीं न कहीं दिखलाई पड़ जाती है। रेखाचित्र में व्यक्तिगत विशेषताओं का अंकन होता है और मानवीय भावना तथा अनुभूति की अभिव्यक्ति होती है। किन्तु निबंध में विषय के प्रतिपादन की महत्ता होती है और इस दृष्टि से लेखक भी स्वतन्त्र होता है। वह अपने विषय का प्रतिपादन करने के लिए अनेक दृष्टान्तों, उदाहरणों तथा तर्कों का सहारा लेता है। इस संबंध में प्रो. प्रकाश चन्द्र गुप्त का कथन उल्लेखनीय है—

> "स्केच अथवा रेखाचित्र निबंध और कहानी की बीच की भूमि पर उगता है। वह किसी स्थिति-विशेष अथवा पात्र का चित्र खींचता है, किन्तु उसमें कथानक नहीं रहता। चित्र की भांति ही उसमें गति का इशारा रहता है, किन्तु गति नहीं होती। किसी सामाजिक अथवा वैयक्तिक स्थिति का वह एक स्नैपशाट होता है। उसमें सृजनात्मक साहित्य के सभी गुण रहते हैं। कल्पना, भावना, चिन्तन होता है, भावावेश में उसका जन्म नहीं होता। दूसरी ओर कहानी का कहानीपन, कथानक की गति स्केच अथवा रेखाचित्र में हम नहीं पाते। फिर भी कोई-कोई स्केच मात्र निबंध रह जाते हैं, और कुछ कहानी में भी मिल जाते हैं। निबंध और कहानी के बीच की फैली हुई विस्तृत भूमि को रेखाचित्र दो छोरों पर स्पर्श करता है।"

(आज का हिन्दी-साहित्य, पृ. १२० से)

रेखाचित्र और जीवनी

इन दोनों विधाओं की प्रकृति में अंतर है। जीवनी के निर्माण में बुद्धि और भावना का योग अधिक रहता है, कल्पना का कम--किन्तु रेखाचित्र में इन तीनों तत्त्वों का सम्मिश्रण हो जाता है। रेखाचित्रकार बुद्धि की सहायता से अपनी आवश्यकतानुसार स्मृति में संचित प्रमुख रेखाओं को चुन लेता है और चित्र बनाने लगता है। कल्पना की सहायता से वह उस चित्र को विभिन्न रंगों से सज्जित करता है और भावना द्वारा उसमें प्राणों का संचार करता है।

जीवनीकार शब्दों का प्रयोग भाषा को प्रवाहमयी बनाने के लिए करता है, रेखाचित्रकार उनका प्रयोग चित्रात्मकता की दृष्टि से करता है। जीवनी में लेखक की निजी अनुभूति, कल्पना और भावना का अधिक महत्त्व नहीं होता। किन्तु रेखाचित्र में ये तत्त्व सर्वाधिक महत्त्व के होते हैं। जीवनीकार को किसी व्यक्ति विशेष के संबंध में बिखरी पड़ी विशाल सामग्री में से चयन करना होता है। रेखाचित्रकार अपनी सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति का प्रयोग कर किसी वस्तु या व्यक्ति की रूपरेखा को भावनाओं के रंग में रंगकर प्रस्तुत करता है।

रेखाचित्र में जीवनी के समान घटनाओं का संकलन तिथि-क्रम से नहीं होता। उसमें घटनाओं का पूर्ण आकलन भी नहीं होता। उसके लिए जीवन की एक ही घटना पर्याप्त होती है, क्योंकि वह जीवन की विशेषताओं की द्योतक रेखाओं से निर्मित है।[१]

रेखाचित्र और संस्मरण

इन दोनों विधाओं में किसी प्रकार का विरोध नहीं है और न कोई मौलिक अन्तर। इनकी जाति एक है अथवा कहा जा सकता है कि संस्मरण रेखाचित्र का एक प्रकार है: जिसमें किसी वास्तविक व्यक्ति का चित्र होता है।[२] किन्तु श्री जगदीश चन्द्र माथुर[3] ने इन दोनों पर प्रकाश डालते हुए भेद स्पष्ट किया है। आपने रेखाचित्र से भिन्न चरितलेख (portrait) शब्द का प्रयोग किया है और उन्हें गंभीर तथा ललित साहित्य का अंग माना है। रेखाचित्र में अलंकरण और गांभीर्य होता है, किंतु संस्मरण में ये तत्त्व नहीं मिलते। संस्मरण 'उत्कृष्ट

[१] विनय मोहन शर्मा--रेखा और रंग, पृष्ठ ६४।

[२] डा. नगेन्द्र--विचार और विश्लेषण, पृष्ठ ८२।

[3] जगदीश चन्द्र माथुर---दस तस्वीरें, भूमिका से।

पत्रकारिता की एक मनोरंजक', वैयक्तिक किन्तु हलकी विधा है। उनके चरित्रलेखों का प्रारम्भिक वातावरण संस्मरणों से मिलता है किन्तु उनका सौन्दर्य और गांभीर्य उन्हें संस्मरणों से भिन्न विधा के रूप में प्रस्तुत करता है।

संस्मरणों में प्रायः अनुभूत स्मृतियां संजोई जाती हैं और उनमें कल्पना के लिए स्थान कम होता है। संस्मरण परिचित व्यक्तियों से संबंधित होते हैं और पाठकगण उनके संबंध में और अधिक जानने की इच्छा रखते हैं। संस्मरण में लेखक की दृष्टि प्रधान होती है और वह अपने दृष्टिकोण से घटना तथा पात्रों का विश्लेषण करता चलता है।

संस्मरण में भावात्मकता अधिक रहती है। इसमें स्मर्यमाण व्यक्ति का 'तटस्थ' स्मरण किया जाता है इस पर बल देते हुए डा. विश्वम्भर नाथ उपाध्याय लिखते हैं—"इन दोनों में भेदक तत्त्व सिर्फ भावात्मकता की मात्रा का है, संस्मरणों में भाव लेखक को पर्याप्त मात्रा तक अनालोचक बनाए रखता है, रेखाचित्र में उन्मुखता अथवा रागात्मक स्पर्श-मात्र से ही काम चल जाता है।"···रेखाचित्रों में चित्रण की प्रधानता होती है, संस्मरण में विवरण अधिक होते हैं। संस्मरणों में प्रसंगों और कथाओं का प्रयोग होता चलता है। घटित का विवरण और उसके वर्ण्य व्यक्ति की विशिष्टता या उपलब्धि पर प्रकाश-प्रक्षेपण संस्मरण की प्रचलित विधि है जबकि रेखाचित्र में लंगड़ी शैली में, रूप अभिव्यक्ति कारक नपे तुले शब्दों का प्रयोग अधिक होता है।" इन विशेषताओं की तुलना में रेखाचित्र में किसी व्यक्ति या स्थान का चित्र शब्दों में प्रस्तुत करने का यत्न किया जाता है। रेखाचित्र में वस्तुगत चित्र की प्रधानता होती है। उसमें यदि लेखक की विचारधारा प्रत्यक्षतः सामने नहीं आती तब भी कोई हानि नहीं होती। रेखाचित्र में बाह्य चित्रण के साथ यदि आंतरिक चित्रण भी हो तो और भी अच्छा होता है।

संस्मरण में लेखक प्रायः प्रसिद्ध व्यक्ति होते हैं, किन्तु रेखाचित्रकार के लिए ऐसा आवश्यक नहीं है। संस्मरण में देश-काल की परिस्थितियों को अधिक महत्त्व दिया जाता है। संस्मरण में रेखाचित्र की चित्रात्मक शैली को नहीं अपनाया जाता।

संस्मरण और रेखाचित्र दोनों विधाओं के वरिष्ठ लेखक पं. बनारसी दास चतुर्वेदी ने अपने १७-२-६५ के पत्र में लेखक को सूचित किया था—

> "रेखाचित्र में किसी वस्तु या व्यक्ति के जीवन का चित्रण होता है, उसके प्रकाश भाग तथा छाया भाग के साथ, गुण दोषों का विधिवत् वर्णन करते हुए। संस्मरण में मुख्यतया पुरानी बातें याद की जाती हैं। चरित्र चित्रण तो दोनों में ही हो जाता है। संस्मरण प्रायः बीती हुई बातों या दिवंगत व्यक्तियों के बारे में लिखे जाते हैं।"

रेखाचित्र और रिपोर्ताज

रिपोर्ताज शब्द फ्रांसीसी भाषा से हिन्दी में आया है और इसी रूप में प्रचलित है। इसके लिए सूचनिका शब्द का भी व्यवहार होता है। अंग्रेजी का रिपोर्ट इसी शब्द का पर्याय है। इसमें किसी घटना या दृश्य का अत्यन्त विवरणपूर्ण, सूक्ष्म और रोचक वर्णन किया जाता है। "व्यक्तियों के समूह घटना को जन्म देते हैं अतः उनकी आशा-आकांक्षाएं, उनकी चेष्टाएं, सन्देह और निश्चय, पराक्रम और पलायन आदि सभी कुछ रिपोर्ताज में व्यक्त होते हैं। रेखाचित्र में लेखक एक सौन्दर्यबोधक तटस्थता बरतता है किन्तु रिपोर्ताज में पक्षधरता ही अधिक व्यक्त होती आई है।"[१]

"रिपोर्ताज तीव्र भावना में रंगी साहित्यिक रिपोर्ट मात्र होता है। इस विधा का जन्म संघर्ष की खंदकों में हुआ है। इन्हें वर्ड्सवर्थ की काव्य-भावनाओं के समान शांति के क्षणों में लिखने के लिए छोड़ देने का अवकाश नहीं होता।"[२]

"पिछले विश्व-युद्ध में इस विधा का जन्म हुआ। साहित्यिक प्रतिभा से संपन्न पत्रकार युद्ध-क्षेत्र में घटित घटनाओं का सुंदर वर्णन अपने पत्रों को भेजते थे, जिनसे पाठकों का मनोरंजन होता था। धीरे-धीरे समाचारपत्रों की यह विधा स्वतंत्र साहित्यिक विधा के रूप में परिणत हो गई। इसकी परिभाषा इस रूप में दी जा सकती है कि पत्र की जिस घटना को, सत्य का निर्वाह करते हुए कलात्मक रूप में संवेदनात्मक शक्ति के साथ प्रस्तुत किया जाता है, वह रिपोर्ताज साहित्यिक विधा की कोटि में आ जाता है।" (सत्यपाल चुघ)

रेखाचित्र और रिपोर्ताज इन दोनों में घटना, स्थान अथवा व्यक्तियों का चित्रण किया जाता है। इनमें इतना ही अंतर है कि रेखाचित्र को कल्पना के रंग में रंगा जा सकता है, किन्तु रिपोर्ताज को उतना नहीं। रिपोर्ताज का वर्ण्य विषय कभी कल्पित नहीं होता, हां तथ्य को रूप देने भर के लिए उसमें कल्पना की सहायता ली जा सकती है। काल्पनिक रिपोर्ताज ही कथा या गद्य-काव्य बन जाता है। उसमें घटनाओं के वर्णन के साथ-साथ उनसे संबद्ध व्यक्तियों का रेखांकन हो जाता है--इस रूप में उसमें रेखाचित्र का मिश्रण संभव है। इस संबंध में डा. उपाध्याय का कथन द्रष्टव्य है, "ऐसी सक्रिय विधा में शब्द उसी प्रकार त्वरा पकड़ते हैं जैसे स्वचालित बन्दूक से निकलने वाली गोली। यह स्वयंचालित प्रक्रिया रिपोर्ताज लेखक के समय उपयुक्त शब्दों को स्वतः चेतना में अवतरित कर देती है क्योंकि शब्द-शिल्प

१ डा. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय--हिन्दी में रेखाचित्र, आलोचना, ३६, पृ. ८१।
२ प्रकाश चन्द्र गुप्त--आधुनिक हिन्दी साहित्य, एक दृष्टि, पृ. ११६।

के लिए वरण और चयन का समय रेखाचित्र-संस्मरण आदि में मिल सकता है, रिपोर्ताज में नहीं। अतः यहां सरस्वती जैसे विद्युत आघात पा जाती है और लेखक के मुख या लेखनी से बाह्य प्रत्यक्ष घटना विद्युत की तरह झटके दे-देकर उसका श्रेष्ठ रचनात्मक तत्त्व खींचकर बाहर निकाल लेती है। इस प्रकार रिपोर्ताज में ध्यान, धारणा, कल्पना और भाव की 'गति' में समन्वित होती है जबकि रेखाचित्र में इन सबकी संगति 'स्थिरगति' में होती है।"

रेखाचित्र और आत्मकथा

आत्मकथा एक प्रकार का इतिहास है जिसकी रचना तटस्थ भाव से की जाती है। इसमें वर्णन का प्राधान्य होता है, चित्रण का नहीं। रेखाचित्र में तटस्थता या वर्णन की प्रधानता नहीं होती, उसमें लेखक की अनुभूति और आस्था का पुट मिला रहता है। किसी-किसी रेखाचित्र में लेखक आत्मतत्त्व अधिक भर देता है तो वह आत्मकथा के निकट पहुँच जाता है।

रेखाचित्र और गद्यकाव्य

गद्यकाव्य में मानव-हृदय की संकुल भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है। भावना के अतिरिक्त उसमें कल्पना और अनुभूति की भी प्रधानता होती है। उसमें विचारों की सूत्रबद्धता कम होती है। भावनाओं की अभिव्यक्ति के समय गद्यकाव्य की भाषा के समान रेखाचित्र की भाषा प्रवाहमयी हो जाती है, फिर भी इन दोनों विधाओं में अंतर है। प्रकृति की दृष्टि से गद्यकाव्य में गांभीर्य होता है और रेखाचित्र में हास्य तथा व्यंग्य की प्रधानता। गद्यकाव्य कल्पनाप्रधान होता है और रेखाचित्र में कल्पना की ऊँची उड़ानें नहीं होतीं। रेखाचित्र में विचारों का तारतम्य मिलता है, गद्यकाव्य में उसका अभाव होता है। गद्यकाव्य में काव्यमय तथा अलंकृत भाषा का प्रयोग होता है रेखाचित्र में सरल तथा अनलंकृत भाषा का। गद्यकाव्य में प्रतीकात्मक भाषा का प्रयोग अधिक होता है, रेखाचित्र में कम। जब रेखाचित्र में भावात्मकता बढ़ जाती है तो वह गद्यकाव्य के निकट पहुँच जाता है, जैसे कहीं-कहीं बेनीपुरी जी के रेखाचित्रों में प्रतीत होता है।

रेखाचित्र और मेमोयर्स

"प्रायः संस्मरण और रेखाचित्र को भूल से एक ही वस्तु समझ लिया जाता है। मेमोयर्स की रचना इतिहास के सुदृढ़ आधार पर की जाती है। रेखाचित्र लेखक के स्वानुभव का प्रतिफलन होते हैं। इन दोनों विधाओं में घनिष्ठ साम्य नहीं है।"

रेखाचित्र का विषय मनुष्य तथा मनुष्यंतर जगत् होता है। रेखाचित्रों में वस्तु का बाह्य वर्णन ही शुद्ध रूप से अधिक मिलता है, आन्तरिक झलक भी मिल जाती है। जहां लेखक उसमें कल्पना की उड़ान भरने लगता है वहीं रेखाचित्र संस्मरण, गद्यकाव्य या निबंध का रूप धारण कर लेता है। (रेखा और रंग से) इस संबंध में डा. विश्वनाथ शुक्ल[1] का कथन भी समीचीन है, "अंग्रेजी में संस्मरण के लिए दो शब्दों का प्रयोग मिलता है। 'मेमॉइर' एवं 'रेमिनिर्सेसेज', किन्तु इसमें थोड़ा सा तात्त्विक भेद है। मेमॉइर अपेक्षाकृत अधिक वस्तुपरक संस्मरण है जबकि रेमिनिर्सेसेज में लेखक अपने व्यक्तित्व एवं व्यक्तिगत जीवन की अनुभूतियों को कहीं अधिक स्पष्टतया व्यक्त करता है। अँग्रेजी में 'मेमॉइर' घटनाओं के अधिकाधिक, विवरण एवं ऐतिहासिक तथ्यों के व्यक्तिगत ज्ञान पर आधारित विवरण को भी कहते हैं। हिन्दी में इन दिनों के लिए एक ही शब्द है 'संस्मरण' जो अधिक आत्मपरकता द्योतक शब्द है। संस्मरण 'सम्यक् स्मरण' है। सम्यक् से तात्पर्य आत्मीयतापूर्वक, गम्भीरता। लेखक जो स्वयं देख सुनकर अनुभव करता है संस्मरण में उसी की एक परम संवेदनात्मक अनुभूति रहती है।"

निष्कर्ष

रेखाचित्र के स्वरूप के विषय में कहा जा सकता है कि यह कहानी और निबंध दोनों की सीमाओं का स्पर्श करने वाली विधा है, जिसे कहानी या निबंध नहीं कहा जा सकता है। कहानी में यदि कथा प्रधान होती है तो निबंध में विषय की गंभीरता और उसका निरूपण। किन्तु रेखाचित्र में किसी वस्तु या वस्तु का बाहय तथा आंतरिक स्वरूप विश्लेषण प्रमुख होता है। रेखाचित्रकार स्वयं को विषय से अलग रखकर उसका अध्ययन करता है। वह निर्जीव वस्तुओं के साथ भी ऐसा तादम्य स्थापित कर लेता है कि उनके काल्पनिक सुख-दुख और भावनाओं को व्यक्त करने लगता है। रेखाचित्रकार शब्दों के माध्यम से व्यक्ति या वस्तु की विशेषताओं का चित्रण करता है। वह कुशल चित्रकार के समान छोटे-छोटे किन्तु सधे स्पर्शों से चित्रण करता है और मानवीय भावनाओं को सरल और प्रभावशाली रूप में व्यक्त करता है।

[1] **डा. विश्वनाथ शुक्ल--रेखाचित्र और संस्मरण, साहित्य सन्देश, साहित्यशास्त्र विशेषांक, १९६२, पृष्ठ ८२।**

अध्याय २

रेखाचित्र–उद्भव और विकास

अंग्रेजी साहित्य में रेखाचित्र

उद्‌भव

चरित्रांकन का विकास निबन्ध के साथ हुआ, क्योंकि ये दोनों विधाएं समान सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों में उत्पन्न हुई। ऐतिहासिक दृष्टि से इन दोनों विधाओं का उद्‌भव अन्य विधाओं की अपेक्षा बाद में हुआ। प्रायः यूनानी लेखक थियोफ्रेस्टस को चरित्रांकन का प्रथम कलाकार माना जाता है। उसने ऐथेन्स में प्लेटो तथा अरस्तू से शिक्षा प्राप्त की थी। उसका मूल नाम टर्टेनस था, जिसे उसने अरस्तू के सुझाव पर बदल दिया और थियोफ्रेस्टस नाम रख लिया जिसका अर्थ है "दिव्य वाक्शक्ति से संपन्न।" अरस्तू ने उसे सन् ३२२ ई. पू. में अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया था। उसकी उपलब्ध कृतियों में "कैरेक्टर्स" नामक नैतिक विषयों से संबद्ध प्रबन्ध अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। इसमें उसने समाज के विभिन्न वर्गों के व्यक्तियों के रेखाचित्र खींचे हैं। उस समय राज्य के रूप में एथेंस की महत्ता घट रही थी और तत्कालीन सुखान्त नाटकों में नागरिकों के चरित्र एवं आचार व्यवहार का चित्रण किया जा रहा था। ऐसी परिस्थितियों में उसने रेखाचित्रों की रचना की जो एक दार्शनिक और वैज्ञानिक के रूप में भी उसके व्यक्तित्व को प्रतिबिंबित करते हैं। उसने चापलूसी, धृष्टता आदि जिन बुराइयों का चित्रण किया है वे शिष्टजनोचित व्यवहार की दृष्टि से निम्न कोटि की मानी जाती हैं। उसके रेखाचित्रों का स्वरूप बड़ा सरल है। थियोफ्रेस्टस ने पहले किसी बुराई की संक्षिप्त परिभाषा दी है और उसके बाद उस बुराई से युक्त किसी व्यक्ति के जीवन की प्रतिदिन की घटनाओं का वर्णन किया है।

थियोफ्रेस्टस के रेखाचित्रों की रचना का उद्देश्य संभवतः विद्यार्थियों का मनोरंजन करना और उन्हें छन्द शास्त्र की शिक्षा देना था। उसने इनमें सरल विधि अपनाने के कारण अपनी वाग्विदग्धता, वर्णन-चातुर्य तथा सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक दृष्टि का

पूर्ण परिचय दिया है। उसकी उपर्युक्त कृति ने एक विशिष्ट साहित्यिक विधा को जन्म दिया, जिसे सत्रहवीं शताब्दी में अंग्रेजी साहित्य में अपनाया गया।

अंग्रेजी साहित्य में रेखाचित्र का विकास

सत्रहवीं शताब्दी में अंग्रेजी साहित्य में जिस प्रकार के निबन्ध लिखे गये उनका अधिकांश श्रेय थियोफ्रेस्टस को प्राप्त है। उनकी रचनाएं अलंकार शास्त्र तथा शिक्षा का एक विशिष्ट अंग रही थी और फलतः पाठकों पर उनका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। उसकी चरित्र सम्बन्धी धारणाएं युगों से परिचित रही थीं। अनेक अंग्रेज रेखा-चित्रकारों ने थियोफ्रेस्टस को अपना आदर्श मानकर रेखाचित्रों की रचना की।

इंगलैंड में सन् १५५२ ई. में थियोफ्रेस्टस की कृति "कैरेक्टर्स" का अनुवाद प्रकाशित हुआ। इस अनुवाद ने तथा अनेक तत्कालीन घटनाओं और परंपराओं ने उस समय यूनानी आदर्शों के अनुकरण की प्रेरणा दी। शास्त्रीय आदर्शों के प्रति सामान्य आकर्षण, नाटकों के निश्चित प्रकारों के सम्बन्ध में रोमन कवि होरेस के सिद्धांत, धार्मिक उपदेशों में उदाहरण के रूप में मध्यकालीन रेखाचित्रों का प्रयोग, मनोवैज्ञानिक अध्ययन का विकास तथा शरीर-रस (Humour) सम्बन्धी चिकित्सा शास्त्रीय, मनोवैज्ञानिक एवं नाट्यशास्त्रीय सिद्धांत, सूत्रों, कहावतों तथा अर्थान्तरन्यास के प्रति प्रेम, वास्तविक जीवन के यथार्थ चित्रण की आकांक्षा जिसकी अभिव्यक्ति सामाजिक पुस्तिकाओं (Pamphlets), व्यंग्य काव्य तथा नाटकों में हुई, किसी ऐसे सरल सूत्र का प्रयोग करने की लालसा जो सुधारवादी और मनोरंजक हो, ये कुछ प्रमुख कारण थे जिन्होंने इंगलैंड में सत्रहवीं शताब्दी में चरित्रांकन की परम्परा का तीव्र गति से प्रवर्तन किया।

इंग्लैंड में थियोफ्रेस्टस की चरित्र सम्बन्धी धारणाएं बहुत दिनों से परिचित रही थीं, किन्तु उनकी महत्ता का भान उस समय हुआ जब अन्य प्रभाव सक्रिय हो गये। लैटिन के नाटककार सेनेका तथा तत्कालीन नाटककारों ने चरित्रांकन की विधा को प्रभावित किया। इन नाटककारों ने चरित्र-लेखकों से कुछ तत्त्व ग्रहण किये और अपनी ओर से चरित्रांकन में भी योग दिया। नाटककार जोन्सन की "कामेडी आफ़ ह्यूमर्स' में तथा चरित्र लेखक ओवरबरी एवं अर्ल की कृतियों में बड़ा साम्य है। उन्होंने जोन्सन के समान गुण-दोषों को एक व्यक्ति विशेष के स्वभाव में निहित माना है। उनमें जोन्सन के समान दार्शनिकता है और उनकी विचारधारा जोन्सन के समान ठोस भूमि पर आधृत है। उनकी चरित्र सम्बन्धी धारणा विश्लेषणात्मक है, अन्तः चक्षुओं द्वारा देखी हुई नहीं है। किन्तु ये लेखक लार्ड बेकन के सबसे अधिक ऋणी हैं। उन्होंने बेकन का सफल अनुकरण किया है। किन्तु बेकन की महत्ता इसलिए है कि

उसने संक्षिप्तता, पैनापन और सूत्रबद्धता आदि शैलीगत गुणों का आदर्श प्रस्तुत कर थियोफ्रस्टस के अनुकरण की क्षमता प्रदान की। तत्कालीन चरित्र लेखकों ने अपने युग की भावना को व्यक्त किया है। उस समय जनता की अभिरुचि चरित्रों की ओर थी, इसलिए चरित्रांकन की विधा अनेक लेखकों ने अपनायी।

अंग्रेज रेखाचित्रकार

सन् १६१६ में जान हेली ने थियोफ्रेस्टस की कृति 'कैरेक्टर्स' का अनुवाद प्रकाशित किया, किन्तु उससे पहले ही थियोफ्रेस्टस के अनुकरण पर चरित्रांकन प्रारंभ हो चुका था। कुछ लेखकों की रचनाओं में थियोफ्रेस्टस की झलक मिलती है, किन्तु थोड़ी सी, क्योंकि उनका युग एक अलग युग था। सत्रहवीं शताब्दी के प्रारंभ में ही चरित्र-लेखकों ने थियोफ्रेस्टस की सरल टैकनीक और शैली को पीछे छोड़ दिया था। इस विधा के सूत्रपात का कुछ श्रेय नाटककार बेन जोन्सन को दिया जा सकता है। उसके नाटकों—'ऐवरीमैन आउट आफ़ हिज ह्यमर' तथा 'सिन्थियाज रिवेल्स के पात्रों के वर्णन में कुछ विशेष आदतों के बारे में वस्तुपरक सूचना मिलती है। इन नाटकों की विषय वस्तु सामाजिक है। इसमें संदेह नहीं कि जोन्सन थियोफ्रेस्टस तथा समकालीन व्यंग रचनाओं से परिचित था। महारानी ऐलिजाबेथ के युग में लेखकगण चरित्रांकन की ओर आर्कषित हुए। तत्कालीन लेखकों में टामस डेकर ने रेखाचित्रों की रचना में सबसे अधिक सफलता प्राप्त की। उसकी रचना 'बैलमैन आफ़ लन्दन' का वह अंश जिसमें अनेक प्रकार के बदमाशों का वर्णन किया गया है, ओबरबरी के 'कैरेक्टर्स' के समान है। यदि इस कृति को आंशिक रूप से रेखाचित्र के अन्तर्गत माना जाय तो डेकर को रेखाचित्रकला का प्रथम आचार्य मानना चाहिए।

अंग्रेजी में रेखाचित्रों का पहला संग्रह जोसेफ हाल की कृति 'कैरेक्टर्स आफ़ वर्च्यूज़ एण्ड वाइसेज़' है। इसके प्रारम्भ में उसने पाठकों के नाम लिखे गये पत्र में कहा है कि उसने प्राचीन नीति-विशारद दार्शनिकों का अनुकरण किया है। जो प्राचीन मूर्तिपूजकों के धर्मोपदेशक थे। उसने कहा है कि उनका एक समुदाय प्रत्येक गुण तथा दोष के आलेखन में व्यस्त रहता था और उनके वर्णन के आधार पर वास्तविक व्यक्ति के चेहरे को पहचाना जा सकता था। इस कला को उन्होंने चरित्रांकन का व्यंजनापूर्ण नाम दिया था। इन पंक्तियों में थियोफ्रेस्टस की ओर संकेत किया गया है। थियोफ्रेस्टस और हाल के चरित्रों में सबसे बड़ी समानता यह है कि उनमें से एक दो चरित्रों को छोड़कर शेष सब नैतिक दृष्टि से चुने गये हैं। इन दोनों लेखकों के वर्णनों में भी समानता मिलती है। किन्तु हाल ने थियोफ्रेस्टस की प्रक्रिया

को आंशिक रूप में ही अपनाया। थियोफ्रेस्टस के चरित्र संक्षिप्त, अनलंकृत तथा सजीव हैं। किन्तु हाल के लम्बे तथा मांसल चरित्रों में स्थानीय बाह्य तथा विशिष्ट तत्त्वों का समावेश किया गया है। उसने प्रायः चरित्रों का विवेचन भी किया है और इस प्रकार उसके द्वारा चित्रित बुराइयाँ कुछ वायवी हो गई हैं तथा गुण तो लगभग पूरी तरह वायवी हैं। चरित्रगत बुराइयों का चित्रण करने में उसने अर्थान्तरन्यास का विदग्धतापूर्वक प्रयोग किया है।

हाल ने थियोफ्रेस्टस की अभिव्यक्ति की सरलता की ओर ध्यान नहीं दिया। उसका झुकाव व्यंग्य की ओर था और व्यंग्यकार के नाते उसने चरित्रांकन भी अच्छा किया है। उसके रेखाचित्र विविधतापूर्ण है तथा व्यंग्य कृतियों की अपेक्षा अधिक मानवीय है। वे सहानुभूति की भावना से युक्त हैं जो प्रायः व्यंग्य में नहीं मिलती। वे एक विवेक सम्पन्न लेखक की कृतियां हैं। कैरेक्टर्स एक प्रभावशाली तथा ओजस्वी कृति है। इसमें हाल ने दुरूह कल्पना का अधिक प्रयोग नहीं किया, जो उस समय की एक सामान्य प्रवृत्ति थी। किन्तु वह इस दोष से सर्वथा मुक्त भी नहीं है।

हाल रेखाचित्रों के व्यंग्यात्मक पक्ष से प्रभावित हुआ था किन्तु वैदग्ध्यपूर्ण रेखाचित्रों की प्रतिष्ठा ओवरबरी ने ही की। ओवरबरी तथा अन्य व्यक्तियों द्वारा रचित इक्कीस चरित्रों का संग्रह उसकी कविता 'ए वाइफ़' के साथ जोड़ दिया गया था और उसके आगामी संस्करणों में चरित्रों की संख्या बढ़ती ही चली गयी। अन्य चरित्र लेखकों में नाटककार वेवस्टर का नाम प्रमुख है जिसने छठे संस्करण में बत्तीस चरित्र जोड़े। डेकर ने नवें संस्करण में अभिवृद्धि की। जान डन ने भी इसकी अभिवृद्धि में योग दिया। अन्त में इस संग्रह के चरित्रों की संख्या बयासी हो गई। सत्रहवीं शताब्दी में यह संग्रह अत्यन्त लोकप्रिय रहा था किन्तु अब ये चरित्र लोकप्रिय हो सकेंगे इसमें संदेह है क्योंकि उनकी शैली अत्यन्त कृत्रिम है। हाल के चरित्रों में यदा-कदा जो भड़कीलापन दिखलाई पड़ता है वह ओवरबरी के चरित्रों का सामान्य तत्त्व है। उसने बुद्धि चातुर्य पर जितना ध्यान दिया है, उतना ध्यान कथन के अर्थ पर नहीं दिया। उसने साधारण गीत में बुद्धि के समावेश (Wit's descent on any plain song) को रेखाचित्र की विशेषता माना है। उसने अभिव्यक्ति और शैली पर अधिक ध्यान दिया है तथा बुद्धि चातुर्य का प्रदर्शन किया है।

ओवरबरी दल के सदस्य चतुर थे और उन्होंने वैविध्यपूर्ण विषय-वस्तु का चयन किया। उन्होंने चरित्रांकन को अंग्रेजी वातावरण के अनुरूप बनाया और उसके स्तर को उठाया। किन्तु उन्होंने वस्तुतः नवीन तत्त्वों का समावेश कम किया। उस समय विद्यमान तत्त्वों में से ही उन्होंने अपनी टेकनीक और विषय को चुना। उन्होंने

हाल के समान नैतिक उपदेश और व्यंग्य का प्रयोग नहीं किया, किन्तु उसके समान तथ्यों की व्याख्या अवश्य की है। सूक्ति-प्रयोग तथा वाग्वैदग्ध्य में वे हाल से अधिक सफल रहे हैं। ओवरबरी बेन जोन्सन का मित्र था और जोन्सन की विधि को ओवरबरी दल के रेखाचित्रकारों ने अपनाया। उन्होंने चित्रण के लिए जोन्सन के समान सामाजिक क्षेत्र को अपनाया, थियोफ्रेस्टस या हाल के समान नैतिक क्षेत्र को नहीं। उन्होंने जैकोबी समाज के स्त्री-पुरुषों, ऊंचे-नीचे वर्गों और अच्छाई-बुराइयों के विविधतापूर्ण चित्र खींचे हैं किन्तु उन्होंने सामाजिक बुराइयों का निदान करने की अपेक्षा वाग्वैदग्ध्य के प्रदर्शन के अवसर अधिक ढूंढ़े हैं। इन चरित्रों की एक विशेषता यह है कि यदि ये अच्छे हैं तो बहुत अच्छे हैं और यदि खराब हैं तो बहुत खराब।

हाल तथा ओवरबरी की अपेक्षा जान अर्ल चरित्रांकन में अधिक सफल रहा। चरित्रांकन करने वाली कृतियों में उसकी पुस्तक 'माइक्रोकास्मोग्राफी' सर्वश्रेष्ठ है। यह ऐसी आकर्षक भाषा में लिखी गई है और बुद्धि चातुर्य से युक्त है कि अब भी नवीन प्रतीत होती है। इसमें मानव स्वभाव की उन विशेषताओं का व्यंग्यात्मक चित्रण किया है जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती रहती हैं। यह छोटी सी पुस्तक सन् १६२८ में प्रकाशित हुई थी और तुरन्त लोकप्रिय हो गई थी। लेखक के जीवन काल में ही इसके दस संस्करण निकले। इसमें प्रारम्भ में पचपन चरित्र थे किन्तु छठे संस्करण में उनकी संख्या बढ़कर अठत्तर हो गई। इस कृति में अर्ल ने थियोफ्रेस्टस तथा ओवरबरी को अपना आदर्श माना है। अर्ल का अनुभव-क्षेत्र सीमित था और उसने विश्वविद्यालय में पाये जाने वाले प्रकारों (Types) का ही वर्णन किया है, उसे ग्राम्य जीवन का विशेष अनुभव न था।

अर्ल ने व्यंग्य और विदग्धता के साथ मनन का समावेश किया है। किन्तु वह अपने युग के दोषों से मुक्त नहीं है—उसने अर्थान्तिर-न्यास का बहुत प्रयोग किया है और यत्र-तत्र दुरूह कल्पना का सहारा भी लिया है। उसकी बुद्धि ओवरबरी से अधिक प्रखर थी किन्तु बुद्धि वैभव का प्रदर्शन करना उसका मुख्य उद्देश्य नहीं रहा। ओवरबरी ने चरित्र की बाह्य विशेषताओं पर ध्यान दिया है किन्तु अर्ल ने यह कार्य अपने चित्रों की सत्यता द्वारा किया है। थियोफ्रेस्टस के अनुयायी अंग्रेज लेखकों में उसकी कृति को सर्वश्रेष्ठ माना जा सकता है। फिर भी उनके चरित्रों में सभी परंपरागत गुणों का समावेश है। उसके रेखाचित्रों में थियोफ्रेस्टस की नीति प्रधानता और निरीक्षण-शक्ति, हाल की नैतिक एवं धार्मिक गंभीरता तथा ओवरबरी दल की सूक्ति-प्रियता, विदग्धता और यथार्थवाद का समन्वय है।

अंग्रेजी रेखाचित्रों में टामस फुलर की कृति 'दि होली एण्ड प्रोफेज़ स्टेट' एक

ऐसी कृति है जिसमें चरित्र, निबन्ध, जीवनी, सूक्ति आदि सबके तत्त्वों का समावेश है। इसके प्रथम, द्वितीय तथा चतुर्थ खण्डों में क्रमशः सम्बन्धियों, व्यवसायियों तथा शासकवर्ग के चित्र हैं। पंचम खण्ड में 'भ्रष्ट जगत' का चित्रण है जिसमें चुड़ैलों, गद्दारों और अत्याचारियों आदि का वर्णन है। इसका तीसरा खंड 'सामान्य नियमों' अर्थात् व्यवहार और शिष्टाचार से सम्बद्ध है। इसमें यथार्थवादी व्यंग्यात्मक विवेचन के साथ अच्छी मंत्रणा का समावेश भी है। फुलर को इसकी प्रेरणा लार्ड बेकन के निबन्धों से मिली थी।

फुलर अपने प्रकार का एक ही लेखक है। जिस समय अन्य रेखाचित्रकार विविधता के फेर में पड़े हुए अर्थहीनता का विस्तार कर रहे थे उस समय फुलर ने अपने व्यक्तित्व के कारण स्वाभाविक रूप से विविधता का समावेश किया। अर्ल के अतिरिक्त अन्य रेखाचित्रकारों में इतनी कृत्रिमता है कि उन्होंने स्वयं को तथा मानवता को अपनी रचनाओं से दूर रखा है। किन्तु फुलर की कृति में उसके व्यक्तित्व और मानवता दोनों के दर्शन होते हैं।

फुलर ने अपने निबन्धों को अनेक कहानियों से अलंकृत किया है जो अन्य लेखकों की तुलना में उसकी विशिष्टता को प्रदर्शित करती है। अपने व्यापक अनुभव और तीव्र स्मरण शक्ति की सहायता से उसने इन कहानियों को रेखाचित्रों में ग्रथित कर दिया है। इन कहानियों के कारण उसके रेखाचित्र एक भिन्न प्रकार का आनन्द प्रदान करते हैं। ये कहानियां मनोरंजक हैं तथा मानवतावादी भावना से युक्त हैं।

फुलर के रेखाचित्र आत्मपरक हैं जबकि अन्य लेखकों ने निर्वैयक्तिक रूप से लिखा है। उसने अपने रेखाचित्रों में उत्तम पुरुष सर्वनाम का प्रयोग किया है, जिसने उसके निबन्धों को विशेष ध्वनि तथा वातावरण प्रदान किया है। उसके वाक्यों पर उसके व्यक्तित्व की छाप है।

इन रेखाचित्रकारों के अतिरिक्त सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में जार्ज हर्बर्ट ने चरित्रांकन के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया था। उसकी 'ए प्रीस्ट टु दि टैम्पिल' अथवा 'दि कण्ट्री पार्सन' नामक कृति प्रसिद्ध है। यह असंबद्ध रेखाचित्रों का संग्रह नहीं है बल्कि सैंतीस अध्यायों में विभक्त एक छोटा सा प्रबन्ध है, जिसका प्रत्येक अध्याय पादरी के जीवन का एक-एक पहलू चित्रित करता है। अन्य रेखा-चित्रकारों ने अपनी बुद्धिमत्ता का प्रदर्शन किया है तथा विषय वस्तु का निरूपण कम। किन्तु हर्बर्ट इस दोष से मुक्त है। उसने सात्विक तथा प्रभावशाली जीवन के चित्रण द्वारा धर्म का समर्थन किया है। 'दि कण्ट्री पार्सन' एक सुन्दर निबन्ध है किन्तु यह पूरी तरह चरित्र की सीमा में नहीं आता। अन्य चरित्र लेखकों में निकोलस

ब्रेटन की रचना 'कैरेक्टर्स अपान ऐसेज, मारल एण्ड डिवाइन' प्रमुख है। इसमें विद्वत्ता, ज्ञान, प्रेम, शांति, सत्य, मृत्यु आदि विषयों पर निबन्ध लिखे गए हैं, किन्तु इन निबन्धों में कोरा शब्दाडम्बर है। जैफ्रे मिशल की कृति 'ऐसेज़ एण्ड कैरेक्टर्स आफ़ ए प्रिज़न एण्ड प्रिज़नर्स' एक उत्तम चरित्र संग्रह है। इन चरित्रों में गांभीर्य है जो अन्य रचनाओं में उपलब्ध नहीं है। डोनेल्ड लपटन ने मानव चरित्र की विशेषताओं के बजाय विभिन्न स्थानों को अपने रेखाचित्रों का विषय बनाया। उसने लंदन तथा अन्य स्थानों के रेखाचित्र प्रस्तुत किये हैं।

सत्रहवीं शताब्दी में चरित्रांकन की लोकप्रियता ने साहित्य की अन्य विधाओं—विशेष रूप से चिंतन प्रधान विधाओं के विकास को अवरुद्ध कर दिया। उक्त शताब्दी के दूसरे दशक की समाप्ति तक अनेक व्यक्तियों ने चरित्रांकन की विधि सीख ली थी। निबन्ध और चरित्र दोनों का विकास साथ-साथ हुआ और दोनों विधाएं प्रायः मिश्रित हैं। इन दोनों विधाओं का स्वरूप इतना व्यापक रहा कि ये किसी भी प्रकार के लेखन को अपने में समाहित करने लगीं। उस समय की व्यक्तिवादी विचारधारा के कारण इन्हें पर्याप्त समर्थन मिला।

अठारहवीं शताब्दी में चित्रकला ने अंग्रेजी रेखाचित्र साहित्य को प्रोत्साहन दिया। अठारहवीं शती के प्रारम्भ में वहां व्यंग-चित्र (Caricatures) अत्यन्त लोकप्रिय हो गये थे और उन्होंने राजनीतिक प्रचार पुस्तिकाओं का स्थान ले लिया था। तत्कालीन सत्तारूढ़ दल के प्रमुख सदस्य व्यंग-चित्रकारों के प्रिय विषय थे, किन्तु व्यंग्य-चित्रों का सामाजिक महत्त्व भी उस समय कम न था। चित्रकार होगर्थ ने व्यंग्य-चित्रकला की कई प्रकार से सहायता की। उसने दिखलाया कि व्यंग्य-चित्रों के क्षेत्र में राजनीतिक और सामाजिक विषयों का सफल निर्वाह किया जा सकता है। उसके विषय-निर्वाचन तथा विषय-निर्वाह का अंग्रेजी रेखाचित्र साहित्य पर प्रभाव पड़ा। उसने संसद में एक विधेयक पारित कराकर, चित्रकारों के कापीराइट के अधिकार को सुरक्षित कराया और इस प्रकार व्यंग्य-चित्रकला के व्यापारिक पक्ष को पुष्ट किया।

अठारहवीं शताब्दी के अंतिम चरण में इंग्लैड में व्यंग्य-चित्रों का इतना अधिक प्रचलन हो गया कि वे साहित्य को भी प्रभावित करने लगे। चित्रकार अपने चारों ओर विद्यमान सामान्य दृश्यों का अंकन करने लगे। उनकी रचनाएं जनता के लिए थीं, गिने चुने कला-प्रेमियों के लिए नहीं। उन चित्रकारों ने ऐसे साहित्य की खोज की जो उनकी रचनाओं की व्याख्या और पोषण कर सके, फलतः वे सचित्र पुस्तकों के लिए व्यंग्य-लेख लिखने वाले लेखकों की ओर आकर्षित हुए और व्यंग्य-

चित्रों की पुस्तकें साहित्य द्वारा संबलित हुई । इन विवरण युक्त सचित्र पुस्तकों ने यात्रा-साहित्य के प्रकाशन को प्रोत्साहन दिया । इस प्रकार की एक रचना विलियम कूम्ब कृत 'डायबौलियड' है जो एक तीखा व्यंग्य-काव्य है । यह काव्य एक सामंत के जीवन पर आधारित है, जिसकी परित्यक्ता प्रेमिका से लेखक ने धन पाने के वायदे पर विवाह कर लिया था, किन्तु उसे धन नहीं दिया गया था । उसने 'दि टूर आफ डा. सिन्टैक्स' नाम से एक घुमक्कड़ पादरी के यात्रा-वृत्तान्त छंदोबद्ध रूप में लिखे । ये वृतान्त लगभग दस हजार पंक्तियों में हैं । इन्होंने एक परंपरा का सूत्रपात किया, जिसने उन्नीसवीं शताब्दीं में 'पिकविक पेपर्स' को जन्म दिया । 'डा. सिन्टैक्स' में वर्णित दुबला-पतला, लंबी नाक और लंबी ठोढ़ी वाला पादरी शीघ्र ही एक लोक-प्रिय पात्र बन गया । वह अपनी बूढ़ी घोड़ी पर सवार होकर यात्रा के लिए निकल पड़ता है और कभी वह डाकुओं के बीच फंस जाता है तो कभी कोई सांड़ उसके पीछे पड़ जाता है । ऐसी भाग-दौड़ में वह कई बार पानी या कीचड़ में गिर जाता है और उसके साथ कितनी ही रोचक घटनाएं घटती हैं । अनेक अवसरों पर वह अपनी स्वाभाविक सरलता के साथ-साथ विद्वत्ता और सूझ-बूझ का परिचय भी देता है । भोजन-भट्ट, धूम्रपान का प्रेमी, वाचाल तथा मैत्रीपूर्ण होने के कारण उसने शीघ्र ही पाठकों के हृदय में स्थान बना लिया । 'डा. सिन्टैक्स' एक सफल कृति सिद्ध हुई और अनेक लेखकों ने उसका अनुकरण किया ।

उन्नीसवीं शताब्दी में इंग्लैंड में रेखाचित्र साहित्य की बड़ी उन्नति हुई । रेखाचित्र आधुनिक जीवन की आर्थिक उथल-पुथल, व्यस्तता में विकसित हुई विधा है । प्रसिद्ध उपन्यासकार चार्ल्स डिकिंस ने इस विधा का सफल प्रयोग किया है और अपने युग के आर्थिक वैषम्य को प्रकट किया है । उसके प्रसिद्ध रेखाचित्र-संग्रह 'स्कैचेज़ बाई बाज़' में लंदन की सुबह, वहां की शाम, वहां की सड़कें, वहां के पादरी, स्कूल, शिक्षक आदि के रेखाचित्र प्रस्तुत किये गये हैं । उसके उपन्यासों में अनेक पात्रों के सजीव और प्रभावशाली रेखाचित्र संगृहीत हैं । उसने प्रायः अंग्रेजों के स्वाभाविक दोषों का चित्रण किया है । उसकी विनोद प्रियता ने उसके व्यंग्य को तीक्ष्ण बना दिया है । उसने व्यापार अथवा सट्टे में शीघ्र सफलता पाने वाले व्यक्तियों का चित्रण किया है । उनके चरित्र की छोटी से छोटी विशेषताएं उसकी दृष्टि से बच नहीं सकीं । उसके पात्रों के नाम भी व्यंजनापूर्ण हैं और उन्होंने साहित्य के क्षेत्र में अमरत्व प्राप्त कर लिया है । बंबिल, पिपचिन, गेम्प, मिकाबर, कापर फील्ड आदि नाम सुनने में भी विचित्र प्रतीत होते हैं ।

'लिटिल डौरिट' में कैस्बी का रेखाचित्र डिकिन्स के सफल रेखाचित्रों में से

एक है। इस व्यक्ति के चेहरे पर बच्चों जैसा भोलापन है और उसके श्वेत केश-गुच्छों को देखकर मन में श्रद्धा उमड़ती है। यह मधुर-भाषी दार्शनिक-जैसा व्यक्ति गंदी बस्तियों में स्थित अनेक मकानों का मालिक है, किन्तु वह गंदी बस्तियों की दुर्दशा से नितान्त अनभिज्ञ है। मकानों का किराया वसूल करने के लिए उसने एक नौकर रखा है किन्तु वह नौकर जब किराये की निश्चित धन राशि इकट्ठी नहीं कर पाता तो उसे बड़ा आश्चर्य होता है। लोगों की बेईमानी की प्रवृत्ति से उसे बड़ा दुःख होता है। वह पूरे किराये के भुगतान पर बल देता है, किन्तु यह कार्य वह केवल अपने किराये दारों के हित की दृष्टि से करता है। परन्तु उसका यह आडम्बर अधिक समय तक नहीं चल पाता और एक दिन उसका नौकर उसकी झूठ, स्वार्थपरता और क्रूरता से तंग आकर अपने मालिक के सुन्दर केश-गुच्छों को कतर डालता है। तभी हमें वास्तविक स्थिति का ज्ञान होता है और हम उसे और अधिक दण्ड का पात्र समझते हैं। ऐसा कठोर व्यवहार करने वाले मकान मालिक आजकल भी मिलते हैं।

डिकिंस ने व्यंग्य के द्वारा जीवन के अनेक क्षेत्रों को आलोकित किया है। शिक्षा, धर्म, कानून, राजनीति प्रशासन कोई भी क्षेत्र उससे अछूता नहीं रहा। अपने साहित्यिक जीवन के प्रारंभ में ही उसकी दृष्टि शिक्षा और धर्म के क्षेत्र में व्याप्त दोषों की ओर आकृष्ट हुई, पाठशालाओं में बच्चों पर होने वाले अत्याचार तथा वहां के मूर्खतापूर्ण वातावरण का चित्रण उसने अपने रेखाचित्रों में किया है। उसका दृढ़ विश्वास था कि पाठशालाओं का दूषित वातावरण ही बाद में सामाजिक बुराइयों को जन्म देता है। उसने नैतिक दृष्टि से हीन तथा धर्म का ढोंग रचने वाले धूर्तों का भी सजीव चित्रण किया है। ऐसे व्यक्ति बाह्य धार्मिक उपचारों में बहुत विश्वास रखते हैं किन्तु वे धर्म के सच्चे रूप की ओर दृष्टि भी नहीं डालते। ऐसे पात्रों में पैकस्निफ उल्लेखनीय है, जो अपने नियमपूर्वक प्रार्थना करने के स्वभाव का बखान करता रहता है, क्योंकि प्रार्थना करना एक सम्मानित व्यक्ति के लिए आवश्यक है। नैतिक दृष्टि से गिरे हुए पात्रों में यूरिया हीप अग्रणी है, जो स्वयं को बड़ा दीन-हीन और विनम्र बतलाता है और हर समय रिरियाता रहता है। वह अपनी ईमानदारी पर बड़ा बल देता है, किन्तु अंदर ही अंदर उसका मन ईर्ष्या, घृणा और द्वेष से घुटता रहता है। जब वह अपने दुष्कर्मों के कारण कानून की पकड़ में आ जाता है तब उसका वास्तविक स्वरूप प्रकट होता है। डिकिंस के रेखाचित्र कहीं-कहीं पेंसिल के रेखाचित्रों के समान स्पष्ट व्यंजना-पूर्ण हैं, उसके प्रसिद्ध रेखाचित्रों की विविधता तथा अलंकरण इस कथन की पुष्टि करते हैं।

बीसवीं शताब्दी के अंग्रेज रेखाचित्रकारों में ए. जी. गार्डिनर का नाम प्रमुख है। वे 'ऐल्फा आफ दी प्लाउ' के उपनाम से प्रसिद्ध हैं। वे प्रारम्भ में राजनैतिक पत्रकार थे और उन्होंने 'डेली न्यूज' नामक पत्र के लिए चरितलेखों (Character sketches) की माला लिखी थी। ये लेख जीवनी प्रधान और आलोचनात्मक हैं तथा सीधी-सादी, सशक्त भाषा के कारण विशिष्ट हैं। वे लेखक की सूक्ष्म और संतुलित दृष्टि के परिचायक हैं। बाद में इन रेखाचित्रों के संकलन 'प्रोफेस्ट्, प्रीस्ट्स एण्ड किंग्स' नाम से सन् १९०७–८ में प्रकाशित हुए। गार्डिनर ने जार्ज बर्नार्ड शाप, एडवर्ड सप्तम, आर्थर जेम्स बलफोर, जान सिंगर सार्जेंट, जार्ज मेरेडिथ, प्रधान मंत्री, केसर, सर एडवर्ड ग्रे, लार्ड नार्थक्लिफ, डा. विलफोर्ड, फ्लोरेंस नाइटिंगेल, डैविड लायड जार्ज, लार्ड मार्ले, लंदन का विशप, प्रिंस बेला, लार्ड रोजबेरी, जनरल बूथ, लार्ड लारबर्न, टामस हार्डी, हैनरी चैप्लिन, लार्ड कर्जन, विंस्टन चर्चिल, हर्बर्ट सैमुअल, जार, डा. हार्टन फिलिप स्नोडन, जान बर्न्स, विलियम जैनिंग्स बायन, आगस्टिन बिरेल, रुडयार्ड किपलिंग, जी. के. चेस्टरटन के रेखाचित्र प्रस्तुत किये हैं। तीसरा संग्रह 'पेबिल्स आन दि शोर' सन् १९१७ में प्रकाशित हुआ। यह संग्रह तथा 'लीव्स इन दि विंड' लेखक के प्रसन्न प्रबुद्ध सहानुभूतिपूर्ण एवं विनोदप्रिय व्यक्तित्त्व के परिचायक हैं। गार्डिनर रेखाचित्रों के शीर्षक विचित्र तथा हास्यास्पद हैं। 'सर्टेन पीपुल आफ इम्पार्टेन्स' में उन्होंने कुछ उपर्युक्त महापुरुषों के अतिरिक्त अन्य महापुरुषों को भी चित्रित किया है। इसकी भूमिका में गार्डिनर ने लिखा है कि "इन रेखाचित्रों में मैंने युग की कुछ प्रवृत्तियों को प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। यह कार्य इन प्रवृत्तियों से युक्त महापुरुषों के माध्यम से किया गया है। ये रचनाएं केवल चित्र नहीं हैं बल्कि अद्‌भुत कृतियां भी हैं। इनमें विभिन्न आन्दोलनों और चरित्रों का सार प्रस्तुत किया गया है।"

'प्रिन्स क्रोपाटकिन' पर आपका महत्त्वपूर्ण स्केच है जिसका हिन्दी अनुवाद बनारसीदास चतुर्वेदी ने किया है। इसका प्रारम्भ इस प्रकार होता है।

> "ठीक फौजी ढंग पर कंधों को चौड़ा किये हुए वह नर पुंगव एक सिपाही की ही भांति चुस्त खड़ा हुआ था, लेकिन उसके प्रशस्त मस्तिष्क, भरी हुई भौंहें, फैली हुई दाढ़ी तथा विशाल नेत्र इस बात की घोषणा कर रहे थे मानो वह कोई फिलासफर दार्शनिक है। उसकी आँखों से बुद्धिमत्ता तथा परोपकारिता टपक रही थी, और वह बड़ी तेजी के साथ बातचीत कर रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि जितनी शीघ्रता के साथ विचार उसके दिमाग में आ रहे हैं, उसका

मुकाबला भाषा के मन्द चाल से चलने वाले शब्द नहीं कर सकते।"

'सर्टेन पीपुल्स आफ इम्पोर्टेंस' में गार्डिनर ने लेडी एस्टर (इंग्लैंड की लोक-सभा की प्रथम महिला सदस्य), रैमजे मैकडोनेल्ड, कैल्विन कूलिज़, डीन इंज, वाइ-कांउट ग्रे, लार्ड बीवर बुक, विंस्टन चर्चिल, लेडी आक्सफोर्ड, प्रिंस आफ़ वैल्स, लार्ड बैलफोर, मुसोलिनी, आर्नल्ड बेनेट, अर्ल हेग, सर आस्टिन चैंबरलेन, स्टेनले बाल्डविन, लार्ड वर्किनहैड, हैनरी फोर्ड, जान व्हैटले, फादर हिंडेनबर्ग, जान मेनार्ड, सर विलियम मारिस, चार्ली चैप्लिन, बर्नार्ड शा, सिबिल थार्नडाइक, लार्ड रदरमीअर, सर जेम्स बेरी आदि के रेखाचित्र निर्मित किये हैं।

गार्डिनर ने रेखाचित्र खींचने के लिए बड़े विचित्र विषयों को चुना है जैसे छतरी सम्बन्धी नियम, लम्बे पैर और छोटे पैर, जेबें और वस्तुएं, टोप का दर्शन आदि। किन्तु इन हास्यास्पद शीर्षकों के विपरीत इन निबन्धों में गम्भीर तत्त्वों का समावेश भी है। इनमें गार्डिनर एक विनोदप्रिय दार्शनिक के रूप में सामने आते हैं। इनमें रेखाचित्रों में जब तब नश्वरता का आभास मिलता है।

अपने क्षेत्र में गार्डिनर के रेखाचित्र एक नयी प्रणाली के द्योतक हैं। अपने क्षेत्र के वे अद्वितीय कलाकार हैं। इस सम्बन्ध में श्री बनारसीदास चतुर्वेदी का यह मत विचारणीय है कि इस समय गार्डिनर के मुकाबले का स्कैच लेखक कोई नहीं है। नये रेखाचित्र लेखकों के लिए उन्होंने गार्डिनर की रचनाओं का भली-भांति अध्ययन करने की सलाह दी है। इन रेखाचित्रों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनके लेखक ने अपने व्यक्तित्व को बिल्कुल पीछे रखा है। इनके प्रकाशित होते ही इंग्लैण्ड में धूम मच जाती थी और स्थान-स्थान पर इन्हीं की चर्चा होती थी। रेखाचित्र-कारों में गार्डिनर सबसे सिद्धहस्त कलाकार है।[1]

नाटककार गाल्सवर्दी ने भी 'स्थिडिलबेरीज़' नाम से उत्कृष्ट रेखाचित्र खींचे हैं। फ्रेंक हैरिस मानव स्वभाव के बहुत अच्छे जानकर थे। हैरिस के रेखाचित्र भी प्रसिद्ध हैं।

'स्टीफन ज्विग' भी रेखाचित्र कला में निष्णात हैं। आपने साहित्यिक मित्र रोमां रोलां का सफल रेखाचित्र प्रस्तुत किया था जिसका अंश इस प्रकार है—

"कमरे में किताबों के ढेर के ढेर रखे हुए हैं। कुछ दीवार के किनारे से सटी हुई हैं और कुछ फर्श पर ही पड़ी हुई हैं कुछ ने कुर्सी

१ श्री बनारसीदास चतुर्वेदी—रेखाचित्र की भूमिका से।

पर आसन जमा रखा है, तो कुछ मेज पर भी डटी हुई हैं। केवल दो कुर्सियां हैं, एक स्टोव चूल्हा है, आराम की कोई चीज़ नहीं हैं। ऐसी किसी वस्तु का अभाव ही समझिए। जिससे किसी आगन्तुक का मन यहां विरम सके। एक परिश्रमी विद्यार्थी की कुटी कहिए या मेहनती कैदी की कोठरी। पुस्तकों के बीचों बीच एक विनम्र व्यक्ति बैठा हुआ है। पोशाक किसी धार्मिक आदमी जैसी सीधी सादी है। बदन छरहरा, ऊंचाई पर्याप्त, चेहरे से कोमलता टपक रही है। रंग पर कुछ पीलापन है, जिससे प्रकट होता है कि यह भलामानस मुक्त पवन में भ्रमण नहीं कर रहा। मुख पर झुरियां नजर आ रही हैं जिससे स्पष्ट है कि इसके रात्रि के भी अनेक घण्टे परिश्रम करते हुए बीतते हैं। भौंहों पर कुछ सफेदी आने लगी है। वह बोलता कम है। चलता धीरे-धीरे है।"

बंगला-असमिया-उड़िया

बंगला

भारत में सबसे पहले बंगला में पश्चिम से प्रभावित होकर नवीन साहित्य-विधाओं में लेखन-कार्य प्रारम्भ हुआ। १९वीं शताब्दी में ही पेरिचांद मित्र ने टेकचन्द्र ठाकुर पर सफल रेखाचित्र लिखा। बंकिम के उपन्यासों में तो सफल रेखाचित्र हैं ही। पर उन्होंने पृथक् से भी रेखाचित्र लिखे। इन्द्रनाथ बनर्जी तथा त्रैलोक्यनाथ मुखर्जी इस विधा के प्रारम्भिक लेखकों में से रहे हैं। विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने सफल चित्रकार होने के नाते काव्य के साथ-साथ गद्य में भी अच्छे रेखाचित्र लिखे हैं।

राजशेखर बोस 'परशुराम' उपनाम से अनेक व्यंग्य रेखाचित्र लिखते रहे हैं। 'परशुराम' के बाद बंगला के सर्वश्रेष्ठ रेखाचित्रकार 'वलायबाबू' 'बनफूल' कहे जा सकते हैं। रजनीकान्त दास और नन्दलाल सेन गुप्त भी समय-समय पर इस विधा में लिखते रहे हैं। शिवराम चक्रवर्ती के स्केच बंगला साहित्य में अद्वितीय हैं।

सबसे उल्लेखनीय घटना है 'पंच' के समान कलकत्ते से 'बसन्तक' नामक पत्र का प्रकाशन जिसमें नियमित रूप से बड़े मार्के के स्केच तथा व्यंग्यात्मक रेखाचित्र प्रकाशित होते थे। दुर्भाग्य से यह पत्र केवल २ वर्ष (१८७६-७८) ही चल सका, अन्यथा आज साहित्य की प्रगति कुछ और ही रूप में होती।

'हंस' के रेखाचित्र विशेषांक में (१९३९ ई०) नन्दलालसेन गुप्त के कई लघु तथा अद्वितीय निम्नलिखित रेखाचित्र प्रकाशित हुए—

१. अवनीन्द्र नाथ ठाकुर

इसमें महर्षि देवेन्द्रनाथ के पौत्र और कवि गुरु रवीन्द्रनाथ जी के भतीजे शिल्पाचार्य अवनीन्द्रनाथ का लघु रेखाचित्र है।

२. नजरुल इस्लाम

इस स्केच का कुछ अंश इस प्रकार है—

"काजी नजरुल इस्लाम ने साहित्य-क्षेत्र में सहसा दर्शन दिया था। उनका आविर्भाव भी धूमकेतु की ही तरह हुआ था और प्रस्थान भी धूमकेतु की ही तरह हुआ। लेकिन आधुनिक बंगला-साहित्य में जो प्राण-प्रेरणा है, उसे नजरुल इस्लाम की रचनाओं से बहुत कुछ सहायता मिली थी। बंगला-काव्यों में इतने दिनों तक रवीन्द्र धारा का ही अनुकरण होता रहा था। रवीन्द्रनाथ की सौन्दर्य-दृष्टि, उनकी सुललित शब्द-योजना में सबसे बढ़कर प्रत्यक्ष जीवन से कोई संबंध न रखनेवाले लोकातीत जीवन में, बंगाली लेखकों के सामने अपरिहार्य रूप से आ खड़ी हुई थी। नजरुल इस्लाम ने ही सबसे पहले इस रसात्मकता को पीछे हटाकर वीर रस की कविताएं लिखना आरंभ किया था।

युवावस्था में काजी साहब बहुत सुन्दर थे। अब भी उनकी आकृति में बहुत कुछ सौन्दर्य है। ये बहुत सुन्दर गाने वाले भी हैं। इनके गीत और कविताएं जो लोग सुनते थे, वे मुग्ध हो जाते थे। इनके सबसे अधिक उल्लेखनीय गुण बन्धु-वात्सल्य और उदारता हैं। इस दृष्टि से इनका मुकाबला करने वाला और कोई नहीं है।"

३. शैलजानन्द मुखोपाध्याय

श्री शरतचन्द्र के बाद कथा-साहित्य में शैलजानन्द मुखोपाध्याय सबसे अधिक जनप्रिय हैं और शक्तिमत्ता के विचार से भी उनका नाम सबसे पहले उल्लेखनीय है। इनका जन्म एक दरिद्र परिवार में हुआ था। .... कहानियों में शैलजानन्द और कविता में काजी नजरुल इस्लाम आरम्भ से ही अपनी पूर्ण शक्ति लेकर आविर्भूत हुए थे। अपने प्रथम प्रकाश के समय ही ये दोनों अपने देश-वासियों की श्रद्धा आकृष्ट करने में समर्थ हुए थे।

असमिया

'कहानी और निबन्ध' के बीच का 'एक प्रकार का साहित्य' जिसे बिरिंचिकुमार

बरुआ ने अभिहित किया है वस्तुतः वह व्यक्तिगत निबंध तथा रेखाचित्र हैं जिसमें निष्णात बेज बरुआ हैं जिन्होंने चेस्टरटन के स्टाइल के अनुकरण पर लिखा है।

बाद में बेज बरुआ के अनुकरण पर ही सत्यनाथ बरा ने अनेक सामाजिक रेखाचित्र लिखे जिनका संग्रह 'केन्द्र सभा' शीर्षक पुस्तक में किया गया।

उड़िया

उड़िया में गोपाल चन्द्र प्रहराज के पैने व्यंग्यात्मक रेखाचित्रों का महत्त्व है। सा. च. महापात्र ने भी कुछ अच्छे 'स्मृति-चित्र' लिखे हैं।

गुजराती-मराठी

गुजराती

गुजराती साहित्य में ही 'थम्ब नेल स्केच' के लिए 'रेखाचित्र' का प्रयोग प्रथम-प्रथम किया गया, इधर हिन्दी में भी उस समय एक साथ रेखाचित्र, स्केच तथा शब्द-चित्र शब्द चल रहे थे। कालान्तर में गुजराती में प्रयुक्त शब्द 'रेखाचित्र' ही अधिक प्रयुक्त होने के कारण महत्त्व पा गया।

गुजराती साहित्य में सुप्रसिद्ध कवि उमाशंकर जोशी ने कुछ अच्छे रेखाचित्र भी लिखे हैं। उनका लिखा हुआ एक रेखाचित्र 'झवेरचंद मेघाणी' उल्लेखनीय है जो हंस के रेखाचित्र विशेषांक १६३६ में प्रकाशित हुआ था। इसका एक अंश इस प्रकार है—

> "एक काठियावाड़ी योद्धा-सी भरावदार काया और वैसी ही उनकी आँखें हैं। पर वे नम्र इतने हैं कि अपने नौकर को भी 'भाई' कहकर पुकारते हैं।"

उमाशंकर जोशी पर स्नेह रश्मि ने एक रेखाचित्र प्रस्तुत किया था। श्रीमती सोफिया वाडिया एक विदुषी महिला रत्न हैं। आपने भी अच्छे रेखाचित्र लिखे हैं। इन रेखाचित्रों में उल्लेखनीय है, 'अरदेशिर एफ. खबरदार'।

वामन चोघड़े ने 'काका कालेलकर' पर संक्षिप्त किन्तु मार्के का रेखाचित्र प्रस्तुत किया है। एक वाक्य में ही उनका सारा स्वभाव स्पष्ट हो जाता है,

> "चंदन की तरह उनकी वृत्ति है। कमल की भांति वे हँसते हैं और मधुमक्षिका की उद्योगपरता उनमें अधिष्ठित है।"

काका साहब ने स्वयं छोटे-छोटे अद्वितीय चित्र प्रस्तुत किये हैं। गुजराती साहित्य में ही नहीं वरन् समस्त भारतीय साहित्य में उनके लघु चित्रों की तुलना नहीं की जा सकती।

श्रीमती लीलावती मुंशी ने गुजराती में रेखाचित्र लिखने में अपूर्व सफलता पाई है। उनके चित्र बड़े सजीव बनते हैं। व्यक्ति का व्यक्ति के प्रति और खास कर लेखक के प्रति एक कुतूहल होता है। रेखाचित्र हमें सहायता देते हैं कि व्यक्ति विशेष को समझ सकें। परिभाषा और विषय दोनों ही दृष्टि से उनके रेखाचित्र विशेष महत्त्व रखते हैं। आपने भारत के और विशेषकर गुजरात के कई लेखकों और नेताओं के सफलतापूर्वक चित्र प्रस्तुत किये हैं। बहुत समय पूर्व अहमदाबाद से रेखाचित्रों का संग्रह 'जुनां अने नवा' शीर्षक से पुस्तकाकार प्रकाशित हुआ था। सन् १९२१-२२ से आपने रेखाचित्र लिखना प्रारम्भ किया। आपके रेखाचित्रों का संग्रह हिन्दी में भी 'रेखाचित्र' शीर्षक से १९५२ ई. में प्रकाशित हो चुका है जिसमें ४४ चित्र हैं।

श्रीमती मुन्शी पर इन्द्र बसावड़ा ने रेखाचित्र लिखा था :—

"सुकुमार देहलता, मुख पर गर्व की रेखाएँ, दुबली-पतली, लीलावती बहन पच्चीस वर्ष की प्रतीत होती है।"

श्रीमती लीलावती मुंशी के चित्र 'गुजरात' मासिक में क्रमशः छपने लगे। इसी समय वे कहानियाँ भी लिखने लगीं। गुजराती में इस प्रकार के रेखाचित्र श्रीमती मुंशी ने ही प्रथम-प्रथम लिखे, भाषा मंजी हुई, भावपूर्ण, सरस तथा सरल है। क. मा. मुंशी ने आपके संबंध में लिखा है, "जो भी चित्र इन्होंने खींचे हैं वे हल्के रंगों के होने के कारण नेत्रों को भाते हैं, उनमें चकाचौंध उत्पन्न नहीं करते। सभी नवीन विधाओं में आपने लेखनी उठायी है, रेखाचित्रों के साथ-साथ 'काश्मीरनी डायरी' और 'यूरोपना पत्र' उल्लेखनीय कृतियां हैं।"

कन्हैयालाल मुंशी और प्रो. खुशाल तलकशी शाह ने भी सफल रेखाचित्र लिखे हैं जिनका अनुवाद भी श्रीमती मुंशी ने किया है। इनके अतिरिक्त नरसिंहराव तथा रमणलाल के नाम भी इस दिशा में उल्लेखनीय हैं। झवेरचन्द मेघाणी के रेखाचित्रों का हिन्दी में अनुवाद 'मानवता के दीये' शीर्षक से हुआ है जिसके प्रथम खंड में १७ रेखाचित्र हैं।

मराठी

विद्वान् सुले ने उमाशंकर जोशी का मराठी में एक चित्र प्रस्तुत किया है, उदाहरणार्थ, "विश्वविद्यालय में प्रथम श्रेणी प्राप्त करने का राजमार्ग त्याग, नमक-सत्याग्रहियों की टुकड़ी में सैनिक बने और जेल में तीसरी श्रेणी पसन्द की। मुश्किल से वह उन्नीस वर्ष के हुए होंगे कि उन्हें वीरसगाम के युद्ध मंडल में ले लिया गया और वहां पत्रिका

लिखने का काम सौंपा गया। काका साहब के उदात्त जीवन, विद्वत्ता, साहित्य रसिकता और उनकी यात्राओं और उनके पर्यवेक्षण से पूरा-पूरा लाभ उठाया। निपुणता से शरीर पर शल्य-क्रिया करने वाले कुशल वैद्य की भांति, मानव के अन्तर का विश्लेषण करने वाले उमाशंकर की निष्ठुर पर वास्तविक कृतियों में सुन्दर अभिरुचि और सहृदयता का जो अखंड स्रोत बहता रहता है वह काका साहब के सहवास का ही फल है।"

श्रीमती लक्ष्मीबाई तिलक का 'स्मृति चित्र' उल्लेखनीय है।

श्री स. टिकेकर ने सरदेसाई स्मारक ग्रन्थ में 'रियासत कार सरदेसाई' शीर्षक से एक रेखाचित्र प्रस्तुत किया था जो हंस में भी प्रकाशित हुआ। रा. भि. जोशी के यात्रा रेखाचित्र प्रसिद्ध हैं।

ना. ग. गोरे के रेखाचित्र भी जो कि अधिकतर कोकण-प्रदेश के व्यक्तियों के हैं भावुकता लिये हुए हैं। उनमें साहित्यिक गुण उभरकर आया है।

इस वर्ष सन् १९६६ का ही साहित्य अकादमी का पुरस्कार मराठी के लिखे रेखाचित्रों के संग्रह 'व्यक्ति आणि वल्ली' शीर्षक ग्रन्थ पर पु. ल. देशपाण्डे को दिया गया। पु. ल. देशपाण्डे के व्यंग्य रेखाचित्र और हास-परिहास पूर्ण नाटक विशेष उल्लेखनीय हैं।

'व्यक्ति आणि वल्ली' वस्तुतः व्यक्ति चित्रों तथा रेखाचित्रों का संग्रह है। इसके रचयिता देशपाण्डे मराठी के नाटककार, हास्य लेखक, साथ ही अभिनेता हैं। सप्राण शैली में लिखे हुए इन सजीव रेखाचित्रों में आत्मीयता के दर्शन होते हैं। आपके साहित्यिक निबंधों, रेखाचित्रों और एकांकी नाटकों का जीवन्त विनोद और उनकी उत्फुल्लकारी मौलिकता दर्शनीय है। आपकी अकादमी से पुरस्कृत पुस्तक अपने सजीव चित्रात्मक वर्णन के नाते मराठी साहित्य की एक अनुपम देन है।

पंजाबी-सिन्धी

पंजाबी

पंजाबी में लिखे गये उपन्यासों तथा कहानियों में वहाँ के जन-जीवन के अच्छे चित्र मिलते हैं। स्वतन्त्र विधा के रूप में इस ओर 'बलवन्त गार्गी' ने विशेष ध्यान दिया। आपके लिखे रेखाचित्रों का संग्रह 'नीम की पत्तियां', तथा 'सुरमेवाली आंखें' उल्लेखनीय हैं।

इस विधा में लिखने वाले दूसरे लेखक हैं—कुलवन्तसिंह कांग। आपके भी

शब्द-चित्रों के संग्रह 'बादलों के रंग' तथा 'पाषाण रेखाएँ' शीर्षक से प्रकाशित हो चुके हैं।

इन दोनों लेखकों के अतिरिक्त सबसे महत्त्वपूर्ण नाम है, हिन्दी-पंजाबी के सुप्रसिद्ध लेखक-आलोचक, कवि डा. हरभजनसिंह का। डा. सिंह ने अब तक आठ उल्लेखनीय रेखाचित्र लिखे हैं जिनका अभी तक कोई संग्रह प्रकाशित नहीं हुआ है।

आपने अपने बचपन के मित्र 'हरिया' पर तथा जीवन में आयी हुई प्रथम लड़की का शब्दचित्र 'तारो' शीर्षक से लिखे थे जो 'पंजाबी साहित्य' में प्रकाशित हुए।

मौलवी रहमतुल्ला, जो आपके पहले अध्यापक थे, पर भी आपने एक अच्छा स्केच लिखा। पंजाबी के प्रसिद्ध उपन्यासकार नानकसिंह जो आपके अच्छे मित्र भी हैं, पर एक सजीव रेखाचित्र प्रस्तुत किया। प्रसिद्ध लोकगीतकार तथा कहानी लेखक देवेन्द्र सत्यार्थी पर भी आपने एक स्केच लिखा जो 'आरसी' के माध्यम से पाठकों के पास पहुँचा। बचपन के कवि 'पियारा सिंह' पर भी आपने एक शब्द-चित्र लिखा जिसको 'प्रीतिलड़ी' में स्थान दिया गया है।

आपने अपना भी एक चित्र 'अपनी तस्वीर' शीर्षक से लिखा था जो प्रकाशित हो चुका है।

इन लेखकों के अतिरिक्त इस विधा में लिखने वाले लेखकों में गुलजार सिंह सन्धु, अतर सिंह तथा बूटा सिंह भी उल्लेखनीय हैं।

सिन्धी

सिन्धी में राम पंजवाणी 'पद्मा', 'क़ैदी' और कलात्मक प्रकृति और भावुक मनुष्यों के रेखाचित्र लिखने में निष्णात हैं।

इधर और भी युवक लेखक अच्छे चित्र प्रस्तुत करने में प्रयत्नशील हैं।

दक्षिण भारतीय भाषाएँ

तमिल

तमिल साहित्य में प्रसिद्ध उपन्यासकार रा. कृष्णमूर्ति 'कल्की' शब्द-चित्र लिखने में निष्णात रहे हैं। राजाजी पर आपका रेखाचित्र 'राजाजी और उनकी धुंधली ऐनक' शीर्षक से 'हंस' के रेखाचित्रांक में प्रकाशित हुआ था।

धुंधली ऐनक पर—कइयों का ऐसा ख्याल है कि उस धुंधली ऐनक में कोई जादू है। कुछ लोगों का कहना है कि अपने दिल की बात दूसरे न जानें, इसी सबब

से राजाजी धुंधली ऐनक लगाते हैं और कुछ लोगों का विश्वास है कि उस धुंधली ऐनक के द्वारा वे दूसरों के मन की बात भांप लेते हैं। ऐसे विश्वास रखने वालों की भी कमी नहीं है कि सी. आर. की धुंधली ऐनक अगर किसी भी तरह से चुरा ली जाय, तो उनकी शक्ति का तीन-चौथाई हिस्सा छूमंतर हो जाय।

नई शैली में उसका अंश इस प्रकार है--

> "वे जानते हैं कि राजाजी का हृदय उच्च और विशाल है, वह विरोधियों से भी प्रेम करता है, दीन-दुखियों के लिए फूटकर पिघलता है।
>
> जहाँ तक मेरा ख्याल है उनका दुबला शरीर सारे-का-सारा हृदयमय ही है।
>
> मेरा विश्वास है कि दूसरों के दुःखों को देखकर आंसू बहा-बहाकर ही, उनका शरीर सूख-सूखकर कांटा हो गया है।
>
> उनकी तरह अपने बच्चों से प्रेम करने वाले पिता को मैंने देखा नहीं है।"

दूसरे प्रसिद्ध रेखाचित्रकार हैं ना. शिवरामन् जिनका लिखा हुआ एक अच्छा रेखाचित्र टी. एस. चौक्कलिंगम् शीर्षक से प्रकाशित हुआ है। आप 'दिनमणि' के प्रधान सहसंपादक रहे हैं। अपने निकट संगी पर सफलता के साथ शब्द-चित्र खींचा है, जिसका एक अंश इस प्रकार है--

> "महात्माजी का ध्यान करते ही जिस तरह चर्खे का चित्र हमारी आँखों के सामने फिर जाता है, उसी तरह चौक्कलिंगम् को सोचते ही उनकी उद्दंड लेखनी हमारी आँखों के सामने आकर खड़ी हो जाती है। हाथ में कलम और पास में पत्रिका के बिना अगर इनका चित्र खींचा जाय, तो वह ठीक न होगा। वह कलम भी बिलकुल कड़ी कलम हो, जिससे लिखते वक्त नीचे के पांच सफ़ों पर हरूफ़ों का निशान दीखे। उनका हरएक हरूफ़ एक-एक आंवले के टक्टर का होता है, याने खूब बड़ा-बड़ा। जब वह प्रेस में जाकर अख़बार की सूरत में निकल आता है तब उसके पढ़नेवालों को या तो बहुत गुस्सा आता है या बहुत खुशी होती है और वह गुस्सा या खुशी एक लंबे अरसे तक बनी रहती है। लिखने में वे किसी का लिहाज़ नहीं रखते। किसी का आदर करना हो तो खुले दिल से उसका परा आदर करेंगे, और खंडन में भी वही बात, चाहे वह कोई

भी क्यों न हो। या तो उसे बड़ा भारी देशभक्त होना चाहिए या देशद्रोही, या तो खट्टा रहे या मीठा, लेकिन खटमिट्ठा नहीं।

ऐसी कड़ी कलम को काम में लानेवाले इस शख्श से अगर आप समक्ष में मिलेंगे तो जानेंगे कि इसका–जैसा हंसमुख और उदार व्यक्ति दूसरा न होगा। किसी भी धार्मिक विधि में उनकी आस्था नहीं है, लेकिन माथे पर कुंकुम की बिन्दी लगाये बिना एक दिन भी नहीं रहते।"

एक वाक्य में उनका चित्र इस प्रकार है––

"पवित्र आचार-विचार, चाल और पहनावे में सादगी और सौन्दर्य, इनके साथ ही लंबा और गठीला बदन–ये सब उनके सहायक हैं।"

कु. प. राजगोपालन् के शब्द-चित्र भी प्रसिद्ध हैं। आपका अपने बचपन के साथी 'पिच्चमूर्ति' पर पठनीय रेखाचित्र है, जिसका एक अंश इस प्रकार है––

"अच्छा गोरा रंग था, सिर पर लंबी चौड़ी शिखा, घूर-घूरकर देखनेवाली आंखें, उठी हुई नाक, दमकती हुई दन्त-पंक्ति, डील-डौल न ऊँचा और न ठिगना। पिच्चमूर्ति और मैं–दोनों ने मिलकर उसी दिन कनकौए उड़ाना शुरू किया था।"

एक उपमा में उनकी सजीव मूर्ति इस प्रकार खड़ी हो जाती है––

"पिच्चमूर्ति सितार के समान एक ध्वन्यात्मक जीव हैं। कोई भी छोटी-सी वायु-लहरी उसके हृदय से टकराकर गमक उत्पन्न कर सकती है।"

साहित्य के मर्मज्ञ के. स्वामिनाथन् भी इस कला में पटु हैं। महामहोपाध्याय स्वामिनाथ अय्यर पर आपके रेखाचित्र का कुछ भाग इस प्रकार है––

"गर्दन को ढकनेवाली अचकन, दीवार को देखने के बदले दरवाजे को देखनेवाली पगड़ी और स्वाभाविकता से अंग्रेजी न बोल सकना–इतनी बातें एक ही शख्स में मिली हुई हैं, तो वह इज्जत पाये तो कैसे?"

सी. राजगोपालाचार्य स्वयं अच्छे व्यंग्य-रेखाचित्रकार हैं
नये साहित्यकारों में भी अनेक इस विधा में रुचि ले रहे हैं।

तेलुगु-कन्नड़

तेलुगु में को. रामकोटीश्वर राव का नाम उल्लेखनीय है जिन्होंने अपने ग्रन्थ 'महाराष्ट्र वीरलु' में रेखाचित्र संकलित किये हैं।

कन्नड़ में श्री एस. वेंकट सुबैया रंगन्ना को 'रंगविन्नप' शीर्षक कृति पर साहित्य अकादमी का पुरस्कार भी मिल चुका है। रेखाचित्र साहित्य में यह कृति उल्लेखनीय महत्त्व रखती है।

'सुधा', 'कस्तूरी', 'जीवन' आदि कन्नड़ की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में रेखाचित्र प्रकाशित होते रहते हैं। इन रेखाचित्र-लेखकों में अ. न. कृष्णराय अश्वथ, निरंजन, बसवराज कट्टीमनी, एल. एस. शेषगिरिराव, नाडेगेर कृष्णराव आदि प्रमुख हैं। सन् १९६० में श्री अग्न कृष्णराय का 'समर सुन्दरी' नामक एक कथा संग्रह प्रकाशित हुआ जिसमें कुछ ऐसे चित्र हैं जो मानव जीवन के सर्वांग सुन्दर चित्र प्रस्तुत करते हैं। उन्होंने एक कुत्ते का जीवन चित्रित कर नई दिशा में रेखाचित्र को मोड़ा है।

श्री निरंजन ने अपनी कहानी 'ओटि नक्षत्र नविकलु' में एक ऐसे व्यक्ति का चित्र प्रस्तुत किया है जिसने बांध बांधते समय अपने को होम कर दिया। यह चित्र श्रीमती महादेवी के रेखाचित्रों का स्मरण करा देता है। श्री वें. मु. जोशी के रेखाचित्रों में 'कलंक', 'हिरिद रस', 'मुत्तिन हार' आदि सैनिकों के जीवन-चित्र को प्रस्तुत करते हैं।

कन्नड़ साहित्य के रेखाचित्र साहित्य में श्री भारती सुत के चित्र बड़े मार्के के हैं। आपने 'बेंकियल्लि बिद्दवलु', 'चिब हिड़िद मीनु' नामक दो सुन्दर रेखाचित्र लिखे हैं। इनमें प्रादेशिक वातावरण का बड़ा ही सुन्दर तथा सजीव वर्णन हुआ है।

श्री द. बा. कुलकर्णी जी ने कुप्पुहुड़गी 'नालिन कनसु' आदि चित्र लिखे हैं। आपके चित्रों में मानव-मन का बड़ा ही सूक्ष्म विश्लेषण किया गया है। प्रौढ विचार-शील, सरल चित्रांकन इनके रेखाचित्रों की विशेषताएं हैं। श्रीनिवास हावनूर के 'कागेगे हैलिद कथे' संकलन में दाम्पत्य जीवन के सजीव चित्र हैं। इनके अतिरिक्त के. रामकृष्ण भट्ट, दु. नि. बेलगली, एस. वी. श्रीनिवासराव, न. सुब्रमण्य, म. वि. नायक, अनंत राव भोसगे, सा. सु. मणि, ना. डिसोजा, रायचूर के शिवलेक आदि कलाकार रेखाचित्र लिखने वालों में प्रधान हैं। इनके अतिरिक्त काव्यमय चित्र प्रस्तुत करने वाले कवियों में श्री पंच अग्रणी हैं।

डा. अनुपमा निरंजन ने भी विधा के माध्यम से रोगियों का बड़े ही मनो-वैज्ञानिक ढंग से चित्रण किया है। श्रीमती गीता कुलकर्णी, सरस्वती गौड़, सुशीला कोप्पर, आनंदी शिवराव, त्रिवेणी भुवनेश्वरी के रेखाचित्र कन्नड़ साहित्य में बेजोड़ हैं।

श्री बसवराज कट्टीमनी का 'मुन्ना' वह रेखाचित्र है जिसमें एक कुत्ते का भावमय चित्रांकन किया गया है।

टी. पी. कैलासम पर एस. कृष्ण शर्मा का लिखा हुआ रेखाचित्र 'हंस' के रेखाचित्रांक में प्रकाशित हुआ था। इस अंक में ही 'मास्ति श्रीनिवास' शीर्षक से दा. रा. बेंद्रे का रेखाचित्र भी प्रकाशित हुआ। उनकी हंसी का एक चित्रांकन द्रष्टव्य है——

> "इनकी हंसी उस दृष्टि की किरणावली है। 'क्ष' किरणों की तरह वह अन्दर की सत्यता को प्रकट करेगी। इनकी हंसी नकली नहीं है, तमाशा नहीं है, दिल्लगी नहीं। जैसी चीज वैसी रुचि। चटनी के समान वह बाह्य रुचि की नहीं है।"

नवोदित कहानीकार तथा अन्य लेखकगण कन्नड़ साहित्य में रेखाचित्रों की अभिवृद्धि करने में संलग्न हैं। यही कारण है कि कन्नड़ से प्राप्त रेखाचित्र-संकलन पर साहित्य अकादमी का पुरस्कार मिला है।

श्री शिवराम का 'पोस्टमास्टर' श्री निराला के 'बिल्लेसुर बकरिहा' तथा 'चतुरी चमार' के निकट रखा जा सकता है। वर्तमान क्रान्तिकारी समस्याओं का चित्रांकन भी कन्नड़ के लेखकों ने किया है। चीनी आक्रमण से प्रभावित अनेक रेखाचित्र लिखे गये हैं। शेषनारायण का रेखाचित्र-संकलन 'सीलुनाई' इस आक्रमण का मार्मिक चित्र उपस्थित करता है। इसी प्रकार श्री पद्‌मेन्द्र का 'प्रलयानल' भी सुन्दर है।

मलयालम

उपन्यास, कहानी, निबन्ध आदि आधुनिक साहित्यिक रूपों की भांति रेखाचित्र भी पाश्चात्य साहित्य के घनिष्ठ संपर्क से ही भारत के सभी साहित्यों में समाहित हुआ है। मलयालम की स्थिति भी इससे भिन्न नहीं। मलयालम के रेखाचित्र साहित्य की अंग्रेजी के रेखाचित्रों के शिल्प-विधान से बहुत समानता दिखाई देती है। प्रसिद्ध रेखा-चित्रकारों की शैली में मलयालम में अनेक रेखाचित्र लिखे गये हैं। ए. जी. गार्डिनर के 'आल्फा आफ् दि प्लाऊ' 'पेबिल्स आन दि शोर' आदि रेखाचित्र संग्रहों का प्रभाव मलयालम पर पड़ा है। संजयन्, ई. वी. कृष्णपिल्ला, ई. एम. कोवूर, पी. के. राजराज वर्मा, सी. आर. केरलवर्मा, वक्कं अब्‌दल खादर, डा. एस. के. नायर आदि प्रसिद्ध साहित्यकारों ने जो रेखाचित्र मलयालम में लिखे हैं, वे सभी उपर्युक्त अंग्रेजी लेखकों की शिल्प विधि पर ही निर्मित हैं। सामाजिक, साहित्यिक, राजनीतिक तथा नैतिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों के व्यक्तियों की तरफ अपनी दृष्टि केन्द्रित करके कभी-कभी सौम्य और कभी-कभी वीभत्स रंगों से उनके

चित्र खींचने की इन लेखकों ने कोशिश की है। हास्य सम्राट् ई. वी. कृष्णपिल्ला और एम. आर. नायर (संजयन्) की विदग्ध तूलिकाएं समाज की सभी श्रेणियों के लोगों के यथार्थ चित्र हास्य रस भरी शैली में खींचने में समर्थ हुई हैं। ई. वी. कृष्णपिल्ला पेशे से वकील थे। इसलिए नाना प्रकार के लोगों के संपर्क में रहने का अवसर उन्हें मिला था। वकीलों से लेकर मुकदमा चलाने के लिए कचहरी जाने वाले, सभी तरह के लोगों के व्यंग्यपूर्ण चित्र खींचने में वे बड़ी सफलता प्राप्त कर सके हैं। 'चक्षुश्रवणन्' 'सूक्ष्मग्राही' आदि नामों में अपनी समसामयिक राजनीतिक हलचलों और सामाजिक उलझनों में दखल देकर नेता बनने के लिए दौड़ धूप करने वालों के जो छाया-चित्र उन्होंने प्रस्तुत किए हैं वे ए. जी. गार्डिनर के 'एल्फा आफ् दि प्लाऊ' के प्रसिद्ध रेखाचित्रों से अधिक सशक्त एवं प्रभावपूर्ण हैं। 'चिरियुं चिन्तयुं' नामक पुस्तक में श्री पिल्ला के सभी रेखाचित्र संगृहीत हैं।

'संजयन्' के तूलिकानाम से प्रसिद्ध एम. आर. नायर मद्रास प्रेसिडेन्सी कालेज में अंग्रेजी के प्राध्यापक थे। उन्होंने तमिल प्रदेश और केरल के छोटे-छोटे अफसरों और रद्दी साहित्य लिखने वाले कवियों के रेखाचित्र बहुत ही जीवन्त एवं दिलचस्प ढंग से हास्यात्मक शैली में लिखे हैं। बड़ी तीखी रेखाओं से निर्मित उनके चित्रों में समाज की समस्त अनीतियों और कुरीतियों का प्रतिबिंब मिलता है। श्री नायर के लिखे हुए सभी रेखाचित्र और हास्य लेख संजयन् शीर्षक ग्रन्थ में प्रकाशित हो चुके हैं।

वक्कं अबदल खादर पिछली पीढ़ी के मुख्य रेखाचित्रकार हैं। पात्रों के चित्रण में स्पष्टता और यथार्थता भर देने के कारण खादर साहब की रचनाओं में एक अनन्य सुकुमारता पायी जाती है। 'तूलिका चित्रंगल', 'चित्रदर्शिनी' ये दोनों उनके प्रसिद्ध रेखा-चित्र संग्रह हैं। ए. बालकृष्ण पिल्ला, जी. शंकर कुरूप, तकषी शिवशंकर पिल्ला, वक्कं मुहम्मद बशीर, चंगंपुषा कृष्णपिल्ला, एस. के. पोट्टक्काट्ट, पी. केशवदेव, एम. पी. पाल जैसे मलयालम के लब्ध प्रतिष्ठ साहित्यकारों के रेखाचित्र उनकी पहली पुस्तक में मिलते हैं। ई. एम. एस. नंपूदिरिप्पाटु, जोसफ मुण्डश्शेरी, बोवेश्वरन्, ए. डी. हरिशर्मा, के. रामकृष्ण पिल्ला, कुट्टिकृष्ण मारार, पोनकुन्नम् वर्किक, सी. नारायण पिल्ला, ललितांबिका अन्तर्जनम् आदि नौ मशहूर लेखकों के रेखाचित्र चित्रदर्शिनी में एकत्रित किये गये हैं। व्यक्तियों के बाह्य और आन्तरिक रूप भावों की मनोरंजक तस्वीर खींचने में लेखक ने विजय पायी है। तटस्थता और आत्मीयता की वर्ण भंगिमा इन चित्रों में मिलती है।

मलयालम के प्रसिद्ध निबन्धकार श्री पी. दामोदरन पिल्ला की 'जूलियन्' नाम से प्रकाशित पुस्तक भी यहां उल्लेखनीय है। श्री पिल्ला ने अपने कुछ अप्रिय व्यक्तियों

पर अपनी कूंची खूब तेजी से चलायी है। श्री नारायण गुरु, सी. वी. कुंजुरामन, ई. वी. कृष्ण पिल्ला, मल्लूर गोविन्द पिल्ला, वल्लत्तोल, मुण्डश्शेरि, हरीन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय, चर्चिल आदि महान् व्यक्तियों के छाया चित्र उतारने में श्री पिल्ला ने कमाल कर दिया है। इन चित्रों की रेखाओं में अधिक स्पष्टता और कला भंगिमा विद्यमान है।

डा. एस. के. नायर का 'आन्कण्ट साहित्यकारन्मार्' (मैं इन साहित्यकारों से मिला) मलयालम का एक सराहनीय रेखाचित्र संग्रह है। दिलीप कुमार राय के 'एमन्ड्. दि ग्रेट' की प्रणाली पर लिखी गयी इस पुस्तक में तेरह लब्ध प्रतिष्ठ साहित्यकारों के सुरुचि पूर्ण रेखाचित्र हैं। प्रसाद-मधुर एवं कोमल शैली में डा. नायर ने एक प्रतिभासंपन्न कलाकार की दक्षता के साथ मुण्डश्शेरि, डी. पी. उण्णी चंगम्पुषा आदि मलयालम के प्रसिद्ध साहित्यकारों के व्यक्तितत्व का सजीव चित्रण किया है।

केरल के प्रसिद्ध पत्रकार श्री सी. नारायण पिल्ला का भी इस क्षेत्र में महत्व-पूर्ण योगदान है। उनकी 'पौयतलमुरा' (गतपीढ़ी) पुस्तक में संगृहीत आठ रेखाचित्र मलयालम के श्रेष्ठ रेखाचित्रों में से माने जाते हैं। केरल के राजनीतिक क्षेत्र के सुविख्यात कार्यकर्ता पट्टंताणुपिल्ला, ई. सुब्रह्मण्य अय्यर, मन्नतु पद्मनाभन, के. सी. मामन माप्पिला आदि नेताओं और सी. वी. कुंजुरामन जैसे साहित्यकारों के व्यक्तित्व का रंग इन चित्रों में उभरा है।

इस शाखा की और एक मुख्य पुस्तक श्री. के. पी. करुणाकर मेनोन की 'प्रसस्त व्यक्तिकल' है। समाज, साहित्य, राजनीति आदि के विभिन्न क्षेत्रों में अपने प्रेम सुरभित त्याग से महान् सेवायें अर्पित करने वाले पन्द्रह श्रेष्ठ व्यक्तियों के चित्र इस ग्रन्थ में सम्मिलित हैं। वृन्दावन का मुरली गायक, नसरेतु का त्यागी (ईसा), मरुस्थली का महापुरुष (मुहम्मद साहब) आदि विश्व संस्कृति के तीन उन्नायक, भारतीय संस्कृति के समुद्धारक राजा राममोहनराय, हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रथम कार्यकर्त्ताओं में प्रमुख श्रीमती एनी बसन्त, भारत के सुप्रसिद्ध अभिवक्ता सुरेन्द्रनाथ बनर्जी जैसे व्यक्तियों की प्रतिभा तथा व्यक्ति माहात्म्य के जो चमत्कारपूर्ण रेखाचित्र इस ग्रथ में संगृहीत हैं वे उत्तम कोटि के माने जाते हैं।

मलयालम के ख्याति प्राप्त कहानीकार श्री पोनकुन्नम् वर्की ने कुंपलतु शंकुपिल्ला, एन. श्रीकण्ठन नायर, पी. टी. पुन्नूस, अक्काम्मा चेरियन, आनीमस्क्रीन आदि ग्यारह राजनीतिक नेताओं के जो रेखाचित्र प्रस्तुत किये हैं, वे भी इस प्रसंग में उल्लेखनीय हैं। लेखक ने प्रत्येक व्यक्ति के नाना भावों को स्पष्ट करने के लिए

बहुत अधिक वर्ण और रेखाओं का प्रयोग किया है । बहुत तीखी और प्रभावशाली शैली में श्री वर्की ने उपर्युक्त व्यक्तियों के चित्र प्रस्तुत किये हैं ।

श्री सुकुमारन पोट्टक्काट्ट की 'व्यक्तिमुद्रकल' नामक पुस्तक बारह रेखाचित्रों का अच्छा संग्रह है । भारत की विभिन्न श्रेणियों के बारह प्रतिष्ठित व्यक्तियों के रेखाचित्रों की ग्यालरी है । यह ग्रन्थ डा. राधाकृष्णन्, सरदार के. एम. पणिक्कर, सी. राजगोपालाचारी, पट्टाभि सीतारमैया, जनरल करिप्पा, डा. बी. सी. राय, एस. के. पाटिल, जगजीवन राम, डा. जाण मथाई, अब्दुल कलाम आज़ाद, जवाहरलाल नेहरू और कमलादेवी चट्टोपाध्याय के अनन्य व्यक्तित्वों की झांकी इसमें पा सकते हैं ।

टाटापुरम् सुकुमारन की 'पत्तुकथाकारन्मार्' (दस कहानीकार) और 'पतु कविकल' (दसकवि) पूजप्पुर कृष्णनायर की 'पावङ्. ङ्. लुटे पटत्तलवन्मार' (गरीबों के सेना नायक) वी. वी. की 'रंगमंडपम्,' एम. आर. बी. की 'मुलपोट्टिय वित्तुकल' (उगे हुए बीज) आदि अन्य अनेक पुस्तकें भी यहां उल्लेखनीय हैं जिनमें उच्चकोटि के रेखाचित्र बिखरे पड़े हैं ।

मलयालम के रेखाचित्र साहित्य में व्यंग्य-चित्रों (humorous sketches) का भी बड़ा स्थान है । इस कोटि के रेखाचित्रों में समाज के कई तरह के टाइपों (types) और व्यक्तियों (personalities) की झलक मिलती है । इस पर अंग्रेजी के पी. जी. वुडहाऊस (P. G. Wodehouse) की व्यंग्यशैली का बड़ा प्रभाव दर्शनीय है । ई. एम. कोवूर की 'नखलाल नङ्. ङ्. ल्', वैलूर कृष्णन कुट्टी की 'अरिम्पार देवस्था', 'पक्कावट परमुनायर', 'इटवपियिल् क्टि्वाशान्, मासप्पटि मातुपिल्ला' और 'दी वयसन्स् क्लब', वाणक्कुट्टी की 'अतिथिकल्' और 'इवरे सूक्षिक्कणं', सुकुमार की 'पौतुजनं पलविधम्', पुरुषोत्तमन नायर की 'वासुनम्पूतिरियुं केशुनायरूं' पी. के. राजराज वर्मा की 'कुंचि अम्मयुटे आत्मकथा' और 'श्रीमती कुंचि', डी. सी. किषक्के मुरि की 'मेत्रानुं कोतुकं', आनन्द कुट्टन की 'अमृतांजनम्' और 'पापिकलुटे तापवरा', सी. आर. केरल वर्मा की 'रोगभ्रान्तु', प्रहलादन की 'बांबे चित्रंग्ल', सी. माधवन पिल्ला की 'चित्र सौधम्' आदि पुस्तकें मलयालम के लोकप्रिय व्यंग्य रेखाचित्र संग्रह हैं ।

यद्यपि अन्य साहित्यिक शाखाओं की तरह रेखाचित्र मलयालम में उतना अधिक विकसित नहीं हुआ है तो भी इस शाखा के जितने भी फूल खिले हैं, उनका परिमल चारों ओर बिखर गया है, वे बहुत ही लोकप्रिय हो गये हैं । संक्षेप में हम कह सकते हैं कि मलयालम के रेखाचित्र हिन्दी और बंगला के रेखाचित्रों से किसी भी दृष्टि से कम महत्त्व के नही हैं ।

उर्दू

उर्दू साहित्य में भी 'रेखाचित्र' जैसी नवीन विधा का साहित्य पर्याप्त मात्रा में मिलता है। बहुत से लेखकों ने पुराने साहित्यकारों पर काल्पनिक रूप से रेखाचित्र लिखे हैं। बहुत समय पूर्व 'आबेहयात' की रचना इतिहास की दृष्टि से चाहे उतनी सफल न हुई हो पर उसमें सम्मिलित कवियों के जो विवरण प्रस्तुत किये गये हैं वे 'रेखाचित्र' की दृष्टि से काफी सफल कहे जा सकते हैं। हाली का 'यादगारे गालिब' भी इस दृष्टि से उल्लेखनीय है जिसमें गालिब के काव्य पर भी आलोचनात्मक अध्ययन है। मिर्जा परहतुल्ल बेग का 'आख़िरी यादगार मुशाअरा' में काल्पनिक मुशाअरा है जिसमें अनेक शायरों का चित्रण है। 'नजीर अहमद की कहानी' जीवनी नहीं है वरन् रेखाचित्र के रूप में ही उनके जीवन-चित्र का अंकन मात्र है। 'वसीअत की तामील' भी रेखाचित्र है।

जिगर ब्रेलवी ने 'यादे रफ़्तगान' में रेखाचित्र प्रस्तुत किये हैं। नारायण प्रसाद ने 'रहनुमाई हिन्द' में राजनीतिक नेताओं पर शब्द-चित्र अधिक लिखे हैं। लाला लाजपतराय ने स्वयं 'गैरीबाल्डी' पर रेखाचित्र लिखा। रामस्वरूप कौशल ने 'मुहिब्बानी वतन' तथा रतन लाल बंसल ने 'मुस्लिम देशभक्त' में अनेक रेखाचित्र प्रस्तुत किये हैं। सम्पत राम ने कस्तूरबा गांधी तथा शिवचरनलाल ने 'टालस्टाय' पर भी जो जीवनचरित्र लिखे हैं वे रेखाचित्र शैली में ही हैं।

ख्वाजा हसन निज़ामी की पुस्तक 'क़लमी चेहरे' इस दिशा में उल्लेखनीय कृति है। २०वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही पत्र-पत्रिकाओं में 'पेन पोट्रेट्स' स्तम्भ प्रारम्भ हो चुके थे जिनका विस्तार तीसरे तथा चौथे दशक में विशेष रूप से हुआ। इस युग की यह विशेषता रही है कि प्रतिष्ठित व्यक्तियों की जीवनियां, समाज सुधारक तथा सन्तों के रेखाचित्र तथा धार्मिक, राजनैतिक नेताओं की तसवीरें खींची जायं। इस दिशा में मनोहरलाल जुत्शी ने 'कबीर की तस्वीर' शीर्षक पुस्तक में कबीर साहब के जीवन की घटनाओं का तानाबाना बड़ी कुशलता से और अद्भुत शैली में बुना है। किशनचन्द जेबा ने इस दिशा में 'भगत कबीर' और 'गौतम बुद्ध और उसका मत' पुस्तकें प्रस्तुत की हैं। हंसराज रहबर के 'प्रेमचंद' के कुछ अंश भी रेखाचित्र ही कहे जा सकते हैं। जयकिशन चौधरी ने भी अब्दुर्रहीम ख़ानखाना, तुलसी, कालीदास आदि पर अपने रेखाचित्र लिखे हैं। उनकी पुस्तक 'जज्बाती भर्तृहरि' तो इस क्षेत्र में मास्टरपीस है।

इस दिशा में सबसे उल्लेखनीय नाम है श्री रशीद अहमद सिद्दीकी का, जिनको अलीगढ़ से बेहद प्रेम है और आज सत्तर वर्ष के होते हुए भी जो निरन्तर

लिख रहे हैं। वे अपने रेखाचित्रों के विषय में विशेष सजग दिखाई पड़ते हैं। उनकी पुस्तकों में 'शैतान की आंत', 'अरहर के खेत', 'मुरशिद' और 'मौलाना सुहेल' जैसे चटपटे और आमोदपूर्ण निबंधों को पढ़ने के बाद उनके व्यक्तित्व का जो रेखाचित्र उभरता है वह उनके वास्तविक जीवन से सर्वथा भिन्न है। शौकत थानवी ने रशीद साहब के विषय में ठीक ही कहा था कि वे सूरत से हास्यकार तो नहीं पर सियागो प्रतीत होते हैं किन्तु उनके व्यक्तित्व का सौन्दर्य उनकी कला की भांति साधना की अपेक्षा रखता है।

वे अपने रेखाचित्रों के विषय बहुत सरल तथा साधारण रखते हैं। उनकी पुस्तकें 'गंजहाए गिरांमाया', 'जाकिर साहिब' और 'आशुफ़ता बयानी मेरी' इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। 'गंजहाए गिरांमाया' रशीद साहब के १५ निबंधों का संग्रह है जिसमें आपने अनेक मित्रों के व्यक्तित्व का चित्रांकन किया है। विशेष रूप से इस संग्रह के दो निबंध—'मौलाना सुलेमान अशरफ़' और 'मुहम्मद अय्यूब अब्बासी' पठनीय हैं। मौलाना सुलेमान अशरफ की कुछ पंक्तियां द्रष्टव्य हैं—

> "मैं कहता आपके यहां चाय में न शक्कर न दूध, फरो कैसे होगी? कहते-मेरे लिए पीते हो या अपने लिए? दबी जबान से कहा—बीबी बच्चों का भी खयाल है। फरमाया कभी-कभी बीवी-बच्चों से अलग रहकर भी जिन्दा रह लिया करो। कहता, आप रामपुरी तम्बाकू खाते हैं ये मेरे बस की नहीं। कहते, चाय में दूध शक्कर और पान में खुशबूदार तम्बाकू खाते हो, नशे का इहतराम् करना न आया। आवाज देते 'जुम्मा' रशीद की प्याली में शक्कर डालना। फिर पुकारते 'गच्छन'—रशीद को तम्बाकू दो। बड़े मजे की खुशबूदार तम्बाकू होती।"

> "कद मियाना, रंग साफ, जिल्द रौशन, आजा पतले, नक्शा जर्मोनाजुक, आंखें छोटी जिनमें जज़बात का उतार-चढ़ाव छलकता रहता, नजर तेज पुर एतमाद, अंदाज में बांकपन, उंगलियां ऐसी जिनमें कलम, शमशीर वो रबाब सब ही जेब दें, आवाज में कड़क और लचक धमक भी, ख़िताबत पर आते तो मालूम होता सफे उलट देंगे, नमाज़ पढ़ाते तो मालूम होता कि खुदा का कलाम दूसरों को पहुंचाने में अपनी और अपने मालिक दोनों की अज़मत का इहसास है।"

रशीद साहब की विशेषता यह है कि वे सांकेतिक रेखाओं से ही पूरे चित्र को उभार देते हैं कहीं-कहीं उनकी रेखाएं बहुत ही धूमिल प्रतीत होती हैं किन्तु उन

रेखाओं की गहराइयों में डूब जाने पर चित्र का एक-एक पहलू स्पष्ट और साफ दिखायी पड़ने लगता है। 'आशुफ्ता बयानी मेरी' में रशीद जी ने अलीगढ़ से संबद्ध अपने उद्गार व्यक्त किये हैं। उक्त पुस्तकों के अतिरिक्त 'मज़ामीने रशीद' और 'ख़न्दां' में भी व्यंग्य-विनोदमिश्रित शैली में रेखाचित्र संकलित हैं।

इस दिशा में चिराग हसन हसरत की 'मर्दुमे दीदा', शौकत थानवी का 'शीश महल' तथा अब्दुल मजीद सालिक का 'याराने कुहन', साथ ही शाहीद अहमद देहलवी का 'गंजीनए-गौहर' उल्लेखनीय कृतियां हैं।

श्रीमती इस्मत चुग़तई ने कहानी संग्रहों के मध्य तो चित्रात्मकता-डाली ही है साथ ही कुछ रेखाचित्र भी लिखे हैं जिनमें भाई पर लिखा हुआ रेखाचित्र उल्लेखनीय है। 'फूफी' पर भी आपने रेखाचित्र लिखा है।

इस दिशा में सबसे महत्त्वपूर्ण कृति है मंटो के रेखाचित्रों का संग्रह 'गंजे फरिश्ते'। सआदत हसन मंटो की कृतियों को लेकर आलोचकों में पर्याप्त मतभेद रहा है। कुछ आलोचकों ने तो मंटो को उर्दू कहानीकारों में सर्वोच्च स्थान देकर चेखव और मोपासां के निकट बैठा दिया है। अनेक पात्र प्रायः क्लर्क, विद्यार्थी, मजदूर, ऐक्स्ट्रा तथा वेश्या-वर्ग से संबद्ध हैं जिनके शब्द-चित्र उन्होने कहानियों में भी खींचे हैं। मंटो ने हमारे समाज के अनेक कुरूप तथा विकृत चित्र भी प्रस्तुत किये हैं। मंटो पर एक सफल रेखाचित्र कृष्ण चन्दर ने प्रस्तुत किया है। दूसरे व्यक्तियों ने भी मंटो पर काफी लिखा है पर इस रेखाचित्र को कलात्मक दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ कहा जा सकता है––

> "लांबा-तिरछा, चपटा, गोरा-गोरा, हाथ की पीठ पर नसें उभरी हुई, कंट की घंटी बाहर निकली हुई, सूखी टांगों पर बड़े-बड़े पांव, लेकिन बेडौल नहीं, स्त्रैणता लिए अजीब-सी नफ़ासत, चेहरे पर झुंझलाहट, आवाज में बेचैनी, लिखने में व्याकुलता, व्यवहार में कटुता, चलने में तेजी––सआदत हसन मंटो को पहली बार देखकर कुछ इन बातों का अहसास होता है। उसका माथा––मंटो के मस्तक का चौखटा उसके मस्तिष्क की तरह महान है और अजीबो-गरीब भी। प्रायः प्रतिभाशाली व्यक्तियों की पेशानी का चौखटा उन तस्वीरों से अधिक मिलता-जुलता है जो पश्चिमी चित्रकार शैतान का दिखाते हैं, यानी चौड़ा माथा और बाल कनपटियों के पास से पीछे की तरफ गायब होते हुए। मंटो का माथा शैतान से मिलता-जुलता नहीं है। मंटो का माथा आयताकार है रुपहले पर्दे की तरह, नीचे से कम चौड़ा है और ऊपर से ज्यादा और बाल सीधे, लम्बे और घने हैं और

आंखों में एक बहशी चमक है, एक बेबाक कठोरता है, एक ऐसी सूझ-बूझ है जैसे मंटो मौत के दरवाजे के अन्दर झांककर लौट आया हो।"

कृष्णचन्दर का 'नये अदब के मेमार' इस विधा की उल्लेखनीय कृति है। प्रो. प्रकाशचन्द्र गुप्त ने 'रेखाचित्र' 'शीर्षक पुस्तक में लिखा है कि "कोरिया के युद्ध में जब अमरीका के पहले सैनिक प्राइवेट सैडरिक की मृत्यु हुई थी, उर्दू के श्रेष्ठ कलाकार कृष्णचन्द्र ने अंगारों के समान जलते हवदों में उसकी स्मृति में एक पत्र लिखा था जिसे भारत और विदेशों के अनेक पत्रों ने उद्धृत किया। अपनी आग्नेय भावनाओं के कारण ही कृष्णचन्दर तत्काल घटनाओं के आधार पर इतने उत्कृष्ट साहित्य की रचना कर सकते हैं।" संभवतः यह तथ्य उनकी आन्तरिक प्रवृत्ति का कुछ परिचय देगा कि उन्होंने पहली रचना एक व्यंग्यात्मक 'शब्द-चित्र' प्रस्तुत की जबकि वह नवीं कक्षा में पढ़ते थे। दिल्ली के 'रियासत' अखबार में जब यह शब्द-चित्र प्रकाशित हुआ तो घरवालों ने आपकी खूब पिटाई की। उनकी हर कहानी में भी किसी न किसी हद तक फोटोग्राफी तो होती है। कृष्ण चन्दर का ही 'फैल और पत्थर' व्यंग्यात्मक रेखाचित्रों का संग्रह है। इसमें ९ रेखाचित्र हैं। 'अखबारी ज्योतिषी' में पत्रकार की किरकिरी की गयी है, 'जम्मन शहीद' में महान् नेताओं पर व्यंग्य है, 'मेरा दोस्त', 'सेठ जी', 'जनतन्त्र दिवस' उल्लेखनीय रेखाचित्र हैं। लेखनी चित्र के साथ यथास्थान व्यंग्य-चित्र भी हैं।

लाहौर से प्रकाशित होने वाले पत्र 'नक़ूश' के 'शख़िस्यात' पर दो स्पेशल वोल्यूम निकले। पहला १९५२-५३ के आसपास प्रकाशित हुआ। इसमें धार्मिक, राजनैतिक, साहित्यिक सभी प्रकार के लोगों को सम्मिलित किया गया है। इस पत्र के सम्पादक तफ़ैल रहे हैं जिनकी प्रेरणा से इस विधा को इस पत्र का स्पेशल फ़ीचर ही बना लिया गया। इस पत्र में ही निसार अहमद फ़ारुकी का एक शोधपरक लेख भी इस विधा पर प्रकाशित हुआ है।

'हैदराबाद के बड़े लोग' शीर्षक से एक पुस्तक प्रकाशित हुई जिसमें सरोजनी नायडू पर ली एक स्केच है। अब्दुल हक ने कुछ अच्छे स्केच लिखे हैं जो 'चंद हम अस्र' शीर्षक से प्रकाशित हुए हैं। नामदेव माली पर लिखा आपका स्केच बहुत पसन्द किया गया जिसका कुछ भाग इस प्रकार है —

"वह निःसन्तान था। अतः वह अपने पौधों और पेड़ों ही को सन्तान समझता और बाल-बच्चों की भांति पालन-पोषण तथा देख-रेख करता था। उन्हें हरा-भरा और खिलखिलाकर हंसता देख ऐसा खुश होता जैसे मां अपने बच्चों को देखकर होती है। प्रायः एक-एक

पौधे के पास बैठता, उनको प्यार करता, झुकझुक कर उन्हें देखता मानो चुपके-चुपके उनसे बातें कर रहा हो। जैसे-जैसे वे ब ते और फूलते-फलते, उसका जी भी वैसे ही बढ़ता और फूलता था।"

फ़िक्र तौसवीं का एक अच्छा रेखाचित्र 'समाज' के सितम्बर १९५४ में 'सर का दर्द' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। आपके भावभीने सरस रेखाचित्रों का संग्रह 'हम हिन्दुस्तानी' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। इसमें देश की प्राचीन, वर्तमान तथा भावी पीढ़ी के प्रतिनिधियों को साकार करने का प्रयास किया गया है। संग्रह में रेखाचित्र के साथ कुछ संस्मरण तथा इंटरव्यू भी हैं। भावुकतापूर्ण काल्पनिकता की प्रधानता है जिससे इनके कहानी के तत्त्व मिलते हैं। व्यंग्य स्केच भी इसमें हैं। ये हिन्दुस्तानी हैं—नेहरू, नम्बूदिरीपाद, जयप्रकाश, राजाजी, विनोबा भावे, जी. डी. बिरला, कृष्णचन्द्र, सतीश गुजराल, पृथ्वीराज कपूर, नर्गिस, साहिर लुधयानवी, लता मंगेशकर। लेखक का कथन सत्य ही है 'यह सिर्फ बारह व्यक्तियों की तस्वीरें नहीं हैं बल्कि हम सब की तस्वीरें हैं। यह व्यक्ति आइने हैं जिसमें आपकी कामनाएं झलकती हैं। यह व्यक्ति कामनाएं हैं जो आपके आइने में झलकते हैं।' —इन बारह गागरों में चवालिस करोड़ सागर समाए हुए हैं। फिक्र तौसवीं का अपना दृष्टिकोण तथा कसौटी है जिस पर ये व्यक्तित्व परखे और कसे गये हैं, उन्होंने किसी को छोड़ा नहीं है। सभी का, अन्दर और बाहर का, विश्लेषण प्रस्तुत कर दिया है। उनके व्यंग्य तीखे तथा मार्मिक हैं।

जयाउद्दी बर्नी का 'अजमते रफ़्ता' भी इस दिशा में अच्छा प्रयास है। फैज, जोश, हफीज जालंधरी, जमील, मजहरी, अब्दुर-सलाम आदि अंकों के विशेषांकों में इन व्यक्तियों की 'आपसे मिलिए' 'शीर्षक में इस प्रकार की सामग्री ही मिलती है।

देवेन्द्र सत्यार्थी पर साहिर लुधियानवी ने अच्छा रेखाचित्र लिखा है। सुन्दर लालजी ने 'गांधीजी के जीवन' पर 'गांधीजी बादशाह खां के देश में' शीर्षक से लिखा है। सीताराम कोहली ने महाराजा रणजीत सिंह पर लिखा है। डा. आबिदहुसैन ने भी गांधीजी पर रेखाचित्र के रूप में एक मार्मिक पुस्तक लिखी है।

इस क्षेत्र में एक और उल्लेखनीय नाम है डा. अख्तर हुसैन रायपुरी। आपका एक 'बड़ी बी' शीर्षक से रेखाचित्र 'अमिट रेखाएं' में संकलित हुआ है जिसमें आपने अपनी नानी का चित्र खींचा है। बनारसीदास चतुर्वेदी ने लिखा है कि अख्तर साहब के स्केच जब विशाल भारत में छपे थे तो उनकी धूम-सी मच गयी थी। रायपुरी ने अपने बचपन की झलक स्वयं ही चित्रमय भाषा में प्रस्तुत की है। आप हिन्दी प्रेमी भी रहे हैं फिर तंग आकर हिन्दी से नाता तोड़ा। आपने अपने

कलकत्ता के जीवन पर अच्छा रेखाचित्र लिखा है, कलकत्ते में आपको चार मकानों में रहने का सौभाग्य हुआ। इनमें से दूसरे मकान का शब्द-चित्र इस प्रकार है––

"मूक पशुओं की उन सूखी हुई खालों में मनुष्य की पाशविकता की दास्तान घिनौनी दुर्गन्ध से लिखी हुई थी। मालूम नहीं कितनी बीमारियों के कीड़े उस गली में बिलबिलाया करते थे। कई साल बीत गये, पर अब भी ऐसी गली की नारकीय बदबू मेरी नाक में बसी हुई है। भैंस की बू कुछ अफरायी होती थी, गोह के चाम से भुने हुए कटहल की बू आती थी, इसी तरह विभिन्न खालों से भिन्न-भिन्न प्रकार की दुर्गन्ध निकला करती थी।"

"चौथे मकान के सामने तो होटल था उसमें आटे के गोले की वह अनवरत थाप, वह भैरव ताल, अब भी कभी सिर के भीतर तबले के चौताले के समान गूंजा करती है और रोटी पर मुक्कों की आवाज तो युद्ध की थ्योरी के समान दिमाग़ के सूने आसमान में कड़कती रहती है।"

मंजरअली सोख्ता का 'मोती कुत्ते' पर लिखा रेखाचित्र मार्के का है। सज्जाद जहीर के अनेक रेखाचित्र हंस में प्रकाशित हुए हैं जिनमें अगस्त ४३ में प्रकाशित 'रेल का सफर' उल्लेखनीय है।

शौकत थानवी ने अनेक तस्वीरें 'हंसती बोलती तसवीरें' में संकलित की हैं। इन स्केचों में हमारे सामाजिक जीवन के अनेक पहलुओं पर बड़ा तीखा व्यंग्य है। वह व्यंग्य नहीं करता वरन् लक्ष्य पर सीधा वार कर चिकौटी काटता है। भारतीय जीवन के अनेक पहलूओं–मेहमान, दोस्त, मीठे चावल–पर शब्द-चित्र हैं। मीठे चावल, मेज, स्वदेशी, रेल तो बेहद सजीव हैं। इस्लामी संस्कृति का परिचय 'नयन जोर के बाबू' में मिलता है। एक लेखक ने लिखा था कि 'हम इन स्केचों पर हंसते हैं किन्तु हमारे सामाजिक ह्रास के यह क्षण एक अव्यक्त वेदना से भरे हैं जैसे उठता हुआ फोड़ा टीस रहा हो। व्यंग्य के क्षेत्र में 'चचा छक्कन' पर इम्तियाज़ अली 'ताज' के अनेक व्यंग्य चित्र प्रकाशित हुए हैं।

हर्ष का विषय है कि आज भी अनेक लेखक रेखाचित्र विधा में अनेक शब्द-चित्र प्रस्तुत कर रहे हैं जिनमें से रशीद अहमद सिद्दीकी, काज़ी अब्दुल गफ़्फ़ार, मौलाना माजिद दरियाबादी, नियाज फ़तेहपुरी, डा. आबिद हुसैन और ख्वाजा हसन निजामी के नाम महत्त्वपूर्ण हैं। नई पीढ़ी के अनेक लेखक भी इस ओर काफी दिलचस्पी रखते हैं। इनमें श्रीमती सलमा सिद्दीकी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आपने शान्तिस्वरूप भटनागर, सलीम छतारी, उत्तर प्रदेश के पटान, डा. जाकिर हुसैन आदि पर रेखाचित्र लिखे हैं। सिकन्दरनामा में कहानियों के साथ रेखाचित्र भी समाहित हैं।

अध्याय ३

हिन्दी-रेखाचित्र की पूर्वपीठिका

हिन्दी-काव्य में रेखाचित्र

बीसवीं शताब्दी के गद्य में लिखे जाने वाले रेखाचित्रों पर पश्चिमी प्रभाव स्पष्ट रूप से है, पर हिन्दी में इससे पूर्व 'रेखाचित्र' लिखे ही नहीं गये, यह स्वीकार नहीं किया जा सकता। गद्य से पूर्व पद्य के माध्यम से 'रेखाचित्रों' की सृष्टि की गयी है। उनमें आधुनिक 'रेखाचित्र-कला' के विकसित तत्त्व तो दृष्टिगत नही होते, पर व्यक्ति, वस्तु अथवा घटना का यथातथ्य निरूपण चित्रात्मक शैली में हुआ है। डा. नगेन्द्र के सम्पादकत्व में प्रकाशित बृहद् इतिहास के छठवें भाग में लक्षित चित्र-योजना के अन्तर्गत काव्यगत रेखाचित्र की परिभाषा इस प्रकार दी गयी है—

"काव्यगत रेखाचित्र में केवल रूप का ही अंकन नहीं होता है बल्कि वह शब्द, स्पर्श, गन्ध और रस से भी संपुष्ट होता है। शब्द, स्पर्श आदि से विरहित केवल चाक्षुष चित्र का विशेष साहित्यिक मूल्य नहीं आंका जा सकता। केवल चाक्षुष चित्र वस्तुमुखी होने के कारण सूक्ष्म ऐन्द्रिय बोध की दृष्टि से सन्तोषप्रद नहीं होते। इन चित्रों की प्रभावोत्पादकता तभी बढ़ सकती है जब ये शब्द, गन्ध, रस आदि से समन्वित हों।"

आदि कालीन साहित्य में भी इस प्रकार के चित्र मिलते हैं। अब्दुल रहमान के 'सन्देश रासक' में भी अनेक सुन्दर चित्र हैं। नायिका का रूप वर्णन इन गाथाओं में अंकित है —

लोयणजुयं च णज्जइ रविदल दीहरं च राइल्लं।
पिंडीरकुसुमपुंजं तरुणिकवोला कलिज्जंति ।।
कोमल मुणालणलयं अमरसरुपन्न बाहुजुयलं से।
ताणंते करकमलं णज्जइ दोहाइयं पउमं ।।
सिहणा सुयण-खला इव थड्ढा निच्चुन्नया य मुहरहिया।
संगमि सुयणसरिच्छा आसासहि बेवि अंगाइं।

गिरिणइ समआवत्तं जोइज्जइ णहिमंडलं गुहिरं।
मज्झं मच्चसुहं मिव तुच्छं तरलग्गई हरणं।

रासो (पृथ्वीराज) में तो अनेक स्थलों पर चित्रात्मकता मिलती है, युद्ध का एक चित्र द्रष्टव्य है,

गही तेग चहुआंन हिंदवान रानं।
गजं यूथ परि कोपि केहरि समानं॥
करे रुंड मुंड करी कुंभ फारे।
बरं सूर सामंत हुंकि गर्ज भारे॥
करी चीह चिक्कार कर कल्प भागे।
मदं तंजियं लाज ऊमंग मग्गे।
दौरि गज अंध चौहान केरो
घेरियं गिरद्दं चिहो चक्क फेरो।
गिरद्दं उड़ी भांन अंधार रैनं॥
गई सूधि सुम्झे नहीं मम्क्मिनैनं।

विद्यापति में तो सौन्दर्य चित्रण की भरमार है। कवि की पदावली में अनेक वर्णन इतने मार्मिक हैं कि मानस-भूमि का स्पर्श करते हैं। वयःसन्धि की अवस्था में किशोरी के रूप-चित्रण पर तो पदों में चित्रात्मकता दर्शनीय है,

सैसव जौबन दरसन मेल।
दुहुं दल बले दंद परि गेल॥
कबहुं बांधय कच कबहुं बिशारि।
कवहुं झांपय अंग कबहुं उघारि॥
अति थिर नयन अथिर किछु मेल।
उरज-उदय-थल लालिम देल॥
चंचल चरण चित चंचल मान।
जागल मनसिज मुदित नयान॥

जायसी के पद्मावत में भी रूप सौन्दर्य के अनेक चित्र हैं। यौवन-भार-भरिता पद्मावती का एक चित्र इस प्रकार है,

मैं उनन्त पद्मावत बारी। रचि रचि विधि सब कला संवारी।
जग वेधा तेहि अंग सुवासा। भंवर आइ लुब्धे चहुं पासा॥
वेनी नाग मलय गिरि पैठी। ससि माथे होइ दूइज बैठी।
भौंह धनुष साधे सर फेरैं। नयन कुरंग भलि जान हेरैं।

नासिक कीर कंवल मुख सोहा। पद्मिनी रूप देखि जग मोहा॥
मानकि अधर दसन जनु हीरा। हिय हुलसे कुच कनक गंभीरा।
केहरि लंक, गवन गज हारे। सुर नर देखि माथ मुंह धारे॥

सूर के काव्य में बालकृष्ण-छवि के जितने सुन्दर एवं मार्मिक चित्र प्राप्त होते हैं उतने कहीं अन्यत्र नहीं। सूर का एक पद इस दृष्टि से द्रष्टव्य है,

बलि गइ बाल-रूप मुरारि।
पाइ पैंजनि रटति रुन-झुन, नचावति नन्द-नारि।
कबहुं हरि को लाइ अंगूरी, चलन सिखावति ग्वारि॥
कबहुं हृदय लगाइ हित करि, लेत अंचल डारि।
कबहुं हरि कौं चितै चूमति, कबहुं गावति गारि॥
कबहुं ले पाछे दुरावति, ह्यां नहीं बनवारि।
कबहुं अंग भूषन बनावति, राइलोन उतारि।
सूर सुर-नर सबै मोहे, निरखि यह अनुहारि॥

तुलसी के मानस में राम का चित्र वस्तुतः रेखाचित्र के अधिक समीप है,

स्याम सरीरु सुभायं सुहावन। सोभा कोटि मनोज लजावन॥
जावक जुत पदकमल सुहाए। मुनि मन मधुप रहत जिन्ह छाए॥
पीत पुनीत मनोहर धोती। हरति बाल रवि दामिनि जोती॥
कल किंकिनि कटि सूत्र मनोहर। बाहु बिसाल बिभूषन सुन्दर॥
पीत जनेउ महाछबि देई। कर मुद्रिका भोरि चितु लेई॥
सोहत ब्याह साज सब साजे। उर आयत उरभूषन राजे॥
पिअर उपरना काखासोती। दुहूं आंचरन्हि लगे मनि मोती॥
नयन कमल कल कुंडल काना। बदनु सकल सौंदर्ज निधाना॥
सुंदर भृकुटि मनोहर नासा। भाल तिलकु रुचिरता निवासा॥
सोहत मौरु मनोहर माथे। मंगलमय मुकुता मनि गाथे॥

रीतिकालीन कवियों ने नायिकाओं के अनेक रूप चित्र प्रस्तुत किये हैं जिनमें से मतिराम, देव और बिहारी उल्लेखनीय हैं। मतिराम का एक चित्र इस प्रकार है,

कुंदन कौ रंग फीको लगै, झलकै अति अंगन चारु गुराई।
आंखिन में अलसानि चितौन में मंजु विलासन की सरसाई॥
को बिनमोल बिकात नहीं, 'मतिराम' लहै मुसकानि मिठाई॥
ज्यों-ज्यों निहारिए नैरे ह्वै नैननि त्यों-त्यों खरी निकरै सी निकाई॥

देव के रूपचित्र तो अतुलनीय हैं,

माथे मनोहर मोर लसै, पहिरे हिय में गहिरे गुंज हारनि,
कुंडल मंडित गोल कपोल, सुधासम बौल बिलोल निहारनि,
सोहति त्यों कटि पीत पटी, मन मोहति मंद महा पग धारनि,
सुन्दर नंद कुमार के ऊपर वारिए कोटि कुमार कुमारनि ॥

इस युग के कवियों ने रंगों का चुनाव प्रकृति के क्षेत्र से किया है। वस्त्राभूषणों का वर्णन भी रंग-वैचित्र्य से युक्त है। वर्णों का मिश्रण भी किया है। इस दिशा में बिहारी का यह दोहा लिया जा सकता है जिसमें रंग मिश्रण युक्त चित्र है,

अधर धरत हरि के परत ओठ दीठि पट जोति।
हरित बाँस की बाँसुरी इन्द्र धनुष छबि होति।

घनानंद ने भी रूप-माधुरी का चित्रण किया है,

लाजनि लपेटी चितवनि भेद-भाव-भरी,
लसति ललित लोल-चख-तिरछानि में।
छबि को सदन गोरो बदन, रुचिर भाल,
रस निचुरत मीठी मृदु मुसक्यानि में।
दसन दमक फैलि हिय मोती माल होति,
प्रिय सों लड़कि प्रेम-पगी बतरानि में।
आनन्द की निधि जगमगाति छबीली बाल,
अंगनि अनंग-रंग ढुरि मुरि जानि में॥

प्रिथीराज की वेलि क्रिसन रुकमणी री में रुक्मिणी का देव-दर्शन की तैयारी में स्नान का चित्र द्रष्टव्य है,

कुमकुमै मंजण करि धौत वसन धरि,
चिहुरे जल लागौ चुवण।
छीणे जाणि छछोहा छूटा,
गुण मोती मअतूल गुण॥

भक्ति-काल तथा रीतिकाल के कवियों की चित्रण-पद्धति यद्यपि विषय का अर्थ-ग्रहण और बिम्ब ग्रहण कराने में समर्थ है, फिर भी उन कवियों के चित्रण की कुछ सीमाएं हैं। उनका चित्रण वस्तु-परक तथा स्थूल है। उन्होंने परिगणन शैली को अपनाया है और वस्तुओं और कार्यों के तथ्य-प्रधान चित्र दिये हैं। मूर्त्त वस्तुओं के चित्रण में तो उन्हें सफलता मिली है, किन्तु अमूर्त के चित्रण में नहीं। उनके वर्णन चित्रात्मकता से युक्त अवश्य हैं किन्तु उनकी भाषा चित्रण-कला की दृष्टि से उतनी सक्षम नहीं जितनी आधुनिक काल के कवियों की है। रीतिकाल का सारा काव्य नख-शिख वर्णन से भरा

पड़ा है किन्तु उनकी भाषा में वह व्यंजना-शक्ति नहीं है जो छायावादी कवियों की भाषा में उपलब्ध है।

छायावाद-युग से पहले की हिन्दी कविता में प्रायः स्थूल रेखाओं और रंगों से निर्मित वस्तु-चित्रों का बाहुल्य है। छायावादी काव्य में कविता चित्रण-कला की विशेषताओं से सम्पन्न हुई। सौन्दर्य का चित्रण छायावादी काव्य में अधिक हुआ है। इन कवियों ने प्राकृतिक एवं मानवीय दोनों प्रकार के सौन्दर्य के प्रति आकर्षण अनुभव किया और उसका प्रभावशाली अंकन किया। छायावादी कवियों में प्रसाद और निराला के वर्णन संश्लिष्ट हैं। पंत के रूप-चित्रण में इतनी कलात्मकता नहीं मिलती। छायावादी काव्य का चित्र-विन्यास वैभवपूर्ण है। ये चित्र नवीन चित्रण-पद्धति से युक्त हैं तथा विविधतापूर्ण हैं। ये चित्र वस्तुओं अथवा व्यक्तियों के इंद्रियगोचर स्वरूप को ही प्रस्तुत नहीं करते वरन् कवि की अनुभूति और कल्पना से भी संवलित हैं। प्रकृति और मानव-जगत् के सौन्दर्य को इन कवियों ने विशेष रूप से चित्रित किया है अतः इन दोनों क्षेत्रों का अवलोकन उनकी चित्रण-पद्धति पर प्रकाश डाल सकेगा।

'पल्लव' की भूमिका में पंत ने लिखा था,

> "कविता के लिए चित्र-भाषा की आवश्यकता पड़ती है, उसके शब्द सस्वर होने चाहिए, जो बोलते हैं, सेब की तरह जिनके रस की मधुर लालिमा भीतर न समा सकने के कारण बाहर झलक पड़े, जो अपने भाव को अपनी ही ध्वनि में आंखों के सामने चित्रित कर सकें जो झंकार में चित्र, चित्र में झंकार हो, जिनका भाव संगीत विद्युत्धारा की तरह रोम-रोम में प्रवाहित हो सके।"

> 'अप्रस्तुत दृश्य को ज्यों का त्यों प्रस्तुत करने हेतु शब्दों में चित्र उतारता है। इस काल की कविता में दृश्य, गति, क्रिया सभी के चित्रण प्राप्त होते हैं। दृश्य-चित्रण में प्रायः सजीव विशेषण से युक्त कर दिया जाता है,

मृदु मंद मंद मंथर मंथर
लघु तरणि हंसिनी-सी सुन्दर

प्रकृति के चित्र

छायावादी कवियों ने प्रकृति के अनेक सुन्दर चित्र प्रस्तुत किये हैं। पूर्ववर्ती कवियों की अपेक्षा उन्होंने प्रकृति के प्रति अधिक प्रेम व्यक्त किया, उसका सूक्ष्म निरीक्षण

किया और अपने काव्य में उसे प्रमुख स्थान दिया। छायावादी कवियों ने प्रकृति को उसके स्वतंत्र रूप में ग्रहण किया और उसे काव्य के एक स्वतंत्र विषय के रूप में प्रतिष्ठित भी किया। विभिन्न प्राकृतिक उपादानों का चित्रोपम वर्णन छायावादी काव्य की एक विशेषता है। इन कवियों ने उषा, सध्या, रात्रि, नदी, निर्झर, बादल, पक्षी आदि उपादानों के सौन्दर्य का चित्रण अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से किया है। उनकी भाषा भी चित्रात्मक वर्णन की दृष्टि से सक्षम है।

छायावादी कवियों में अग्रणी जयशंकर 'प्रसाद' ने अपनी प्रारंभिक रचनाओं में ही प्राकृतिक सौन्दर्य का अंकन प्रारंभ किया था। किन्तु उनके प्राकृतिक चित्रण में प्रौढ़ता प्रायः बाद की रचनाओं में मिलती है। 'लहर' तथा 'कामायनी' में उन्होंने प्रकृति का भावात्मक चित्रण किया है और उस पर कहीं-कहीं नारी-भावना का आरोप भी किया है। इस दृष्टि से यह चित्र दर्शनीय है,

बीती विभावरी जाग री,
अम्बर पनघट में डुबो रही
तारा-घट ऊषा-नागरी
खग-कुल कुल-कुल-सा बोल रहा,
किसलय का अंचल डोल रहा,
लो यह लतिका भी भर लाई—
मधु मुकुल नवल रस गागरी ॥

लहर—१९

कवि ने इन पंक्तियों में उषा का चित्र प्रस्तुत करने के लिए मानवीकरण का उपयोग किया है। 'ऊषा-नागरी' अम्बर पनघट में 'तारा-घट' डुबा रही है। उसका कार्य-व्यापार आगे भी चलता है। पक्षियों का कलरव घड़े की कुल-कुल के समान है। 'ऊषा-नागरी' के किसलय का अंचल डोल रहा है। यह प्रकृति के प्रमुख उपादान उषा का सघन चित्र है जिसमें कई व्यापार दिखलाये गये हैं।

इस प्रकार के अनेक चित्र लहर तथा झरना में भरे पड़े हैं।

'कामायनी' में प्रसाद ने संध्या तथा रात्रि का सुन्दर और बहुरंगी चित्रण किया है। निम्नलिखित वर्णन में विविध वर्णों की योजना प्रभावशालिनी है,

जब कामना सिंधु तट आई
ले संध्या का तारा दीप,
फाड़ सुनहली साड़ी उसकी
तू क्यों हंसती अरी प्रतीप।

विकल खिलखिलाती है क्यों तू ?
इतनी हंसी न व्यर्थ बिखेर,
तुहिन कणों फेनिल लहरों में,
मच जावेगा फिर अंधेर।

रजत कुसुम के नव पराग सी
उड़ा न दे तू इतनी धूल,
इस ज्योत्सना की, अरी बावली
तू इसमें जावेगी भूल।

कामायनी ३८-३९

संध्याकालीन स्वर्णिम मेघ ही संध्या की सुनहली साड़ी है, जिसे छेड़छाड़ करनेवाली रात्रि ने फाड़ दिया है। फिर भी वह चाँदनी के रूप में विकल होकर खिलखिला रही है। उसकी हंसी रुपहले फूलों के नवीन पराग के समान श्वेत और मादक है। अनेक भावनाओं, अनेक कार्य-व्यापारों तथा अनेक रंगों को प्रस्तुत करने वाला संध्या तथा रात्रि का ऐसा वर्णन अन्यत्र दुर्लभ है।

प्रकृति के उल्लसित रूप का चित्रण प्रसाद ने 'कामायनी' में अन्यत्र भी किया है। जल-प्रलय के बाद पुनः सृष्टि का विकास होता है। विकासमान प्रकृति का चित्र है—

वह विवर्ण मुख त्रस्त प्रकृति का
आज लगा हंसने फिर से
वर्षा बीती हुआ सृष्टि में
शरद विकास नये सिर से
नव कोमल आलोक बिखरता
हिम संसृति पर भर अनुराग
सित सरोज पर क्रीड़ा करता
जैसा मधुमय पिंग पराग।

कवि ने हिम-राशि पर पड़नेवाले प्रातःकाल के कोमल प्रकाश की यहाँ पर अत्यन्त सुन्दर उपमा दी है। वह प्रकाश अनुराग सहित इस प्रकार फैलने लगा जैसे श्वेत कमल पर मकरंद-युक्त पीला पराग क्रीडा करता है।

महाकवि निराला ने रात्रि को नायिका के रूप में ग्रहण कर उषा का एक सुन्दर चित्र खींचा है। इसमें सोकर उठी हुई युवती का चित्र है जिसमें उसकी अस्त-व्यस्तता और शारीरिक चेष्टाओं का अंकन किया गया है—

प्रिय यामिनी जागी ।
अलस पंकज-दृग अरुण मुख, तरुण अनुरागी ।
खुले केश अशेष शोभा भर रहे,
पृष्ठ-ग्रीवा-बाहु-उर पर तिर रहे,
बादलों में फिर अपर दिनकर रहे,
ज्योति की तन्वी तड़ित द्युति ने क्षमा माँगी
हेर उर-पट फेर मुख के बाल
लख चतुर्दिक चली मन्द मराल
गेह में प्रिय स्नेह की जयमाल
वासना की मुक्ति, मुक्ता त्याग में तागी ॥

निराला के चित्र प्रायः संश्लिष्ट तथा संतुलित होते हैं। अनेक चित्रण में क्रम तथा अन्विति दोनों हैं । निराला का ग्राम-जीवन का यह चित्र सजीव और प्रभावशाली है--

बहुत दिनों बाद खुला आसमान
निकली है धूप, हुआ खुश जहान।
दिखीं दिशाएं झलके पेड़--
चरने को चले ढोर-गाय-भैंस-भेड़
खेलने लगे लड़के छेड़-छेड़--
लड़कियाँ, घरों को कर भासमान।
लोग गाँव गाँव को चले,
कोई बाज़ार कोई बरगद के पेड़ के तले,
जाँघिया--लंगोटा ले संभले
तगड़ेतगड़े सीधे नौजवान।

बहुत दिनों के बाद आसमान खुला है तो सभी लोग प्रसन्न हो उठे हैं और उल्लसित होकर अपने रुके हुए कामों को करने में लग रहे हैं। चित्र का परिप्रेक्ष्य बड़ा है और उसमें दिशाएं, पेड़-पौधे, पशु, बालक, वृद्ध आदि सबका समावेश है। इस प्रकार सीमित शब्दों द्वारा कवि ने एक विशाल चित्र का निर्माण किया है।

निराला के काव्य में इस प्रकार के अनेक चित्र प्राप्त होते हैं। प्रकृति के ही नहीं त्रसित वर्षा के भी चित्र मिलते हैं।

पंत जी ने भी सिद्धहस्त कलाकार के समान अपने चित्रों में संश्लिष्ट-चित्रण किया है, जैसा कि इस चित्र में है—

नौका से उठती जल हिलोर।
सामने शुक्र की छवि झलझ, पैरती परी-सी जल में कल।
रुपहरे कचों में हो ओझल
लहरों के घूंघट से झुकझुक दशमी का शशि निज तिर्यक मुख।
दिखलाता मुग्धा-सा रुक-रुक।

नदी की लहरों में प्रकाशमान शुक्र का प्रतिबिंब तैरती हुई परी जैसा लगता है जो चाँदी जैसी लहरों में कभी छिप जाती है कभी दिखाई देती है। दशमी तिथि का अर्ध-वृत्त जैसा चन्द्रमा किसी मुग्धा नायिका के समान सरल भाव से अपने मुख को लहरों के घूँघट में से जब तब अनावृत कर देता है।

पंत की एक तारा की निम्न पंक्तियां देखिए—

पश्चिम नभ में हूँ रहा॰ देख
उज्ज्वल, अमंद नक्षत्र एक
अकलुष, अनिन्द्य नक्षत्र ज्यों मूर्तिमान ज्योतित विवेक
उर में हो दीपित अमर टेक।

इन पंक्तियों में छह चित्रों की भरमार है, १. उज्ज्वल, २. अमन्द, ३. अकलुष ४. अनिंद्य, ५. मूर्तिमान ज्योतित विवेक, ६. आकाश के उर की वह अमर टेक जो ज्योतित हो।

श्रीमती महादेवी वर्मा ने प्राकृतिक उपादानों का संश्लिष्ट तथा गतियुक्त चित्रण किया है। कवयित्री के अतिरिक्त वे एक कुशल चित्रकर्त्री भी है। अतः उनके काव्य में चित्रकला की विशेषताओं का आ जाना स्वाभाविक है। अनेक बहुरंगी चित्रों में इतनी शीघ्रता से रंग बदलते हैं कि पाठक को उन्हें ध्यान से देखने का पर्याप्त अवकाश ही नहीं मिल पाता। संध्या का यह चित्र ऐसे ही संश्लिष्ट चित्रों में से है—

रागभीनी तू सजनि, निश्वास भी तेरे रंगीले।
लोचनो में क्या मदिर नव ?
देख जिसको नीड़ की सुधि फूट निकली बन मधुर रव
भूलते चितवन गुलाबी में चले घर खग हठीले।

आज इन तंद्रिल पलों में
उलझतीं अलकें सुनहरी असित निशि के कुंतलों में
सजनि नीलम रज भरे रंग चूनरी के अरुण पीले
रेख सी लघु तिमिर लहरी

चरण छू टेरे हुई है सिंधु सीमाहीन गहरी।
गीत तेरे पार जाते बादलों की मृदु तरी ले।
कौन छायालोक की स्मृति
कर रही रंगीन प्रिय के द्रुत पदों की अंक-संसृति
सिहरती पलकें किये देतीं विहंसते अधर गीले।

इस गतियुक्त चित्र में अनेक रंगों का समन्वय है तथा एक ही चित्र में अनेक चित्र समाहित हैं।

मानव-चित्र

मानव-जगत का चित्रण करते समय छायावादी कवियों का ध्यान नारी की ओर अधिक आकर्षित हुआ है। कुछ कविताएँ स्वतन्त्र रूप से नारी को संबोधित करके लिखी गई हैं और कुछ में अन्य चित्रों के साथ नारी के चित्र भी हैं। पुरुष-चित्र छायावादी काव्य में अपेक्षाकृत कम हैं। इस काव्य-धारा में नारी के स्थूल रूप-आकार की अपेक्षा गुण-स्वभाव आदि का चित्रण अधिक हुआ है।

छायावादी नारी-चित्रण की यह विशेषता श्रद्धा के चित्रण में मिलती है। श्रद्धा के चित्रण में कवि ने बाह्य रेखाओं की ओर इतना अधिक ध्यान नहीं दिया है जितना उसके स्वरूप के मानसिक प्रभाव की ओर,

हृदय की अनुकृति बाह्य उदार
एक लंबी काया उन्मुक्त।
मधु पवन क्रीड़ित ज्यों शिशु साल
सुशोभित हो सौरभ संयुक्त।
मसृण गांधार देश के, नील
रोमवाले मेषों के चर्म,
ढंक रहे थे उसका वपु कांत
बन रहा था वह कोमल वर्ण।
नील परिधान बीच सुकुमार
खुल रहा मृदुल अधखुला अंग,
खिला हो ज्यों बिजली का फूल
मेघ-वन-बीच गुलाबी रंग।

अपने उदार तथा उन्मुक्त हृदय के समान-श्रद्धा की शरीर-यष्टि भी विशाल थी। अपने सुन्दर शरीर को उसने गांधार देश के चिकने नीले रोम वाले भेड़ों के चमड़े

से ढका था। उस आवरण में श्रद्धा का सुकुमार, कोमल तथा अधखुला अंग अत्यन्त सुन्दर लग रहा था, मानो बादलों के बीच में गुलाबी रंग का बिजली का फूल खिल रहा हो। किन्तु गर्भिणी श्रद्धा का निम्नलिखित चित्र उसके दूसरे रूप को प्रदर्शित करता है,

केतकी गर्भ-सा पीला मुंह
आँखों में आलस भरा स्नेह
कुछ कृशता नई लजीली थी
कंपित लतिका-सी लिये देह
मातृत्व बोझ से झुके हुए
बँध रहे पयोधर पीन आज
कोमल काले ऊनों की नव
पट्टिका बनाती रुचिर साज।

पुरुष-रूप-चित्रण में भी प्रसाद ने इसी कौशल का परिचय दिया है। प्रलय के उपरांत हिमगिरि के शिखर पर मनु चिताग्रस्त बैठे हैं। उनका शरीर देवदारु के समान विशाल और दृढ़ है, ओजपूर्ण मुख पर कान्ति है, किन्तु पौरुष कौर यौवन से युक्त होते हुए भी मनु चिंतित हैं—

अवयव की दृढ़ मांस–पेशियां
ऊर्जस्वित था वीर्य अपार,
स्फीत शिराएँ, स्वस्थ रक्त का
होता था जिनमें संचार।
चिन्ता कातर बदन हो रहा
पौरुष जिसमें ओतप्रोत
उधर अपेक्षामय यौवन का
बहता भीतर मधुमय स्रोत

'निराला' के नारी-चित्र प्रसाद के नारी-चित्र की अपेक्षा अधिक मांसल हैं—

देख यह कपोत-कंट
बाहु-बल्ली कर-सरोज
उन्नत उरोज पीन-क्षीण कटि
नितम्ब-भार तरुण सुकुमार
गति मंद मंद।

निराला के चित्रों में विराटता है। लौटते हुए राम का यह चित्र इस विशेषता से युक्त है। राम की जटाएं खुलकर भुजाओं, वक्षस्थल और पीठ पर फैली हुई हैं,

उनके नेत्रों में तीखी चमक है। राम का यह स्वरूप देखकर 'निराला' के मानस में ऐसे पर्वत का चित्र झलक उठा है जिस पर रात का अंधकार उतर आया है और उस पर दो तारे चमक रहे हैं—

दृढ़ जटा-मुकुट हो विपर्यस्त प्रतिलट से खुल
फैला पृष्ठ पर बाहुओं पर, वक्ष पर, विपुल
उतरा ज्यों दुर्गम पर्वत पर नैशान्धकार,
चमकती दूर तारों ज्यों ही कहीं पार।

पंत ने नारी के मनोभावों के साथ कहीं-कहीं उनके अंगों का भी चित्रण किया है, जैसे इन पंक्तियों में—

लाज की मादक सुरा-सी लालिमा
फैल गालों में, नवीन गुलाब से,
छलकती बाढ़ सी सौन्दर्य की
अधखुले सस्मित गढ़ों से सीप-से

किंतु पन्त के उत्तरवर्ती चित्रण में अधिक मांसलता और स्पष्टता मिलती है। उन्होंने अंगों के यथातथ्य चित्रण के प्रति आग्रह दिखलाया है और इसके लिए प्रकृति के अथवा अन्य मूर्त्त-अमूर्त्त उपादानों की सहायता नहीं ली है। ग्राम-युवती का चित्र इसी प्रकार का है--

खींचती उबहनी वह, बरबस
चोली से उभर उभर कसमस
खिंचते संग युग रस भरे कलश
जल छलकाती
रस बरसाती
बल खाती वह घर को जाती
सिर पर धट
उर पर धर पट।

चित्रण की यह मांसलता महादेवी वर्मा के चित्रों में भी उपलब्ध है। पंत की इन पंक्तियों में नारी के केश-पाश तथा उसके सद्यः स्नात सजल शरीर का स्पष्ट चित्र है जो सहज ही विद्यापति की सद्यःस्नाता का स्मरण करवा देते हैं :—

रूपसि तेरा घन–केश–पाश
श्यामल श्यामल कोमल कोमल
लहराता सुरभित केशपाश !

कंपित हैं तेरे सजल अंग
सिहरा- सा तन है सद्यः स्नात
भीगीं अलकों के छोरों से
चूती बूंदें कर विविध लास।

मैथिलीशरण गुप्त जी ने भी भारत का वैभवशाली चित्र 'वह मातृभूमि मेरी, वह पितृभूमि मेरी' में प्रस्तुत किया है। पंत ने ग्राम्य प्रकृति और ग्राम्य जीवन का करुण एवं मार्मिक चित्र 'ग्राम्या' में दिया है।

अनेक प्रगतिवादी कवियों ने यथार्थ चित्र भी प्रस्तुत किये हैं जैसे दिनकर का 'हिमालय के प्रति।' 'जेल और ग़रीबी के चित्र' भी नवीन, दिनकर आदि कवियों ने प्रस्तुत किये हैं।

कविवर नरेन्द्र शर्मा ने 'प्रियदर्शी का चित्र' शीर्षक कविता में नेहरू का चित्र प्रस्तुत करने की चेष्टा की है--

शुभ्र वेष, खिलते गुलाब-सा
खुले हृदय का फूल
निष्ठा की निर्भ्रान्त साधना,
कभी-कभी कुछ भूल।
शीलवान भारत का शैशव
तरुणाई साकार।

इस अद्वितीय रेखाचित्र की अंतिम पंक्तियाँ इस प्रकार हैं--

किसी चौखटे में हम उसको
जड़ न सकेंगे मित्र !
कभी एक रस हुआ, न होगा
प्रियदर्शी का चित्र !
रेखागणित न लागू जिस पर,
रेखाचित्र सजीव,
पात्र नहीं, उत्क्रान्त सुविकसित--
वह था एक चरित्र !

हंस के अप्रैल १९४६ के अंक में गिरिजाकुमार माथुर की 'रेखाचित्र' शीर्षक से प्रकाशित कविता के चित्र इस प्रकार हैं--

ये धूसर, सांवर, मटयाली, काली धरती,
फैली है, कोसों आसमान के घेरे में।

रूखों-छाये नालों के हैं तिरछे ढलान
फिर हरे भरे लंबे चढ़ाव
फर बेरी ढाक, कास से पूरित टीलों तक,
जिनके पीछे छिप जाती है
गढ़बाटों की रेखा गहरी।

इधर श्री विजयचन्द की एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक 'चेहरे' शीर्षक से प्रकाशित हुई जिसमें काव्य-विधा में लिखे हुए बारह-रेखाचित्र हैं : टेलीफ़ोन आप्रेटर, एक्सट्रा, विज्ञापन, नपुन्सक, जारज, बारूद, दत्तक, शाह जी, चाणक्य, नफ़ीरीवाला, देशभक्त कुरूप, वेश्या। ये सशक्त नुकीले रेखाचित्र हैं जो वस्तुतः इस रूप में पहले कभी नहीं प्रस्तुत हुए हैं। कुछ रेखाचित्रों के अंश इस प्रकार हैं।

एक्सट्रा

इस रेखाचित्र का प्रारम्भ इस प्रकार होता है--

मैं एक्सट्रा हूं
एक्सट्रा–यानी कि फ़ालतू
गिनती से ज्यादा
फ़िल्हाल बेकार,
बेज़रूरत !
ज़रूरत हो तब भी
चिंता की बात नहीं
जैसे–कपड़े, सीमेन्ट, डाल्डा की
बेशुमार एजन्सियाँ हैं,
जैसे–खिली अधखिली, झर रही कलियों की
असंख्यात मंडियां हैं
जैसे–फ़ोन पर भेड़ों की खरीद-फ़रोख्त हो सकती है।

वेश्या

इस रेखाचित्र का मध्यांश इस प्रकार है--

काली, बेपुती
पान की पीक से--
चित्रित दीवारें

पुराने, मृतक,
कलैन्डर से छांटकर, काटकर---
कुछ एक धार्मिक, अधार्मिक तस्वीरें
दीमक से घुनी हुई
छत की कड़ियां
मुर्दा मकड़ियां
जीवित जाले
नहीं किसी कोठी में,
···एक बदबूदार, सील-भरी,
तंग कोठरी में,
मैं 'रूप' ! बेचती हूं
मैं 'शरीर' ! बेचती हूं
आखिर में क्या क्या बेचती हूं ?
आज मुझे तुम ही बतला दो !

हिन्दी-काव्य में उपलब्ध रेखाचित्रों का संक्षिप्त परिचय यहां केवल इस दृष्टि से दिया गया है कि हम यह जान सकें कि गद्य को माध्यम बनाने से पूर्व भी काव्य के माध्यम से रेखाचित्र लिखे जाते थे और आधुनिक काल में भी पद्य में अच्छे रेखाचित्र लिखे जाते हैं। लेकिन जहां स्वतन्त्र 'विधा' के रूप में 'रेखाचित्र' का विकास हुआ है वहां अधिकांशतः लेखकों ने गद्य का माध्यम ही अपनाया है।

उपन्यासों में रेखाचित्र

काव्य में चित्रात्मकता तथा रेखाचित्र के तत्त्व तो प्राचीन काल से मिलते हैं पर गद्य की विधाओं में रेखाचित्र का स्वतन्त्र विधा के रूप में विकास होने से पूर्व ही कथा-साहित्य में इसके तत्त्व बीज रूप में प्रारम्भ से ही विद्यमान थे।

उपन्यासों में पात्रों की आकृति, वेश-भूषा तथा कहीं-कहीं चरित्र-चित्रण के लिए भी रेखाचित्र शैली का आश्रय लिया गया है। पात्रों की आकृति तथा वेष-भूषा के वर्णन में तो यह सहज रूप में ही विद्यमान है। हिन्दी उपन्यासों की प्रारम्भिक अवस्था में ही इस दृष्टि से अच्छे उदाहरण मिलते हैं। उदाहरणार्थ, हम 'चन्द्रकान्ता' उपन्यास से कुछ उद्धरण ले सकते हैं :

घोड़े पर चढ़े हुए कुंवर वीरेन्द्र सिंह की झांकी—

"सिर पर फौलादी टोपी जिसमें एक हुमा के पर की लांबी कलंगी लगी हुई थी, बदन में बेशकीमती लिबास के ऊपर फौलादी जर: पहने हुए थे, गोरा रंग, बड़ी-बड़ी आँखें, गालों पर सुर्खी छा रही थी। बड़े-बड़े पन्नों के दानों का कण्ठा और भुज-बल भी पन्ने का ही था, जिसकी चमक चेहरे पर पड़कर खूबसूरती को दूना कर रही थी—ताकत, जवांमर्दी, दिलेरी और रोआब इनके चेहरे ही से झलकता था, दोस्तों के बीच मुहब्बत और दुश्मनों के दिल में खौफ पैदा होता था।"

खत्री जी इस कला में सिद्धहस्त थे, इस तथ्य की ओर निर्देश करते हुए 'हिन्दी उपन्यास में चरित्र-चित्रण का विकास' शीर्षक शोध-प्रबन्ध में डा. रणवीर रांग्रा लिखते हैं—

"कोई आदर्श पात्र भयंकर घटना में अपना धैर्य तथा साहस कैसे बनाये रखता है और खल पात्र कितनी जल्दी प्रलोभन में आ जाता है और कितनी जल्दी भय से थर-थर काँपने लगता है यह दिखाने के लिए उपन्यासकार को घटना का इतना सजीव वर्णन करना होता है कि पाठकों को ऐसा प्रतीत होने लगे कि वे सारी घटना अपनी आँखों से देख रहे हैं न कि उपन्यास में से पढ़ रहे हैं। इस कला में देवकीनन्दन खत्री सिद्धहस्त हैं। इनके शब्द-चित्र इतने सजीव होते हैं···इसके पास न कोई ईंट है, न पत्थर, न चूना है न गारा, न हथौड़ा, न फावड़ा। केवल शब्दों के सहारे गगनचुम्बी रंग महल और पाताल तक धंसी गारे, हीरे, जवाहरातों से जगमगाते खजाने और मीलों लम्बी घुप अँधेरी गुफ़ाएँ रच डालते हैं।"

आगे चलकर प्रसाद, प्रेमचन्द, वृन्दावनलाल वर्मा, जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी, यशपाल, अज्ञेय आदि उपन्यासकारों में यह प्रवृत्ति विकसित रूप में दृष्टिगत होती है।

प्रसाद के काव्य में तो अनेक सजीव शब्द-चित्र हैं ही पर उनके नाटक तथा उपन्यासों में भी इनकी संख्या कम नहीं है। 'तितली' की मोहिनी मूर्ति का एक चित्र उपस्थित है।

"उसकी काली रजनी-सी उनींदी आंखें, लम्बा छरहरा शरीर, गोरी पतली उंगलियाँ, सहज उन्नत ललाट, कुछ खिची हुई भौंएं और छोटा-सा पतले अधरों वाला मुख, कानों के ऊपर से ही घूंघट था, जिससे

लटें निकली पड़ती थीं। उसकी चौड़े किनारे की धोती का चम्पई रंग उसके शरीर में घुला जा रहा था। वह सन्ध्या के निरभ्र गगन में विकसित होने वाली अपने ही मधुर आलोक से संतुष्ट एक छोटी-सी तारिका थी।"

तितली में इस प्रकार के चित्र भरे पड़े हैं। 'कंकाल' की तारा का सजीव चित्र उपस्थित है—

"एक षोडशी युवती सजे हुए कमरे में बैठी थी। पहाड़ी रूखा सौन्दर्य उसके गेहुँए रंग में ओत-प्रोत है···बीच में मिली हुई भौंहों के नीचे न जाने कितना अंधकार खेल रहा था। सहज नुकीली नाक··· नीचे सिर किये हुए उसने जब इन लोगों को देखा उसकी बड़ी-बड़ी आंखों के कोने और भी खिचे हुए जान पड़े। घने काले बालों के गुच्छे दोनों कानों के पास के कंधों पर लटक रहे थे। बायें कपोल पर तिल।"

उपन्यास-सम्राट् प्रेमचन्द तो 'शब्द-चित्र' खींचने में निष्णात थे। अपने पत्र हंस में आप 'स्केच' विधा को प्रधानता भी देते थे। अपने २ अगस्त १९३५ के पत्र में ही आपने बनारसीदास चतुर्वेदी को लिखा था, "मैं हंस के लिए आपकी ओर से किसी साहित्यकार, जैसे पं. पद्मसिंह शर्मा के स्केच की उम्मीद लगाये हूं।" साथ ही वीरेश्वर सिंह ने अपने २४-१२-१९३२ के पत्र में सूचित किया था कि "शब्द-चित्र खींचने में तुम्हें बहुत कम लोग पहुंच सकते हैं।"

अपने उपन्यासों तथा कहानियों में आपने अनेक सजीव शब्द-चित्र प्रस्तुत किये हैं। प्रेमाश्रम के प्रारम्भ में ही मनोहर के लड़के 'बलराज' का चित्र इस प्रकार है—

"इतने में एक युवक कोठरी में आकर खड़ा हो गया। उसका शरीर खूब गठीला हृष्ट-पुष्ट था, छाती चौड़ी और भरी हुई थी। आंखों में तेज झलक रहा था। उसके गले में सोने का यन्त्र था और दाहिनी बाँह में चांदी का एक अनन्त।"

प्रायश्चित्त कहानी में पंडित जी का एक चित्र द्रष्टव्य है—

"पंडित परमसुख चौबे छोटे से मोटे से आदमी थे। लम्बाई चार फीट दस इंच और तोंद का घेरा अट्ठावन इंच। चेहरा गोल-मटोल, मूंछ बड़ी-बड़ी, रंग गोरा, चोटी कमर तक पहुंचती हुई।"

उनके अन्य उपन्यासों में भी इस प्रकार के अनेक चित्र प्राप्त हो सकते हैं, इस दृष्टि से गबन तथा गोदान उल्लेखनीय हैं।

श्री वृन्दावनलाल वर्मा ने उपन्यासों तथा कहानियों के अतिरिक्त स्केच भी

लिखे हैं इसलिए हमने आपको रेखाचित्रकारों में सम्मिलित किया है, वहीं पर 'मृग-नयनी' उपन्यास से भी कुछ उद्धरण दिये गये हैं। 'झांसी की रानी' में युद्ध-वर्णन भरे हुए हैं। 'गढ़ कुंडार' से यहां एक उदाहरण उद्धृत है--

"एक सवार की आयु सत्रह या अठारह वर्ष से अधिक न होगी। प्रशस्त ललाट, कुछ लम्बाई लिये गोल चेहरा, आंखें कुछ बड़ी और बादाम के आकार की हल्की काली, नाक सीधी और होंठ लाल, ठोड़ी आधार में एक हल्के से गढ़ेवाली और जरा सी आगे को झुकी हुई और गर्दन सुराहीदार। केश पीछे गर्दन तक लम्बे और बिल्कुल काले और उन पर कहीं-कहीं रेत के कण। भौंहे पतली लम्बी और खिंची हुई और पलकें दीर्घ। सीना चौड़ा और कमर बहुत पतली, बाहु लम्बे और हाथ की उंगली पतली, मूंगिया रंग के कपड़े पहने हुए, छोटी-सी ढाल और तरकस पीट पर, कमर में तलवार और कन्धे पर कमान। भाल पर लगा रोरी का तिलक किसी समय हाथ पड़ जाने से पुछ गया था और माथे पर तिलक लकीर के आकार में बन गया था। इस आरक्त वक्र रेखा ने मुख में हल्के गेहुंए रंग को और भी तेजोमय बना दिया था।"

एक दूसरा चित्र इस प्रकार है--

"रंग सांवला, लम्बे काले बाल चेहरे की श्यामलता को और भी गहरा बना रहे थे। मस्तक छोटा, आंखें बड़ी, नाक सीधी परन्तु छोटी, भौंहे मोटी और गुच्छेदार, ठोड़ी चौड़ी और आगे को झुकी हुई। बायें कान में मणि-जटित बाली, सीना बहुत चौड़ा, हाथ छोटे परन्तु बहुत पुष्ट, सारी देह जैसे सांचे में ढाली गयी हो। आंखें बहुत काली सजग और जल्दी-जल्दी चलने वाली, गले में पड़ी मोतियों की माला चेहरे के सांवलेपन को दीप्ति दे रही थी, चेहरा गोल होंठ कुछ मोटे। इसके माथे पर भी रोरी का तिलक था, परन्तु वह पुछा नहीं था।"

अज्ञेय को भी रेखाचित्रकारों में सम्मिलित किया गया है पर आपके उपन्यासों में भी सजीव शब्द-चित्र मिलते हैं। ये शब्द-चित्र छोटे तथा बड़े दोनों प्रकार के हैं। कुछ चित्र ऐसे भी हैं जहां गिनी-चुनी रेखाओं मात्र से व्यक्तित्व को उभारा गया है, जैसे 'नदी के द्वीप' में गौरा का वर्णन--'लम्बी, कृश तनु, गम्भीर गौरा।'

'शेखर एक जीवनी' का कुमारप्पा का यह रेखाचित्र भी उल्लेखनीय है--युवक का चेहरा सुन्दर था, आंखें सुडौल और स्वच्छ नीली,

प्रायः हंसती हुई, नाक सीधी और छोटी, ओठ पतले, लम्बे और चंचल। सिर पर लम्बे-लम्बे और घुंघराले बाल थे जिन्हें अपने ढंग से काढ रखा था।"

जैनेन्द्र ने भी सफल रेखाचित्र लिखे हैं। उपन्यासों में भी पात्रों की बाह्य आकृति आपके शब्द-चित्रों के माध्यम से सम्मुख आ खड़ी होती है, जैसे 'सुनीता' में--

"हरि प्रसन्न के बड़े-बड़े बाल थे। दाढ़ी भी उग रही थी। खद्दर का एक लम्बा कुरता था, गले में चादर, ऊंची धोती और चप्पल।",

चित्रकारी के माध्यम से चरित्र-चित्रण की प्रणाली की ओर डा. रणवीर रांग्रा ने अपने शोध-प्रबन्ध 'हिन्दी उपन्यासों में चरित्र-चित्रण का विकास' में संकेत किया है, "कलाकार का व्यक्तित्व उसकी कृतियों में अनायास ही अभिव्यक्ति पा लेता है। आज जब व्यक्ति की लिखावट में उसके व्यक्तित्व की झाँकी पाने के प्रयास किये जाते हैं तो उसकी स्वतः निसृत चित्रकारी में उसके चरित्र ढूंढ़ने के प्रयोगों की सफलता में संदेह न करना होगा। इस दृष्टि से आपने इलाचन्द्र जोशी को सर्वोत्कृष्ट माना है और आपके जो 'प्रेत और छाया' में पात्रों की निरुद्देश्य चित्रकारी की गयी है उसका भी यही उद्देश्य है। आप स्वयं भी अच्छे शब्द-चित्र प्रस्तुत करते हैं। डॉ. राँग्रा ने 'जहाज के पंछी' से ये दो उदाहरण उद्धृत किये हैं--

दीप्ति का शब्द-चित्र

"उसका गोरा-सा चेहरा भी उपयुक्त अनुपात में गोलाई लिये हुए लम्बा था। एक पखर को लम्बा चीरने पर जो दो फाँकें बन जाती हैं वैसी ही बढ़ी और तनी हुई उसकी दो उज्ज्वल आंखें दो सुडौल भौंहों की छत्रछाया के नीचे अठखेलियां करती थीं। नाक लम्बी उभरी हुई और कुछ नुकीली थी। दांतों की दो सफेद पंक्तियां सीधी और सामंजस्य पूर्ण थीं, ओठों की दो पतली रेखा ६३ के अंक की तरह आमने-सामने आकारवाले धनुषों की तरह अंकित सी जान पड़ती थीं।"

एक दूसरे स्थान से शब्द-चित्र--

"सिर के रूखे-सूखे अस्त-व्यस्त बाल, घनी घास से भरी क्यारियों की तरह दो गलमूंछें और उन गलमूंछों के अगल-बगल और नीचे फैले हुए, एक हफ्ते से छीले गये, फसल कट जाने के बाद शेष रह जाने वाले सूखे खूंटों की तरह छितराये हुए दाढ़ी के कड़े बाल, क्षय रोग के रोगियों की तरह मुरझाया हुआ दुबला पतला, धुले हुए कपड़ों

की तरह रक्तहीन सफेद चेहरा, धँसी हुई आँखें, गढ़े पड़े हुए गाल और गालों की उभरी हुई नुकीली हड्डियाँ, जिन पर कई दिनों से धुलने की सुविधा न होने से मैला कुर्ता और मैली धोती।"

इस दृष्टि से उपन्यास साहित्य से भी अच्छे रेखाचित्र संकलित किये जा सकते हैं साथ ही इस प्रकार का अध्ययन भी किया जा सकता है कि लेखक ने रेखाचित्र शैली को अपने किन तत्त्वों को प्रकट करने के लिए अपनाया है।

अध्याय ४

हिन्दी रेखाचित्र का विकास

पं० पद्मसिंह शर्मा

यद्यपि हिन्दी साहित्य के द्विवेदी युग में शर्मा जी का नाम तुलनात्मक पद्धति के लिए लिया जाता है, फिर भी स्वतन्त्र निबन्ध-लेखन में आपका महत्त्वपूर्ण स्थान है और इस क्षेत्र में आप अग्रणी हैं। व्यक्तिगत निबंधों की शृंखला में भी पद्मसिंह जी का नाम लिया जा सकता है। अनेक भाषाओं के ज्ञाता, अनेक पत्रों के सम्पादक, अनेक प्रकार की शैलियों के जन्मदाता पंडित जी उच्चकोटि के समीक्षक तथा निबंधकार थे। आपके निबंधों को संकलन रूप में भी प्रकाशित किया गया है—पद्म-पराग, प्रबंधमंजरी।

'रेखाचित्र' की दृष्टि से आपका 'पद्म पराग' संग्रह उल्लेखनीय है जिसमें संस्मरणात्मक निबंधों तथा रेखाचित्रों का संकलन है और कुछ विशेष निबंध हैं। संस्मरणात्मक निबंधों तथा रेखाचित्रों के आप जनक कहे जा सकते हैं।

संस्मरण विधा में विक्षेप शैली का आपका एक उदाहरण द्रष्टव्य है :

> "हा, पण्डित गणपति शर्मा जी हमको व्याकुल छोड़ गये। हाय, हाय, क्या हो गया ! यह वज्रपात, यह विपत्ति का पहाड़ अचानक कैसे सिर पर टूट पड़ा। यह किसकी वियोगाग्नि से हृदय छिन्न भिन्न हो गया, यह किसके शोकानल की ज्वालाएँ प्राण-पखेरू के पंख जलाये डालती हैं। हा ! निर्दय काल।"

'पद्म-पराग' में ही दयानन्द जी पर भी आपका जीवनीपरक लेख है। उनका महाकवि अकबर विषयक रेखाचित्र चरित्र-चित्रण का सर्वोत्तम उदाहरण है। 'लीडरों की पोल' भी आपने कुछ रेखाचित्रों में खोल दी है।

> "एक आजकल के लीडर हैं, किसी दुर्घटना को रोकने के लिए तार पर तार दिये जाते हैं, पधारने की प्रार्थना की जाती है, पर 'हमारी कोई नहीं सुनता' कहकर टाल जाते हैं, पहुँचते भी हैं तो उस

वक्त जब मारपीट हो चुकती है, सो भी सरसरी तहकीकात के बहाने ।"

इस विधा को प्रारम्भिक रूप देने में शर्मा जी का योगदान महत्त्वपूर्ण है, आपसे ही प्रेरणा पाकर आगे चलकर पं. बनारसीदास चतुर्वेदी, पं. श्रीराम शर्मा, पं. हरिशंकर शर्मा आदि लेखकों ने इस दिशा में लेखनी चलानी प्रारम्भ की ।

श्री श्रीराम शर्मा

श्री श्रीराम शर्मा हिन्दी साहित्य में शिकार-साहित्य के प्रख्यात लेखक के रूप में जाने जाते हैं । आपकी लिखी हुई कहानियां भी कहानी-साहित्य में स्थान प्राप्त कर चुकी हैं । कहानी के साथ-साथ रेखाचित्र लिखने की दृष्टि से भी आपकी कला में निरन्तर निखार आता गया । कहानी या स्केच लिखने की प्रेरणा लेखक को कैसे मिलती है यह शर्मा जी के ही शब्दों में, "कहानियां और स्केच लिखने की उसकी प्रवृत्ति यह रही है कि जब तक उसके दिल पर चोट नहीं पहुंची, जब तक उसे कोई मनोवैज्ञानिक सत्य नहीं मिला और जब तक उसे भीतरी प्रेरणा नहीं हुई तब तक उसने कोई कहानी या स्केच नहीं लिखा ।"

पं. श्रीराम शर्मा की तूलिका से रंग-बिरंगे शब्द-चित्र उस समय से लिखे जाने लगे जब इस विधा का कोई ज्ञान भी नहीं था, केवल इनके पूर्ववर्ती लेखकों की यत्र-तत्र वस्तुतः रेखाचित्र के नाम पर रेखाएं मात्र ही थीं। आज इस विधा में अग्रणी, सिद्धहस्त तथा वरिष्ट लेखक पं. बनारसीदास चतुर्वेदी ने लेखक की पहली पुस्तक 'बोलती प्रतिमा' की भूमिका में लिखा, "वे इस विषय में स्व. पद्मसिंह शर्मा के असली उत्तराधिकारी हैं । जिस समय 'विशालभारत' में श्रीराम जी के शिकार-संबंधी स्केच निकल रहे थे, उस समय पूज्य पण्डित जी ने[१] इन पंक्तियों के लेखक को लिखा था--"श्रीराम जी तो उत्तरोत्तर गजब ढा रहे हैं । बन्दूक से बढ़कर इनकी लेखनी का निशाना बैठता है, पढ़नेवाला तड़पकर रह जाता है । नजर से बचने के लिए इनके डंड पर भैरव जी का गंडा बांध दीजिए ।"

[१] **पं. पद्मसिंह शर्मा जी की सम्मति के कुछ अंश इस प्रकार हैं--**

"आपके लेखों का निशाना भी सीधा पाठकों के हृदयों पर जाकर बैठता है--पढ़ने वाला लोटपोट हो जाता है । अपने ढंग के आप एक ही लेखक हैं । आपकी वर्णन-शैली बड़ी सजीव, भाव-विश्लेषण मनोविज्ञान-सम्मत और भाषा विषय के अनुरूप बड़ी सुघड़ होती है ।"

शर्मा जी के रेखाचित्रों का प्रथम संग्रह 'बोलती प्रतिमा' शीर्षक से आलोच्य काल के प्रारम्भ में ही सन् १९३७ ई. में ही प्रकाशित हो गया था। इसमें पन्द्रह लेख-कहानियां और स्केच--संकलित हैं। इस संबंध में लेखक ने स्वयं प्रस्तावना में घोषित किया है,

> "बोलती प्रतिमा--मन्दिर की प्रत्येक प्रतिमा बोलती और सजीव है। हां, 'गीली लकड़ियां' और 'ऐमुन तैमुन तिरिकिटता' मनोवैज्ञानिक सत्य पर आधारित होते हुए भी लेखक के कल्पना रूपी ताने-बाने से बनी हुई हैं। शेष सब लेखों-स्केचों और कहानियों की सामग्री लेखक की अनुभूति ही समझना चाहिए। कठोर सत्य तथा संघर्ष, लेखक की मार्मिक वेदना, जीवन के घात-प्रतिघात और मानसिक द्वन्द्व का रूप ही शब्दों में है 'बोलती प्रतिमा'। यदि इस संग्रह को माला मान लिया जाय तो बोलती हुई प्रतिमा इस माला का सुमेरु है।"

बोलती प्रतिमा 'भाई जगन्नाथ' का जीता जागता चित्र है जो इस माला का सुमेरु है और जिनको ही यह पुस्तक समर्पित की गयी है। इस स्केच के कुछ जीते-जागते चित्र द्रष्टव्य हैं। प्रारम्भ में ही प्रकृति का चित्रण है।

ऋतुराज बसन्त का एक चित्र--

> "शीत से त्रस्त, कम्बल और रजाइयों में से सिर निकालकर चाय और हुक्का पीने वालों से लेकर शीतकाल के प्रेमियों तक के लिए बसन्त एक आदर्श ऋतु है। ऋतुराज की छबीली छटा का प्रदर्शन होता है, उसके यौवनकाल में यौवन के गुदगुदाते ही बाधाओं की पगस्थित चंचलता के पैर उखड़ जाते हैं। वह ऊर्ध्वरेती होकर ललाटस्थित दो मैगज़ीनों--आंखों--में क़िलेबन्दी कर लेती है, और ऋतुराज में जब यौवन की आभा झलकती है, तब पेड़ और झाड़ियों के आस-पास की चंचलता, इधर-उधर से हटकर, उनकी आँखों--फूलों में जा बसती है, इसीलिए अनेक लताएँ और शाखाएँ, नवेलियाँ बनीं, फूलों से गुंथी बेनी को हिलाकर बहुत से टहलने वालों को मोह लेती हैं।"

जगन्नाथ जी का प्रथम दर्शन इस प्रकार है--

> "मसहरी के भीतर एक अचल शरीर चित पड़ा था। टाँगें सुकड़ी और इतनी पतली मानो पतले बाँसों पर खाल चढ़ा दी गई हो, और हाथ पौनी-से पतले। छाती इतनी भीतर को घुसी हुई कि पीठ से लगी हुई और इतनी गहरी कि उसमें सेर दो सेर अन्न भरा जा सकता था।

हाँ, उस चेहरे में दो आँखें ही थीं, जिनकी पुतलियाँ चलती थीं, और जिनके चलने से उस अचल शरीर की स्वामिनी आत्मा आँखों के आस-पास कहीं उलझी मालूम होती थी। हाथों की उंगलियाँ कभी-कभी हिल जाती थीं पर उनमें इतनी गति नहीं थी कि वे किसी चीज़ को उठा सकें। उस जीवित शव को देखकर मुझे बड़ी दया आई……।"

इस रेखाचित्र में एक ऐसे रोगी का चित्रण है जो लगातार १४ वर्षों से शैया पर पड़ा रहता है पर उसकी घ्राण, श्रवण तथा स्मरण शक्ति प्रशंसनीय है। जगन्नाथ जी स्वयं कहते हैं,

"चलने-फिरने की मेरी शक्ति क्षीण हो गई है। मैं इस योग्य भी नहीं कि रेल या मोटर में रखकर कहीं ले जाया जाऊं, इसलिए मेरे कान, मेरी नाक और स्मरण शक्ति पर कुछ धार-सी धर दी गई है। पैरों की आहट से मैं पहचान लेता हूं कि कौन-सा परिचित व्यक्ति है। बकरी और बैल के खुरों की आहट से मैं उन्हें पहचान लेता हूं।"

"आप ख़याल करते होंगे कि घ्राणशक्ति किस प्रकार तीव्र हो सकती है। सुनिये, जब आमों पर बौर आता है, तब किसी के बिना बताये ही मुझे मालूम हो जाता है कि आमों पर बौर आ गया। पवन के मन्द-मन्द झोंके जब चलते हैं, तब बौर की मोहक गन्ध वायु के झकोरों से मेरे पास तक आ जाती है। पपीतों से आगे नारंगियों के पेड़ देखिये। उन पर जब कलियाँ आती हैं, तब मैं यहाँ पड़े-पड़े मालूम कर लेता हूँ कि नारंगियों के पौधों पर फूल आ रहे हैं।"

इस कहानी को पढ़कर पं. बनारसीदास चतुर्वेदी को रशियन कलाकार तुर्गनेव की 'ए लिविंग रेलिक' प्राचीनकाल की एक जीवित यादगार की याद आई थी।

'ठाकुर की आन' भी एक सत्य घटना के आधार पर लिखी गयी है केवल नाम-स्थान आदि बदल दिये गये हैं।

"लाला भगवानदीन हैं तो जात के बनिये, पर स्वभाव के ठाकुर ही हैं। बनियों में ज़मींदारी इन्हीं की चमकी है। ठाकुरों के सींग इन्होंने ही उखाड़े हैं। ब्राह्मण तक इनकी जूतियों पर बैठते हैं। दूसरे पात्र ठाकुर बलवन्तसिंह 'न ऊधौ का लेन और न माधौ की देन' की बात की सजीव मूर्ति थे, साथ ही भले, सीधे और स्वाभिमानी आदमी थे। किसी से कुछ लेना उन्होंने सीखा ही न था। देहात के

लोग उन्हीं से उपकृत होते थे। किसी को बिच्छू ने काटा तो भागे गये ठाकुर बलवन्तसिंह के पास। किसानों के झगड़े की कोई बात हुई तो फ़ैसला गया बलवन्तसिंह के पास। देहात की सभी भली बातों में उनका हाथ था। यह बहुत बड़े परिवेश को लेकर लिखी गयी कहानी है जिसमें कहीं-कहीं रेखाचित्र के तत्त्व आ गये हैं।"

'हरनामदास' को पढ़कर पूज्य द्विवेदीजी भी चकित रह गये थे। आपकी कथा से भौतिकवाद की क्षणिकता और अस्थिरता का परिचय मिलता है। प्रारम्भ में ही मुनि की रेती का दृश्य :

"वह मधुमक्खी का छत्ता-सा बना हुआ था। डाँडियों के बनने और चिड़ियाघर के जीवों को देखने के लिए वहाँ यात्रियों के ठट्ठ-ठट्ठ लग जाते थे। बरसात में बबूल के पेड़ पर लगे बया के घोंसले में जैसी चहल-पहल होती है, वैसा ही कुछ समा मुनि की रेती में था। एक उपनिवश-सा बस रहा था। मीठी चीज पाकर जैसे चींटियाँ चारों ओर से आ जाती हैं, वैसे ही न मालूम कहाँ से, वहाँ दुकानदार आ गये थे।

वहीं एक पंजाबी पकौड़ीवाला था जिसके पास एक कढ़ाई, दो लोटे, एक थाली, एक कलछी और सेर दो सेर बेसन—बस, यही सामान उसकी दुकान पर था। दिन में दो बार कढ़ाई चढ़ाता, और बात-की-बात में अपनी पकौड़ियाँ बेच लेता। स्वभाव का वह इतना अच्छा था कि चलते आदमी से उसकी दोस्ती हो जाती थी।... 'दीन-दुखियों को बची-खुची पकौड़ी बाँटना, आस-पास के रोगियों की खबर-सुध लेना, सेवा-शुश्रूषा करना, भूखे-प्यासे को खाना देना और लतीफ़े सुनाना उसके स्वभाव में शामिल था।

लाखों की संपत्ति गँवाकर भी कर्म में लगा हुआ, कभी किसी से कुछ माँगा नहीं।"

'गीली लकड़ियाँ'—इसमें कुछ चित्र अच्छे बन गये हैं। एक कैदी बाहर निकला। बाहर क्या था—

"हअर-हअर करके बर्फ का अंधड़ चल रहा था। उस बन्दीगृह के चारों ओर सैकड़ों मील तक हिमाच्छादित मैदान था। उस निर्जन, श्वेत और शीत के साम्राज्य को पक्षी तक पार नहीं कर सकते थे। हाँ, हिमांघड़ रूपी यम अपने असंख्य कम्पायमान शब्दों से रतजगा कर

रहा था। किसी जीवधारी का यह ताव न था जो उसका मुक़ाबिला करता। बर्फ़-का भालू लुका-छिपा लम्बी शीत-निद्रा में लीन था। भेड़िए टोली बाँध-बाँधकर सैकड़ों मील दूर रोज़ी की तलाश में अपनी जीभ लप-लपाते फिर रहे थे।''

'वरदान' प्रस्तुत शब्द-चित्र में एक साहसी युवक नागेन्द्र का दिव्य चित्र है। उसने देशसेवा का प्रण ले रखा है। गोहाटी के पास एक पहाड़ी गाँव में एक कुटिया में तपस्विनी युवती का चित्र,

''उसके कपोलों की लाली, नेत्रों के तेज और मस्तक की आभा से दर्शकों के हृदय में स्वतः ही उसके प्रति श्रद्धा हो जाती थी। पर जब वह जंगल-स्थित देवी के मंदिर में प्रति दिन पूजा को जाती, तब यही भान होता, मानो विश्व का सौन्दर्य युवती के रूप में जा रहा हो।''

'पीताम्बर' का पंचभूत अम्बर नष्ट हो गया, पर उसकी धवल कीर्ति अब भी कायम है। 'पीताम्बर' कुम्हार उन तपस्वी, ईमानदार, परहितकातर और परोपकारी महानुभावों में से था, जो निष्काम सेवा को मानव-जीवन की भित्ति समझते हैं। वे सेवा करते हैं किसी को दिखाने और नाम करने के लिए नहीं, वरन् इसलिए कि सेवा करना उनका स्वभाव है–कोयल की भाँति, जो दूसरे के लिए नहीं वरन् अपने लिए ही कण्टकित होकर मधुर आलाप करती है। पीताम्बर जात का कुम्हार, स्वभाव का ब्राह्मण और पेशे से किसान था।

'वसीयत' में एक प्रिय मित्र की वेदना, आन्तरिक द्वन्द्व, क्लेश तथा कर्तव्य-परायणता का मार्मिक चित्र है।

'फ़ीरोज़ाबाद की कालकोठरी' तो लेखक के शब्दों में ही हमारे जीवन की कालिमा है और मनुष्यता के पाठ पढ़ाने के लिए उसे अन्तिम सबक़ होना चाहिए। उसने दिल पर क्लेश का नासूर पैदा कर दिया है और फ़िरोजाबाद के कारखानों की चिमनियाँ उसी वेदना में अपने हृदय से आह-सी उगल रही हैं।

इसमें संकीर्ण साम्प्रदायिकता के शिकार डा. जीवाराम की करुण गाथा का मार्मिक चित्र लेखनी द्वारा खींचा गया है।

'अपराधी'––इसमें मोहनलाल की करुण कथा है।

'चन्दा'––इसमें चन्दा ने अपनी ग़रीबी में जिन्दगी काट दी ''आकाश में उगनेवाले, विरहिन-दुखदाई और बच्चों के मामा-चन्दा की भांति अंगदपुर का चन्दा चमार अपने घरवालों की दरिद्रता रूपी रजनी के लिए विमल विधु है।'' उसका भुखमरा परिवार एक ओर से परसी थालियों को खींच रहा था और दूस ी ओर

जमींदार के गुर्गे। भूख और नृशंसता का यह करुण युद्ध बहुत देर तक चलता रहा,

> "लंगोटा पहने, नंगे शरीर, नंगे पैर और कुदाली के सहारे चन्दा खड़ा था। उसकी दग्ध आत्मा उसके रोम-रोम से प्रस्फुटित होकर ज़मींदारी प्रथा को शाप दे रही थी। मैं दो मास उपरान्त गाँव में आ रहा था। चन्दा की बेदख़ली और परेशानी सुनकर हृदय को एक चोट लगी। मन-ही-मन मैंने कहा कि चन्दा कंकड़ों का गड्ढा नहीं खोद रहा है, वरन् ज़मींदारी-प्रथा की क़ब्र, जिसमें, यदि अत्याचार की यही गति रही तो, ज़मींदारी-प्रथा की पूतना गड़ जायगी।"

'रतना की अम्मा'—रतना की अम्मा पिसाई-कुटाई में दिन बितानेवाली महिला है। वह करुणा की साक्षात् मूर्ति है।

'इकाई का सौदा'—इसमें साहसी संकटाप्रसाद का चित्र है—

> "यह बात ठीक है कि सभी इकाइयाँ एकसी नहीं होतीं। कोई सूखी बारूद के समान होती है जो तनक-सी चिनगारी से भड़क जाती है। कुछ इकाइयाँ भीगी बारूद-सी होती हैं और कुछ बिलकुल निस्तेज-ज़िन्दामुर्दा, बस चलते-फिरते कीड़े-मकोड़ों के समान। सुधार की उनमें भी सम्भावना है; पर समय और सुधारक चाहिए। लेकिन संसार आकर्षित होता है—सजीव इकाई-मानवी-डाइनमो से।"

उसके व्यक्तित्व में स्वाभिमान और जीवन पर्यायवाची थे। संकट वह इकाई है जो अपना पृथक् व्यक्तित्व रखती है, काँटे की भाँति, जो दबाये जाने पर या तो टूट जाता है या फिर चुभ जाता है।

'शीर्षक-हीन कहानी'—वस्तुतः यह कहानी ही है पर उसमें भी कुछ चित्र हैं :

> "गंगा की सखी-सहेलियों में—सहायक नदियों में यों तो एक से एक बढ़कर और मदमाती हैं। चढ़ने पर—भरी जवानी—बरसात में उनके आनन्दविभोर-उल्लास, नखशिख-सौन्दर्य, आकर्षक और गजब ढानेवाली चंचलता की कौन प्रशंसा करे? यमुना की ब्रजकेलियां, सरयू की अठखेलियां, सरस्वती की अगोचरता और गदकारी सोनभद्र का फहराता हुआ सुनहरा चीर देखते ही बनता है, पर रामगंगा का भृकुटी-विलास और भावभंगी बेजोड़ ही हैं। गंगा महारानी की किसी भी यौवन-मदमाती सखी का यह ताव नहीं कि रिझाने की किसी भी कला में रामगंगा को हरा सके। गात की मझोली, भाव की गम्भीर रामगंगा की छटा को बरेली, मुरादाबाद, शाहजहांपुर, फर्रुखाबाद

और हरदोई जिलों में देखिए । हरित तृणों की झालरदार साड़ी पहने, उभरे गात से, फुदकती और मचलती, मुड़-मुड़कर देखती और यौवन-बाढ़ में अनेक मस्त वृक्षों को बहाती रामगंगा एक विचित्र ही नदी है। अनेक मकानों को अपने गर्भ में रखती--भोजन-सा करती—मीलों तक खेतों को जलमग्न करती, मानवी नई-नवेलियों से होड़ लगाकर वह गंगा से मिलने बढ़ती है । किसी-किसी गांव के पास तो उसे अपने पीहर की याद आ जाती है, और लौट-लौटकर चक्कर लगाकर-घायल सांप की भांति पलटा खाकर-कुछ ढूंढ़ती-सी वह अपना मार्ग बनाती और गांव को प्रायद्वीप बना डालती है ।"

किसी नदी का इतना सजीव चित्र क्या अन्यत्र मिलता है । इसमें जमींदारी प्रथा के दोषों का जीता-जागता चित्र है ।

'इदन्नमम'—इसमें भी एक रूसी पात्र का सजीव चित्र है । पास्पोर्ट के अभाव में मुश्किन नामक कैदी को कारागार का दण्ड दिया गया ।

इस प्रकार इसमें जुल्मों की आग में रात-दिन जलते और भूख की लपटों में झुलसते हुए गरीब किसानों की कथाओं के सजीव और स्वाभाविक चित्र देखकर दिल दर्द से तड़प उठता है और पीड़ित मनुष्यता के प्रति मन में स्वभावतः सहानुभूति की भावना उमड़ने लगती है । इन रेखाचित्रों में लोकजीवन की झांकी मिलती हैं। शैली कितनी ओजस्विनी है इसका ज्ञान तो पिछले कुछ उद्धरणों से हो जाता है । घटनाएं यथार्थ हैं केवल लेखक ने यत्र-तत्र उन्हें कल्पना से छू-भर दिया है । शर्मा जी का दृष्टिकोण यथार्थवादी रहा है, मौन पात्रों को उनकी लेखनी ने मुखर बना दिया है । शर्मा जी ग्रामीण हैं और ग्रामीण ही रहना चाहते हैं । भारतीय जनता अधिकांशतः ग्रामीण है अतएव उसके जीवन के मार्मिक चित्र देश के चित्र हैं । भारत की जनता भी गांवों में रहती है, इस मन्दिर की प्रतिमाएँ भी देहाती हैं, "सीधे-सादे और आडम्बरशून्य, ज़मींदार और साहूकार के अत्याचारों से पीड़ित, जो ज़मीन खोदते हैं और फसल काटते हैं, धान उपजा कर भूखों मरते हैं, दूसरों को पानी पिलानेवाले वे प्यासे हैं। दूसरों को जीवित रखनेवाले वे बिना दवा-पानी के यूं ही मर जाते हैं ।"

(हंस के फर. १९३९ के अंक के रिव्यू से उद्धृत)

"बोलती प्रतिमा का चन्दा चमार और तोता, विक्रमसिंह और संकटाप्रसाद और रतना की अम्माँ पुस्तक से अधिक हमारे अड़ोस-पड़ोस में बसनेवाले प्राणी हैं । पुस्तक हमें उन्हें अधिक निकट से देखने की एक दृष्टि प्रदान करती है।"

गरीबी का एक दृश्य

"स्त्रियाँ एक ओर से परसी थालियों को खींच रही थीं और दूसरी ओर से ज़मींदार के गुर्गे। भूख और नृशंसता में रस्साकसी थी। पीड़ित और अत्याचारी का युद्ध था। स्त्रियों और चंदा के पेट में छिपी भूख ने तड़पकर अपनी सारी शक्ति हाथों को देदी। आँखों की ज्योति ने हाथों को बिजली दी और एक-एक आदमी उन भुक्खड़ों के हाथ से थालियाँ न छीन सका। तब और आदमियों ने औरतों के हाथों को एक ओर को खींचा और दूसरी ओर को थालियाँ खींची गईं।"

अन्त में व्यंग्य के साथ मुसकानभरी वाणी में उसने कहा,

"अरे ठाकुर अबैनू भंगी पातरें उठावत ए, अब अहीर लोग मेरी झूठी थरिया उठावन लागे।"

उनके चित्रों में कहीं हम चन्दा चमार को लंगोटा पहने नंगे शरीर और नंगे पैर जेठ की दुपहरी में कंकड़ खोदते हुए पायेंगे तो कहीं हकीम पीताम्बर को, जो जाति का धोबी था, अपने इलाज से सैकड़ों पशुओं की जान बचाते देखते हैं।

अपनी चित्रात्मक शैली में ही आपने 'पालीवालजी' पर एक रेखाचित्र लिखा था जो हंस के 'रेखाचित्र' विशेषांक में प्रकाशित हुआ। कुछ उद्धरण उनकी शैली का आस्वादन करने के लिए लाभप्रद रहेंगे :

"मुखाकृति–साधारण दशा में तनिक भी आकर्षण नहीं, प्रकृतिपरी ने क्रुद्ध होकर अथवा भारतमाता के दुःखों ने सजीव होकर उनके चेहरे को चेचक चिह्नों से अहोरकर-खोंटकर-ऐसा लीपा है कि मुखाकृति से पालीवालजी लीपावाल हो गये हैं। पर ऐसी बात नहीं है कि उनकी आकृति में आकर्षण न हो। आकर्षण है और बड़ा विकट आकर्षण है। साधारण दशा में ? नहीं, तनिक भी नहीं। उनकी आकृति में आकर्षण तब होता है जब उनके हृदय और मन का ज्वालामुखी प्रज्वलित होकर किसी सिद्धान्त अथवा पक्ष की पुष्टि में लावा उगलता है। उस समय पालीवालजी की आकृति तमतमा उठती है। चेहरे के चेचक चिह्नों से, चेहरे में लगे दो बाराह नेत्रों से क़हर ही नाज़िल होने लगती है।"

"पालीवालजी भी शास्त्रार्थ और शस्त्रार्थ दोनों में निपुण हैं। वे लेखनी लाठी और जिह्वा से लड़ने मरने को तैयार रहते हैं। वे

उन आदमियों में से नहीं हैं जो उँगली कटाकर शहीद होना चाहते हैं और न वे सर से कफ़न लपेटे क़ातिल को ढूंढ़ते हैं, वरन् वे उन पर अपनी रण बांकुरों में से हैं जो देश की खातिर, आवश्यकता पड़ने बोटी-बोटी कटा सकते हैं, हँसते-हँसते सूली पर चढ़ सकते हैं···।"

गार्डिनर के हरबर्ट सेमुएल के स्केच को पालीवाल के लिए इस प्रकार बदल दिया,

"He is the wind that bloweth where it listeth in different to theories impatient of slow process, governed only by a compelling passion for country. Mr. Paliwal's path is as designed and absolute as a geometrical line. He is the artificer of politics, confident of his aim, master of himself and his materials; inflexible in purpose—a splendidly efficient instrument but never an inspiration."

व्यक्ति विशेष पर आपका पंडित 'खगेराम' शीर्षक रेखाचित्र सरस्वती में अक्टूबर १९५० में प्रकाशित हुआ। मार्च १९५० की सरस्वती में 'रेखाहीन जीवन' शीर्षक से चित्र में आत्माराम का चित्रण है जिसने नगर की कथा सुनी—किन्तु अंगरेज आये और उन्होंने अपनी चातुरी से तथा देश का विशाल धन व्यय करके एक छोटा-सा ग्राम बड़ा नगर बना दिया।

मधुकर के 'रेखाचित्रांक' में श्रीराम जी के 'वे कैसे जीते हैं' शीर्षक से तीन रेखाचित्र हैं,

१. एक ऐसे पिता की कहानी जिसका पुत्र मर गया है।
२. सन् १९२४ में संसार के सबसे बड़े डाक्टर, समय ने बिलखते पिता के दिल के घाव पर मरहम-पट्टी की।
३. इसमें ही 'चन्दा' शीर्षक रेखाचित्र है जिसका विवरण ऊपर दिया जा चुका है।

'प्राणों का सौदा' (१९३९) वस्तुतः प्रकृति, शिकार तथा वन्य पशुओं से संबंधित है। इसमें मशहूर शिकारियों पर बीती घटनाओं अथवा दुर्घटनाओं का चित्रण है जिसका बहुत कुछ आधार चैडविक, मेजर फ़ोरन, लैफ़्टिनेंट कैसर ले नोलैज आदि की पुस्तकें हैं। इसमें १३ दृश्य-चित्र हैं।

'बदला'—इस शब्द-चित्र का एक मार्मिक चित्र देखिए,

"मगर का पेट फाड़ा गया। भीतर से और चीजों के साथ स्त्री के गहने, अधगली टांगें और केश निकले। उनको पहचाननेवाला भी वहीं था। उन्हें देखकर मुतशिवी फूट-फूटकर रोने लगा। विकृत तथा अधगले शरीर ने मुतशिवी के सम्मुख उसके सुखमय गार्हस्थ्य-जीवन का चित्र खींच दिया। उसके हृदय का ज्वालामुखी धधकने लगा और इस ज्वालामुखी के दो मुंहों से आंसू लावा के रूप में निकलने लगे। हिचकियों से उसका शरीर कांप रहा था और अश्रुधारा बह रही थी।"

'रोमांचकारी कुश्ती' से शेर की मुद्रा का एक चित्र—

"वह क्रोध से भन्नाया हुआ था। होंठ पीछे खींचे, मूंछें खड़ी किये, दांतों का प्रदर्शन करते और बालों को सतर किये, विजय और युद्ध-जिज्ञासा से शेर को दावघात करने को आ खड़ा हुआ।"

'दुर्घटना' के प्रारम्भ का प्रकृति चित्रण क्या किसी भी कवि की कल्पना से कम है,

"मेघाच्छादित आकाश में, बिजली कैसी टेढ़ी-मेढ़ी दीख पड़ती है, बर्फानी नदी की गति कैसी वक्र होती है; पर हैं दोनों सजीव। बिजली की तड़प और सरिता के प्रवाह में उच्चतम त्याग और सेवाभाव छिपे हैं। उनकी संहार-शक्ति नगण्य है। तड़ित-दर्प पौधों और वृक्षों को नाइट्रोजन देता है और सरिता-गति पृथ्वी को उर्वरा-शक्ति तथा जल प्रदान करती है। मानव-संसार में भी वे ही व्यक्ति बिजली और सरिता के समान सजीव और शक्तिशाली होते हैं, जिनके जीवन के मूलमन्त्र हैं—त्याग और सेवाभाव।"

शर्मा जी की सबसे उल्लेखनीय कृति है 'जंगल के जीव' (मई १९४९)। इसमें जंगली जीवों—काला हिरन, बघेरा, घड़ियाल, शेर, हाथी, जंगली सूअर, बया, सियार, जंगली मुर्ग–के जीवन–स्केच हैं। यह लेखक के पच्चीस वर्ष के अन्वेषण, निरीक्षण और प्रकृति अध्ययन का फल है। लेखक ने स्वीकार किया है कि इन स्केचों के अध्ययन में लेखक का बहुत अधिक समय लगा है।

काला-हिरन : द्रुतगामी—इसका निरीक्षण और अध्ययन लेखक के गाँव के आप-पास का है। बचपन से ही हिरनों को समझने का शौक़ रहा है। लेखक ने लगातार दस-बारह वर्ष तक विशेषकर गर्मियों में दूरबीन लेकर अपने गाँव के आसपास फ़ोटो अध्ययन किया तब ही तो ऐसा चित्र प्रस्तुत कर सका :

"मृग शावक ने भोली आँखों से अपनी माँ की ओर निहारा, और माँ ने अपनी कातर दृष्टि से उसकी आँखों में स्नेह उँड़ेला। स्नेह-आकर्षण से शावक के कोमल शरीर में बिजली-सी दौड़ गई लड़खड़ाकर वह खड़ा हुआ। क्षीण शब्द—रंभाने के धीमे शब्द 'ओंअ' से उसने अपनी सजीवता प्रकट की। झरबेरी ने झूम-झूमकर पुत्र-जन्म पर सोवरि के गीत गाये। लू की सिहरिन ने रागिनी छेड़ी। सूर्य ने मूक का ठेका लगाया और मृगशावक ने हूतें मार-मारकर मातृ-अंचल से श्वेत जीवन-रस पान किया। हिरनी दूध पिलाने में कभी अपने बच्चे को दुलारे करती और कभी कनौती करके चारों ओर देखती कि कहीं कोई शत्रु निकट नहीं है।"

बघेरन : खून का प्यासा---लेखक के गढ़वाल जीवन का प्रतिफल है। गढ़वाल के गिरि शिखरों और जंगलों से लेखक ने प्रेरणा प्राप्त की है। इसका एक अंश इस प्रकार है--

"गुफा में पड़ी चंचला बच्चों की शिक्षा-दीक्षा और रक्षा का ख्याल कर रही थी। बच्चे बड़े हो रहे थे। खिलकौरियाँ करते हुए कहीं दूर निकल गये, या सड़क पर जा भटके, तो न जाने उन पर क्या मुसीबत आ जाय। उसका एक बच्चा तो मर ही चुका था। शेष तीन बच्चों पर कोई नई मुसीबत न आय, इसीलिए रात भीगते ही बांगड़ू के साथ वह उन्हें वहां से ले चली। आगे-आगे बांगड़ू चलता था स्काउट की भांति और उसके दस क़दम पीछे चंचला थी। और उसके अगल-बगल तीनों बच्चे। जब कभी कोई बच्चा ज़रा भी इधर-उधर होता, तभी चंचला मीठी घुड़की से उन्हें राहे रास्ता पर लाती।"

घड़ियाल : खूनी--यमुना, गंगा और काली तथा रामगंगा के किनारे से ली हुई सामग्री है। इसमें प्रकृति का एक दृश्य इस प्रकार है--

"क्षितिज से कुछ काली घटाएँ उठीं। पावस सुन्दरी ने अपनी लम्बी-लम्बी लटें फैलाईं। उसे शृंगार करते देख सूर्य पुरुष की भांति ओट में हो गया। पावस की परिचारिकाओं-पुरवैया और बदरिया ने कनातें-सी खड़ी कर दीं। लटों को पावस-सुन्दरी ने सुनहरी कोड़े से झाड़ना शुरू किया। तड़ित- के दण्ड-प्रहार से लटों से घंटों पानी झरा। भूतल पर विरहाकुल सरिताओं में पुलकावलि हुई। खुशी से

उनका गात फूला और अपनी मस्ती में वे झूलने लगी ।"

इसमें ही राजनीति तथा समाज पर व्यंग्य है–

"जंगली जीवन में ऊपरी ढोंग और टीमटाम से काम नही चलता । लोक सत्ता के नाम पर पैसों की करामात से कनवेंसिग नही होती । सौन्दर्य, आकर्षण और पुण्य का एकमात्र साधन है शक्ति और शक्ति-पूजा ।"

कुछ ऐतिहासिक सूचनाएँ भी मिलती हैं, जैसे,

"१९१९ ई. के भंयकर युद्ध-ज्वर में यू. पी. के लाखों मनुष्य मर गये, गांव के गांव उजड़ गये ।"

शेर : शक्तिपुंज---इस शब्द-चित्र के लिए लेखक को देहारादून और ऋषिकेश के आस-पास के जंगलों की खाक छाननी पड़ी ।

प्रकृति की पृष्ठभूमि में पशुओं के जीवन की झांकी का एक चित्र :

"मुंह में पत्ता दबाये, बड़े-बड़े सीगों को ऊपर करके और पूंछ हिलाकर सांभर एकदम 'राइट एबाउट टर्न' हुआ और भागकर तीस गज उधर खड़ा हुआ जिधर हवा खड़के की ओर से चल रही थी । सांभर के नथनों ने शेर की गन्ध को रोम-रोम में दौड़ा दिया । बस, फिर तो सांभर सिर पर पैर रखकर भागा और आध मील तक तो वह रुका ही नहीं । विन्दो ने अपने भाग्य को कोसा । गुर्राहट और परेशानी से मन मसोसकर वह फिर शिकार की टोह में चली और आध मील चलकर एक टीले पर जा बैठी, ताकि चारों ओर विहंगा-वलोकन कर सके । कृष्णपक्ष की अष्टमी का चांद आकाश में सागर में बिछुड़ी हुई नौका की भांति उद्वेलित हो रहा था ।"

हाथी : समझदार---ऋषिकेश और देहरादून के जगंलों की देन है । पशुओं में उठती हुई भावनाओं का लेखक ने सूक्ष्म निरीक्षण किया है और यहां उसका ही एक अंश इस प्रकार है,

"झुण्ड का स्वामी---दँतेल हाथी गजराज विहंगावलोकन करता हुआ झुण्ड की ओर आया । झुण्ड के बीचोंबीच पहुँचकर गजराज ने अपनी सूंड ऊपर को उठाई और शक्ति-सूचक चिंघाड़ लगाई । जंगल के आस-पास के जीव समझ गये कि गजराज अपने झुण्ड-सहित धूप से बचने के लिए जंगल में आ गया । क़रीब के रहने वाले शेरों और बघेरों ने भी हाथियों के निकटत्व को जाना और वे सावधान हो

गये। हाँ, चीतलों और काकड़ों ने हाथियों से किसी प्रकार के डर की आशंका नहीं की। अपने झुण्ड को देखते हुए गजराज की नज़र एक जवान हथिनी पर पड़ी। हथिनी ने भी लजीली आंखों से देखा। गजराज ने विचित्र ध्वनि से पेट को कुछ घरघराते हुए उस वयस्क हथिनी का-जिसे हम रानी कहेंगे-आह्वान किया।''

जंगली सूअर : सूरमा--कटियारी रियासत (हरदोई), मैनपुरी और आगरे के जिलों के शिकार के अनुभव इसमें हैं।

बया : अद्भुत--यह अंग्रेजी की एक पुस्तक 'ड्वेलर्ज इन द जंगिल' पर आधारित है। 'वर्षा वर्णन' लेखक का अपना है उसका ही एक अंश इस प्रकार है--

''आकाश में मोरचे लग गये। चरखियों पर तोपें चढ़ गईं। महाभारत ठन गया। रणभेरी बजी, और समर-यात्रा का गान प्रारम्भ हुआ गुडुम-गुम गुभ-गूभ। थोड़ी ही देर में भयंकर गोला-बारी शुरू हुई। ऊपर से तोपें गरजती थीं घररर और नीचे से पावस-चारण-मयूर दिगन्तव्यापी जयघोष करते थे। टप-टप और टपाटप की चोट से ग्रीष्म की सेना पर आक्रमण हुआ। दिन-भर यही क्रम रहा, और अन्ततः पावस सुन्दरी का सिक्का जम गया। नवीन सम्राज्ञी की चारों ओर से वन्दना होने लगी। प्रकृति ने हरी साड़ी पहनी। नदी-नद पूर्ण प्रवाह से बहने लगे। सभी ने अपने जामे बदले। ताल-तलैया भरी हुई पावस-पुलिस के दस्ते पड़े मालूम होती थीं, ताकि ग्रीष्म के सहायकों पर कड़ी नज़र रख सकें। नदियाँ मानों पेटरोल ड्यूटी पर तैनात थीं और पेड़ों को जड़ों तथा पृथ्वी के गर्भ से ग्रीष्म को निकाल बाहर करने को आतुर थीं।''

सियार : सयाना--सियार अपनी चतुरता के लिए प्रसिद्ध है--

''सियार स्वभाव से खतरे से बचता है। जंगल में अगर कोई भी जानवर सबसे कम खतरे का काम करता है, तो सियार। वह सर्वभक्षी है। प्रकृति का मेहतर है इसलिए प्रकृति ने उसे और भी सावधानी से रहने को मजबूर किया है। प्रत्येक स्थान को शक और सावधानी से देखने की उसकी बान है। कंजूस और चालाक सूदखोर जिस प्रकार जोखिम की जगह रुपया नहीं लगाता, उसी प्रकार सियार जोखिम की बात से दूर रहना पसन्द करता है।''

जंगली मुर्ग : छैल छबीला--लेखक की गढ़वाल की मधुर स्मृतियां इसमें

सुरभित हैं, जंगली मुर्ग के स्वभाव का सूक्ष्म अध्ययन करने के लिए लेखक को नालों और झाड़ियों में बैठना पड़ा है।

इस प्रकार के जानवरों के स्केच भारतीय भाषाओं में भी नहीं हैं, गुजराती और बंगला में तो इन शब्द-चित्रों का अनुवाद बहुत पहले ही हो चुका है। भारतीय ही नहीं विदेशी भाषाओं में इस पुस्तक का अनुवाद वांछनीय है।

वे जीते कैसे हैं ?—(१९५७) इस पुस्तक के आरम्भ में श्री बनारसीदास चतुर्वेदी द्वारा लिखित श्रीराम जी का रेखाचित्र है—

> "क़द मझोला, शरीर सुगठित, चेहरे पर मर्दानगी, आँखों में लालिमा, बातचीत में जनपदीय शब्दों का प्रयोग, चाल में दृढ़ता और स्वभाव में अक्खड़पन, श्रीराम जी के इस रूप में एक पौरुषमय अदा है, निराला आकर्षण है, जो उनके व्यक्तित्व को विशेषता प्रदान करता है।"

इस संग्रह में शर्मा जी के २० शब्द-चित्र हैं जिनमें से कुछ पहले ही प्रकाशित हो चुके और कुछ संकलनों में संकलित भी थे। इस प्रकार के रेखाचित्र शर्मा जी के शब्द-चित्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जैसे बोलती प्रतिमा, चंदा, पीताम्बर, बया, काला हिरन वे जीते कैसे हैं आदि।

'स्मृति' में बालपन की एक ऐसी घटना है जिसको लेखक भूल नहीं पाता। 'मौत के मुंह में' एक शिकार का वर्णन है। 'दीनबन्धु के अन्तिम दिन' संस्मरणात्मक शैली में लिखा हुआ है। 'तमाखू लाओ' में ठगों की ठगी की विधियों का चित्रण है। 'सड़क का एक दृश्य' शीर्षक में कसाइयों की क्रूरता का चित्रण है। इसका एक करुण दृश्य इस प्रकार है, "आँखें धँसी हुई, जीभें लटकाये, टाँगों को खचेड़ते और दाएँ-बाएँ हिलते और डगमगाते हुए हाड़ के कंकाल अपने प्रत्येक उच्छ्वास से अपने भाग्य और अपने बेचने वाले मालिकों को कोसते आगे बढ़ने का प्रयास कर रहे थे। धाम, खट्ट और फिर धाँय। आवाज़ ने ध्यान जो बाँटा तो मुझसे दस गज की दूरी पर जीभ निकाले एक भैंस पड़ी थी।"

प्रसिद्ध क्रान्तिकारी 'आसामी बाबू' का सफल रेखाचित्र है, "कद छह फुट, बदन गठा हुआ। चाल थी पहलवानी। शरीर पर मलमल का कुर्ता और एक तहमद। खोपड़ी गंजी, चेहरा भरा हुआ और आँखें ज्योतिपूर्ण, ऐसा मालूम होता था मानों आँखें किसी की खोज में हों और किसी का दिल टटोल रही हों।"

यह उस क्रान्तिकारी का चित्र है जिसने पुलिस के चंगुल से बचने के लिए अपने चेहरे के रंग को तेजाब से बदल लिया था।

स्व. रफ़ी अहमद किदवई का शब्द-चित्र इस प्रकार है,

"भारी-भरकम शरीर, गोल चेहरा, जिसमें अधखुली आँखें प्रकट करती थीं कि उनमें आंतरिक शक्ति विद्यमान है। पर किसी कठिन समस्या पर बातें करते ही प्रकट हो जाता था मानो बिजली के गरम तार पर हाथ पड़ गया हो। बातचीत की असलियत को वह तुरन्त समझ जाते थे और दाँव-पेच के चक्रव्यूह को वह तनिक देर में काट देते थे। शतरंज में जैसे चतुर खिलाड़ी छह सात दांव पहले ही समझ लेते हैं उसी प्रकार वह हर समस्या को पहले से ही समझ लेते थे।"

'बारहवाँ' में तीन परिचय हैं। 'नयना सितमगर' में १५ फुट लम्बे घड़ियाल के शिकार का वर्णन है। 'रुक्मांगदसिंह' पर एक संस्मरणात्मक चित्र है। 'लड़की का पिता' तथा 'दो पड़ौसी' शीर्षक दो और चित्र हैं।

श्रीराम जी के शब्द-चित्रों में मौलिक उपमाओं का तो भंडार है, जैसे—

"यौवन की उन्मत्तता में—नदी की बाढ़ के समान—वह किसी को गिननेवाला न था।

जवानी में जवानों के पैर जमीन पर ऐसे पड़ते हैं मानों उनमें इलैस्टिक लगी हो।

आशंका रूपी अंधकार यौवन-प्रभात से पलायमान हो जाता है।

सजीव इकाई-मानवी-डाइनमो से।

वह ऊर्ध्वरेती होकर ललाटस्थित दो मैगज़ीनों—आँखों में किलेबन्दी कर लेती है।

मीठी चीज़ पाकर जैसे चींटियाँ चारों ओर से आ जाती हैं, वैसे ही न-मालूम कहाँ से, वहाँ दुकानदार आ गये थे।

बरसात में बबूल के पेड़ पर लगे बया के घोंसलों में जैसी चहल-पहल होती है, वैसा ही कुछ समा मुनि की रेती में था। एक उपनिवेश-सा बस रहा था।"

श्रीराम जी अब काफी वृद्ध हो गये हैं। नेत्रों ने भी जवाब दे दिया है। उनके पास अनेक योजनाएँ हैं—खेतीबारी, बाग-बानी आदि की भी हैं। आलू की खेती के आप विशेषज्ञ हैं, पपीते तथा अन्य फलों पर आपकी पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है। बनारसीदास जी चतुर्वेदी का मत है, "दीर्घ आलू उगाने वाले कृषि विशेषज्ञों की हमारे

यहाँ कमी नहीं पर 'बोलती प्रतिमा' और 'गंगा मैया' की जीवनी लिखने वाले अत्यन्त दुर्लभ हैं। ईश्वर आपको चिरायु करे जिससे आप दस-बीस रेखाचित्र हिन्दी साहित्य को और दे जायं।"

पं० बनारसीदास चतुर्वेदी

श्री बनारसीदास चतुर्वेदी हिन्दी के वरिष्ठतम साहित्यकार तथा पत्रकारों में से हैं। आपका साहित्यिक जीवन सन् १९१२ से प्रारम्भ हुआ था और तब से अब तक अबाध गति से आपकी लेखनी साहित्य के भंडार को विभिन्न विधाओं के माध्यम से भरती रही है। चतुर्वेदीजी प्रसिद्ध पत्रकार भी रहे हैं। 'विशाल भारत' के अनेक वर्षों तक आप सम्पादक रह चुके हैं। 'आर्यमित्र' और 'अभ्युदय' में भी आप काम कर चुके हैं। 'मधुकर' के भी आप सम्पादक रहे। अनेक आन्दोलनों (कस्मै देवाय हविषा विधेम, साहित्यिक सन्निपात, घासलेटी साहित्य, जनपदीय आन्दोलन, विकेन्द्रीकरण, हिन्दी भवन, सत्यनारायण कुटीर आदि) के जन्मदाता, संस्थाओं के जन्मदाता, प्रवासी भारतीयों के हितैषी, शहीदों के प्रति श्रद्धालु श्री चतुर्वेदी हिन्दी साहित्य में रेखाचित्र, संस्मरण तथा जीवनी-लेखक के रूप में विख्यात हैं।

कविरत्न सत्यनारायण, भारतभक्त ऐण्ड्रयूज तथा प्रिन्स क्रोपाटकिन की तो विस्तृत जीवनियाँ आप लिख चुके हैं, पता नहीं कितने व्यक्तियों की विस्तृत जीवनियों की सामग्री आपके पास सुरक्षित है।

संस्मरण-रेखाचित्र लिखने में तो आप सिद्धहस्त हैं। आपके संस्मरणों में जितनी अधिक रोचकता तथा मनोरंजकता होती है वह दूसरे संस्मरणों में नहीं मिलती। व्यंग्य-विनोद की छींटों से सरसता आ जाती है, दूसरों का ही नहीं अपना भी परिहास आप कर लेते हैं। एक व्यक्ति द्वारा सर्वाधिक संस्मरणात्मक साहित्य की रचना यदि किसी से हुई है तो वह श्री चतुर्वेदी हैं।

अनेक नेताओं, शिक्षाविदों, राजनीतिज्ञों, महात्माओं, समाज-सुधारकों, महिलाओं एवं साहित्य-सेवियों के रेखाचित्र तथा संस्मरण लिखने में चतुर्वेदी जी निपुण हैं। आपने अपने १७-२-६५ के, लेखक के नाम लिखे व्यक्तिगत पत्र में रेखाचित्र तथा संस्मरण विधा के स्पष्ट अन्तर पर प्रकाश डाला है,

"रेखाचित्र में किसी वस्तु या व्यक्ति के जीवन का चित्रण होता है—उसके प्रकाश भाग तथा छाया भाग के साथ, गुण-दोषों का विधिवत् वर्णन करते हुए। संस्मरण में मुख्यतया पुरानी बातें याद की जाती हैं। चरित्र-चित्रण तो दोनों में हो

जाता है । संस्मरण प्रायः बीती हुई बातों या दिवंगत व्यक्तियों के बारे में लिखे जाते हैं ।"

रेखाचित्र, संस्मरण तथा जीवनी लिखने की कला में एक साथ प्रवीण होने के कारण डा. माचवे का कथन काफी दूर तक सत्य है कि "उनके लेखन में एक वार्ताकार, एक जीवनीकार, आत्मचरित लेखक के एक साथ दर्शन होते हैं। बनारसीदास जी निबन्ध-लेखक से अधिक रेखाचित्रकार हैं ।"

रेखाचित्र के आप बहुत पुराने लेखक हैं, पं. पद्मसिंह शर्मा के समय से आप रेखाचित्र लिख रहे हैं । चतुर्वेदी जी के ही शब्दों में "जिस प्रकार अच्छा चित्र खींचने के लिए कैमरे का लैन्स बढ़िया होना चाहिए और फिल्म भी काफी कोमल या सैंसिटिव, उसी प्रकार साफ चित्रण के लिए रेखाचित्रकार में, विश्लेषणात्मक बुद्धि तथा भावुकता-पूर्ण हृदय, दोनों का सामंजस्य होना चाहिए; पर-दुःख कातरता, संवेदनशीलता, विवेक और सन्तुलन इन सब गुणों की आवश्यकता है ।" निस्सन्देह चतुर्वेदी जी में ये सभी गुण विद्यमान हैं, तब ही तो वे इतने सुन्दर रेखाचित्र लिख सके ।

आपके प्रारम्भिक रेखाचित्र 'हमारे साथी' तथा 'प्रकृति के प्रांगण' नामक दो पुस्तकों में सम्मिलित कर लिये गये थे । वैसे चतुर्वेदी जी ने यह स्वीकार किया है कि "ए.जी. गार्डिनर की तरह रेखाचित्र तैयार करने के लिए हमें अभी बीसियों वर्ष तक साधना करनी पड़ेगी, तथापि हमारे आदर्श वही रहे हैं ।"

'हमारे आराध्य' से

चतुर्वेदी जी के मकान (बहुत पहले) का एक जो रेखाचित्र भवानी दयाल संन्यासी ने अपनी पुस्तक 'प्रवासी की आत्मकथा' में खींचा था वह भी यहां इस दृष्टि से दे रहे हैं जिससे यह स्पष्ट हो सके कि उनके रेखाचित्रों में अज्ञातरूपेण किस-किस का प्रभाव पड़ता रहता है,

> "मकान तो काफी बड़ा था पर उसमें महीनों से झाड़ू नहीं लगी थी । कहीं सफाई नहीं दिखाई पड़ी, चारों तरफ कूड़ा करकट के ढेर लगे थे । उनकी लापरवाही इस बात की गवाही दे रही थी कि प्रोफेसर हुए तो क्या आखिर हैं तो फिरोजाबाद के चौबे ? और उनका दफ्तर ? उसकी तो बात ही मत पूछिए । घर भर में कागज बिखरे पड़े थे । इधर हेनरी काटन की तो उधर एण्ड्रूज की चिट्ठियां पड़ी हैं, यहां फिजी की तो वहां मारीशस की सामग्री फैली हुई है ।
>
> उस कागज सागर में डुबकी लगाकर वही कुछ रत्न पा सकता था जो कुशल गोताखोर हो ।"

चतुर्वेदी जी ने स्वयं स्वीकार किया है कि उनका पहला रेखाचित्र सन् १९१२ ई. में मर्यादा में प्रकाशित हुआ था, इस संबंध में आप लिखते हैं :

> "औरंगजेब प्रकाशित किया था और उसे चालीस वर्ष (अब ५४ वर्ष में) से अधिक हो गये। इस बीच में हमने सवा सौ के करीब रेखाचित्र अंकित किये होंगे जिनमें कितने ही अभी संग्रह रूप में अप्रकाशित हैं।"
>
> 'रेखाचित्र' की भूमिका से

आपने अपने अब तक के दीर्घ जीवन में सैकड़ों रेखाचित्र लिखे हैं, उनमें से कुछ संस्मरणात्मक शैली तथा जीवनी-शैली में भी हैं। काफी रेखाचित्र पत्र-शैली में भी लिखे गये हैं।

अधिकांश रेखाचित्र पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुके हैं--

प्रिंस क्रोपाटकिन	मार्च १९४० ई.
हमारे आराध्य	मार्च १९५२ ई.
संस्मरण	१९५३ ई.
रेखाचित्र	१९५३ ई.
सेतुबन्ध	१९६२ ई.

अभी आपके लिखे 'फुटकर रेखाचित्र' विविध पत्र-पत्रिकाओं में बिखरे पड़े हैं, जो इन संग्रहों में नहीं आ सके हैं।

सन् १९३८ ई. से पूर्व भी आपके अनेक रेखाचित्र प्रकाशित हो चुके हैं। 'हमारे आराध्य' में प्रिन्स क्रोपाटकिन (१९३६), एमर्सन (१९३२-३५), पतिव्रता जयिनी (सितम्बर १९३६), समाज सेवी कागावा (अगस्त १९३७), सम्पादकाचार्य सी. पी. स्काट (अगस्त १९३५), फक्कड़ थोरो (जुलाई १९३५ में) प्रकाशित हो चुके थे।

शेष चित्रों से कुछ चित्र द्रष्टव्य हैं--

महाप्राण माइकेल बाकूनिन

लुइ माइकेल (अप्रैल १९३९)

इनके अतिरिक्त अराजकवादी मैलटेस्टा, ऐमा गोल्डमेन (जून १९३९), रोमा रोलां (मार्च १९५०) आदि के चित्र भी उल्लेखनीय हैं। इस पुस्तक में ही स्टीफन ज्विग, एच. डब्ल्यू. नेविनसिन, आचार्यवर गीडीज़, उपन्यासकार तुर्वनेव पर भी आपके चित्र हैं। इस पुस्तक की सबसे बड़ी विशेषता है कि उसमें सब विदेशी हैं जिसका उत्तर चतुर्वेदी जी ने 'चार शब्द' शीर्षक भूमिका में इस प्रकार दिया है,

"श्रद्धेयों का गुणगान करते समय देश-विदेश की कोई विभाजक सीमा मानने को हम तैयार नहीं। अपने जीवन में हम जिनके सबसे अधिक ऋणी रहे हैं, वे एक अंग्रेज थे--दीनबन्धु सी. एफ. ऐण्ड्रयूज और राजनैतिक तथा सामाजिक दृष्टिकोण से हमारे हृदय का सर्वोच्च आसन जिनके लिए समर्पित रहा है--वे थे एक रूसी अर्थात् क्रोपाटकिन।"

यह पुस्तक भी क्रान्तिकारी क्रोपाटकिन और उनके कुटुम्ब को श्रद्धापूर्वक समर्पित है। इस पुस्तक में ही उनका एक अप्रैल १६३६ में लिखा प्रिन्स क्रोपाटकिन शीर्षक रेखाचित्र संकलित है, वैसे इसके परिवर्तित रूप को ही आपने पुस्तकाकार गार्डिनर के रेखाचित्र के साथ मार्च १६४० में प्रकाशित किया था साधना मन्दिर, बम्बई से। इसी स्थान से आपने सात अन्य रेखाचित्र भी पुस्तकाकार प्रकाशित करवाये थे।

प्रिन्स क्रोपाटकिन का एक चित्र द्रष्टव्य है—

"लेनिन, प्रिंस क्रोपाटकिन और महात्मा गांधी इन तीनों के—आधुनिक जगत के इन ब्रह्मा, विष्णु, महेश—के चरितों का तुलनात्मक अध्ययन वास्तव में अत्यन्त मनोरंजक होगा। लेनिन प्रिंस क्रोपाटकिन के व्यक्तित्व की बड़ी इज्जत करता था और महात्मा गांधी भी उनके ग्रन्थों के प्रशंसक रहे हैं। हिंसा और अहिंसा के प्रश्न पर निस्सन्देह महात्मा जी की पोज़ीशन मानव-समाज के अन्तिम हित को ध्यान में रखते हुए सबसे ऊंची थी।"

'हमारे आराध्य' में संकलित अन्य व्यक्तियों के चित्र इस प्रकार हैं—

"महात्मा माइकेल बाकूनिन की महात्मा गांधी से तुलना की गई है, बाकूनिन तथा प्रिंस क्रोपाटकिन के अराजकवाद संबंधी विचारों का ज़िक्र करते हुए महात्मा जी का नाम लेना आश्चर्यजनक भले ही मालूम पड़े पर वह है सर्वथा प्रासंगिक। दरअसल महात्मा जी के विचार प्रिंस क्रोपाटकिन के जितने निकट हैं उतने काल मार्क्स के नहीं। जहाँ तक नैतिकता का संबंध है महात्मा जी तथा प्रिंस क्रोपाटकिन करीब-करीब एक ही धरातल पर हैं। सन् १६४० में लिखा अराजकवादी मैलटेस्टा का रेखाचित्र भी इसमें है।"

लुई माईकेल (अप्रैल १६३९) का चित्र इस प्रकार है—

"लुई शक्ल में मर्दानी थी। छरहरे बदन की, और जिस समय

वह तनकर खड़ी होती थी ऐसा प्रतीत होता था कि कोई पुरुष योद्धा खड़ा हुआ है। वह सदा काले रंग के कपड़े पहना करती थी। चलते समय ऐसा प्रतीत होता था कि मानो गंभीरता तथा विद्रोह की कोई मूर्ति चली आ रही हो। दरअसल उसमें पौरुष था।"

इसमें ही ऐमा गोल्डमैन (जून १९३९ ई.) तथा एमर्सन पर दो रेखाचित्र हैं जिनमें से एक मई १९३२ में लिखा तथा दूसरा सित. १९३५ में।

उपन्यासकार तुर्गनेव

उपन्यासकार तुर्गनेव स्वयं एक अच्छे रेखाचित्रकार थे। एक निपुण चित्रकार की भांति वे एक के बाद एक सुन्दर-से-सुन्दर चित्र खींचते जाते हैं और दर्शक उन्हें देखकर 'वाह! वाह!' कहने लगता है। अपने समय के रूसी युवकों तथा युवतियों के मनोभावों का विश्लेषण बड़ी खूबी से किया है और उन्हें पढ़कर तत्कालीन रूसी जीवन का चित्र हृदय पटल पर खिंच जाता है।

प्रिन्स क्रोपाटकिन ने तुर्गनेव का चित्र इस प्रकार खींचा है,

"तुर्गनेव शरीर के लम्बे चौड़े और कद के ऊंचे थे। सिर कोमल भूरे बालों से लदा रहता था जो देखने में बड़े सुन्दर लगते थे। आंखों से बुद्धिमत्ता टपकती थी और उनमें कुछ हास्य की भी झलक प्रतीत होती थी। उनके रंग-ढंग में बनावट का नामोनिशान नहीं था। उनके विशाल मस्तिष्क से प्रतीत होता था कि उनकी दिमागी ताकत काफ़ी विकसित हो चुकी है। उनकी मृत्यु के बाद उनका दिमाग तोला गया तो वह उन सब दिमागों से, जिनकी तोल तब तक हो चुकी थी, इतना अधिक भारी निकला कि तोलने वालों को अपनी तराजू पर ही आशंका होने लगी। उन्होंने फिर दूसरी तराजू पर उसे तोला, फिर भी वह उतना ही यानी सबसे भारी निकला।"

रोमां रोलां (मार्च १९५०)

"रोमां रोलां' का बदन छरहरा, ऊंचाई पर्याप्त, चेहरे से कोमलता टपक रही है। रंग पर कुछ पीलापन है, जिससे प्रकट होता है कि यह भला मानस मुक्त पवन में भ्रमण नहीं कर रहा। मुख पर झुर्रियां नजर आ रही हैं जिससे स्पष्ट है कि इसके रात्रि के भी घंटे परिश्रम करते हुए बीतते हैं। भौंहों पर कुछ सफेदी होने लगी है।"

इस पुस्तक में हैं स्टीफन ज्विग, पतिव्रता जयिनी, समाज-सेवी कागावा, सम्पादकाचार्य सी. पी. स्काट, एच. डब्ल्यू. नेविनसन, आचार्यवर गीडीज। फक्कड़ थोरो तथा अमर कलाकार ए. ई. के रेखाचित्र भी हैं।

'संस्मरण' शीर्षक पुस्तक हमारी परिधि के बाहर की है। इसमें २१ व्यक्तियों के संस्मरण संकलित हैं। निस्सन्देह कुछ शुद्धरूप से 'संस्मरण' मात्र हैं पर कुछ संस्मरणात्मक शैली में लिखे गये उच्चकोटि के रेखाचित्र हैं जो सन् १६३८ ई. के बाद के लिखे हुए हैं, जैसे—

बड़े दादा श्री द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर

यही 'आजकल' में 'बड़े दादा का चित्र' शीर्षक से अगस्त १९५० में प्रकाशित हुआ। इसका एक अंश इस प्रकार है—

> "शान्ति निकेतन में दो व्यक्तियों का हास्य प्रसिद्ध था, एक तो बड़े दादा का और दूसरा शास्त्री महाशय का। ये दोनों संक्रामक थे और काफी दूर तक सुनाई पड़ सकते थे। चूंकि दीनबन्धु ऐण्ड्रयूज बड़े दादा के विशेष कृपापात्र थे और नित्यप्रति शाम को उनकी सेवा में उपस्थित हुआ करते थे।"

दीनबन्धु ऐण्ड्रयूज (अप्रैल १९५०)

दीनबन्धु की दिनचर्या का रेखांकन इस प्रकार है—

> "रात का एक बजा है। शान्ति निकेतन में सर्वत्र सन्नाटा है। बिजली की रोशनी कभी की बन्द हो चुकी है, लेकिन 'वेणु कुंज' में प्रकाश दीख पड़ता है। मेज पर डिट्ज लालटेन रख हुए श्री ऐण्ड्रयूज लेख लिख रहे हैं। क्यों ? कल १५ तारीख है और मार्डन रिव्यू के सम्पादक ने न्यूजीलैण्ड के प्रवासी भारतीयों के विषय में लेख मांगा है।"

उनके घर का दृश्य—

> "बांस के वृक्षों के निकट एक छोटा-सा घर है। न उसमें कुछ सजावट है, न दिखावट। समाचार-पत्रों का ढेर लगा हुआ है और किताबें तितर-बितर इधर-उधर पड़ी हैं। तीन-चार कुर्सियां पड़ी हुई हैं और कुछ मूढ़े भी। एक-दो कुर्सियां तो ऐसी भी हैं जिन पर बैठना खतरे से खाली नहीं। एक कुर्सी का निर्बल शरीर किसी रस्सी के

बल पर थमा हुआ है। मेज पर कोई कपड़ा नहीं। उस पर माता-पिता के चित्र रखे हुए हैं। शान्तिनिकेतन के विद्यार्थियों के भेंट किये हुए फूल भी हैं। दावात, होल्डर, चाकू, किताब, अखबार और छोटा-सा सन्दूक भी उसी पर रखा हुआ है। समाचार-पत्रों के इस गड़बड़ समुद्र में श्री ऐण्ड्रयूज़ का चश्मा खो गया है और घबराये हुए आप इधर-उधर तलाश कर रहे हैं? पूछते हैं, तुमने हमारा चश्मा तो नहीं देखा?"

आजाद की माताजी (जुलाई १९५०)

आजाद की माताजी का बड़ा मार्मिक चित्र आपने प्रस्तुत किया है। इसका कुछ भाग इस प्रकार है,

"दरअसल माताजी में वात्सल्य की अतृप्त भावना प्रबल मात्रा में विद्यमान है। जिस बुढ़िया के पाँच बच्चे एक के बाद एक चल बसे हों, उसके मन में यह भावना आना स्वाभाविक है कि कोई तो हमारी बात बच्चों की तरह सुने, किसी पर हम प्रेमपूर्ण 'हुकुम' चला सकें। आजाद को शहीद हुए अट्ठारह (अब पैंतीस) वर्ष हो चुके हैं और उनके पिता पं. सीताराम जी तिवारी भी ग्यारह वर्ष पहले चल बसे। भावरा ग्राम में एक कोने पर भीलों के बीच एक झोंपड़ी में माता जी अपने वैधव्य के ग्यारह वर्ष बिलकुल एकान्त में काटती रहीं।"

चन्द्रशेखर के बचपन की एक झाँकी—

"बेटा चन्द्रशेखर जब पैदा हुआ था, तब कमजोर-सा था। हमारे यहां गाय भैंस तो थीं, पर वे दूध बहुत थोड़ा देती थीं, इसलिए दूध हम घी के लिए जमा देती थीं और थोड़े-से दूध में बहुत सा साबूदाना मिलाकर खीर बना देती थीं और दिन में कई बार वही खीर बच्चे चन्द्रशेखर को दिया करती थीं। ज्यादा दूध तो हमारे यहां होता ही न था पर बच्चा साबूदाना खा-खाकर ही खूब मोटा ताजा बन गया, पास पड़ोस की स्त्रियां कहने लगीं—'बच्चा तो बहुत सुन्दर लगता है।' कहीं उनकी नजर न लग जाय, इसलिए चन्द्रशेखर के काजल लगाकर उसके माथे पर डिठौना लगा दिया करती थीं। बच्चा खूब तन्दुरुस्त हो गया था। हाय! क्या मैंने उसे इतनी

फ़िकिर से इसलिए पाला पोसा था कि वह किसी दिन गोली से मारा जाय।"

इसी शब्द-चित्र में पं. बनारसीदास जी ने प्रदेशीय सरकारों के प्रति तिलमिलाने वाले व्यंग्य बाण फेंके हैं, "ग़नीमत है कि अभी-अभी संयुक्त प्रान्तीय तथा मध्य भारतीय सरकारों ने २५-२५ रुपये महीने की पेन्शन कर दी है और इस प्रकार दो सौ रुपये दान करने का पुण्य लूट लिया है।"

इसके अतिरिक्त श्री कृष्ण बलदेव वर्मा (१९४०), भवानीदयाल संन्यासी (१९५०), स्वर्गीय देवीदयालु गुप्त (१९५०), श्री शील जी (१९४९) उल्लेखनीय हैं। आज से ३६ वर्ष पूर्व लिखे गये श्री गणेश शंकर विद्यार्थी जी का एक चित्र द्रष्टव्य है,

> "उनका व्यक्तित्व निराला था। हिमालय की तराई में खड़े व्यक्ति के हृदय में माउण्ट ऐवरेस्ट या गौरीशंकर की चोटी की ओर देखते हुए जिस प्रकार भयमिश्रित सम्मान के भावों का उदय होता है, उसी प्रकार के भावों का उदय आज अमर शहीद विद्यार्थी जी के चरित्र की ओर दृष्टि डालने पर इस लेखक के हृदय में हो रहा है।"

इन संस्मरणों में पत्रों का उल्लेख अधिक और उनके उद्धरणों की भरमार है,

> "द्विवेदी जी की वात्सल्यमयी चिन्ता, गणेश शंकर जी की निस्वार्थता और निर्लोभता, मीर साहब की ग़रीबी का इन पत्रों द्वारा एक सजीव चित्र उपस्थित हो जाता है। साथ ही शुद्ध साहित्यिक के नाते सभी सम्प्रदायों के लोगों के साथ व्यापक सहानुभूति का भी परिचय मिलता है।"

(डा. गुलाबराय, **साहित्य सन्देश**, मार्च १९५३)

रेखाचित्र

'रेखाचित्र' शीर्षक पुस्तक में आचार्य द्विवेदी जी, श्री देवमित्र धर्मपाल, माननीय श्रीनिवास शास्त्री, प्रिन्सिपल सुशील कुमार रुद्र, दीनबन्धु ऐण्ड्रयूज, श्री सी. वाई. चिन्तामणि, आचार्य गिडवानी, श्रद्धेय बाबू राजेन्द्र प्रसाद जी, श्री जवाहर लाल नेहरू, कवि रत्नाकर जी से बातचीत, श्री प्रेमचन्द के साथ दो दिन, पण्डित सुन्दरलाल जी, श्री सम्पूर्णानन्द जी, श्री राहुल सांकृत्यायन, श्रीराम शर्मा, श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', श्री पालीवाल जी, श्री पथिक जी, श्री भगवानदास

जी केला, श्री गोविल जी, श्री नाथूराम जी प्रेमी, पण्डित जयराम जी, अमर शहीद फुलेना प्रसाद, श्रीयुत 'भूगोल', श्री अख्तर हुसैन रायपुरी, मुन्शी जगन किशोर 'हस्त', श्री अमृतलाल चक्रवर्ती, श्रीमती सत्यवती मल्लिक, एक सिपाही, सम्पादक की समाधि, लल्लू कब लौटेंगे, मनसुखा और कल्ला, अन्धी चमारिन, बाईस वर्ष बाद, कौन सुनेगा, चार सिपाही, सुजान अहीर, वर्तनी, वह दिव्य आलिंगन--शीर्षक ४० रेखाचित्रों का संग्रह है।

इनमें से सन् १९३८-३९ के बाद लिखे गये रेखाचित्रों का सामान्य परिचय इस प्रकार है—

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी (१९५०) का चित्र उनके संघर्षमय, प्रेम, उदारता भरे प्रेरणाप्रद जीवन की झांकी प्रस्तुत करता है। 'हिन्दी' के लिए द्विवेदी जी ने सरकारी नौकरी को लात मार दी थी।

श्रद्धेय बाबू राजेन्द्र प्रसाद (१९४८) का शब्द-चित्र चतुर्वेदी जी ने बड़ी कुशलता से खींचा है। चतुर्वेदी जी ने 'हमारे तीर्थ' में तीन तीर्थों को सम्मिलित किया था,

राजेन्द्र प्रसाद जी का ग्राम
महात्मा जी का सेवाग्राम
द्विवेदी जी का दौलतपुर

इन रेखाचित्रों में बाबू जी के मानवीय गुणों का दिग्दर्शन बड़ी कुशलता से किया गया है। सन् १९४८ में लिखे गये इस शब्द-चित्र में लेखक ने लिखा है, "श्रद्धेय बाबूजी महात्मा जी की तरह किसी कुटी का निर्माण कर सर्वोदय समाज का संचालन करेंगे।" वस्तुतः यह सत्य निकला जब १९६२ में राष्ट्रपति के सर्वोच्च स्थान से विदाई लेकर आपने पटना में सदाकत आश्रम की स्थापना की।

कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ के शब्दों में 'भारत के ऋतुराज' श्री जवाहरलाल नेहरू का चित्रांकन है।

श्री सम्पूर्णानन्द जी (फरवरी १९५०) के साथ अध्यापन काल में बिताये हुए दिनों का स्मृति चित्र है--"एक बार उन्होंने एक कबाड़िये से फ़ौजी चालों पर किताब खरीदी। कामन रूप में कभी किसी विषय की तो कभी किसी विषय की किताब उनके पास सदा रहती थी। उन दिनों 'मेरी करेली' के उपन्यास और 'ईहा' के ग्रन्थ उन्हें विशेष प्रिय थे, इतना मुझे अब भी स्मरण है। हास्यरस के वे तब भी प्रेमी थे, यद्यपि उनका हास्य गम्भीरता की सीमा का उल्लंघन कभी न करता था। मौसम के फल खाने का उन्हें शौक था।"

श्रीराम शर्मा जी पर जुलाई १९५० का लिखा हुआ रेखाचित्र जिसका कुछ

अंश बोलती प्रतिमा की भूमिका रूप में भी है इसमें संकलित है। श्रीराम जी के बाह्य व्यक्तित्व का चित्रांकन द्रष्टव्य है--

> "क़द मझोला, शरीर सुगठित, चेहरे पर मरदानगी, आँखों में लालिमा, बातचीत में जनपदीय शब्दों का प्रयोग, चाल में दृढ़ता और स्वभाव में अक्खड़पन। श्रीराम जी के इस रूप में एक पौरुषमय अदा है, निराला आकर्षण है जो उनके व्यक्तित्व को विशेषता प्रदान करता है।"
>
> "अन्दर से वे अत्यन्त कोमल हृदय के व्यक्ति हैं और उनमें कई ऐसे गुण पाये जाते हैं जो अब दुर्लभ हो रहे हैं। श्रीराम जी जन्मतः ब्राह्मण होने पर भी स्वभावतः क्षत्रिय हैं और वृत्ति के अनुसार किसान।" उनकी चारित्रिक विशेषताओं का चित्रांकन भी विशिष्ट शैली में किया गया है।

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' पर एक और रेखाचित्र मध्यप्रदेश सन्देश के ८-१२-५६ के अंक में प्रकाशित हुआ था। यह चित्र भी मनोयोग से बनाया गया है। एक ही पंक्ति में उनकी सारी प्रतिमा सामने आ जाती है।'

> "सच पूछा जाये तो वह एक निर्द्वन्द्व फक्कड़ 'मनुष्य' हैं, सहृदय और सहिष्णु।"

श्री भगवानदास जी केला का चित्र करुणा से ओतप्रोत है।

श्री नाथूराम प्रेमी के रेखाचित्र (१६५४) का अंश द्रष्टव्य है,

> "बाल्यावस्था की वह दरिद्रता, स्व० पिताजी की वह परिश्रमशीलता, कुड़की कराने वाले साहूकार की वह हृदयहीनता, छह-सात रुपये की वह मुदर्रिसी और बम्बई प्रवास के वे चालीस वर्ष, जिनमें सुख-दुःख, गार्हस्थिक आनन्द और दैवी दुर्घटनाओं के बीच वह अद्‌भुत आत्मनियन्त्रण, बुन्देलखण्ड के एक निर्धन ग्रामीण बालक का अखिल भारत के सर्वश्रेष्ठ हिन्दी प्रकाशक के रूप में आत्मनिर्माण, निस्सन्देह साधक प्रेमी जी के जीवन में प्रभावोत्पादक फ़िल्म के लिए पर्याप्त सामग्री विद्यमान है।"

श्री अख्तर हुसैन रायपुरी (मई १६३६) का शब्द-चित्र सुन्दर है जिसमें हास्य-व्यंग्य के छींटे और यथार्थ जीवन का चित्र समाहित है। 'अख्तर साहब' एक साफ़ दिमाग आदमी हैं और उन्होंने अपने मस्तिष्क में कूड़े-करकट को इकट्ठा नहीं होने दिया। चोरी, उठाईगिरी और डकैती के जुर्म जो उन पर लगाये गये हैं वे

पठनीय हैं। इसमें ही रायपुरी जी के रेखाचित्र के हिस्से तथा डायरी के अंश भी दे दिये गये हैं।

श्रीमती मल्लिक (जुलाई १९४०) शीर्षक रेखाचित्र हिन्दी साहित्य की एक रेखाचित्रकर्त्री का है जिसमें साहित्यकार के रूप के साथ-साथ मातृत्व भी है। "कश्मीर की हिमाच्छादित घाटियों, मनोहर झीलों तथा विशाल वृक्षों के जो पाठ उन्हें पढ़ाये हैं वे अधिकांश लेखक-लेखिकाओं के लिए दुर्लभ हैं।"

एक पंक्ति में हम कह सकते हैं 'सत्यवती जी एक सुसंस्कृत माता हैं।'

अन्धी चमारिन (१९४५), **कौन सुनेगा** (१९४०), **चार सिपाही**, किसान सेवक गुसेव, बुकसेलर, मेकलारिन, ग्रामीण शिक्षक शालिग्रामसिंह, वह अमर मल्लाह (१९३९), **सुजान अहीर** (१९४५), **वह दिव्य आलिंगन** (१९३९) उनके लघु शब्द-चित्र हैं।

देश-विदेश के साहित्यकारों, राजनीतिज्ञों, पत्रकारों तथा समाजसेवियों के रेखाचित्र के साथ यदि निर्धन-गरीब, उपेक्षित, शोषित पात्रों के भी रेखाचित्र कहीं एक साथ हिन्दी-साहित्य में मिल सकते हैं तो वह साहित्य चतुर्वेदी जी का है। आपमें रेखाओं को औचित्य के साथ प्रस्तुत करने और चित्रण करने की क्षमता भी है।

जिस प्रकार 'संस्मरण' शीर्षक पुस्तक में संस्मरणात्मक शैली होते हुए भी बीच-बीच में अच्छे रेखाचित्र हमको प्राप्त हुए, उसी प्रकार 'रेखाचित्र' में चित्रात्मक शैली में बीच-बीच में लेखक के व्यक्तिगत संस्मरणों की भरमार है जिसके कारण प्रसिद्ध आलोचक डा. गुलाबराय ने लिखा है—

> "प्रस्तुत रेखाचित्रों में बीच-बीच में रेखाचित्र के तत्त्व तो आ गये हैं किन्तु (अधिकांश) अर्द्धांश से कुछ अधिक में संस्मरण हैं और कम से कम एक चौथाई भाग में चरित्र नायक का गुण-कथन है। कुछ-कुछ में, जैसे 'सम्पादक की समाधि' में तो कहानीकार के विवरण या प्रकाशन के भी गुण हैं।···लल्लू कबै लौटैगौ, मनसुख और कल्ला, अन्धी चमारिन के चित्र बड़े करुणापूर्ण हैं, जिनमें लेखक की व्यापक सहृदयता का परिचय मिलता है।"

चतुर्वेदी जी अपने रेखाचित्रों के मध्य व्यक्तिगत पत्रों के उद्धरण, डायरी के पृष्ठ तथा अपने आराध्यों—थोरो, क्रोपाटकिन, एमर्सन आदि के उद्धरण भी देते चलते हैं।

सेतुबंध

इस पुस्तक में कुछ पूर्व प्रकाशित तथा कुछ नवीन रेखाचित्रों का संकलन किया गया है—विश्वनागरिक गैरिसन, मेरी फौस्टर, क्रान्तिकारी क्रोपाटकिन,

म्यूरियल लैस्टर, कांग्रेस के जन्मदाता ह्यूम, हैरियट, एलीज़बेथ स्टो, अमर कलाकार ज्विग, कुमारी मेरी रीड, पतिव्रता जयिनी मार्क्स, सेवा-उपवन, मेरी तीर्थयात्रा, आचार्यवर गीडीज़, दीनबन्धु एण्ड्रूज, अहिंसा के पुजारी एलबर्ट स्वाइटज़र।

ये सभी चित्र बड़े मार्मिक तथा प्रेरणाप्रद हैं। प्रेम और सेवा की भावना ही इन चित्रों के मूल में व्याप्त है।

अब तक जितने पत्र-पत्रिकाओं के रेखाचित्र विशेषांक प्रकाशित हुए उनमें चतुर्वेदी जी को जो स्थान प्राप्त है वह किसी दूसरे को नहीं, विषय के विस्तार की दृष्टि से।

हंस के रेखाचित्रांक, मार्च १९३९ में 'पालीवाल' शीर्षक से शब्दचित्र प्रकाशित हुआ—

> "राजनैतिक दाँवपेच के जिस जंगल में वास्तविकता से कोसों दूर रहने वाले शहरी नेता आसानी से उलझ जाते हैं, वहाँ पालीवाल जी की ग्रामीण सहज बुद्धि उन्हें अपना मार्ग स्पष्ट बतला देती है। पुराने ढंग के किसी कांग्रेसी नेता के और पालीवाल जी के व्यक्तित्वों की तुलना करते हुए दोनों का अन्तर साफ़ मालूम हो जाता है, और नेतृत्व के क्रम-विकास की तस्वीरें आँखों के सामने खिंच जाती हैं। उन दोनों का अध्ययन 'आराम कुर्सी' और 'कण्टकाकीर्ण पथ' का तुलनात्मक अध्ययन है।"

कुछ वाक्य भी द्रष्टव्य हैं,

> "पालीवाल जी का घर किसी कुरसी-तोड़ स्वयंभू नेता का बंगला नहीं है, पालीवाल जी को अपनी निर्धनता पर उचित अभिमान है, उस निर्धनता पर जिसे उन्होंने स्वयं ही निमन्त्रित किया है। पालीवाल जी क्रान्तिकारी थे, हैं और रहेंगे।"

दूसरा प्रयास 'मधुकर' का 'रेखाचित्रांक' है जिसका प्रकाशन दिसम्बर १९४६ में टीकमगढ़ से हुआ। श्री बनारसीदास चतुर्वेदी जी के सम्पादकत्व में ही इसका प्रकाशन हुआ। इसमें चतुर्वेदी जी ने प्रारम्भ में भूमिका लिखी है और अंक में विश्वविख्यात रेखाचित्रों का संकलन। हंस के रेखाचित्र विशेषांक से इस दृष्टि से यह भिन्न कहा जा सकता है कि इसमें गार्डनर, श्रीमती मेरी बायल ओ' रीली, तुर्गनेव के चार स्केच, वाशिंगटन इरविंग का स्केच 'विधवा और उसका बेटा', नेविनसन का 'स्वामिभक्ति का पुरस्कार' आदि विश्वविख्यात रेखाचित्रकारों के चित्रों को स्थान दिया गया है। साथ ही इसमें रामवृक्ष बेनीपुरी, पं० सुन्दरलाल, खानचन्द

गौतम, श्रीराम शर्मा, बंशीधर विद्यालंकार, नन्दकुमार देव शर्मा, विष्णु प्रभाकर, हरिशंकर शर्मा, आदर्श कुमारी, यशपाल, सत्यवती मल्लिक, संत निहालसिंह आदि हिन्दी के रेखाचित्रकार भी सम्मिलित हैं। दृष्टिकोण संकुचित नहीं है, इसमें उर्दू के अनन्य सेवक अब्दुल हक़ समर, पत्रकार विलियम टामस स्टैड, आमों के अन्वेषणकर्ता फ़रीदी साहब, रुद्रदत्त शर्मा, माता जी की स्मृति में आदि रेखाचित्र भी हैं। चतुर्वेदी जी ने गौर्की और लेनिन के मिलन पर 'वह दिव्य आलिंगन' शीर्षक से लिखा है।

तीसरा प्रशंसनीय प्रयास श्रीमती सत्यवती मल्लिक द्वारा सम्पादित 'अमिट रेखाएं' है जिसमें चतुर्वेदी जी का ही विशेष योगदान है। इस पुस्तक की भूमिका भी आपने ही लिखी है साथ ही आपके निम्नलिखित रेखाचित्र भी इसके विशिष्ट स्तम्भों में सम्मिलित किये गये हैं——

१. वह दिव्य आलिंगन
२. पं० जयराम जी
३. हैरियट एलीज़बेथ स्टो
४. पतिव्रता जयिनी मार्क्स

चतुर्वेदी जी के रेखाचित्रों की विशिष्ट शैली है। रेखाचित्रों का प्रारम्भ प्रायः आप अंग्रेजी के किसी उद्धरण से करते हैं, साथ में ही हिन्दी-अनुवाद भी दे देते हैं, जैसे 'महाप्राण माइकेल बाकूनिन' में,

> "श्रीमती जी, एक बात आप अच्छी तरह समझ लें कि जब तक आपका लड़का जिन्दा है तब तक वह कभी जेलखाने से नहीं छूट सकता।"
>
> रूसी जार के कथन का हिन्दी अनुवाद

'प्रिन्स क्रोपाटकिन' के प्रारम्भ में,

> "क्रोपाटकिन ने अपने जीवन में उन सिद्धान्तों को उतारा जिनकी टालस्टाय ने केवल शिक्षा ही दी थी।"
>
> रोमां रोलां के कथन का हिन्दी अनुवाद

पत्र-साहित्य के तो आप आचार्य हैं। हिन्दी के किसी एक व्यक्ति के पास यदि सर्वाधिक पत्र आये हैं और साथ में सुरक्षित हैं तो वे श्री चतुर्वेदी हैं। यही कारण है कि आपकी रचनाओं में पत्रों के अंशों की भरमार होती है। यह आपकी शैली की एक विशेषता हो गई है।

साथ ही थोरो, एमर्सन, टालस्टाय आदि विचारकों तथा साहित्यकारों के उद्धरण देते चलना भी आपकी प्रमुख विशेषता है। विदेशी साहित्यकारों में आपको

तीन रूसी—प्रिन्स क्रोपाटकिन, तुर्गनेव, टालस्टाय, दो अमेरिकन—एमर्सन तथा थोरो, तथा दो अँग्रेज——कार्पेन्टर तथा गार्डिनर सर्वाधिक प्रिय हैं। फ्रान्सीसी रोमा रोलां भी आपके प्रियतम आराध्यों में से हैं। इनमें से भी आप प्रिन्स क्रोपाटकिन तथा एमर्सन के पुजारी कहे जा सकते हैं। यही कारण है कि इन दोनों के जीवन, भाषणों तथा लेखों से उद्धरण देते रहना आपको प्रिय है। प्रिन्स क्रोपाटकिन के जीवन-चरित में उद्धरणों का बाहुल्य है।

एमर्सन के उद्धरण भी पर्याप्त हैं, "शासन की नींव को प्रेम के आधार पर रखने का प्रयोग कभी नहीं किया गया।"

स्थान-स्थान पर अँग्रेजी के उद्धरण आंग्ल भाषा में ही दे देने में भी आपको हिचकिचाहट नहीं।

दीनबन्धु एण्ड्रू ज तथा रवीन्द्रनाथ टैगोर, साथ ही महात्मा गांधी का जो आपको सान्निध्य जीवन में मिला है उसके रोचक, जीवनोपयोगी संस्मरण देने से आप कभी भी थकते नहीं। कविरत्न सत्यनारायण, गणेश शंकर विद्यार्थी, श्री निवास शास्त्री आदि के भी आप अत्यधिक प्रशंसक रहे हैं।

रोचकता, मनोरंजकता तथा सरलता आपकी शैली की विशेषता रही है। भाषा-शैली में समयानुकूल ओजस्विता, व्यंग्यात्मकता, औपन्यासिकता तथा दार्शनिकता आपकी पुस्तकों की विशेषता है और सुगठित शब्दावली, छोटे-छोटे वाक्य भावाभिव्यंजन में समर्थ होते हैं।

सिद्धान्त-वाक्य भी आपके रेखाचित्रों से एकत्र किये जा सकते हैं, बाकूनिन के रेखाचित्र में इस प्रकार के वाक्य बहुत हैं, वैसे सर्वत्र ही मिल सकते हैं, जैसे "कठमुल्ले हैं, वे जो समझते हैं कि बस हमारा ही पथ ठीक है और सब रास्ते ग़लत हैं।"

एक ही रेखाचित्र में साथ-ही-साथ दूसरों का चरित्रांकन भी हो जाता है, जैसे बाकूनिन में मार्क्स तथा ऐंजिल्स का भी मिल जाता है।

दूसरे रेखाचित्रों में यदि क्रोपाटकिन के जीवन के उद्धरण हैं तो क्रोपाटकिन के जीवन में गीता से उद्धरण दिये गये हैं।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि चतुर्वेदी जी के रेखाचित्रों में जहाँ एक ओर राष्ट्रीयता तथा देश-प्रेम की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है वहाँ दूसरी ओर उसमें सर्वत्र विश्व-प्रेम तथा अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना व्याप्त है। कहीं-कहीं जैसा वह स्वयं स्वीकार करते हैं "भक्तिपूर्वक श्रद्धांजलि अर्पित करते समय हम अपना सन्तुलन भूल जाते हैं।" मोटे तौर पर पंडित जी ने कालगति को देखा है और इसी परिप्रेक्ष्य में साहित्यकार, लेखक, पत्रकार, राजनीतिज्ञ आदि विभिन्न व्यक्तित्वों का अंकन अपनी

कुशल लेखनी से किया है। हाल में प्रकाशित रेखाचित्रों में माखनलाल चतुर्वेदी, पं० इन्द्र, राधाकुमुद मुकर्जी, हरदयालु सिंह, शोभाचन्द्र जोशी, वासुदेवशरण जी पर प्रकाशित रेखाचित्र उल्लेखनीय हैं।

रामवृक्ष बेनीपुरी

शब्द-शिल्पी बेनीपुरी जी की शैली का चमत्कार उनकी सभी रचनाओं में देखा जा सकता है, विशेषतः रेखाचित्रों में। शब्दों के तो आप जादूगर हैं। भाषा की सरलता तथा शैली में प्रवाह की दृष्टि से बेनीपुरी जी अग्रणी हैं। कहानी, नाटक, संस्मरण, बालसाहित्य सभी दिशाओं में आपने उल्खेखनीय योगदान दिया है। 'विद्यापति पदावली' के माध्यम से आप उच्चतम कक्षाओं के विद्यार्थियों में गम्भीर समीक्षक के रूप में विख्यात हैं। स्वतन्त्रता-संग्राम के सेनानी, क्रान्तिकारी, जागरुक साहित्यकार, कर्मनिष्ठ पत्रकार बेनीपुरी अपनी चित्रात्मक शैली में लेखनी से कैसा जादू चलाते हैं, संस्मरणात्मक शैली में भी कैसा शब्द-चित्र प्रस्तुत कर देते हैं यह उनके रेखाचित्रों में देखा जा सकता है।

बेनीपुरी जी ने अब तक सैकड़ों रेखाचित्र लिखे हैं जो कई पुस्तकों में संग्रह रूप में प्रकाशित हो चुके हैं। संग्रहों में आने से पूर्व ये रेखाचित्र यत्र-तत्र पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से पाठकों के पास पहुंचते रहे हैं, जैसे 'वह चोर था' 'जनवाणी' के मार्च १९४७ के अंक में प्रकाशित हुआ। 'नई धारा' के अंक तो आपके रेखाचित्रों से भरे पड़े हैं, सबसे उल्लेखनीय रेखाचित्र है--'रज़िया', नई धारा १९५२। बाद में यही 'नवनीत' १९५९ में प्रकाशित हुआ और 'माटी की मूरतें' के नवीन संस्करण (१९५३) में प्रारम्भ में ही जोड़ दिया गया।

'रजिया' का स्मृतिचित्र लेखक की तूलिका से--

> "कानों में चांदी की बालियां, गले में चांदी का हैकल, हाथों में चांदी के कंगन और पैरों में चांदी की गोड़ाँई, भरबांह की बूटेदार कमीज पहने, काली साड़ी के छोर को गले में लपेटे, गोरे चेहरे पर लटकते हुए कुछ बालों को सम्हालने में परेशान, वह छोटी-सी लड़की, जो उस दिन मेरे सामने आकर खड़ी हो गई थी—"

इस शब्द-चित्र का अन्तिम दृश्यचित्र इस प्रकार है—

> "हां, मेरे सामने रजिया खड़ी थी--दुबली-पतली, रूखी-सूखी। किन्तु जब नजदीक आकर उसने 'मालिक, सलाम' कहा, उसके चेहरे से एक क्षण के लिए वे झुरियां कहां चली गईं, जिन्होंने उसके चेहरे

को मकड़जाला बना रखा था। मैंने देखा, उसका चेहरा अचानक बिजली के बल्ब की तरह चमक उठा और चमक उठीं वे नीली आँखें जो कोटरों में धंस गई थीं। और अरे, चमक उठी हैं आज फिर वे चांदी की बालियां, और देखो, अपने को पवित्र कर लो, उसके चेहरे पर फिर अचानक लटककर चमक रही हैं वे लटें जिन्हें समय ने धो-पोंछकर शुभ्र-श्वेत बना दिया है।"

यह है रज़िया के सम्पूर्ण जीवन के दो छोरों का सलौना चित्र जिसमें उसके जीवन का माधुर्य लबालब भरा हुआ है, साथ ही लेखक की मधुर स्मृतियां उसके साथ संजोयी हुई हैं। संस्मरणात्मक शैली में लिखा हुआ यह एक ऐसा रेखाचित्र है जो विश्व की किसी भी भाषा के साहित्य के समक्ष सगर्व रखा जा सकता है।

दूसरा बहुर्चचित रेखाचित्र है 'बलदेवसिंह' जो मधुकर के रेखाचित्रांक में (१९४६) सम्मिलित किया गया, बाद में यही 'माटी की मूरतें' में संकलित हुआ। इस शब्द-चित्र के कुछ अंश द्रष्टव्य हैं--

"एक गभरू जवान--अभी मूंछ की मसें भींग रहीं। रंग गोरा, जिस पर बालकिरणों ने सोना-सा पोत रखा था। दाहिने हाथ में बांस की लम्बी लाल लाठी बड़ी सजीली, घने पोरवाली, गाव-दुम-सी उतारवाली। बायें हाथ में लोटा लिये--वह शौचादि से लौट रहा था। बादामी रंग का, मोटिये का जो लम्बा खलीता कुर्ता पहन रखा था उसमें, उसके भीतर से उसके शरीर का गठीलापन और सौन्दर्य फूटा पड़ता था।"

"ऐसे बलदेवसिंह के गांव में रहने से नई जान आ गई--जान आ गई, जवानी आ गई···भोर में कुश्तियां, शाम को पट्टेबाजी, गदका, लाठी चलाना आदि। पेठिया के दिन बलदेवसिंह जब शिष्यमंडली के साथ सदल-बल चलते, देखते ही बनता।"

पहलवानी का एक चित्र

"आगे-आगे बलदेवसिंह जा रहे हैं। पैरों में बूट, जो बंगाल से ही लाये थे। कमर में धोती, जिसे कच्छे की तरह, अजीब ढंग से पहनते। वह घुटने से थोड़ा ही नीचे जाती, घुटनों के नजदीक उसमें चुन्नट होती, जो चलते समय लहराती रहती। लम्बा कुर्ता गर्दन की

बगल में जिसमें एक ही घुंडी। कुर्ता काफ़ी घेरदार, बांह का घेरा इतना बड़ा कि हाथी का पैर समा जाय उसमें। गले में सोने की छोटे-छोटे ठोस तावीजों की पंक्ति जिनमें कुछ चौकोर और कुछ चन्द्राकार। सिर पर कलंगीदार मुरेठा, जिसका एक लम्बा छोर उनकी पीठ पर झूलता। हाथ में सरसों का तेल और कच्चा दूध पिला-पिला कर पाली-पोसी गई लाल-सुर्ख लम्बी लाठी ; या कभी-कभी वह मोटा डंडा, जिससे कुर्ते के नीचे कमर में लटकती हुई गँड़ासे की फली बात-की-बात में फिट करके वह साक्षात् यम बन जा सकते थे।

स्वभाव बच्चों-सा निरीह, निर्विकार ! चेहरे पर हमेशा हँसी खेलती रहती, सबके साथ नम्रता से पेश आते।"

लाठियों की खटाखट में

"बलदेवसिंह !—पुराने, हंसमुख, रसीले बलदेवसिंह नहीं। बलदेवसिंह—साक्षात् भीम बने हुए। आंखों से अंगार झड़ रहे। सिर पर जो एक लाठी लगी थी; उससे खून निकलकर—ललाट पर होते भौं के ऊपर जमकर लौंदा सा बन गया था।"

मरण का दृश्य

"उसी बलदेवसिंह की यह लाश हमारे सामने पड़ी है ! सिर चूर-चूर, जैसे भुर्ता बना दिया गया हो ! खून और धूल से शराबोर ! जिस ललाट से तेज बरसता, उसी पर मक्खियां भिन्ना रहीं ! एक आंख नीचे धँस-गई-सी, दूसरी बाहर निकल आई। होंठ को छेदकर दांत बाहर निकल रहे हैं ! नहीं, नहीं, यह हमारा बलदेवसिंह नहीं हो सकता। बलदेवसिंह की ऐसी गत ?"

ये दोनों रेखाचित्र जिस संग्रह में संकलित हैं उसके संबंध में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी ने सत्य ही कहा था, "लोग माटी की मूरतें बनाकर सोने के भाव बेचते हैं पर बेनीपुरी सोने की मूरतें बनाकर माटी के मोल बेच रहे हैं।—यह लेखनी है या जादू की छड़ी आपके हाथ में।"

'माटी की मूरतें' (१९४६) में इनके अतिरिक्त दस और शब्द-चित्र हैं—सरजू भैया, मंगर, रूपा की आजी, देव, बालगोबिन भगत, भौजी, परमेसर, बैजू मामा, सुभान खाँ, बुधिया—जिन पर लेखक के ही शब्दों में 'कला ने उन पर

पच्चीकारी की है, किन्तु मैंने ऐसा नहीं होने दिया कि रंग-रंग में मूल रेखाएँ ही गायब हो जायँ ।'—कला का काम जीवन को छिपाना नहीं, उसे उभारना है। कला वह, जिसे पाकर जिन्दगी निखर उठे, चमक उठे ।

सरजू भैया—"गाँव के सबसे लम्बे और दुबले आदमियों में सरजू भैया की गिनती हो सकती है। रंग साँवला, बगुले-सी बड़ी-बड़ी टाँगें, चिपांजी की तरह बड़ी-बड़ी बांहें । कमर में धोती पहने, कंधे पर अंगोछी डाले, जब वह खड़े होते हैं, आप उनकी पसलियों की हड्डियां गिन लीजिए। नाक खड़ी, लम्बी । भवें सघन । बड़ी-बड़ी आँखें कोटरों में धँसी, गाल पिचके । अंग-अंग की शिराएँ उभरी—कभी-कभी मालूम होता, मानो ये नसें नहीं, उनके शरीर को किसी ने पतली डोरों से जकड़ रखा है । ऐसे हैं सरजू भैया जो गाँव के चन्द जिन्दादिल लोगों में से एक हैं । बड़े मिलनसार, मज़ाकिया और हँसोड़ ।"

मंगर—तीसरा चित्र मंगर का है—'हट्टा-कट्टा शरीर । कमर में भगवा । कंधे पर हल । हाथ में पैना । आगे-आगे बैल का जोड़ा ।'

"मंगर के शरीर का ख्याल आते ही प्राकृतिक व्यायाम के हिमायती मिस्टर मूलर की आकृति का स्मरण हो आता है । सैंडो के शैदाई उससे कुछ निराश हों तो आश्चर्य नहीं ।"

रूपा की आजी—यह चौथा रेखाचित्र है जो करुण तथा मार्मिक है। इसमें से मेले का एक दृश्य-चित्र द्रष्टव्य,

"शिवरात्रि का यह मेला । लोगों की अपार भीड़ । बच्चे, जवान, बूढ़े, लड़कियाँ, युवतियाँ, बूढ़ियाँ शिवजी पर पानी, अक्षत, बेलपत्र, फूल फल । फिर, एक ही दिन के लिए लगे इस मेले में घूमफिर, खरीद-फरोख्त । धक्के-पर-धक्के । चलने की ज़रूरत नहीं, अपने को भीड़ में डाल दीजिए, आप-ही-आप किसी छोर पर लग जाइयेगा । बच्चों और स्त्रियों की अधिकता ! उन्हीं के लायक ज्यादा सौदे । खँजड़ी, पिपही, झुनझुने ; मिट्टी की मूरतें, रबर के खिलौने, कपड़े के गुड्डे ; रंगीन मिठाइयाँ, बिस्कुट, लेमनचूस । टिकुली, सिन्दूर, चूड़ियाँ ; रेशम के लच्छे, नकली गोट, चकमक के पत्ते ; आइना, कंघी, साबुन ; सस्ते एसेंस, और रंगीन पाउडर । भाव-साव की छूट, हल्ला-गुल्ला । गहने के झमझम में चूड़ियों की झनझन । साड़ियों की सरसर में हँसी की खिलखिल ।"

देव में अमरूद तोड़ने का एक चित्र आंखों के सामने आ जाता है,

"वह तीर-सा सन से निकला। पेड़ों और झाड़ियों की आड़ लेता, लुकता-छिपता, कहीं झुकता, कहीं पेट के बल रेंगता, धीरे-धीरे विलायती अमरूद के पेड़ के नीचे पहुंचा और फिर बन्दर-सा, नहीं गिलहरी-सा, वह सर्र-से पेड़ पर चढ़ गया।"

ऐसे ही वाक्यों को पढ़कर शिवपूजन सहाय जी ने लिखा था कि 'बेनीपुरी की भाषा चपल खंजन-सी फुदकती चलती है।'

बालगोबिन भगत—"बालगोबिन भगत तेली थे। किन्तु तेलियों में साधारणतः पाया जाने वाला काला रंग नहीं था उनका। मंझोले कद के गोरे-चिट्टे आदमी थे। साठ के ऊपर के ही होंगे। बाल पक गये थे। सफेद दाढ़ी या जटाजूट तो नहीं रखते थे, किन्तु हमेशा उनका चेहरा सफेद बालों से ही जगमग किये रहता। कपड़े बिल्कुल कम पहनते। कमर में एक लंगोटी-मात्र और सिर में कबीरपंथियों की-सी कनफटी टोपी। जब जाड़ा आता, एक काली कमली ऊपर से ओढ़े रहते। मस्तक पर हमेशा चमकता हुआ रामानन्दी चन्दन, जो नाक के एक छोर से ही, औरतों के टीका की तरह शुरू होता। गले में तुलसी की जड़ों की एक बेडौल माला बांधे रहते।" ऐसे बालगोबिन भगत साधु नहीं, बिल्कुल गृहस्थ थे।

भौजी—लेखक की "भौजी अभी बिलकुल किशोरी थीं। उनके अधरों पर पूरा रस नहीं आया था, उनके अंग अभी पूरे भरे नहीं थे। लम्बी पतली छड़ी-सी ! लेकिन सोने की छड़ी नहीं, इसे कहने में मैं संकोच नहीं करूंगा। उनका वर्ण द्रविड़-आर्य-रक्त के सुन्दर सम्मिश्रण का नमूना था। वर्ण ही नहीं, गठन भी। उन्नत ललाट, भँवें उठी हुईं, पतली-पतली। काले बालों में घुंघरालापन--जब उन्हें खोलतीं, तो अजीब लहरदार मालूम होते थे--गिर्दाबों से भरी यमुना की धारा। नाक ललाट के नजदीक जाकर जरा चिपक-सी गई, किन्तु उसका अग्रभाग काफी सुन्दर, मोहक ! होंठ कुछ मोटे, किन्तु चिबुक का रसीलापन उनके किंचित् ऐब को ढंक देता। और, उन होठों के भीतर जो पंक्तिबद्ध सुन्दर चमकीले दांत थे ! जब भौजी हंसती, सचमुच मोती झड़ने लगते !"

भारतीय समाज में भौजी के स्थान का लेखक ने सुन्दर काव्यात्मक वर्णन किया है--

"भारतीय परिवार में भौजी का वही स्थान है, जो मरुभूमि में 'ओयसिस' का। धधकती हुई बालू की लू-लपट में दिन-दिन, रात-रात, चलते-चलते जब मुसाफिर दूर से खजूरों की हरी-हरी फुनगी देखता है, उसकी आंखें ही नहीं तृप्त हो जातीं, उसके शरीर का रोम-रोम पुलकित और उसकी शिराओं का एक-एक रक्त-बिन्दु नृत्यशील हो उठता है। कुछ क्षणों के लिए उसका सारा जीवन हरीतिमामय हो जाता है; खजूरों के उस झुरमुट में वह मीठे फल और मीठा पानी पाता है। एक दिन वहीं रहकर वह आनन्द मनाता है, रक्त संचय करता है, फिर ताजगी और उमंग लेकर आगे बढ़ता है, आगे--जहां फिर वही अनन्त बालुका-राशि है।"

यह एक सफल पारिवारिक चित्र है जिसमें लेखक ने अपनी लेखनी भाभी की निन्दा के लिए नहीं उठायी है वरन् वस्तुतः शब्द-चित्र प्रस्तुत करने के लिए।

परमेसर--"परमेसर आवारा भले ही हो पर उसकी मृत्यु पर गांववालों को सिर्फ उसी दिन अफसोस नहीं हुआ, जब जब होली, दशहरा, दिवाली, छठ या कार्तिक पूर्णिमा आती है परमेसर के लिए उसांसें ली जाती हैं।"

एक पंक्ति में क्रियाओं एवं व्यापारों का चित्र--

"बेचारी पत्नी एक कोने में सिमटी, सिकुड़ी, सहमी, सिसकती।"

"परमेसर जंगल से खूब दलदार पत्तियां चुनकर लाता, सुखाता, संजोकर रखता, खुद पीता, यारों को पिलाता।"

बैजू मामा--यह एक अजीब चोर का शब्द-चित्र है जिसमें मनोवैज्ञानिक आधार पर बैजू का चित्रण किया गया है। चोर को भी कितना अधिक जेल के बगीचे से प्रेम हो जाता है--

"इस जेल के ये सारे पेड़-पौधे मुझे बुला रहे हैं! यह आम का पेड़, ये अमरूद, यह नीम, यह जामुन--सबके सब मेरे ही लगाये हुए हैं बाबू! मैंने ही इनके पौधे रोपे, इनके थालों में पानी दिया, निकौनी की। होते-होते आज ये कितने छितनार हो चले हैं! और इन बेलों, गुलाबों, गेंदों का खान्दान किसने लगाया, बढ़ाया? इसी बैजू ने बाबू। जब बाहर होता हूं, रात में ये सब-के-सब पुकारते-से

हैं। हां बाबू, सच कहता हूं नींद नहीं आती। सोचता हूं, हाय उस आम की टहनी को न कोई मरोड़ दे, उस नीम को लोग दातुन कर-करके न सुखा डालें, ये बेले और गुलाब के पौधे बिना सिंचाई-निकाई के न कहीं बर्बाद हो जायं, बस कुछ इधर-उधर करके दौड़ा-दौड़ा पहुंच जाता हूं।"

ये सभी चित्र 'जेल की चहारदीवारी' की देन हैं जिसमें 'बैजू मामा' भी इनकी पांत में आ बैठे और अपनी मूरत गढ़वा ली।

सुभान खाँ

"सुभान दादा की लंबी, सफेद, चमकती, रोब बरसाती दाढ़ी में अपनी नन्हीं उंगलियों को घुमाते हुए मैंने पूछा। उनकी चौड़ी, उभरी पेशानी पर एक उल्लास की झलक और दाढ़ी-मूंछ की सघनता में दबे पतले अधरों पर एक मुस्कान की रेखा दौड़ गई।···लम्बा, चौड़ा, तगड़ा है बदन इनका। पेशानी चौड़ी, भँवें बड़ी सघन और उभरी। आँखों के कोने में कुछ लाली और पुतलियों में कुछ नीलेपन की झलक। नाक असाधारण ढंग से नुकीली। दाढ़ी सघन; इतनी लम्बी कि छाती तक पहुंच जाए--वह छाती, बुढ़ापे में भी फैली, फूली हुई। सिर पर हमेशा ही एक दुपलिया टोपी पहने होते और बदन में नीमस्तीन। कमर में कच्छेवाली धोती, पैर में चमरौधा जूता। चेहरे से नूर टपकता, मुंह से शहद झरता।"

यह भी संस्मरणात्मक शैली में लिखा गया ऐसे व्यक्ति का शब्द-चित्र है जिनके दिमाग़ में आला ख्याल थे और जिनके हृदय में प्रेम की धारा लहराती थी, वह प्रेम की धारा जो अपने-पराये सबको समान रूप से शीतल करती और सींचती है।

इस पुस्तक का आखिरी शब्द चित्र 'बुधिया' का है जो--

"एक दिन यौवन की देहली पर बैठी रस बरसाती, जिसका रंग वही साँवला है, लेकिन उसमें गड़हे के सड़े पानी की मुर्दनी नहीं है, कालिन्दी का कलकल-छलछल है, जिसके कूल पर कितने गोपाल बंशी टेरते, कितने ही नन्दलाल रासलीला का स्वप्न देखते। बुधिया जिस सरेह में निकल जाती, जिन्दगी तरंगें लेती। उसके बालों में चमेली का तेल चपचप करता है, उसकी माँग में टकही टिकुली चमचम करती है। किसी वृन्दावन में एक थे गोपाल, हजार थीं गोपियाँ। यहाँ एक गोपी

> और हजार गोपाल। इन गोपालों को एक ही नाथ में नाथकर नचाने में बुधिया को जो मजा आता, वह उस गोपाल को सहस्रफण काली के नाथने और उसके फन पर नाचने में कहाँ मिला होगा? मालूम होता, द्वापर का बदला राधारानी इस युग में बुधिया की मारफत पुरुष-जाति से चुका रही--वह तड़पती रही और तड़पाती है।"

इन माटी की मूरतों में लेखक के जीवन की घटनाएं पात्रों के चित्रों में प्रतिबिम्बित हुई हैं। ये मूरतें अपने सहज रूप में हमारे सम्मुख प्रस्तुत कर दी गई हैं। ग्रामीण जीवन की सरसता, सरलता, ममता, करुणा आदि सभी कुछ तो इनमें हैं।

वैसे इस संग्रह से पूर्व लेखक का शब्द-चित्रों का प्रथम संग्रह लाल तारा शीर्षक से सन् १९३८ में प्रकाशित हो चुका था--"लाल तारा मेरे शब्दचित्रों का पहला संग्रह है। इसका पहला रूप उस जमाने में निकला था, जब मैं सिर से पैर तक लाल-लाल था।"

'लाल तारा' एक नये प्रभात का प्रतीक था। वह प्रभात अब अधिक सन्निकट है। शायद इसीलिए अंधकार भी अधिक सघन हो चला है। (१९५३ की भूमिका) इसमें नये रूप में १६ शब्द-चित्र--लाल तारा, हलवाहा, यह और वह, हँसिया और हथौड़ा, कुदाल, डुगडुगी, शहीदों की चिताओं पर, आँधी में चलो, कस्मै देवाय हविषा विधेम, इन्कलाब जिन्दाबाद, नई संस्कृति की ओर, कुछ क्रान्तिकारी विचार, रेलगाड़ी, जवानी, कलाकार, दीपदान--हैं तथा बत्तीस चित्र हैं।

'लाल तारा' में गरभू को अपने खलिहान में घूमते हुए जवानी के चलचित्र उभरते हुए दिखाई देते हैं।

'हलवाहा' में समाज पर गहरा व्यंग्य है--'वह पृथ्वी रहकर क्या होगी जहाँ मनुष्य बैल बन जाता है? जहाँ उस बैल को दिन-रात खटाया जाता है किन्तु चारा भी नहीं दिया जाता?'

जहाँ वह भूखों मरता है जो पैदा करता है, जहाँ वह मौज उड़ाता है जो अजगर-सा बैठा रहता है।

'यह और वह' में दो चित्र हैं, गरीबी और अमीरी,

> "खुले डब्बों की लम्बी कतार! डब्बों में गिट्टियाँ भरीं। गिट्टियों पर कुछ आदमी बैठे, अपने हथौड़े चलाये जा रहे हैं। कुछ लोहे के चूल्हे में कोयला रख उसे धधकाने की चेष्टा में हैं—धुंआ-धुंआ हो रहा है। कुछ गिट्टियों पर पड़े, पत्थर का तकिया किये, सोये हुए हैं। उनकी नाक की 'सर-सों' आवाज साफ़ सुनाई

पड़ती है। उनके सिरहाने अध-सूखे पत्तों वाली डाल हिकमत से खड़ी की हुई है।"

और दूसरी ओर--

"बिजली की रोशनी में उनके भीगे केश पर की बूंदें कैसी चमक रही हैं, जैसे हरी घास पर ओस के कण, जिन्हें सूर्य किरणों ने रंग-बिरंगा बना दिया हो। बड़े आईने के सामने, सोफियाने ब्रुश से, अपने बाल को सम्हाल रहे हैं। किन्तु बिजली-पंखे की हवा से उड़-उड़ कर वे मुलायम बाल बार-बार उनके चेहरे पर लटक आते हैं। मालूम होता है, बालों का कौतुक उन्हें भी पसन्द है--बार-बार ब्रुश फेरते और बीच-बीच में ठहर-ठहरकर उनके बिखरने की प्रतीक्षा करते हैं। फिर, कुछ उजली-उजली मक्खन-सी चीज़ निकालकर चेहरे पर मलते हैं।"

'हँसिया और हथौड़ा' एक प्रतीकात्मक चित्र है--

"शक्ति और कर्तृत्व के ये दो प्रतीक हैं। कृषि और उद्योग के! प्रकृति और पुरुष के! संसार-रथ इन्हीं दो पहियों पर बढ़ा जा रहा है। हाँ, दोनों पहियों पर, एक पहिया भी गिर जाय, तो यह रथ एक पग बढ़ने का नहीं।"

'कुदाल' तेज धूप, लू की लपटों में भी चलती है। 'डुगडुगी' एकांकी नाटक भी इसमें सम्मिलित है, इसका भी एक दृश्य-चित्र बरबस आँखों को खींच लेता है,

"आँगन में एक लड़की निकलती है। हाथ में पानी भरा लोटा। चौदह-पन्द्रह बरस की साँवली सुन्दरी, एक फटी चूनर, फटी चूनर के भीतर मसकी चोली, जिससे अन्दर से उसकी जवानी की किरणें बरबस झाँक रहीं।"

'शहीदों की चिताओं पर' शीर्षक चित्र मार्मिक अधिक है। लेखक को आँधी में चलना अच्छा लगता है। आँधी भी प्रतीकात्मक है--आँधी, तूफान, ज्वार, बाढ़, इन्कलाब, विप्लव, क्रान्ति, रेवोलूशन सब प्रकृति की एक ही उद्यम लीला के भिन्न-भिन्न नाम हैं। आँधी के दृश्य-चित्रण की एक झाँकी,

"हड़ हड़ हड़, हा हा हा--वृक्ष उजड़ रहे है, पत्ते उड़ रहे हैं, धूल और तिनके का नाम निशान मिटना चाहता है। हड़ हड़ हड़, हा हा हा खिड़कियाँ टूट रही हैं, छतें हिल रही हैं, छप्पर उखड़ रहे हैं। हड़ हड़ हड़, हा हा हा-मनुष्य व्याकुल हो राम-गुहार कर रहे हैं, पशु व्याकुल हो इधर-उधर मारे-मारे भाग रहे हैं..."

भगतसिंह की शहादत पर लिखे 'इन्कलाब ज़िन्दाबाद' पर तो लेखक को डेढ़ साल की सख्त कैद मिली थी। इस करुण चित्र का एक अंश इस प्रकार है,

> "भगतसिंह अपने वीर साथियों के साथ हँसते-हँसते फाँसी पर झूल गया। झूल गया हँसते-हँसते, गाते-गाते--'मेरा रंग दे बसन्ती चोला'। सुना है, उसने मैजिस्ट्रेट से कहा, 'तुम धन्य हो मैजिस्ट्रेट कि यह देख सके कि विप्लव के पुजारी किस तरह हँसते-हँसते मृत्यु का आलिगन करते हैं।' सचमुच मैजिस्ट्रेट धन्य था, क्योंकि न केवल हमें, किन्तु उनके माँ-बाप सगे-सम्बन्धी को भी उनकी लाश तक देखने को न मिली। हाँ, सुनते हैं किरासिन के तेल में अधजले माँस के कुछ पिंड, हड्डियों के कुछ टुकड़े और इधर-उधर बिखरे खून के कुछ छींटे मिले हैं। ज़हे किस्मत !"

इस मार्मिक तथा करुण चित्र को पढ़कर किसकी आँखों में आँसू नहीं छलछला आयेंगे।

'नई संस्कृति की ओर' में गेहूँ और गुलाब की प्रतीकात्मक चर्चा है। 'रेलगाड़ी' में फ़र्स्ट, सेकन्ड, इन्टर और थर्ड क्लास के डिब्बों के चित्र है।

'दीपदान' में निर्धनता का करुण चित्र है,

> "माँ आज अपने घर दीये नहीं जलेंगे ?
>
> माँ चौंकी ! चिकनी मिट्टी सानी ! दीये गढ़े। अंचल से चीथड़े फाड़ कर बत्ती बनाई।
>
> किन्तु तेल ?
>
> माँ की आँखें छलछला उठीं--बरस पड़ीं। सामने पड़े दीये उससे भर चले। फिर गीली मिट्टी के इन स्नेह पात्रों को मिट्टी के रूप में परिणत होते कितनी देर लगती ?"
>
> "मनुष्य की कलेजी को काट-कूटकर दीये बनाये गये हैं, उसमें उनका हृदय-रक्त भर दिया गया है, उनके अरमानों की बत्ती बनाई गई है, जो बिना दियासलाई छुलाये ही निर्धूम जल रही है !"

इस साहित्यिक अलबम में शब्दचित्रों के माध्यम से अनेक भावचित्र, रेखाचित्र तथा कल्पनाचित्र हैं। कुछ रचनाएँ गद्यकाव्य की सीमा को भी स्पर्श कर रही हैं।

गहूं और गुलाब (१९५०)

इसकी भूमिका में लेखक ने स्वीकार किया है "ये शब्द-चित्र, पिछले शब्द-

चित्रों से भिन्न हैं। छोटे, चलते, जीवंत। मैंने कहा---हैंड कैमरा के स्नैप शाट, आलोचक ने उस दिन डांटा---हाथीदांत पर की तस्वीरें।

इस संग्रह के रेखाचित्रों में बेनीपुरी जी भावुक अधिक हैं। यही कारण है कि इन शब्दचित्रों में गद्य काव्य की सी झलक मिलती है।

इस संकलन में २५ शब्द-चित्र हैं---गेहूं बनाम गुलाब, जहाज जा रहा है, चरवाहा, फुलसुंघनी, तितलियां, नथुनिया, नींव की ईंट, गेंदा, हारसिगार, गुलाब, पुरुष और परमेश्वर, ये मनोरम दृश्य, मीरा नाची रे, डोमखाना, कंजड़ों की दुनिया, चक्के पर, गोशाला, रोपनी, घासवाली, पनिहारिन, बचपन, किसको लिख रहे हैं, छब्बीस साल बाद, पहली वर्षा, लागल करेजवा में चोट---साथ ही पचास चित्र हैं।

'गेहूं बनाम गुलाब' प्रतीकात्मक है।

> "अब गेहूं प्रतीक बन गया हड्डी तोड़ने वाले, थकाने वाले, उबाने वाले, नारकीय यंत्रणायें देने वाले श्रम का---उस श्रम का, जो पेट की क्षुधा भी अच्छी तरह शान्त न कर सके। और 'गुलाब' बन गया प्रतीक विलासिता का, भ्रष्टाचार का, गन्दगी और गलीज़ का! वह विलासिता, जो शरीर को नष्ट करती है और मानस को भी!
>
> गेहूं शारीरिक आवश्यकताओं का प्रतीक है और गुलाब मानसिक। एक स्थूल दुनिया का प्रतीक है दूसरा मानव संसार अर्थात् सांस्कृतिक जगत का।"

'जहाज जा रहा है' में गंगा के किनारे का दृश्य,

> "खड़खड़-खड़खड़, धमधम-धमधम-गंगा में यह जहाज चला जा रहा है। सामने कुछ बच्चे, किनारे पर खड़े उत्सुकता से एक-एक यात्री को पहचानने की कोशिश में हैं। उस बंगले में, कुछ बाबू इज़ीचेयर पर बैठे, सिगार का धुआं उड़ा रहे हैं। घाट पर स्नानार्थियों की भीड़ में और गंगा में यह जहाज चला जा रहा है।"

'चरवाहा' में निर्धनता का करुण चित्र है,

> "निकला हुआ पेट मानो उसकी शाश्वत बुभुक्षा का डंका पीट रहा है। सूखी टांगों को फैलाये, मोटे होंठों से लार टपकाता, भद्दी उंगलियों से वह कंडे की आगी पर कोई चीज़ भून रहा है।"

'फुलसुंघनी' में एक छोटी चिड़िया का चित्र,

> "यह छोटी-सी काली-काली चिड़िया अपने में कितनी उमंग

रखती है ! पन्न-पन्न करती, हर सैकेंड पर अपनी गति बदलती, छोटी चोंच से सुरीली चेंचें करती, ज्यों ही फूल देखा कि टूट पड़ी उस पर !"

'नथुनिया' का सबसे छोटा किन्तु मार्मिक चित्र है--

"सिर के मुड़े हुए छोटे-छोटे बालों के रंग से चेहरे का रंग प्रतियोगिता करता हुआ। बालों ने चारों ओर से जिस पर मुदाखलत-बेजा कर रखी है, वह छोटा-सा ललाट, चिपटा-सा। ललाट की कालिमा में पतली भौंहों की रेखा खोई-खोई-सी। छोटी-छोटी आंखें जिनका पीला रंग राजेन्द्र बाबू की आखों की याद दिलाता है। आंखों के चारों कोरकों पर पीली-पीली घिनौनी कीचड़। गाल की हड्डियां उभरीं। नाक का नुकीला अग्रभाग पतले अधरों को ढंकता-सा। इस नाक में प्रसूतिगृह में ही, बूढ़ी दादी ने पीतल की एक नथुनी डाल दी थी—कहीं उसके इस पितृहीन एकलौते पोते को डायन—जोगन की नज़र न लग जाय।"

'नींव की ईंट' से प्रेरणा मिलती है--

"वह ईंट, जिसने अपने को सात हाथ ज़मीन के अन्दर इसलिए गाड़ दिया कि इमारत ज़मीन के सौ हाथ ऊपर तक जा सके। वह ईंट, जिसने अपने लिए अन्धकूप इसलिए कबूल किया कि ऊपर के उसके साथियों को स्वच्छ हवा मिलती रहे, सुनहली रोशनी मिलती रहे।"

गेंदा, हारसिंगार तथा गुलाब प्रकृति के पुष्पों से भी प्रेरणा प्राप्त होती है। 'गुलाब' का संदेश सुनिये--

"किन्तु, मेरी ओर देखो, मैं तो खुद कांटों का ताज हूं—अनगिनत कांटों के ऊपर खिला, हंसता, विहंसता।"

"उनके सिर पर कांटे थे, मैं कांटों के सिरे पर हूं। सिर पर कांटा रखना बड़ा करतब है या कांटों के सिर पर रहना ? तुम्हीं सोचो। और, रहना ऐसा कि न होठों की हंसी में कमी आये, न मुंह की लाली में। उस हालत में भी अपने गुण--गंध का उन्मुक्त हाथों वितरण करना।"

'पुरुष और परमेश्वर' में दर्शन अधिक है। 'ये मनोरम दृश्य' में प्रकृति प्रांगण के अनेक चित्र हैं--चपला की चमक, बादलों से ऊपर, अष्टमी का चन्द्रमा, शरद की पूर्णिमा, अमा-निशीथ, सरसों के समुद्र में। चपला की चमक का एक नमूना देखिए,

"उत्तर दिशा के समूचे आकाश पर, पश्चिम कोने से पूरब कोने तक, गहरे-घने बादल छाये हुए हैं। उन बादलों की काली पृष्ठभूमि पर बिजली, मानो एक परी की चपल गति से नृत्य कर रही हो। अभी यहाँ, पश्चिमी कोने पर उसके घाँघरे की जरदार किनारी चमकी, पलक गिरते वह ठीक-ठीक मेरी नाक की सीध में आकर, विभ्रमकारी गति से नाच उठी, फिर एक छलाँग लेती वह पूरब कोने पर पहुँच गई, जहाँ उसकी एक मुस्कान से नीला आसमान उजला-उजला हो रहा।"

शरद की पूर्णिमा में स्नान कीजिए–

"सामने जहाँ तक नजर जाती, समुद्र ही समुद्र। उसमें ज्वार आया है। बड़ी-बड़ी तरंगें उठतीं, एक दूसरे से टकरातीं, फेन उड़ातीं, गर्जन करतीं, आगे बढ़तीं, और बाँध पर सर पटक कर फिर लौट जातीं। ऊपर जो पूर्णचन्द्र आधी रात तय करके सिर पर खड़ा मुस्कुरा रहा है उसकी मुस्कुराहट उन तरंगों पर अटखेलियाँ कर रही है। कभी-कभी मालूम होता, किसी अदृश्य छोर को पकड़कर शत-सहस्र ज्योत्स्ना कुमारियाँ चन्द्रमंडल में एक-एक कर उतर रही हैं और आकुल-व्याकुल समुद्र की इन तरंग मालाओं के कम्पित अधरों को चूम चूमकर अट्टहास कर उठती हैं। इन चुम्बनों की मादकता से मतवाली बनी तरंगें आप अपने में नहीं हैं, समुद्र को नीचे छोड़कर ऊपर उड़ना चाहती हैं।"

सरसों के समुद्र में डुबकी लगाइये––

"यह, यह मटर का बाजार है–हरी चादर पर कारचोबी का काम! यह केराव का खेत–वही शोभा, लेकिन बैंगनी की बहार! यह गेहूं, गेहूं-शुभ्र हरीतिमा; लम्बी बालियों में किसका मन न उलझे!"

'कंजड़ों की दुनिया' में भी सौन्दर्य होता है। 'चक्के पर' का एक वाक्य कितना यथार्थ है "जब आदमी चक्के पर होता है, गति में होता है, ऊपर चढ़ने और आगे बढ़ने की होड़ा-होड़ी में होता है, तब इधर-उधर मुड़कर देखना भी अपराध हो जाता है।"

'गौशाला', रोपनी', 'घासवाली', 'पनिहारिन' ग्रामीण जीवन की झलकियाँ हैं। 'बचपन' में भावुकता अधिक है और कुछ अपनी भी है––बाबा खाट पर सिर झुकाये स्केच लिख रहे हैं। बच्चों के कोलाहल में क्या लिखा जा सकता है? हाँ शब्द-चित्रकार हैं न? इन चार अनमोल चित्रों को गौर से देख रहे हैं।

'किसको लिख रहे हैं' एक प्रश्न है। छब्बीस साल बाद जवानी से बुढ़ापा आ गया—

> "छोटा-सा ललाट, चाँद के टुकड़े-सा ! ऊपर सजल श्यामल मेघ-से बालों की लट, नीचे काम की कमान-सी पतली, लचीली, नुकीली भौंहें। आँखों में खुमार, गालों पर गुलाब। सुन्दर पतली नाक, जब वह पतले अधरों को खोल दानेदार दाँतों को जरा-सा चमकाकर बोलती, मालूम होता, नाक उसमें सुरीलापन भर रही। स्वस्थ अर्द्ध-स्फुटित यौवन। कैसी मोहक थी वह, उसकी काया, उसकी बातें, उसकी चाल !"

'पहली वर्षा' का आनन्द अनोखा होता है, "प्रथम वर्षा की इस पहली सन्ध्या को आम की हर डाली अम्बपाली बन गई है। वह गुनगुना रही है, मुस्करा रही है, अँगड़ाइयां ले रही है, उंगलियों से इशारे कर रही है और लगता है, कहीं वह एकाएक नाच न उठे—छमछम।"

'लागल करेजवा में चोट' इस पुस्तक का अन्तिम लघु शब्द-चित्र है।

'कलाकार की हत्या' शीर्षक स्केच 'नई धारा' जून १९५० में प्रकाशित हुआ।

विविध विधाओं में लिखी हुई सामग्री का संकलन 'संकेत' में किया गया है जिसमें बेनीपुरी जी का 'बूढ़ा कुत्ता' शीर्षक रेखाचित्र प्रकाशित हुआ है। इसमें स्वामि-भक्त, कर्तव्यपरायण, वीर, साहसी जीव का रेखाचित्र है। बुढ़ापे पर लेखक का यथार्थ दृष्टिकोण है—

> "बु ापा—यह कमबख्त बुढ़ापा क्या चीज है ? यह क्यों शरीर से शक्ति छीन लेता है, जर्जर, क्षीण बना डालता है ? जीवों का अन्त इतना बुरा क्यों होता है ? बचपन का दुलार, जवानी का प्यार और उसके बाद बुढ़ापे की यह दुत्कार-फटकार। सारी शक्ति खोकर, सारा सम्मान खोकर, तिल-तिल गल-गल कर मरना··· विधाता, यह तुम्हारा विधान कैसा है ?"

'मील के पत्थर' लेखक के हृदयस्पर्शी रेखाचित्र तथा संस्मरणों का संकलन है। छोटे-छोटे वाक्यों तथा भाव भरे शब्दों के चित्रात्मक प्रयोग से भाषा सजीव होकर उस व्यक्ति का सहज में ही चित्रांकन कर देती है। इस संग्रह में पन्द्रह संस्मरणात्मक चित्र हैं—बापू की कुटिया में, प्रेमचन्द अमर हो, बर्नाड शा, हमारे राष्ट्रपति, यूरोप के कलाकार, जो शब्दशः आचार्य थे, कोई सुखी नहीं, विनोबा के साथ दो दिन, कथा के जादूगर, दीवाली फिर आ गई, सजनी, रोटी और शराब, एक भारतीय

आत्मा, भूख और कला, एक साहित्यिक संत, कोई हँसना इनसे सीखे।

'बापू की कुटिया में' बैठकर लेखक ने चार मूर्तियों का निर्माण किया है—कर्मवीर, क्रान्ति, दाता, कलाकार।

बापू का प्रारम्भिक चित्र इस प्रकार है—

"जब तुम ढीला कुर्ता पहने, कंधे से एक झोला लटकाये, हाथ में डंडा लिये सत्याग्रह के लिए प्रस्थान कर रहे हो। दूसरा, तुम्हारे बदन में मिर्जई, सिर पर काटियावाड़ी मुरेठा—ढीला ढाला। मैं जल्दी जल्दी उस डिब्बे के निकट पहुँचा, जिसके दरवाजे पर कुछ लोग खड़े थे।"

एक दूसरा चित्र—

"रूखा-सूखा तुम्हारा चेहरा, जिस पर सबसे प्रमुख वे दोनों कान ! जैसे संसार के सारे दुःख दर्द सुनने को व्याकुल। सिर पर वह टोपी जो पीछे चलकर अपने सुधरे रूप में गांधी टोपी के शुभ नाम से अभिहित हुई। शरीर में पतले कालरवाला कुर्ता—खुरदरे कपड़े का। कमर में घुटनों तक की धोती और पैर में चप्पल।"

प्रेमचन्द अमर हों—इसमें प्रेमचन्द का शब्द चित्र इस प्रकार है,

"एक साधारण-सा व्यक्ति खड़ा। कद, पोशाक, खड़े होने का ढंग सभी साधारण। सिर खाली। विशुद्ध आर्यत्व की वंश परम्परा सूचक ललाई अभी खोई, वैसे अस्त-व्यस्त बाल, हवा में झोंके से उड़ रहे। जिन्दगी की कितनी धूप-छाँह के चिह्न लिये गोरा चेहरा। ललाट में कितनी सीधी रेखाएँ—गालों पर कितनी सिकुड़नें। बेतरतीब सी मूंछें। दाढ़ी मानो कई दिनों से नाई की प्रतीक्षा में। शरीर में कमीज, जिसके ऊपर के दो बटन खुले हुए। एक हाथ में छाता। एक हाथ से वह उड़ उड़कर ललाट से छेड़खानी करने वाले बालों को सम्हालें या बिगड़ैल मूंछों को। साफ सी दीखने वाली धोती। साधारण सा जूता।"

एक दूसरा चित्र भी दृष्टव्य है—

"उस साधारण झुर्रीदार चेहरे के अन्दर बेतरतीब मूंछ और उभड़ी सी भवों के बीच जो मामूली आँखें थी वे कितनी सूक्ष्मदर्शी, पारदर्शी थी, इसका पता तब लगता है जब हम उसके पात्रों पर विचार करते हैं।"

'बर्नार्ड शा' में आत्मचित्र है, उसमें से ही एक रेखाचित्र इस प्रकार है,

"फटे जूते, छेदवाला पजामा, समय के थपेड़ों के कारण काले

से हरा बन गया लम्बा कोट, कैंची से काटकर सर किया गया कालर और पुराना टोप, जिसे मैं उलटकर इसलिए पहनता कि कहीं उतारने के समय वह एक से दो न हो जाय।"

'हमारे राष्ट्रपति' संस्मरणात्मक लेख है, फिर भी उसमें कुछ भावमय चित्र हैं–

"उस दिन की उनकी सादगी और सौम्यता कुछ अजब ही छटा दिखा रही थी। लम्बा छरहरा शरीर, श्यामल मुखमंडल। उठी हुई नाक के नीचे बेतरतीब मूंछें और उसमें अगल-बगल वे दो पीली-पीली आँखें जिनसे सुनहरी किरणें फूटती सी मालूम देतीं। सिर पर ऊँचे पल्ले की गांधी टोपी, जो उनकी ऊँचाई को और भी बढ़ा रही थी। मोटी खादी का खुरदुरा कुर्ता, जिसके बटन भी ठीक से नहीं लगे थे। खादी की ही धोती, जो मुश्किल से घुटनों के नीचे पहुँच रही थी। राजेन्द्रबाबू को पहली ही बार देखा था, किन्तु उस दिन के राजेन्द्रबाबू बिहार के करोड़ों किसानों के सोलहो आने प्रतिनिधि लग रहे थे।"

"राजेन्द्रबाबू का सौम्य, शान्त व्यक्तित्व––मानो प्रशान्त और अतलान्तक सागरों के बीच एक पुल। मेरे जैसे चपल लोग, उस पुल से कभी उस सागर के तट पर, कभी इस सागर के तट पर आते-जाते रहते।"

'यूरोप के कलाकार' में लियोनार्दो द विंची, माइकेल ऐंजेलो, राबेल, तिशियन, रूबेन, रेम्ब्रांड, एलग्रेको, गोया, ब्लेक, टर्नर, औडुबन, दोमिये, माने, लाउत्रे आदि अनेक कलाकारों के छोटे-छोटे शब्द चित्र हैं।

'जो शब्दशः आचार्य थे' में आचार्य नरेन्द्रदेव जी––एक ज्योतिपुंज, ग्रहपिंड, बृहस्पति का रेखाचित्र है–

"ज्ञानी, कर्मयोगी, साधक इन तीनों आचार्य नरेन्द्रदेव के अतिरिक्त एक आचार्य नरेन्द्रदेव थे, वह थे मानव नरेन्द्रदेव। और यह मानव नरेन्द्रदेव इन तीनों आचार्य नरेन्द्रदेव से ऊपर थे···जहां सबका अबाध प्रवेश था। सबका स्वागत घनी मूंछों के नीचे की अमंद मुस्कराहट से होता था, सबकी कुशल-वार्ता झुर्रीदार चेहरे पर सतत खेलने वाले उल्लास से पूछी जाती थी। वहां विद्यार्थी आते थे, राज्य-कर्मचारी आते थे, मिनिस्टर आते थे, कवि आते थे, लेखक आते थे, नेता आते थे, किसान आते थे, मजदूर आते थे···

और सबके लिए एक-सा सरल, निष्कपट, निश्छल निबटारा।

क्या कोई उस दरबार से निराश लौटा ? जिसे कुछ न मिला, जिसे कुछ खोना पड़ा, उसने भी अनुभव किया, वह जो मांगने आया था, उससे भी अधिक उसे मिल गया, जो खो दिया, उससे अधिक वह पा गया। बातबात में चुहल, बातबात में विनोद। कड़वे घूंट भी मिसरी में घुले। वहां से मुहर्रमी चेहरे भी मुस्कराहट लिये निकलते।"

'कोई सुखी नहीं' आन्द्रे मावरोई की आत्मकथा है। **'विनोबा के साथ दो दिन'** संस्मरणात्मक लेख है। **'कथा के जादूगर'** में विश्वप्रसिद्ध दो उपन्यासकारों के लघुचित्र हैं, जैसे--

बालजाक--"वह मानो प्रकृति की एक अदम्य शक्ति था--एक ऐसी नदी जो घहराती, कगारों को ढहाती और हर चीज को बहाती चलती है--एक ऐसी आंधी, जो गांवों को झकझोरती और शहरों को चर्रमर्र करती बढ़ती जाती है।"

'दीवाली फिर आ गई सजनी' में जयप्रकाश नारायण तथा उनके साथियों का कारागार से भागने का रोचक वर्णन है। **'रोटी और शराब'** में यूरोप की तरुण पीढ़ी के लेखक--'सिलोन' की सुन्दरतम कृति 'ब्रेड ऐंड वाइन' का परिचय है। लेखक को यूरोप यात्रा में पेरिस में सिलोन से साक्षात्कार करने का अवसर भी मिला था, उनका एक शब्द-चित्र इस प्रकार है,

"मंझोला कद, भरा-पूरा शरीर, चौड़ा ललाट, पतली नाक, चमकती आंखें और गेहुंआ चेहरा। बालों में अस्त-व्यस्तता, सफाचट दाढ़ी पर सघन मूंछें। पोशाक में ढीला-ढालापन और मैं कहूं, चाल में भी कुछ खोया-खोयापन का भाव।"

'एक भारतीय आत्मा' में माखनलाल चतुर्वेदी का संस्मरणात्मक रेखाचित्र है।

'भूख और कला' में यूरोप के प्रसिद्ध तिरस्कृत कलाकार वान गौग का चित्रण है।

'एक साहित्यिक सन्त में' शिवपूजन सहाय जी का रेखाचित्र है। इसका एक अंश इस प्रकार है--

"गोरा-चिट्टा चेहरा, घुंघराले काले बाल उनकी शोभा और आभा द्विगुणित कर रहे थे। बालों को इस तरह संवारते कि उनका एक गुच्छा चमचमाते ललाट पर लटका होता। रसीली आंखें, जो हंसी में सदा उनके होठों से प्रतिद्वंद्विता करतीं। बहुत लोगों को पान खाते या चबाते देखा है, किन्तु शिवजी के होंठों पर पान की जैसी

लाली खिलती, वैसी दूसरों के होंठों पर खिलती, बहुत कम पाई है। बातें करते-करते खिलखिलाकर हंस पड़ते, ताम्बूल-रंजित उनकी दंतपंक्ति कौंध उठती। कितने चुटकुले याद, कितनी कविताएं कंठस्थ। संध्या को किसी-न-किसी मित्र के घर चण्डाल चौकड़ी जुटती, भंग छनती, मिठाइयां उड़तीं। फिर हम लोग काव्य-गंगा में अवगाहन करने लगते। शाम को जो बैठते तो आधी रात के बाद ही उठते। एक दिन हम छत पर बैठे थे। लगता था, काव्य-गंगा आकाश-गंगा से जा मिली हो!"

'कोई हंसना इनसे सीखे' में पं. जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी का रेखाचित्र द्रष्टव्य है—

"प्रकृति ने उन्हें ऐसा रूप दिया था, जिस पर हँसी वैसी ही खिलती थी, जैसी कुमुद-वन में शरद की शुभ्र चांदनी खिलती है। गोरा-चिट्टा चेहरा, सजे-संवारे बाल, सिर पर कलंगीदार मुरेठा, पतली भँवों के नीचे हंसती हुई आंखें, उन पर सुनहले फ्रेम का चश्मा, काली मूंछें, पंक्तिबद्ध चौकोर, चमकीले दाँत, छोटी ठुड्डी—मैंने १६१८ में, जबकि वह बिहार-प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रथम अधिवेशन का सभापतित्व कर रहे थे, उन्हें इस रूप में देखा था।"

कलाकारों, साहित्यकारों, राजनीतिज्ञों आदि पर लिखे गये ये रेखाचित्र वस्तुतः हिन्दी साहित्य के इतिहास में 'मील का पत्थर' सिद्ध हुए हैं। 'कल्पतरु' के काल्पनिक नाम से 'झोंपड़ी से महल' में सात स्केच हैं।

बेनीपुरी जी की भाषा-शैली का रसास्वादन पाठक उपर्युक्त दिये गये अनेक उद्धरणों से कर चुके होंगे। उनकी भाषा-शैली पर माचवे जी का यह उद्धरण यथार्थतः सत्य है,

"बेनीपुरी जी की भाषा-शैली में भावोद्रेक के साथ, आवश्यक बिखरन के साथ ही शब्दों और वाक्य खण्डों का संयत, गठा हुआ प्रयोग एक अनूठी व्यंजना निर्माण करता है। —— कहीं-कहीं अतिभावुकता से शब्दों का और विराम-चिह्नों का अतिरंजित उपयोग करते हैं।"

(**'हिन्दी निबन्ध'** से)

आपके रेखाचित्रों में स्थान-स्थान पर उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का तो प्रयोग काव्य की तरह हुआ है। कुछ अप्रस्तुत योजनाएँ सर्वथा मौलिक हैं, जैसे,

'चतुर्दशी का चाँद अपनी चाँदी का थैला लिये, मानो दान के उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा में है।'

('यह और वह' लाल तारा से)

रेखाचित्र को इतने साज-संवार के साथ गढ़कर कोई दूसरा व्यक्ति नहीं रखता। शैलियां बदलती रहती हैं, कहीं संस्मरणात्मकता, कहीं नाटकीयता और कहीं डायरी, पर भाषा सर्वत्र सहज फुदकती चलती है जिसमें छोटे-छोटे भाव-भीने वाक्य पाठकों को मुग्ध किये रहते हैं। बेनीपुरी जी ने चतुर पारखी जौहरी की भाँति यत्र-तत्र जहाँ कहीं भी पात्र मिले उनमें अपनी कुशल लेखनी से पात्र का चित्र खड़ा कर दिया। विषय की जितनी विविधता और शैली का जितना अद्‌भुत चमत्कार बेनीपुरी जी में मिलता है उतना अन्यत्र नहीं, तब ही तो रेखाचित्र विधा में निष्णात पं. बनारसीदास चतुर्वेदी जैसे वरिष्ठ साहित्यकार को भी उनका लोहा स्वीकार करते हुए लिखना पड़ा,

"यदि हमसे प्रश्न किया जाय कि आजकल हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ शब्द-चित्रकार कौन है, तो हम बिना किसी संकोच के बेनीपुरी का नाम उपस्थित कर देंगे।"

इस विधा के दूसरे वरिष्ठ लेखक तथा आलोचक प्रो. प्रकाशचन्द्र गुप्त ने भी स्वीकार किया है कि "हिन्दी-साहित्य में रेखाचित्र को प्रतिष्ठित करने का श्रेय श्री बेनीपुरी को मिलना चाहिए।"

महादेवी वर्मा

छायावादी काव्य-धारा में रहस्यवादी कवयित्री महादेवी वर्मा का उल्लेखनीय स्थान है। आपने अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए काव्य तथा चित्र दोनों ही माध्यमों को अपनाया है। दीपशिखा, यामा तथा नीरजा में उनके अच्छे काव्यात्मक चित्र हैं, साथ ही दीपशिखा में चित्र भी हैं जिन पर आधारित कविताएँ हैं। यह नहीं कहा जा सकता कि कौन-सा माध्यम पहले उद्‌भूत हुआ। दीपशिखा में चित्रों की प्रधानता है और यह कृति हिन्दी साहित्य की अन्यतम कृति है।

चित्र काव्य के पूरक हैं, जो भाव कविता में स्पष्ट नहीं होता वह चित्र के माध्यम से स्पष्ट किया जाता है। महादेवी की प्रतिभा में कविता और चित्रकला का अपूर्व समन्वय है, इस पर विचार करते हुए डा. जगदीश गुप्त ने लिखा है,

"चित्र में जैसे जीवन की सम्पूर्णता एक स्थान पर तराश दी जाती है और कविता में जैसे उसे शब्दों में कसकर बाँध दिया जाता है। चित्र समय की गति रोककर क्षण को जीवन-दान देता है। कविता स्थिर हुई स्मृतियों को गति देकर अनेक क्षणों की अनुभूति को एक साथ गूंथ देती है। चित्र में जो कुछ होता है सब स्थिर होता है और कविता में जो भी होता है, सब गतिशील। चंचल होते ही चित्र नष्ट हो जाता है और स्थिर होते ही कविता।...कविता मनोभावनाओं को शब्दों में रख देती है

परन्तु एक चित्रकार के लिए उनकी रंग-रेखाओं में परिणति अनिवार्य है और यह असम्भव है कि हर अनुभूति और हर वस्तु रंग-रेखा का रूप रख ही ले। कोई भी काव्यात्मक वर्णन हमें चित्र की अनुभूति नहीं दे सकता और कोई भी चित्रात्मक भाव हमें कविता के रूप में नहीं प्राप्त हो सकता।...'भाव-लावण्य-योजनम्' के सहारे ही हम कविता तथा चित्र को एक भूमि पर उतार सकते हैं। भावों की अभिव्यक्ति चित्र में रहती है और कविता में भी और सौन्दर्य की अपेक्षा भी दोनों को ही है।...कविता एक शृंखला है, एक माला है और चित्र शृंखला की मुख्यतम कड़ी है, माला का सुमेरु है।"

(**'भारतीय कला के पद-चिह्न'** से, पृष्ठ ४५-४६ तथा आगे)

महादेवी जी कुशल चित्रकर्त्री होने के कारण अच्छे रेखाचित्र लिखने में भी निपुण हैं, फिर रेखाचित्र लिखने की कला चित्रकला से ही प्राप्त हुई। टेढ़ी-मेढ़ी रेखाओं के माध्यम से हम किसी पात्र का बाह्य रेखांकन करना चाहते हैं। गीतों तथा चित्रों में जहाँ आपने सामंजस्य उपस्थित किया है वहाँ रेखाचित्रों में काव्यात्मकता आ गई है।

कुछ लोग रेखाचित्र-कला की तुलना फ़ोटोग्राफी की कला के साथ भी करते हैं। मुख की भाव-भंगिमा, वेश-भूषा, नाक-नक्शा जैसे फोटोग्राफर हू-ब-हू प्रस्तुत कर देता है वैसी ही फोटो, रेखाचित्रकार भी। रेखाचित्रकार को सहृदय होना आवश्यक है तब ही तो उसके हृदय में पात्रों के प्रति सहानुभूति प्रकट हो सकेगी। फिर ये चित्र तस्वीर मात्र नहीं हैं, अनुभूति की गहराइयाँ हैं।

चित्र में छाया-आलोक, दृश्य-विधान, रेखा तथा रंग का महत्त्व है। महादेवी जी स्वयं स्वीकार करती हैं कि 'कलाओं में चित्र ही काव्य का अधिक विश्वस्त सहयोगी होने की क्षमता रखता है।' चित्र में रेखाओं की प्रधानता होती है सापेक्षिक दृष्टि से भी शैली से अधिक रेखा का महत्त्व है। कभी-कभी रंगों के मिश्रण से भी उतना वांछित प्रभाव नहीं पड़ता जितना रेखाओं से। रेखाओं की प्रशंसा तो आचार्यगण भी करते हैं (रेखां संशन्त्याचार्याः)। उनके गीतिकाव्य में आत्मानुभूति की प्रधानता है और रेखाचित्रों में समाज को प्रधानता दी गई है।

अब तक रेखाचित्र बड़े-बड़े राष्ट्रीय नेताओं तथा महापुरुषों के ही खींचे जाते थे, पर महादेवी जी ने समाज के निम्न वर्ग में से अपने पात्र लिये हैं जो उनकी लेखनी का आश्रय पाकर अमर हो गये हैं। इन रेखाचित्रों में उनके पात्र रामा, भक्तिन आदि कम बोलते हैं, लेखिका द्वारा किया गया पात्रों का रेखांकन अधिक मुखर है।

आपके रेखाचित्रों में 'स्मृतिचित्र' तथा 'संस्मरण' दोनों समाहित हो जाते हैं।

वस्तुतः आपने अधिकांशतः संस्मरणात्मक शैली में ही रेखाचित्र अधिक लिखे हैं जिनको बहुत से आलोचक भ्रमवश 'संस्मरण' मात्र मान लेते हैं। आपके रेखाचित्रों पर टिप्पणी करते हुए डा. ब्रजमोहन गुप्त लिखते हैं,

"लेखिका का निरीक्षण इतना सूक्ष्म और संवेदना का रंग इतना गहरा और उज्ज्वल है कि स्मृति में जो रेखाएँ मात्र थीं, कागज पर उतर कर उनसे करुणा और व्यंग्य-हास्य के छायाप्रकाश में हँसते-खेलते, उच्चतम मानवीय तत्त्वों से अनुप्राणित स्पन्दनशील चित्र बन गये हैं।

(समालोचक, मार्च ५९ के अंक से)

आलोचकों ने लेखिका द्वारा लिखित रेखाचित्र साहित्य में निम्नलिखित कृतियाँ मानी हैं,

१. अतीत के चलचित्र (१९४१)

२. शृंखला की कड़ियाँ (१९४२), इस कृति को रेखाचित्र साहित्य में सम्मिलित नहीं किया जा सकता।

३. स्मृति की रेखाएँ

४. पथ के साथी (१९५६)

इस प्रकार तीन संग्रह—अतीत के चलचित्र, स्मृति की रेखाएं, पथ के साथी ही हमारे विवेच्य ग्रन्थ हैं जिन पर पृथक्-पृथक् विवेचन अपेक्षित है। मेरी दृष्टि में उनकी काव्य-कृतियां तथा निबन्ध साहित्य की अपेक्षाकृत ये संस्मरणात्मक रेखाचित्र अधिक लोक-प्रिय हुए हैं। हास्य-व्यंग्य से भरे हुए ये जीवन-चित्र अधिक सरस तथा रोचक बन गये हैं और पाठक इनमें अधिक रस का अनुभव करता है।

अतीत के चलचित्र (१९४१)

महादेवी जी के संस्मरणात्मक रेखाचित्रों का पहला संग्रह 'अतीत के चलचित्र' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। पुस्तक को अनेक विद्वानों ने 'संस्मरण' मात्र स्वीकार किया है, वस्तुतः महादेवी जी की कृतियों में संस्मरण के साथ रेखाचित्र का 'धूप छाँह' जैसा मिश्रण है। पुस्तक की भूमिका 'अपनी बातों' के अन्तिम परिच्छेद में महादेवी ने स्वयं स्वीकार किया है—

"प्रस्तुत संग्रह में ग्यारह संस्मरण-कथाएं जा सकी हैं। उनसे पाठकों का सस्ता मनोरंजन हो सके, ऐसी कामना करके मैं इन क्षत-विक्षत जीवनों को खिलौनों की हाट में नहीं रखना चाहती। यदि इन अधूरी रेखाओं और धुंधले रंगों की समष्टि में किसी को अपनी छाया की एक रेखा भी मिल सके, तो वह सफल है, अन्यथा

अपनी स्मृति की सुरक्षित सीमा से इसे बाहर लाकर मैंने अन्याय ही किया है ।"

इस अनुच्छेद से तीन बातें स्पष्ट हो जाती हैं—

१. लेखिका इनको 'संस्मरण कथाएं' कहना चाहती है ।

२. इनमें 'रेखाओं और रंगों' का प्रयोग किया गया है ।

३. इनको 'स्मृति की सुरक्षित सीमा' से बाहर लाया गया है ।

इन तथ्यों के आधार पर इनको क्रमशः कहानी, रेखाचित्र तथा संस्मरण कहा जा सकता है । 'कहानी-कला' का आवश्यक अंग कल्पना तत्त्व है जिसके अभाव में प्रसिद्ध आलोचक शान्तिप्रिय द्विवेदी इन्हें कहानी नहीं मानते ।

रेखाचित्र स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं । पुस्तक के शीर्षक में 'चलचित्र' का प्रयोग है, साथ ही लेखन-विधि में लेखिका ने स्वीकार किया है,

"सन् १६३० में उसी भृत्य को देखकर मुझे अपना बचपन और उसे अपनी ममता से घेरे हुए रामा इस तरह स्मरण आये कि अतीत की अधूरी कथा लिखने के लिए मन आकुल हो उठा । फिर धीरे-धीरे रामा का परिवार बढ़ता गया और अतीत-चित्रों में वर्तमान के चित्र भी सम्मिलित होते गये ।"

इस प्रकार इनको रेखाचित्र कहना ही अधिक समीचीन प्रतीत होता है, निस्सन्देह आधार-भूमि 'संस्मरणात्मक' है । महादेवी ने अतीत के अंतस् में प्रवेश करके बिखरे हुए पात्रों में से क्रूड सामग्री संचित कर इस सरसता के साथ सहज रूप में प्रस्तुत कर दिया है ।

इस संग्रह में ११ शब्द-चित्र हैं जिनमें दीन-हीन, पीड़ित, विवश, परित्यक्त, समाज से प्रताड़ित पात्रों की जीवन-कथाएं हैं, जिनमें महादेवी जी को अपनी जीवन-गाथा भी दिखाई दी । ये उनकी 'अक्षय ममता के पात्र रहे हैं ।'

कहानी के लिए कल्पना का आश्रय आवश्यक है, जिसको महादेवी जी ने स्वीकार नहीं किया है—

"इन स्मृति-चित्रों में मेरा जीवन भी आ गया है । यह स्वाभाविक भी था । अंधेरे की वस्तुओं को हम अपने प्रकाश की धुंधली या उजली परिधि में लाकर ही देख पाते हैं, उसके बाहर तो वे अनन्त अन्धकार के अंश हैं । मेरे जीवन की परिधि के भीतर खड़े होकर चरित्र जैसा परिचय दे पाते हैं, वह बाहर रूपान्तरित हो जायेगा । फिर जिस परिचय के लिए कहानीकार अपने कल्पित पात्रों को वास्तविकता से सजाकर निकट लाता है, उसी परिचय के लिए मैं अपने पथ के साथियों को **कल्पना का परिधान पहनाकर दूरी की सृष्टि क्यों करती !** परन्तु मेरा निकटता-जनित आत्म-विज्ञापन उस राख में अधिक महत्त्व नहीं रखता, जो आग को बहुत

समय तक सजीव रखने के लिए ही अंगारों को घेरे रहती है। जो इसके पार नहीं देख सकता, वह इन चित्रों के हृदय तक नहीं पहुंच सकता।"

(अतीत के चलचित्र, पृष्ठ ८ से)

इन शब्द-चित्रों में ४ नायक-प्रधान चित्र हैं,

रामा—स्नेहवत्सल सेवक है, श्रमजीवी वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है, साथ ही कुरूप है।

घीसा—गुरुभक्त है साथ ही दीन-हीन है।

अलोपी—कुंजड़ा है साथ ही नेत्रहीन है।

बदलू—कुम्हार है।

शेष सभी सात रेखाचित्र नायिका-प्रधान हैं, जिनमें से मुख्य-मुख्य ये हैं,

बिन्दी—

बिट्टो—बाल-विधवाएँ हैं।

सबिया—मेहतरानी है।

रधिया—कुम्हारिन है।

लक्ष्मी—कर्मठ पहाड़िन नौकरानी है।

एक (१९२०)

पहला रेखाचित्र एक घरेलू ग्रामीण नौकर 'रामा' का है। अपनी विमाता के अत्याचारों से परेशान रामा इन्दौर से भागकर भूख-प्यास से व्याकुल अवस्था में मालकिन को मिलता है। घरेलू नौकर होने के नाते वह घर में घुल-मिल जाता है, कालान्तर में उसका विवाह भी हो गया और बहू भी उसके साथ रहने लगी।

महादेवी जी ने पात्रों की बाह्य आकृति, वेशभूषा और क्रियाकलापों का सूक्ष्म वर्णन किया है। एक पंक्ति में रामा का परिचय इस प्रकार है,

"नाटे, काले और गठे शरीरवाले रामा के बड़े नखों से लम्बी शिखा तक हमारा सनातन परिचय था।"

बाह्य आकृति

"रामा के संकीर्ण माथे पर की खूब घनी भौंहें और छोटी-छोटी स्नेहतरल आँखें कभी-कभी स्मृति-पट पर अंकित हो जाती हैं और कभी धुंधली होते-होते एकदम खो जाती हैं। किसी थके झुंझलाये शिल्पी की अन्तिम भूल जैसी अनगढ़ मोटी नाक, सांस के प्रवाह से फैले हुए-से नथुने, मुक्त हंसी से भरकर फूले हुए-से ओठ तथा काले

पत्थर की प्याली में दही की याद दिलाने वाली सघन और सफेद दन्त-पंक्ति के संबंध में भी यही सत्य है।"

बालों के वर्णन में हास्य का भी पुट है,

"रामा के बालों को तो आध इंच से अधिक बढ़ने का अधिकार ही नहीं था, इसी से उसकी लम्बी शिखा को साम्य की दीक्षा देने लिए हम कैंची लिये घूमते रहते थे। पर वह शिखा तो म्याऊँ का ठौर थी, क्योंकि न तो उसका स्वामी हमारे जागते हुए सोता था और न उसके जागते हुए हम ऐसे सदनुष्टान का साहस कर सकते थे।"

रामा कुरूप था। उसकी वेश-भूषा इस प्रकार थी,

"केवल एक मिर्जई और घुटनों तक ऊँची धोती पहन कर अपनी कुडौलता के अधिकांश की प्रदर्शिनी करता रहता था।"

आन्तरिक चित्र

"वास्तव में, जीवन सौन्दर्य की आत्मा है; पर वह सामंजस्य की रेखाओं में जितनी मूर्तिमत्ता पाता है, उतनी विषमता में नहीं। जैसे-जैसे हम बाह्य रूपों की विविधता में उलझते जाते हैं, वैसे-वैसे उनके मूलगत जीवन को भूलते जाते हैं। बालक स्थूल विविधता से विशेष परिचित नहीं होता, इसी से वह केवल जीवन को पहचानता है। जहाँ से जीवन के स्नेह-सद्भाव की किरणें फूटती जान पड़ती हैं, वहाँ वह व्यक्त विषम रेखाओं की उपेक्षा कर डालता है और जहाँ द्वेष, घृणा आदि के धूम से जीवन ढका रहता है, वहाँ वह बाह्य सामंजस्य को भी ग्रहण नहीं करता।"

रामा की कुरूपता का आवरण भेदकर उनकी सहानुभूति ने जिस सरल हृदय को परख लिया, उसमें अक्षय सौन्दर्य न होगा, ऐसा सन्देह उनके लिए असम्भव था।

"रामा की पृष्ठभूमि में लेखिका के बाल्यकाल की जैसी मनोरम झाँकी इन्द्रधनुषी रंगों और शिष्ट मार्मिक हास्य की विद्युच्छटा लेकर झलक उठती है, बाल्यकाल की वैसी झाँकी रवीन्द्र की आत्मकथा 'मेरा बचपन' के अतिरिक्त अन्यत्र दुर्लभ है।"

(डा. ब्रजमोहन गुप्त)

काव्यात्मक चित्र उपस्थित करने के लिए नवीन उपमाएँ ग्रहण की हैं जैसे,

हथेली——साँप के पेट जैसी सफेदी

उँगलियाँ——पेड़ की टेढ़ी-मेढ़ी गाँठदार टहनियाँ

रामा के क्रियाकलाप का चित्र इस प्रकार है—

> "रामा सबेरे ही पूजा-घर साफ कर वहाँ के बर्तनों को नीबू से चमका देता-तब वह हमें उठाने जाता। उस बड़े पलंग पर सबेरे तक हमारे सिर-पैर की दिशा और स्थितियों में न जाने कितने उलट-फेर हो चुकते थे, किसी की गर्दन को किसी का पाँव नापता रहता था, किसी के हाथ पर किसी का सर्वांग तुलता होता था— ।"

लेखिका ने स्थान-स्थान पर आलंकारिक शैली को भी अपनाया है—

> "रामा के हाथ की चक्रव्यूह जैसी उँगलियों में मेरा सिर अटका रहता था और उसके दूसरे हाथ की तीन गहरी रेखाओं वाली हथेली सुदर्शन चक्र के समान मेरे मुख पर मलिनता की खोज में घूमती रहती थी।"

इस शब्द-चित्र का अन्तिम अंश इस प्रकार है—

> "आज मैं इतनी बड़ी हो गई हूँ कि राजा भइया कहलाने का हठ स्वप्न-सा लगता है, बचपन की कथा-कहानियाँ कल्पना-जैसी जान पड़ती हैं और खिलौनों के संसार का सौन्दर्य भ्रान्ति हो गया है, पर रामा आज भी सत्य है, सुन्दर है और स्मरणीय है। मेरे अतीत में खड़े रामा की विशाल छाया वर्तमान के साथ बढ़ती ही जाती है— निर्वाक, निस्तन्द्र, पर स्नेहतरल।"

दो (१९३३)

दूसरा रेखाचित्र पारिवारिक अत्याचारों से पीड़ित और उपेक्षापूर्ण वातावरण में मूक रहकर साथ ही घुटघुटकर जीवन घुला देने वाली बाल-विधवा का चित्रण है। बाल-विधवा की करुण आँखों से ही उसकी समस्त वेदना व्यक्त हो जाती है। जिस कमरे में वह रहती है उसमें कोई झरोखा छोड़ रोशनदान भी नहीं, घर से बाहर जाने की अनुमति नहीं।

घर का सारा काम भी उसे ही करना पड़ता है, जैसे ससुर के स्नान के लिए पानी खींचना, घर के ढ़ेर सारे कपड़ों को धोना, बर्तन साफ़ करना आदि।

उसकी बाह्य आकृति इस प्रकार है—

> "छोटे गोल मुख की तुलना में कुछ अधिक चौड़ा लगने वाला, पर दो काली रूखी लटों से सीमित ललाट, बचपन और प्रौढ़ता को एक साथ अपने भीतर बन्द कर लेने का प्रयास-सा करती हुई,

लम्बी बरौनियोंवाली भारी पलकें और उनकी छाया में डबडबाती हुई-सी आँखें, उस छोटे मुख के लिए भी कुछ छोटी-सीधी नाक और मानों अपने ऊपर छपी हुई हँसी से विस्मित होकर कुछ खुले रहनेवाले ओठ समय के प्रवाह से फीके भर हो सके हैं, धुल नहीं सके ।"

"घर के सब उजले-मैले, सहज-कठिन कामों के कारण, मलिन रेखा-जाल से गुंथीं और अपनी शेष लाली को कहीं छिपा रखने का प्रयत्न-सा करती हुई, कहीं कोमल, कहीं कठोर हथेलियाँ, काली रेखाओं में जड़े कान्तिहीन नखों से कुछ भारी जान पड़ने वाली पतली उँगलियाँ, हाथों का बोझ सँभालने में भी असमर्थ-सी दुर्बल, रूखी पर गौर बांहें और मारवाड़ी लहँगे के भारी घेर से थकित-से, एक सहज-सुकुमारता का आभास देते हुए, कुछ लम्बी उँगलियों वाले दो छोटे-छोटे पैर, जिनकी एड़ियों में आँगन की मिट्टी की रेखा मटमैले महावर-सी लगती थी, भुलाए भी कैसे जा सकते हैं ! उन हाथों ने बचपन में न जाने कितनी बार मेरे उलझे बाल सुलझा कर बड़ी कोमलता से बाँध दिये थे । वे पैर न जाने कितनी बार, अपनी सीखी हुई गम्भीरता भूल कर मेरे लिए द्वार खोलने, आँगन में एक ओर से दूसरी ओर दौड़े थे ।"

तीन (१९३४)

तीसरा चित्र उस निरीह तथा अबोध बालिका बिन्दा का है जिसकी अवस्था पींजड़े में बन्द चिड़िया की तरह है और जो विमाता के दुर्व्यवहार तथा अत्याचारों से दुःखी है । सौतेली माँ प्यार करने के बजाय मारती है, हमेशा अपनी माँ के मुंह से उसे सुनना पड़ता है, 'उठती है या आऊँ', 'बैल के-से दीदे क्या निकाल रही है ।' 'अभागी मरती भी नहीं ।'

"मैली-कुचैली धोती पहनकर सारा दिन काम में जुटे रहना—झाड़ू देना, आग जलाना, नल से पानी लाना, दूध का कटोरा देने जाना—ही धर्म है ।"

इस रेखाचित्र में ही बिन्दा की नयी अम्मा का रेखाचित्र भी सुन्दर है,

"वे अपनी गोरी, मोटी देह को रंगीन साड़ी से सजे-कसे चारपाई पर बैठकर, फूले गाल और चिपटी-सी नाक के दोनों ओर काँच के बटन-सी चमकती हुई आँखों से युक्त मोहन को तेल मलती रहती थीं । उनकी विशेष कारीगरी से सँवारी पाटियों के बीच में

लाल स्याही की मोटी लकीर सा सिन्दूर, उनींदी-सी आँखों में काले डोरे के समान लगने वाला काजल, चमकीले कर्णफूल, गले की माला, नगदार, रंग-बिरंगी चूड़ियाँ और घुंघरूदार बिछुए मुझे बहुत भाते थे, क्योंकि यह सब अलंकार उन्हें मेरी गुड़िया की समानता दे देते थे।'

बिन्दा के करुण जीवन की झांकी

"उसे अपराध का ही नहीं, अपराध के अभाव का भी दण्ड सहना पड़ता था, इसी से पंडित जी की थाली में पंडिताइन चाची का ही काला मोटा और घुंघराला बाल निकलने पर भी दण्ड बिन्दा को मिला। उसके छोटे-छोटे हाथों से धुल न सकने वाले, उलझे, तेलहीन बाल भी अपने स्वाभाविक भूरेपन और कोमलता के कारण मुझे बड़े अच्छे लगते थे। जब पंडिताइन चाची की कैंची ने उन्हें कूड़े के ढेर पर बिखरा कर, उनके स्थान को बिल्ली की काली धारियों जैसी रेखाओं से भर दिया, तो मुझे रुलाई आने लगी ; पर बिन्दा ऐसे बैठी रही, मानों सिर और बाल दोनों नयी अम्मा के ही हों।"

चौथा (१९३५)

निम्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करने वाले रेखाचित्रों में से यह उल्लेखनीय है। इसमें निम्नवर्ग की सबिया का चित्रण है जो अशिक्षित और पीड़ित होते हुए भी बलिदान में विश्वास करती है। दलित समाज की नारी का प्रतिनिधित्व करती है उपेक्षित सबिया। सबिया का पति उसे प्रसव काल में छोड़कर बिना बताये कहीं चला गया था, पूछताछ करने पर ज्ञात हुआ कि वह अपने जाति भाई की नयी वधू को लेकर न जाने कहाँ चला गया। कुछ दिनों बाद मैकू (सबिया का पति) तो लौट आता है पर अकेला नहीं, गेंदा को भी साथ ले आता है।

सबिया के नाम की व्याख्या

"सबिया न शबनम का संक्षिप्त है न शबरात का। वह तो हमारे पौराणिक सावित्री का अपभ्रंश है, पर सच कहें तो कहना होगा कि या तो हमारे उदार आर्यत्व ने दयार्द्र होकर ही हरिजनों में निकृष्टतम जीव को, इस संज्ञा की छाया में पवित्र होने की अनुमति दे डाली या सबिया के, परंपरा के अनुसार स्वर्गगत, परन्तु यथार्थ में नरकगत

माता-पिता चतुर पाकेटमार के समान सबकी आंख बचाकर इस नामनिधि को उड़ा लाये और इसे अपना बनाने के लिए इतना काटा-छांटा कि अब इस पर किसी का अधिकार प्रमाणित करना कठिन हो गया है।"

सबिया के रेखाचित्र

"उसका मुख चिकनी काली मिट्टी से गढ़ा जान पड़ता था, परन्तु प्रत्येक रेखा में सांचे की वैसी ही सुडौलता थी, जैसी प्रायः पेरिस प्लास्टर की मूर्तियों में देखी जाती है। आंखों की गढ़न लम्बी न होकर गोल-मोल होने के कारण उनमें मेले में खोये बच्चे जैसी सभय चकित दृष्टि थी। हाथ-पैर में मोटे-मोटे चमकहीन गिलट के कड़े उसे कैदी की स्थिति में डाल देते थे। कुछ कम चौड़े ललाट पर जुड़ी भौहों के ऊपर लगी पीली कांच की टिकुली में जो शृंगार था, वह भटकटैया के फूल से घूरे के शृंगार का स्मरण दिलाता था। कभी लाल, पर अब पुराने घड़े के रंगवाली धोती में लिपटी सबिया ऐसी लगी, मानो किसी अपटु शिल्पी की सयत्न गढ़ी मिट्टी की मूर्ति हो, जिसके सब कच्चे रंग धुल गये हैं और जहां-तहां से केवल सुडौल रेखाओं में बंधी मिट्टी झांकने लगी है।"

कर्तव्यनिष्ठा सबिया को लक्ष्य करके एक परिचित वकील-पत्नी ने कहा, 'आप चोरों की औरतों को क्यों नौकर रख लेती हैं?' तब उनकी अभिव्यक्ति व्यंग्यात्मक हो उठी है। उनकी तीक्ष्ण तथा उग्र व्यंग्य बाण की मार से कौन नहीं तिलमिला जायेगा, 'यदि दूसरे के धन को किसी-न-किसी प्रकार अपना बना लेने का नाम चोरी है, तो मैं जानना चाहती हूं कि हम में से कौन सम्पन्न महिला चोर पत्नी नहीं कही जा सकती?'

पांच (१९३५)

इस रेखाचित्र में बाल विधवा बिट्टो का मार्मिक चित्रण है, जिस बेचारी को पुनः गृहस्थी चलाने के लिए ५४ वर्षीय वृद्ध बाबा के गले बांध दिया गया। तीन भाइयों की अकेली बहिन होने के नाते बिट्टो विशेष लाड़ प्यार में पली थी, वैधव्य भी अनजाने में ही हो गया था। बड़े होने पर भाभियों के ताने सुनने पड़ते।

'विधवा-विवाह' के नारे के साथ बिचारी बिट्टो का विवाह एक बूढ़े बाबा से कर दिया जाता है जिसका बिट्टो ने बहुत विरोध किया, पर परोपकार के बल पर उसकी बलि चढ़ा दी गई। उस वृद्ध की दो पत्नियां पहले से ही मर चुकी थी, इस बार वह स्वयं कुछ वर्ष बाद चलता बना। बिट्टो फिर अन्धकारमय जीवन बिताने के लिए अकेली रह गई।

वृद्ध महोदय की स्त्री का बाह्य चित्रण

"वह मुझे बहुत दुर्बल, कृश और रोगिणी-जैसी जान पड़ी। एक सोने की नयी जंजीर उसकी दुबली, सूखी, उभरी हड्डियों से सीमित और झुर्रियोंदार रक्तहीन चर्म से मढ़ी गर्दन का उपहास कर रही थी। कुछ पुरानी गढ़न के इयरिंग झांईदार सूखे और चिपके कपोलों पर व्यंग से लगते थे। आंखें बड़ी थीं, पर उस सूखे मुख और रूखी पलकों में ऐसी जान पड़ती थीं, मानो ऊपर से रख दी गई हों और पलक मारते ही निकल पड़ेंगी। नीचे के दो दांत कदाचित् गिरने से टूट गये थे, क्योंकि एक पूरा अदृश्य था और आधा दिखाई दे रहा था।"

"टसर की मटमैली साड़ी में लिपटी उस संकुचित मूर्ति में न रूप था, न स्वास्थ्य, न कोई उमंग शेष थी, न उल्लास।"

समाज पर करारा व्यंग्य

"जिस समाज में ६४ वर्ष का व्यक्ति १४ वर्ष की पत्नी चाहता है, वहां ३२ वर्ष की बिट्टो के पुनर्विवाह की समस्या सुलझा लेना टेढ़ी खीर थी। उसके भाग्य में ही १५० वर्ष की पूर्णायु वाला कोई पुरुष न मिला और उसके जन्म-जन्मान्तर के अखण्ड पुण्य-फल से हमारे ६४ वर्ष के बाबा ने उसके उद्धार का बीड़ा उठाया।"

"एक दूसरा अंश इस प्रकार है, 'मनु महाराज जो कह गये हैं, उसे असत्य प्रमाणित कर कुम्भीपाक में विहार करने की इच्छा न हो, तो यह कहना ही पड़ेगा कि बिट्टो तीसरे विवाह की इच्छा को हृदय के किसी निभृत कोने में छिपाये हुए है और उसके उद्धार के लिए निरन्तर कटिबद्ध वृद्ध परोपकारियों की, इस पुण्यभूमि में और विशेषकर इस जाग्रत-युग में कमी नहीं हो सकती।"

छह (१९३५)

प्रस्तुत रेखाचित्र में अकाल वैधव्य की मूर्ति एक अठारह वर्षीय लड़की का कारुणिक चित्र है। मातृपितृहीन यह अभागी बालिका ग्यारहवें वर्ष में ही विधवा हो गई। किसी स्वार्थी पुरुष ने उसको फंसा लिया और छोड़ दिया, इससे दादा बहुत दुःखी हुए।

विधवा के यहाँ नया अतिथि आ गया। मां के अतिरिक्त सब उस बालक से घृणा करते, फलस्वरूप नौकरी की तलाश होती है। महादेवी जी के यहां उसे आश्रय मिलता है, "२७ वर्ष की अवस्था में मुझे १८ वर्षीय लड़की और २२ दिन के नाती का भार स्वीकार करना पड़ा।"

लेखिका से जो वृद्ध महाशय मिलने आये उनका बाह्य चित्र इस प्रकार है,

> "बचपन में मैंने कभी किसी चित्रकार का बनाया कण्व ऋषि का चित्र देखा था—वृद्ध में मानो वह सजीव हो गया था। दूध-से सफेद बाल और दूधफेनी-सी सफेद दाढ़ी वाला वह मुख झुर्रियों के कारण समय का अंकगणित हो रहा था। कभी की सतेज आंखें आज ऐसी लग रही थीं, मानो किसी ने चमकीले दर्पण पर फूंक मार दी हो। एक क्षण में ही उन्हें धवल सिर से लेकर धूल भरे पैरों तक, कुछ पुरानी काली चप्पलों से लेकर पसीने और मैल की एक बहुत पतली कोर से युक्त खादी की धुली टोपी तक देख कर कहा—आप को पहचाना नहीं।"

वृद्ध की बालिका का कारुणिक चित्र, जिसमें अनाहूत बालक की छवि इस प्रकार है,

> "दालान में ही मैली फटी दरी पर, खम्भे का सहारा लेकर बैठी हुई एक स्त्री-मूर्ति दिखाई दी, जिसकी गोद में मैले कपड़ों में लिपटा एक पिण्ड-सा था।"

सात (१९३६)

सातवें रेखाचित्र में कर्तव्यनिष्ठ घीसा की करुण गाथा है जो झूठ नहीं बोलता। सीधे-सादे स्वभाव का लड़का घीसा इस हेतु स्कूल भेज दिया गया। वह देखने में कुरूप था, दूसरे लड़के खिंचे-खिंचे रहते थे।

घीसा कर्तव्यपरायण ही नहीं आज्ञापालक भी है। गुरुजी के सफाई संबंधी भाषण सुनकर स्वयं कपड़े धोने लगा।

पानी भरने आने वाली स्त्रियों के समुदाय का चित्र इस प्रकार है,

> "इनमें कोई बूटेदार लाल, कोई निरी काली, कोई कुछ सफेद और कोई मैल और सूत में अद्वैत स्थापित करने वाली, कोई कुछ नई और कोई छेदों से चलनी बनी हुई धोती पहने रहती हैं। किसी की मोम लगी पाटियों के बीच में एक अँगुल चौड़ी सिंदूर-रेखा अस्त होते हुए सूर्य की किरणों में चमकती रहती है और किसी के कड़वे तेल से भी अपरिचित रूखी जटा बनी हुई छोटी-छोटी लटें मुख को घेर कर उसकी उदासी को और अधिक केन्द्रित कर देती हैं। किसी की साँवली गोल कलाई पर शहर की कच्ची नगदार चूड़ियों के नग रह-रहकर धीरे-से चमक जाते हैं और किसी के दुर्बल काले पहुंचे पर लाख की पीली मैली चूड़ियाँ काले पत्थर पर मटमैले चन्दन की मोटी लकीरें जान पड़ती हैं। कोई और अपने गिलट के कड़े-युक्त हाथ घड़े की ओट में छिपाने का प्रयत्न-सा करती रहती है और कोई चाँदी के पछेली-कंकना की झनकार के साथ ही बात करती है। किसी के गुदना गुदे गेहुएँ पैरों में चांदी के कड़े सुडौलता की परिधि-सी लगते हैं और किसी की फैली उंगलियों और सफेद एड़ियों के साथ मिली हुई स्याही, राँगे और काँसे के कड़ों को लोहे की साफ की हुई बेड़ियाँ बना देती है।"

घीसा का चित्र भी पठनीय है,

> "पक्का रंग, पर गठन में विशेष सुडौल, मलिन मुख, जिसमें दो पीली, पर सचेत आँखें जड़ी-सी जान पड़ती थीं। कसकर बन्द किये हुए पतले होठों की दृढ़ता और सिर पर खड़े हुए छोटे-छोटे रूखे बालों की उग्रता उसके मुख की संकोचभरी कोमलता से विद्रोह कर रही थी। उभरी हड्डियों वाली गर्दन को सँभाले हुए झुके कन्धों से, रक्तहीन मटमैली हथेलियों और टेढ़े-मेढ़े कटे हुए नाखूनों युक्त हाथों वाली पतली बाँहें ऐसी झूलती थीं, जैसे ड्रामा में विष्णु बनने वाले की दो नकली भुजाएँ। निरन्तर दौड़ते रहने के कारण उस लचीले शरीर में दुबले पैर ही विशेष पुष्ट जान पड़ते थे। बस ऐसा ही था वह, न नाम में कवित्व की गुंजाइश, न शरीर में।"

आठ (१९३७)

इसमें समाज-प्रताड़ित अभागी उस स्त्री का विवरण है जो आत्मसम्मान के

लिए जीने के हेतु सभी मुसीबतों का सामना धैर्य से करती है।

बीमार पति के इलाज के लिए उसके पास चार मासे भर प्रेम का उपहार छोड़ कुछ भी शेष नहीं। पति की प्रतिष्ठा और आत्म-सम्मान के लिए वह दान भी स्वीकार नहीं करती।

पति के मरने पर जब ससुर उसको घर में रखने को तैयार नहीं हुआ तो वह सिलाई-बुनाई करके पेट पालन करने लगी।

कितनी सूक्ष्म दृष्टि से लिखा हुआ रेखाचित्र है,.

> "गहरे काही रंग की पतली ऊनी चादर में समा न सकने के कारण वर्षा की नन्हीं-नन्हीं बूंदें ऊपर ही जड़ी-सी थीं, जो बिजली के आलोक में हीरे के चूर-सी झिलमिलाने लगीं। चादर उतारकर जब वह मेरी दृष्टि का अनुसरण करती हुई सामने की कुर्सी पर बैठ गई, तब मेरी कुछ विस्मय और कुछ जिज्ञासा-भरी दृष्टि उस मुख की रेखा-रेखा में, न जाने किस शब्द-हीन उत्तर की खोज में भटकने लगी। आँखों के आस पास लटकती हुई दो-तीन छोटी-छोटी लटों के छोरों में हिलती हुई पानी की बूंदें पारे-सी जान पड़ती थीं। सफेद साड़ी के कुछ छबीले बैंजनी किनारे से घिरा मुख सुडौल गोरा; पर बहुत मुरझाया हुआ-सा लगा। नाक के अग्र भाग की लाली हाल ही में पोंछे गये आँसुओं की सूचना दे रही थी—पलकों की कोरें भी शायद रोने से ही कुछ-कुछ सूज आयी थीं, जिनसे उनकी मर्मस्पर्शी व्यथा और भी गहरी हो उठी थी।"

नौ (१९३८)

नवें में अन्धे अलोपी की करुणामय गाथा है। अलोपी सब्जी बेचता है। अन्धा होते हुए भी कर्तव्यपरायण है। पुरुषार्थी और परिश्रमी अलोपी सबकी ममता का पात्र बन गया है। नेत्रहीन होते हुए भी उसका स्पर्शज्ञान पर्याप्त है।

स्थिति ठीक होने पर एक काछिन अलोपी के लिए स्वर्ग की रचना करने आ गयी पर कुछ ही महीनों में वह सब कुछ लेकर कहीं चली गयी। फिर भी उस अंधे की चारित्रिक दृढ़ता इस कथन से ही स्पष्ट होती है, "अपनी स्त्री की हुलिया लिखवाकर पकड़ मँगाना नीच का काम है।"

उसका चित्र इस प्रकार है—

> "धूल के रंग के कपड़े और धूल भरे पैर तो थे ही, उस पर उसके छोटे-छोटे बालों, चपटे-से माथे, शिथिल पलकों की विरल

बरुनियों, बिखरी-सी भौंहों, सूखे, पतले ओठों और कुछ ऊपर उठी हुई ठुड्डी पर राह की गर्द की एक पर्त इस तरह जम गई थी कि वह आधे सूखे बने माडल के अतिरिक्त और कुछ लगता ही न था। दृष्टि के आलोक से शून्य छोटी-छोटी आँखें कच्चे काँच की मैली गोलियों के समान चमकहीन थीं; जिनसे उस शरीर की निर्जीव मूर्तिमत्ता की भ्रान्ति और भी गहरी हो जाती थी।···अलोपी के नेत्र नहीं थे, इसी से संभवतः वह न प्रकृति के रौद्र रूप से भयभीत होता था और न उसके सौन्दर्य से बहकता था। मूसलाधार वृष्टि जब बर्फ के तूफान की भ्रान्ति उत्पन्न करती, बिजली जब लपटों के फव्वारे-जैसी लगती और बादलों के गर्जन में जब पर्वतों के बोलने का आभास मिलता, तब रग्घू तो चलते-चलते बाहर से आँखें छिपा लेता, पर भीगे चिथड़े के गुड्डे के समान अलोपी, नाक की नोंक से चूते हुए पानी की चिन्ता न कर, भीगी उँगलियों से फिसलती लाठी थामे और हरे खेत के खण्ड जैसी छावड़ी सँभाले इस तरह पाँव रखता, मानो उसे आज ही पृथ्वी का पूरा परिचय प्राप्त करना है।'

दस (१९३६)

इसमें दीन-हीन बदलू कुम्हार और रधिया का चित्रण है जो बुरी परिस्थिति से भी सन्तुष्ट हैं।

मैले-कुचैले, नंगे-दुबले बच्चों से घिरा बदलू गरीबी के अभिशाप से पीड़ित है। पत्नी रधिया को पौष्टिक पदार्थ के स्थान पर बाजरे की रोटी ही दे पाता है।

बदलू का चित्र

"उसकी मुखाकृति साँवली और सौम्य थी, पर पिचके गालों से विद्रोह करके नाक के दोनों ओर उभरी हुई हड्डियाँ उसे कंकाल-सहोदर बनाये विना नहीं रहतीं। लम्बा इकहरा शरीर भी कभी सुडौल रहा होगा; पर निश्चित आकाश-वृत्ति के कारण असमय वृद्धावस्था के भार से झुक आया था। उजली छोटी आँखें स्त्री की आँखों के समान सलज्ज थीं, पर एकरस उत्साह-हीनता से भरी होने के कारण चिकनी काली मिट्टी से गढ़ी मूर्ति में कौड़ियों से बनी आँखों का स्मरण दिलाती रहती थीं। काँपते ओठों में से निकलती हुई गले की खरखराहट सुनने वाले

को वैसे ही चौंका देती थी, जैसे बाँसुरी में से निकलता हुआ शख का स्वर।"

रधिया का चित्र

"वैसे एक-एक करके देखने से, मुख कुछ विशेष चौड़ा था। नाक आँखों के बीच में एक तीखी रेखा खींचती हुई ओठ के ऊपर गोल हो गई थी। गहरे काले घेरे में घिरी हुई आँखें ऐसी लगती थी, जैसे किसी ने उंगली से दबाकर उन्हें काजल में गाड़ दिया हो, ओठों पर पड़ी सिकुड़न ऐसी जान पड़ती थी, मानो किसी तिक्त दवा की प्याली से निरन्तर स्पर्श का चिह्न हो। ···घिसकर गोल से चपटे हो जाने वाले काँसे के कड़े और मैल से रूप-रेखा-हीन लाख की चूड़ियों के अतिरिक्त और किसी आभूषण से रधिया का परिचय नहीं, पर वह इस परिचयहीनता पर खिन्न होती नहीं देखी गई। गठे हुए शरीर और भरे अंगोंवाली वह स्त्री, सन्तान की अटूट शृंखला और दरिद्रता की अघट छाया के कारण ऐसा ढांचा-मात्र रह गई थी, जिसे चलता-फिरता देखना भी विस्मय का कारण हो सकता था।"

ग्यारह (१६३६)

ग्याहरवाँ रेखाचित्र पहाड़ी कर्मठ महिला लछमा का है। वह हंसी से आँसुओं को छुपाये रहती है। बाहर से मैली-कुचैली पर भीतर से वह बिल्कुल साफ़ थी। इस रेखाचित्र का प्रारम्भ इस प्रकार होता है,

"धुल-धुलकर धूमिल हो जाने वाले पुराने काले लंहगे को एक विचित्र प्रकार से खोंसे, फटी मटमैली ओढ़नी को कई फेंट देकर कमर से लपेटे और दाहिने हाथ में एक बड़ा-सा हंसिया संभाले लछमा, नीचे पड़ी घास-पत्तियों के ढेर पर कूदकर खिलखिला उठी। कुछ पहाड़ी और कुछ हिन्दी की खिचड़ी में उसने कहा—'हमारे लिए क्या करते हो। हम क्या तुम्हारे-जैसे आदमी हैं।"

'अतीत के चलचित्र' में जहां एक ओर ग्रामीण नौकरों के गुण-दोषों का विवेचन है वहां दूसरी ओर विमाताओं के दुर्व्यवहार तथा सामाजिक रूढ़ियों से प्रताड़ित निरीह बालिकाओं तथा बालविधवाओं के जीवन का करुण चित्र है। हृदयहीन स्वार्थी समाज के अत्याचारों की चक्की में पिसते, तिल-तिलकर जीवन को समाप्त कर

देने वाले पात्रों की मूक गाथा है। पाठक लेखनी से प्रस्तुत इस करुणा-सागर में गोते लगाता रहता है और इन पात्रों के प्रति सहानुभूति रखता है।

इन पात्रों में श्रमिक वर्ग के पात्र हैं--पहाड़िन महिला तथा बदलू कुम्हार। पात्र सभी साधारण कोटि के हैं। बेनीपुरी और चतुर्वेदी जी से आपके पात्र कुछ भिन्न क्षेत्र के हैं, आगे चलकर आचार्य विनयमोहन शर्मा ने इस प्रकार के पात्रों को अपने रेखाचित्रों का विषय बनाया है। लेखिका का मूल लक्ष्य है--करुणा और सहानुभूति। वेदना के क्षीण कोमल तारों से बांधकर आपने अनुभूति के चित्र प्रस्तुत किये हैं। कैमरामैन के चित्र प्रस्तुत करने के लिए जैसे व्यक्ति तथा पृष्ठभूमि चाहिए, उसी प्रकार महादेवी जी के समस्त रेखाचित्र समाज की सुदृढ़ पीठिका पर आधारित हैं। सभी पात्रों के बाह्य तथा आन्तरिक शब्द-चित्रों को साथ-साथ दिया जा चुका है। जीवन की दीनता का करुण चित्र द्रष्टव्य है, "इस समाधि जैसे घर में लोहे की, प्राचीर से घिरे फूल के समान वह किशोरी बालिका बिना संगी-साथी, बिना किसी आमोद-प्रमोद के मानो निरंतर वृद्ध बनने में लीन।"

उपमानों का प्रयोग

चित्रों को मर्मस्पर्शी तथा प्रभावोत्पादक बनाने के लिए सार्थक उपमानों का प्रयोग किया गया है,

--"रूखे बाल और मलिन वस्त्रों में उसकी कठोरता वैसी ही दयनीय जान पड़ती थी, जैसी जमीन में बहुत दिन गड़ी रहने के उपरान्त खोदकर निकाली हुई तलवार।"

--"धूप से झुलसा हुआ मुख ऐसा जान पड़ता है जैसे किसी ने कच्चे सेब को आग की आंच पर पका लिया हो। सूखी-सूखी पलकों में तरल-तरल आंखें ऐसी लगती हैं, मानो नीचे आंसुओं के अथाह जल में तैर रही हों और ऊपर हंसी की धूप से सूख गई हों।"

बचिया--सूखे शरीर में नये पत्ते की चंचलता न होकर पाले से खिल न सकने वाले बंधे किसलय कोरक का अवश हिलना-डुलना था।

घीसा--जैसे ड्रामा में विष्णु बनने वाले की दो नकली भुजाएं।

रामा--सांप के पेट जैसी सफेद हथेली और पेड़ की टेढ़ी-मेढ़ी गांठदार टहनी जैसी अंगुलियां।

'दूध से सफेद बाल', 'दूधफेनी-सी सफेद दाढ़ी', 'कांच की गोलियों जैसी निष्प्रभ आंखें' आदि उपमाएं भरी पड़ी हैं।

काव्यात्मक उपमाएं यत्र-तत्र बिखरी पड़ी हैं, जैसे, 'वैशाख नये गायक के समान अपनी अग्निवीणा पर एक लम्बा अलाप लेकर संसार को विस्मित कर देना चाहता था।'

सूक्तियां

सूक्तिरूप वाक्यों का प्रयोग भी महादेवी जी के रेखाचित्रों में मिलता है। जैसे,

> 'स्त्री में माँ का रूप ही सत्य है, वात्सल्य ही शिव है और ममता ही सुन्दर।'

प्रो. रणदेव के अनुसार 'इनमें (रेखाचित्रों में) आपके विराट् मातृत्व, सहानुभूति एवं करुणा, स्वसा के स्नेह, सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति, मनोद्वन्द्व के यथार्थ चित्रण, नारीत्व की विविध अनुभूतियों के सजीव चित्र एवं निर्भीक तथा सशक्त लेखनी के स्पष्ट दर्शन होते हैं।'

श्रीमती शचीरानी गुर्टू ने इस संबंध में लिखा है--

> "आन्तरिक रागातिरेक को अपने तक ही सीमित नहीं रखा, वरन् व्यक्तियों में और जीवन की अनन्त, जटिल वास्तविकताओं में लय कर दिया है--महादेवी का सरल, तरल, सजीव स्नेह भूखे-नंगे निराश्रय बालकों को देखकर उमड़ पड़ा। उनका कोमल हृदय अभाव-ग्रस्त भर्त्सनाओं की शिकार, पीड़ित, उपेक्षिता, पुरुषों द्वारा रौंदी और सामाजिक बन्धनों में जकड़ी नारियों की आशा निराशा, हास्य-रुदन और अन्तर्बाह्य ऊहापोहों से द्रवित हो उठा। जहां कहीं उन्हें परवश, असहाय विधवाएं अथवा कुसुम कली-सी अल्प-वयस्का, पतिविहीना किन्तु किसी युवक की विकृत वासनाओं की शिकार, अबोध सन्तति से विभूषित कोई किशोर बाला दीख पड़ी, वहीं उनके भीतर का ओज और भी अधिक दुर्दम्य, कठोर और आत्म-वेदना से आलोड़ित होकर प्रकट हुआ है।"

करुण चित्र खींचने में तो महादेवी जी निष्णात हैं, करुणा और सहानुभूति ही उनका प्रतिपाद्य है,

> "स्मरण नहीं आता वैसी करुणा मैंने कहीं और देखी है। खाट पर बिछी मैली दरी, सहस्रों सिकुड़न भरी मलिन चादर और तेल के कई धब्बे वाले तकिये के साथ मैंने जिस दयनीय मूर्ति से साक्षात् किया, उसका ठीक चित्र दे सकना संभव नहीं है। वह १८ वर्ष से अधिक

की नहीं जान पड़ती थी—दुर्बल और असहाय जैसी। सूखे ओठ वाले, सांवले पर रक्त-हीनता से पीले मुख में आंखें ऐसे जल रही थीं जैसे तेलहीन दीपक की बत्ती।"

निर्धनता और दरिद्रता का एक चित्र

लछमा हंसकर कहती है,

"जब बहुत भूखा हुआ, तब पीली मिट्टी का एक गोला बनाकर मुंह में रखा और आँख मूंदकर सोचा—लड्डू खाया, लड्डू खाया। बस फिर बहुत-सा पानी पी लिया और सब ठीक हो गया।"

अन्धे अलोपीदीन के रेखाचित्र में अकर्मण्य नवयुवकों पर आपने करारा व्यंग्य किया है—

"जीवन से अनजान किशोरों की संख्या कम नहीं, जो सुख के साधनों के लिए उस माँ से झगड़ते हैं, जिसकी उंगलियों के पोर सिलाई करते-करते चलनी हो चुके हैं। कुलवधुओं के समान आँसू पीने वाले युवकों का अभाव नहीं जिनका पौरुष न दरिद्र पिता का सब कुछ छीन लेने में कुण्ठित होता है और न भिक्षावृत्ति से मूर्छित। अपनी पराजय को विजय मानने वाले ऐसे पुरुषों से भी समाज शून्य नहीं जो छोटे बच्चों को छोड़कर दिन-दिनभर परिश्रम करनेवाली पत्नियों के उपार्जित पैसों से सिनेमा-घरों की शोभा बढ़ा आते हैं।"

साधारणतः आज के पुरुष का पुरुषार्थ विलाप है। जितने प्रकार से, जितनी भाव-भंगियों के साथ, जितने स्वरों में वह अपने निराश जीवन का मर्सिया गा सके, अपनी असमर्थता का स्यापा कर सके, उतना ही वह स्तुत्य है और उतना ही अधिक पुरुष नाम के उपयुक्त है।

प्रो. रणदेव का यह कथन सत्य ही है,

"'यामा' में जहाँ महादेवी के तुतले उपक्रम से लेकर प्रौढ़ावस्था तक के जीवन का अडिग विश्वास व्यक्त हुआ है और 'दीपशिखा' की लौ में रात्रि की गहन सघनता को सह सकने की जिस निस्संदिग्ध क्षमता की व्यंजना हुई है, उसी के सदृश महादेवी के 'अतीत के चलचित्र' में भी रामू की कुरूपता, बिन्दा की निरीहता, उपेक्षिता सबिया की कर्मठता और उत्सर्ग-भावना, बिट्टो की विवशता, घीसा की कर्तव्यपरायणता, अंधे अलोपीदीन की कर्मण्यता, बदलू कुम्हार

तथा कुम्हारिन रधिया का दैन्य तथा पहाड़ी महिला, लछमा का आत्म-संतोष अपनी सबलता में संप्रेषणीय और पाठकों के सहज साधारणीकरण के लिए समर्थ है—इसमें संदेश नहीं, और इसीलिए महादेवी ने अपनी स्मृति की सुरक्षित सीमा से इन्हें बाहर लाकर न्याय ही किया है ! निश्चय ही अन्याय नहीं ! !"

सहानुभूति का विराट रूप 'तुच्छ' को अमर कर देने में समर्थ होता है और यह तथ्य सिद्ध होता है महादेवी जी के रेखाचित्रों से । उनकी ही लेखनी से ऐसे रेखाचित्र लिखे जा सकते थे,

"धूल के रंग के कपड़े और धूल भरे पैर तो थे ही, उस पर उसके छोटे-छोटे बालों, चपटे-से माथे, शिथिल पलकों की विरल बरुनियों, बिखरी-सी भौंहों, सूखे पतले ओठों और कुछ ऊपर उठी हुई ठुड्डी पर राह की गर्द की एक पर्त इस तरह जम गयी थी कि वह आधे काले मॉडल के अतिरिक्त और कुछ लगता ही न था । दृष्टि के आलोक से शून्य टी-छोटी आँखें कच्चे काँच की मैली गोलियों के समान चमकहीन थीं, जिनसे उस शरीर की निर्जीव मूर्तिमत्ता की भ्रान्ति और भी गहरी हो जाती थी ।"

स्मृति की रेखाएं

'स्मृति की रेखाएं' शीर्षक पुस्तक आपका दूसरा संग्रह है । इसमें संस्मरणात्मक शैली में लिखे हुए सात रेखाचित्र हैं जिनमें महादेवी जी के चित्रकार, पर्यटक, प्रधानाध्यापिका आदि सभी रूप उभरकर आये हैं और इनमें सर्वोपरि है उनका नारी रूप । गांव निवासियों की सरलता, भावुकता और उनका भोलापन चित्रित करना ही इन चित्रों का लक्ष्य है । भारतीय समाज की पृष्ठभूमि पर आधारित इन चित्रों में आपने कला की तूलिका से रेखा और रंग के माध्यम से रस भरा है । रस-भरे ऐसे कलात्मक रेखाचित्र अन्यत्र दुर्लभ हैं ।

सभी पात्र लेखिका के जीवन के अभिन्न अंग हैं । जिन परिस्थितियों में पात्र रहते हैं उनसे सीधा संबंध लेखिका का भी है । दुःख एवं दारिद्रय से उत्पन्न पात्रों की समस्याओं का सूक्ष्म अध्ययन महादेवी जी ने किया है ।

'स्मृति की रेखाएं' के सभी सात पात्रों में दुःखवाद की प्रधानता है । इन चित्रों में लेखिका अपनी जीवन-यात्रा के भी दृश्य अंकित करती हैं जिनके साथ पाठक वृन्द भी अपना तादात्म्य करते हैं साथ ही आत्म-निरीक्षण करने का अवसर पाते हैं ।

महादेवी जी ने जो अनेक यात्राएं की हैं, कल्पवास किये हैं उनका अनुभव भी इन चित्रों में समाया हुआ है।

इन सात रेखाचित्रों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है,

१. परिचारिका भक्तिन–वृद्धा
२. फेरीवाले वस्त्र विक्रेता–चीनी
३. बदरी-केदारयात्रा के दो बंधु––जंग बहादुर और धनिया
४. निर्धन मुन्नू की माई––गृहवधू।
५. कल्पवास के भावुक मानव ठकुरी बाबा।
६. उत्पीड़िता धोबिन।
७. मूक किन्तु ममतामूर्ति 'गुंगियां'।

इस पुस्तक में भी करुणात्मक रेखाचित्रों की ही प्रधानता है जिन पर टिप्पणी करते हुए हंस (मई १९४४) में प्रसिद्ध आलोचक अमृतराय ने लिखा था––

> "उन्होंने अधिकांश में उन व्यक्तियों के संस्मरण दिये हैं जो करुणा और भावना और सहज मानवता के स्रोत हैं, जो बिना कान, पूंछ हिलाये गऊ के समान सब अत्याचार सहन कर लेते हैं।"

ये सभी पात्र ऐतिहासिक पुरुष अथवा महापुरुष नहीं हैं वरन् भारतीय जीवन के समाज-प्रताड़ित, शोषण से सताये, अशिक्षित, दीन-हीन पर सरल हैं। ऐसे पात्रों के ही सजीव चित्र 'स्मृति की रेखाएं' में प्राप्त होते हैं।

एक––यह उस देहाती वृद्ध महिला भक्तिन का रेखाचित्र है जो अशिक्षित होने के कारण अपने जीवन का कुछ विकास न कर सकी। भक्तिन का नाम लछमिन (लक्ष्मी) है। सम्भवतः वह अपना नाम बताती भी नहीं और सामान्यतः वह अपना असली नाम बताती नहीं पर उसने अपना नाम इस प्रार्थना के साथ लेखिका को बताया कि वह कभी उस नाम का उपयोग न करें। लेखिका ने ही उसका नामकरण 'भक्तिन' किया था।

लेखिका के शब्दों में छोटे कद और दुबले शरीरवाली भक्तिन अपने पतले ओठों के कोनों में दृढ़ संकल्प और छोटी आँखों में एक विचित्र समझदारी लेकर··· उपस्थित हुई थी।

जीवन के प्रथम परिच्छेद के उपरान्त उसे दुःख ही दुःख मिला। उसका पति उससे प्रेम करता था पर कुछ समय बाद ही वह काल-कवलित हो गया। जिठानियों के साथ वह निरन्तर काम में रत रहती–वह मट्ठा फेरती, कूटती, पीसती, राँधती और उसकी नन्हीं लड़कियाँ गोबर उठातीं कंडे थापतीं। इस प्रकार परिस्थितियों से

सतायी हुई भक्तिन जब लेखिका के पास पहुँची तो रोटी बनाने के हेतु रख ली गयी, जिसने 'रोटी बनाय जानित है, दाल रांध लेइत है, सागभाजी छंउक सकित है, अउर बाकी का रहा' शब्दों में आश्वासन दिया था, उसने ही दूसरे दिन जब 'थाली में एक अंगुल मोटी और गहरी काली चित्तीदार चार रोटियाँ रखकर साथ गाढ़ी दाल परोसी तो लेखिका हैरान रह गयी।'

भारतीय हिन्दू समाज की कुप्रथाएँ और उनके कुफल, विमाता का स्वरूप, सम्मिलित परिवार के कटु अनुभव तथा समाज के ठेकेदारों के विकृत स्वरूप का सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया गया है।

दो—कठिन परिश्रम तथा पसीने की कमाई से गुजर करनेवाला चीनी फेरीवाला इसमें चित्रित है। चीनी फेरीवालों की बाह्य आकृति का चित्र,

> "कुछ समतल मुख एक ही साँचे में ढले-से जान पड़ते हैं और उनकी एकरसता दूर करने वाली, वस्त्र पर पड़ी हुई सिकुड़न-जैसी नाक की गठन में भी विशेष अन्तर नहीं दिखाई देता। कुछ तिरछी, अधखुली और विरल भूरी वरुनियों वाली आँखों की तरल रेखाकृति देखकर भ्रान्ति होती है कि वे सब एक नाम के अनुसार किसी तेज धार से चीर कर बनाई गई हैं। स्वाभाविक पीतवर्ण धूप के चरण-चिह्न पर पड़े हुए धूल के आवरण के कारण कुछ ललछहे सूखे पत्ते की समानता पा लेता है। आकार-प्रकार, वेश-भूषा सब मिलकर इन दूर-देशियों को यन्त्रचालित पुतलों की भूमिका दे देते हैं, इसी से अनेक बार देखने पर भी एक फेरीवाले चीनी को दूसरे से भिन्न करके पहचानना कठिन है।"

यद्यपि फेरी वाले को बर्मी-चीनी भाषा के अतिरिक्त और कोई भाषा नहीं आती थी। पर करुण कथाओं की भाषा शब्द-हीन होती है फलतः उसके मनोभाव पढ़ने में लेखिका को देर नहीं लगी। फेरीवाले की माँ उसे छोड़कर चली गई, पिता दूसरी बर्मी पत्नी के साथ चला गया। इसमें माँ की ममता, बहन का स्नेह, विमाता की पीड़ा तथा एक साथ जीवन-संघर्ष के अनुभव उभर कर आये हैं।

तीन—इसमें भार ढोने वाले दो कुलियों–जंग बहादुर तथा धनसिंह के जीवन-चित्र हैं,

> "बादामी रंग के पुराने कागज के टुकड़े पर लिखी हुई रसीद उँगलियों में थामे हुए, जब मैं कुलियों के चित्रगुप्त अर्थात् ठेकेदार की ओर से मुंह फेरकर बाहर, बुझने से पहले जल उठने वाले दीपक–जैसी सन्ध्या को देखने लगी, तब उन्हें अपनी अधीनस्थ आत्माओं का लेखा-

जोखा और अपनी महत्ता का वर्णन रोकना पड़ा। कई बार खाँस-खाँसकर जब वृद्ध महोदय श्रोता की उदासीनता भंग न कर सके, तब कुछ आगे की ओर झुके हुए दाहिने कोने में मटमैला निबवाला कलम खोंसकर और टेढ़ी-मेढ़ी उँगलियों में बिना ढक्कन वाली पानी मिली हुई फीकी स्याही से भरी दवात यत्न से दबाकर धीरे-धीरे सीढ़ियों से नीचे उतर गये और उनके पीठ फेरते ही कितने ही कुली मेरे कमरे के सामने एकत्र होने लगे।"

इस परिच्छेद के साथ इस रेखाचित्र का प्रारम्भ होता है। इन कुलियों की वेषभूषा इस प्रकार थी,

"कोई टाट का सिला विचित्र पैजामा और फटे हुए काले खुरदुरे कम्वल का गिलाफ जैसा कुरता गले में लटकाये, भालू के समान घूम रहा है। कोई कोपीनधारी तार-तार फटा सूती कोट पहने, कमर से बोझ बाँधने की मोटी रस्सी लपेटे और रूखे खड़े बालों को खुजलाता हुआ सेही जैसा काँटेदार जन्तु जान पड़ता है। किसी के, कठिन एड़ी और ऐंठी फैली उँगलियों वाले पैर सड़क कूटने के दुर्मुठ से स्पर्द्धा करते हैं और किसी के, स्वरचित मूंज की खुरदरी चट्टी में सिकुड़-बँधकर पंजे की भ्रान्ति उत्पन्न करते हैं।"

पर्वतीय क्षेत्र के कुलियों की निर्धनता तो पराकाष्ठा पर पहुँची हुई होती है, ये कुली भी निर्धनता की मूर्ति थे,

"पर्वतीय पथ और पत्थरों की चोट से टूटे हुए नाखून और चुटीली उँगलियों के बीच में ढाल बनी हुई मूंज की चप्पल मानो मनुष्य को पशु बनाकर भी खुर न देने वाले परमात्मा का उपहास कर रही थी। पाँव से दो बालिश्त ऊँचा और ऊनी-सूती पैबन्दों से बना हुआ पैजामा मनुष्य की लज्जाशीलता की विडम्बना जैसा लगता था। किसी से कभी मिले हुए पुराने कोट में, नीचे के मटमैले अस्तर की झाँकी देती हुई ऊपरी तह तार-तार फटकर झालरदार हो उठी थी और अब अपने पहननेवाले को जन्तु की भूमिका में उपस्थित करती थी। अस्पष्ट रंग और अनिश्चित रूपवाली दोपलिया टोपी के छेदों से रूखे बाल जहाँ-तहाँ झाँककर मैले पानी और उसके बीच-बीच में झाँकते हुए सेवार की स्मृति करा देते थे।"

नेपाली कुलियों में भाई-चारे की झलक देखी जा सकती है। बाह्य आकृति का चित्र,

"घनी भौंहों के नीचे मुख चौड़ा और नाक कुछ गोल हो गई थी। हंसी से निरन्तर खुले हुए होठों के कौने कान तक फैलकर गाल और नाक के अन्तर को छिपा देते थे। छोटी और विरल मूंछों के काली डोरी जैसे छोर मुंह के दोनों ओर झूलकर छोटे-छोटे दांतों से प्रकट होने वाले बचपन का विरोध कर रहे थे। एक ओर सकीर्ण माथे और दूसरी ओर छोटी गोल ठुड्डी से सीमित चौड़े मुख को, रोकर पोंछी हुई-सी छोटी आंखें वही सजल झलक देती थीं, जो रेगिस्तान के जलाशय में संभव है। गेहुआं रंग निरंतर धूप में रहने के कारण कहीं पुराने तांबे जैसा और कहीं झांईदार हो गया है। बोझ बांधने की गांठ-गंठीली पुरानी रस्सी का एक छोर गले की माला बनता हुआ कन्धे से लटक रहा था, दूसरा कमर-बन्द बनकर कोट के झबरेपन में कहीं छिपा, कहीं प्रकट था।"

पर्वत-पुत्रों का अतिसजीव चित्र इस रेखाचित्र में विद्यमान है। इनमें ममता का जो भाव प्रस्तुत किया गया है वह अन्यत्र दुर्लभ है। लेखिका ने यह अनुभव किया था कि उन पर्वत-पुत्रों के मां संबोधन में जो कोमल स्पर्श और ममता की सहज स्वीकृति रहती थी वह अन्यत्र दुर्लभ रही।

बदरीनाथ की यात्रा का चित्र भी द्रष्टव्य है,

"डांडी में बैठा हुआ कोई लम्बोदर अपने हांफते हुए कुलियों को 'सर्प-सर्प' कहकर इस तरह दौड़ाता है कि उसे देखकर हमें, स्वर्ग पर अधिकार पाकर भी देवता न बन पानेवाले नहुष का स्मरण हो जाता है। किसी डांडी में कोई सम्पन्न घर की शृंगारिता प्रसाधिता महिला पर्वत के सौन्दर्य की उपेक्षा कर झपकियां लेती जाती है। किसी में घुटे सिर और सूखी लकड़ी-से शरीरवाली कोई वृद्धा, कटु-तिक्त अनुपात से उत्पन्न मुद्रा धारण किये और राह में आंख गड़ाये हुए हिलती-डुलती चली जाती है। कहीं कोई धनहीन और प्रौढ़ झप्पान में बैठकर दोनों पांव लटकाये हुए याचना-भाव से आकाश की ओर ताकता है, कहीं कोई छोटे टट्टू पर विराजमान वीर, घोड़ेवाले की पूंछ पकड़कर चलने के लिए मना कर रहा है, क्योंकि इस व्यायाम से वह सभीत हो जाता है। कहीं डांडी में मृगचर्म बिछाकर बैठे हुए,

मठाधीश, शंख-झालर लेकर पैदल चलनेवाले शिष्यों को देख-देखकर सदेह स्वर्गारोहण का सुख अनुभव कर रहे हैं।"

समाज में मानवता का अभाव है। मानव के पशुतुल्य जीवन की एक झलक भी इसमें मिल जाती है। वे बेचारे मनुष्य-पशु, हांफ-हांफकर मुंह से फिचकुर निकालते हुए दौड़ते हैं।

चार—मुन्नू की माई का सौन्दर्य रेखाओं में न रहकर भाव में स्थिति रखता है, फिर भी रेखाचित्र इस प्रकार है—

"साधारण सांवले रंग और विवर्ण गालों के कारण कुछ लम्बे जान पड़नेवाले मुख में कोई विशेषता नहीं। नाक का नुकीलापन यदि बुद्धि की तीक्ष्णता का पता न देता तो उसका छोटापन मूर्खता का परिचायक बन जाता। आंखें न बड़ी न छोटी; पर एक विचित्र आभा से उद्दीप्त। पतले ओठ छोटे सफेद दांतों की झांकी में अकारण प्रसन्नता व्यक्त करते हैं, पर उनके बन्द होते ही उन पर एक नामहीन विषाद की छाया आ जाती है। हाथ-पैर छोटे-छोटे, पर मुख के विपरीत कठोर हैं। शरीर में लचीलेपन के साथ ही बाण के समान एक सीधापन है, जिसे वह सिर झुकाकर कुछ-कुछ छिपा लेती है।

गोल-मटोल मुख, गोलाकार आंखें, गोलाकृति नाक वाले मुन्नू का बाप मझोले कद, गेहुँए रंग और छरहरे शरीर का आदमी है। छोटे-छोटे बाल उसके सिर पर खड़े ही रहते हैं। आंखों के चारों ओर स्याह घेरे और गालों पर झांई है, जिसके साथ मुंहासे 'कोढ़ में खाज' की कहावत चरितार्थ करते हैं।"

मुन्ने की मां निठल्ले पति से बंधकर ही नहीं बैठ जाती वरन् सेवा से अभिभूत हो जाती है।

पांच—जिन वृद्ध ने कल्पवास के समय बरामदे में अधिकार जमा लिया था, उनका चित्र इस प्रकार है,

"फटी और अनिश्चित रंगवाली दरी और मटमैली दुसूती का बिछौना लिपटा हुआ धरा था। उसके पास ही रखी हुई एक मैले फटे कपड़े की गठरी उसका एकाकीपन दूर कर रही थी। लाल चिलम का मुकुट पहने, नारियल का काला हुक्का बांस के खम्भे से टिका हुआ था। तूल की गोटवाला काला सुरती का बटुआ दीवार

से लटक रहा था। खम्भे और दीवार से बंधी डोरी की अलगनी पर एक धोती और रुई भरी काली मिरजई स्वामी के गौरव की घोषणा कर रही थी। निरन्तर तेल स्नान से स्निग्ध लाठी का गांठ-गंटीलापन भी चिकना जान पड़ता था।''

बरामदे में दूसरी ओर एक सूरदास समाधिस्थ थे,

''उनके मुख के चेचक के दाग, दृष्टि के जाने के मार्ग की ओर संकेत करते जान पड़ते थे। श्याम और दुर्बल शरीर में कण्ठ की उभरी नसों का तनाव बताता था कि वे अपनी विकलांगता का बदला कण्ठ से चुका लेना चाहते हैं। सिरकी की टट्टी बांधते समय बांस का एक कोना कुछ बढ़कर खूंटी जैसा बन गया था, इसी से एक चिकारा और एक जोड़ा मंजीरा लटक रहा था।''

वहीं पर बैठी हुई स्त्रियों में से एक का रेखांकन,

''एक की आंखें माड़े से धुंधली, नाक ठुड्डी पर झुकी हुई और मुख के भाव में एक करुण उदासीनता थी। पर कानों को धोती से बाहर निकाले और ओठों को खोलती बन्द करती हुई दूसरी, अपनी छोटी काली आंखों को घुमाकर तथा छोटी नाक के गोल नथनों को फुलाकर मानो चारों ओर बिखरे हुए रूप-रस-गन्ध-शब्द की खोज-खबर ले रही थी।''

दूसरी ओर ''एक श्यामांगिनी युवती बाहर बालू में गड्ढे खोद-खोदकर चूल्हे बनाने में लगी थी। कुछ गोलाई लिये हुए लम्बे, रूखे और उभरी हड्डियों वाले मुख पर छोटी नथ हिल-हिलकर कभी ओट, कभी कपोल का ऊपरी भाग छू लेती थी। सफेद बूटीदार लाल लंहगे की काली गोट फटकर जहां-तहां से उधड़ रही थी। पीली पुरानी ओढ़नी में से व्यक्त शरीर की दुर्बलता को जल्दी-जल्दी बालू निकालने में लगे हुए हाथों का फुर्तीलापन छिपा लेता था।''

छह––'बिबिया तो विद्रोह की कभी राख न होने वाली ज्वाला थी।' इस वाक्य में लेखिका ने चित्रांकन कर दिया है। उसका बाह्य रूप इस प्रकार है––

''बिबिया ने गेहुँए रंग के साथ यह विशेषता पाई थी। उस पर उसका हँसमुख स्वभाव उसे विशेष आकर्षण दे देता था। छोटे-छोटे सफेद दाँतों की बतीसी निकली ही रहती थी। बड़ी आँखों की पुतलियाँ मानो संसार का कोना-कोना देख आने के लिए चंचल रहती थीं। सुडौल

> गठीले शरीरवाली बिबिया को धोबिन समझना कठिन था, पर थी वह धोबिनों में भी सबसे अभागी धोबिन।"

धोबिन बिबिया अपने पति रमिया (चरित्रहीन) तथा वृद्धा झनकू की हृदयहीनता से प्रताड़ित हो आत्महत्या कर लेती है।

सात--'गुंगिया' का वास्तविक नाम तो धनपतिया है पर उसके गूंगेपन के कारण यह नाम दिया गया है,

> "गदबदे शरीरवाली धनपतिया ने दस महीने की अवस्था तक पहुँचते-न-पहुँचते चलना भी आरम्भ कर दिया, पर उसका कण्ठ पाँच वर्ष की अवस्था पार करने पर भी नहीं फूटा। न वह माँ कह सकी, न दादा, न उसके मुख से दूधू निकला न हप्पा। केवल ऐं-ऐं को विशेष ध्वनियों में उच्चारण करके ही वह मन के भाव व्यक्त करना जानती थी।"

नारीत्व का चरम रूप हमको गुंगिया में मिलता है।

रेखाचित्र कला के मर्मज्ञ प्रो. प्रकाशचन्द्र गुप्त 'आज का हिन्दी साहित्य' में इस कृति के संबंध में अपना मत इस प्रकार व्यक्त करते हैं,

> "ये रचनाएँ संस्मरण और रेखाचित्र, दोनों ही थी। श्रीमती वर्मा शब्दों के अनमोल साँचों में अपनी स्मृतियों को ढालती हैं और उनकी गढ़ी हुई ये छवियाँ अपने मर्मस्पर्शी गुण के कारण दीर्घ काल के लिए पाठक के हृदय पर अंकित हो जाती हैं। रेखाचित्र का प्रमुख...मितव्ययिता। कुछ ही रेखाओं से श्रीमती वर्मा चीनी फेरीवाले, बद्रीनाथ के मार्ग पर बोझा ढोनेवाले कुलियों अथवा अपनी पुरानी सेविका 'भक्तिन' के अविस्मरणीय चित्र उतारती हैं।"

वस्तुतः श्रीमती वर्मा ने अपनी लेखनी से भक्तिन को अमर कर दिया है जिस पर टिप्पणी करते हुए भक्तिन ने एक बार सहजभाव से उत्तर दिया था, "तभी तो मैं नहीं मरती।" निष्ठा की मूर्ति भक्तिन की प्रगल्भता और स्वामि-भक्ति प्रथम स्केच से ही सिद्ध हो जाती है। ग्रामीण लोकजीवन के जितने सहज चित्र इसमें हैं उतने कहीं और नहीं मिलते। समाज के प्रति तीखा व्यंग्य तथा आक्रोश इन चित्रों में है। निम्नवर्गीय पात्र भी अपनी चारित्रिक दृढ़ता से पाठकों को प्रभावित करते हैं।

निर्धनता के अनेक चित्र साथ के साथ दिये जा चुके हैं, फिर भी एक वाक्य में सजीव चित्र इस प्रकार उपस्थित किया जा सकता है, 'टूटी मटकियों से सम्पन्न और

मकड़ी, चूहे, छिपकली आदि से जनाकीर्ण घर में उसके स्वागत के लिए भी कोई नहीं था।" उपयुक्त उदाहरण है।

'स्मृति की रेखाएँ' में विमाता का दुर्व्यवहार, अनमेल विवाह के दुष्परिणाम तथा कुव्यसनों में फंसे पति के व्यवहार से प्रताड़ित नारियों के मार्मिक चित्र हैं। महादेवी जी के अन्तर में व्याप्त ममता, वात्सल्य, निश्छलता आदि गुण ही इन पात्रों के माध्यम से मुखर हो उठे हैं।

एक स्थान पर कवि-सम्मेलन का चित्र भी आ गया है,

> "सजे हाल, ऊँचे मंच, माला.विभूषित सभापति मेरी स्मृति में उदय हो आये। उनके इधर-उधर देवदूतों के समान विराजमान कविगण रूप और मूल्य दोनों में अपूर्ण थे। कोई फर्स्ट क्लास का किराया लेकर थर्ड की शोभा बढ़ाता हुआ आया था। कोई अपने कार्यवश पहले ही से उस नगर में उपस्थित था, पर थोड़ा समय वहाँ बिताने के लिए इतनी फीस चाहता था, जिसमें आना जाना और आवश्यक कार्य सम्पन्न होने के उपरान्त भी कुछ बच सके। किसी ने अपने काव्य की महर्घता बढ़ाने के लिए ही अपनी गलेबाजी का चौगुना मूल्य निश्चित किया था।...मूल्य से जो महत्ता नहीं व्यक्त हो सकी, वह वेश भूषा में प्रत्यक्ष थी। किसी के नये सिले सूट की अंगरेजियत, ताम्बूलराग की स्वदेशीयता रंजित होकर निखर उठी थी। किसी का चीनांशु का लहराता हुआ भारतीय परिधान, सिगरेट की धूमलेखाओं में उलझकर रहस्यमय हो रहा था। किसी के सिर के खड़े बाल अमामी से संगमूसा के चमकीले फर्श की भ्रान्ति उत्पन्न करते थे। किसी की सिल्की शैम्पू से धुली सीधी लटों का कृत्रिम कुंचन विधाता पर मनुष्य की विजय की घोषणा करता था।"

इन स्मृति-चित्रों में भी महादेवी जी का स्वयं का चरित्र आ गया है।

'अतीत के चलचित्र' में महादेवी जी ने लिखा है, 'मेरे जीवन की परिधि के भीतर खड़े होकर चरित्र जैसा परिचय दे पाते हैं वह बाहर रूपान्तरित हो जायेगा।' कुछ उद्धरण इस कथन की यथार्थता सिद्ध करेंगे,

'उपनाम' नहीं रखा—उपनाम रखने की प्रतिभा होती, तो मैं सबसे पहले उसका प्रयोग अपने ऊपर ही करती।

भोजन संबंधी रुचि—अपने भोजन के संबंध में नितान्त वीतराग होने पर भी मैं पाक-विद्या के लिए परिवार में प्रख्यात हूँ और कोई भी पाक-कुशल दूसरे के काम में

नुक्ताचीनी बिना किये नहीं रह सकता। दूध-घी मुझे अच्छा नहीं लगता, नहीं तो सब ठीक हो जाता।

आपकाज महाकाज—मेरे रातदिन नाराज होने पर भी उसने साफ धोती पहनना नहीं सीखा, पर मेरे स्वयं धोकर फैलाये हुए कपड़ों को भी वह तह करने के बहाने सिलवटों से भर देती है।

प्रातःकाल जल्दी उठना—बहुत रात गये सोने पर भी मैं जल्दी ही उठती हूँ और भक्तिन को तो मुझसे भी पहले जागना पड़ता है।

'मेम साब' से चिढ़--उसे क्या पता कि यह संबोधन मेरे मन में रोष की सबसे तुंग तरंग उठा देता है। भइया, माता, जीजी, दिदिया, बिटिया आदि न जाने कितने संबोधनों से मेरा परिचय है और सब मुझे प्रिय हैं पर यह विजातीय संबोधन मानो सारा परिचय छीनकर मुझे गाउन में खड़ा कर देता है।

इन रेखाचित्रों में पैदल पर्वतारोहण, पर्वतीय यात्रा में डांडी पर न बैठना, होम्योपैथी में रुचि, नौ दिन चले अढ़ाई कोस की सार्थकता, खिचड़ी में रुचि, पत्र-लेखन, प्रकृति-प्रेम आदि उनकी हौबी पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है।

सूक्तियां

स्थान-स्थान पर सूक्तियां भी मिलती हैं--

—आत्मघात मनुष्य की जीवन से पराजित होने की स्वीकृति है।

—भाव यदि मनुष्य की क्षुद्रता, दुर्भावना और विकृतियां नहीं बहा पाता तब वह उसकी दुर्बलता बन जाता है।

—जिनकी मित्रता का मूल 'करु परितोष मोर संग्रामा' में छिपा रहता है।

गोस्वामी तुलसीदास जी की 'नारि मुई गृह सम्पत्ति नासी, मूंड़ मुड़ाय भये संन्यासी' तथा 'परहित घृत जिनके मन माखी' आदि का सम्यक् प्रयोग मिलता है।

स्थान-स्थान पर संस्कृत की सूक्तियाँ—'निरस्त पादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते' मिल जाती हैं।

भाषा

रेखाचित्रों में चित्रात्मक भाषा तो है ही पर पात्रानुकूल भाषा भी है। भक्तिन के संवाद, बिबिया के रेखाचित्र में लखना, अहीर, काछी के संवाद इसका प्रमाण हैं। पर्वतीय कुली पहाड़ी में बोलता है और चीनी अपभ्रष्ट हिन्दी में।

मुहावरे-कहावतों का भी सटीक प्रयोग मिलता है, जैसे नौ दिन चले अढ़ाई कोस; एक पंथ दो काज, रोज कुआँ खोदना, रोज पानी पीना आदि।

काव्यात्मक भाषा

कवयित्री होने के नाते सभी रेखाचित्रों में काव्यात्मकता मिलती है, जैसे,

> "मीलों दूर से ही वह उज्ज्वल शिखर अक्षरहीन आमंत्रण के समान खुला दिखाई देता है। जैसे-जैसे हम उसकी ओर बढ़ते हैं, वह विस्तार में बढ़ता जाता है और उसकी रजत-विद्युत रेखाओं के समान झिलमिलाती हुई रेखाएं स्पष्टतर होती जाती हैं।"

व्यंग्यात्मक शैली

नालायक लड़के से लायक बहू का गठबन्धन कर उसने प्रमाणित कर दिया है कि वह बूढ़े विधाता के जोड़ का खिलाड़ी है।

आलंकारिकता

उपमाएं तो यत्र-तत्र फैली हुई हैं, कहीं-कहीं सुन्दर रूपक भी मिलते हैं,

> 'गोबर रूपी मेंहदी से नित्य रंजित हाथों की प्रत्येक उंगली युद्ध के अनेक रहस्यमय संकेत छिपाये रहती है।'

आँखों का तो महादेवी जी ने सूक्ष्मातिसूक्ष्म अध्ययन प्रस्तुत किया है, 'धूल भरी बरुनियों से घिरी और मलिन पलकों में जड़ी हुई उन तरल आंखों की चकित सभीत दृष्टि।'

लोक-शब्दावली का प्रयोग किया गया है, जैसे, घुघरी, गोंदरा, बरेठिन, धकियाना, भेंट, अंकवार आदि।

ग्रामीण और नागरिक जीवन पर भी आपकी लेखनी उठी है। ग्राम जीवन का यथातथ्य चित्रण भी इन रेखाचित्रों में मिलता है। आपका एक कथन यहाँ उद्धृत करना चाहता हूं,

"परमार्थ की उच्चतम भावना के साथ भी नागरिक जीवन में प्रवेश करने पर व्यक्ति को अविश्वास और सन्देह के अनेक पैने तीरों का लक्ष्य बनना पड़ता है। नागरिक जीवन का अकारण सन्देह, कर्मनिष्ठा को पंगु और उसका लक्ष्यहीन दुराव जीवन-दर्शन को भ्रान्त कर देता है। इसके विपरीत ग्रामीण जीवन की पुस्तक खुली ही मिलती है।"

इन रेखाचित्रों में जीवन के अनुभूत मार्मिक चित्र मिलते हैं। नारी-जीवन की समस्याओं, समाज की कुरीतियों, अशिक्षित नर-नारियों के करुण मार्मिक चित्र उपस्थित करने में महादेवी जी निष्णात हैं। इस संबंध में श्री गोपाल कृष्ण कौल का यह उद्धरण द्रष्टव्य है,

"हिन्दी में रामवृक्ष बेनीपुरी चोटी के रेखाचित्रकार हैं किन्तु उनके रेखाचित्र कहानी या कथाप्रधान होते हैं और आकृति प्रमुख होती है, किन्तु महादेवी के रेखाचित्रों में कहानी के साथ कविता भी रहती है। पं. बनारसी दास चतुर्वेदी ने अधिकतर बड़े लोगों के रेखाचित्र और संस्मरण लिखे हैं, किन्तु महादेवी ने जीवन में आने वाले उन उपेक्षित चरित्रों को अपनाया है जिनमें भारतीय समाज की ज्वलन्त समस्याएं साकार हैं।"

इन रेखाचित्रों में प्रगतिशील साहित्य के सभी तत्व मिलते हैं, जैसे, शोषित समाज के प्रति सहानुभूति, उपेक्षित एवं प्रताड़ित नारी के प्रति मानवीय दृष्टिकोण, श्रमिक के प्रति हार्दिक प्रेम आदि।

पथ के साथी (१९५६)

'पथ के साथी' में महादेवी जी ने 'रेखाएं' शीर्षक से अपने छह सहयोगियों का रेखांकन किया है। प्रारम्भ में 'प्रणाम' के अन्तर्गत रवीन्द्रनाथ टाकुर का काव्यात्मक भाषा में रेखाचित्र है जो पुस्तक में 'मंगलाचरण' का स्थान रखता है। इसके कुछ अंश यहाँ उद्धृत हैं,

"मुख की सौम्यता को घेरे हुए वह रजत आलोक-मंडल जैसा केश-कलाप। मानो समय ने ज्ञान को अनुभव के उजले झीने तन्तु में कात कर उससे जीवन का मुकुट बना दिया हो। केशों की उज्ज्वलता के लिए दीप्त दर्पण जैसे माथे पर समानान्तर रह कर साथ चलने वाली रेखाएं जैसे लक्ष्यपथ पर हृदय के विश्राम-चिह्न हों।"

"कुछ उजली भृकुटियों की छाया में चमकती हुई आँखें देखकर हिम-रेखा से घिरे अथाह नील जल-कुण्डों का स्मरण हो आना ही संभव था। दृष्टिपथ की बाह्य सीमा छूते ही वे जीवन के रहस्य कौंध-सी आँखें, एक स्पर्श-मधुर सरलता राशि-राशि बरसा देती थी अवश्य, परन्तु उस परिधि के भीतर पैर धरते ही वह सहज आमन्त्रण दुर्लंघ्य सीमा बनकर हमारे अन्तरतम का परिचय पूछने लगता था। पुतलियों की श्यामता से

आती हुई रश्मि-रेखा जैसी दृष्टि से हमारे हृदय का निगूढ़तम परिचय भी न छिप सकता था और न बहुरूपिया बन पाता था।"

"प्रशान्त चेतना के बन्धन के समान मुख पर बिखरी रेखाओं के बीच में उठी हुई सुडौल नासिका को गर्व के प्रमाण पत्र के अतिरिक्त कौन-सा नाम दिया जाये। पर वह गर्व मानो मनुष्य होने का गर्व था, इतर अहंकार नहीं, इसी से उसके सामने मनुष्य मनुष्य के नाते प्रसन्नता का अनुभव करता था स्पर्धा या ईर्ष्या का नहीं।"

"वे अपनी मिट्टी की कुटी श्यामली में बैठे हुए ऐसे जान पड़े मानो काली मिट्टी में अपनी उज्ज्वल कल्पना उतारने में लगा हुआ कोई अद्‌भुतकर्मा शिल्पी हो।"

अपने सहयोगियों पर लिखे हुए रेखाचित्र पहले ही पत्र-पत्रिकाओं में स्थान पा चुके थे। 'निराला' पर लिखा रेखाचित्र 'जो रेखाएँ न कह सकीं' शीर्षक से 'संगम' के दीपावली अंक में २००६ वि० में प्रकाशित हो चुका था। मैथिलीशरण गुप्त पर लिखा स्केच 'रेखाएँ' शीर्षक से 'नई धारा' के मई १९५१ के अंक में प्रकाशित हुआ था। प्रसाद पर रेखाचित्र 'संकेत' में संस्मरण के अन्तर्गत स्थान पा चुका है।

'दो शब्द' में लेखिका ने जो रेखाचित्रों के संबंध में स्पष्टीकरण किया है वह उल्लेखनीय है,

"अपने अग्रजों और सहयोगियों के संबंध में, अपने आप को दूर रखकर कुछ कहना सहज नहीं होता। मैंने साहस तो किया है, पर ऐसे स्मरण के लिए आवश्यक निर्लिप्तता या असंगता मेरे लिए संभव नहीं है। मेरी दृष्टि के सीमित शीशे में वे जैसे दिखाई देते हैं उससे वे बहुत उज्ज्वल और विशाल हैं।"

लेखिका ने यह अनुभव किया है कि "कलाकार को मनुष्य के रूप में पहचानने के लिए उसकी कला और कर्म में गठबन्धन होना ही चाहिए।"

इनमें साहित्यिक रेखाचित्रों के साथ कवियों के तूलिका से बने रेखाचित्र भी हैं।

एक : मैथिलीशरण गुप्त

इस प्रथम रेखाचित्र में राष्ट्रकवि गुप्त जी की चारित्रक विशेषताओं का भी अंकन किया गया है। उनकी कर्मनिष्ठता, भावुकता, स्पष्टवादिता, सरलता आदि गुण प्रधान रूप से इस चित्र में हैं।

उनकी आकृति का चित्र इस प्रकार है,

"गुप्तजी का बाह्य दर्शन में ऐसा कुछ नहीं है जो उन्हें असाधारण सिद्ध कर सके। साधारण मझोला कद, साधारण छरहरा गठन, साधारण गहरा गेहुँआ या हल्का साँवला रंग, साधारण पगड़ी, अँगरखा, धोती या उसका आधुनिक संस्करण गांधी टोपी, कुरता, धोती और इस व्यापक भारतीयता से सीमित साम्प्रदायिकता का गठबन्धन सा करती हुई तुलसी की कंठी।"

लेखिका ने उनके हास्य का भी सूक्ष्म निरीक्षण किया है,

"कभी-कभी तो उनका देखना और हँसना इस तरह साथ चलता है कि दृष्टि हँसती सी लगती है और हँसी से दृष्टि का आलोक बरसता जान पड़ता है।"

"उनकी हँसी जैसे तलवार का मखमली म्यान हो जाती है जिसका बाहरी कोमल स्पर्श भीतरी धार की पैनी कठिनता का आभास देता है।"

उनके व्यक्तित्व में समन्वय की भावना व्याप्त है। कुछ उपमाओं के माध्यम से उन्होंने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है,

"यदि हम लोहे के एक सिरे को आग में रखकर दूसरे को पानी में डुबा दें, तो उष्णता और शीतलता अपनी अपनी सीमा बढ़ा कर लोहे के मध्य भाग में एक सन्तुलित सर्दी-गर्मी उत्पन्न कर देंगी, पर दोनों सिरों पर आग-पानी अपने मूल रूपों में रहेंगे ही।

बिजली के पाजिटिव और नेगेटिव तारों के समान दो कोमल कठोर तार उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व में साथ-साथ फैले हुए हैं। उनके जीवन और साहित्य में उन तारों के संयोग का ही उजाला है।"

दो : सुभद्राकुमारी चौहान

लेखिका ने यह अनुभव किया है कि "बहिन सुभद्रा का चित्र बनना कुछ सहज नहीं है क्योंकि चित्र की साधारण जान पड़ने वाली प्रत्येक रेखा के लिए उनकी भावना की दीप्ति 'संचारिणी दीपशिखेव' बनकर उसे असाधारण कर देती है। एक-एक करके देखने से कुछ भी विशेष नहीं कहा जायगा, परन्तु सबकी समग्रता में जो उद्भासित होता था उसे दृष्टि से अधिक हृदय ग्रहण करता था।"

समाज में अनाचार देखकर जो विद्रोह कर उठती थीं, राजनीति के मंच पर जिन्होंने हुँकारा था, ऐसी विद्रोही व्यक्तित्व की अग्नि ज्योति को रेखाओं में बाँधना सरल कार्य नहीं।

नारी के हृदय की ममता पर लेखिका की टिप्पणी द्रष्टव्य है,

"नारी के हृदय में जो गम्भीर ममता, सजल-वीर भाव उत्पन्न होता है वह पुरुष के उग्र शौर्य से अधिक उदात्त और दिव्य रहता है। पुरुष अपने व्यक्तिगत या समूहगत रागद्वेष के लिए भी वीर धर्म अपना सकता है और अहंकार की तृप्ति मात्र के लिए भी। पर नारी अपने सृजन की बाधाएँ दूर करने के लिये या अपनी कल्याणी सृष्टि की रक्षा के लिए ही रुद्र बनती है। अत: उसकी वीरता के समकक्ष रखने योग्य प्रेरणाएँ संसार के कोष में कम हैं। मातृशक्ति का दिव्य, रक्षक, उद्धारक रूप होने के कारण ही भीमाकृति चंडी, वत्सला अम्बा भी है जो हिंसात्मक पाशविक शक्तियों को चरणों के नीचे दबाकर अपनी सृष्टि के मंगल की साधना करती है।"

"मधुमक्षिका जैसे कमल से लेकर भटकटैया तक और रसाल से लेकर आक तक, सब मधुर-तिक्त एकत्र करके उसे अपनी शक्ति से एक मधु बनाकर लौटाती है,बहुत कुछ वैसा ही आदान प्रदान सुभद्रा जी का था।"

मधुमक्षिका से कितनी सार्थक उपमा दी गई है।

"अजगर की कुंडली के समान, स्त्री के व्यक्तित्व को कसकर चूर-चूर कर देने वाले अनेक सामाजिक बन्धनों को उन्होंने तोड़ फेंका।"

तीन : निराला

लेखिका ने स्वीकार किया है कि 'मेरा प्रयास किसी जीवन्त बवण्डर को कच्चे सूत में बाँधने जैसा था, या किसी उच्छल महानद को मोम के तटों में सीमित करने के समान।'

निराला जी के सौहार्द और विरोध दोनों एक आत्मीयता के वृन्त पर खिले दो फूल हैं। वे खिलकर वृन्त का शृंगार करते हैं और झड़कर उसे अकेला और सूना कर देते हैं।

उनकी चारित्रिक विशेषताओं पर ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं,

"उनकी दृष्टि में दर्प और विश्वास की धूपछाँहीं द्वाभा है। इस दर्प का संबंध किसी हल्की मनोवृत्ति से नहीं और न उसे अहं का सस्ता प्रदर्शन ही कहा जा सकता है। अविराम संघर्ष और निरन्तर विरोध का सामना करने से उनमें जो एक आत्मनिष्ठा उत्पन्न हो गई है उसी का परिचय उनकी दृप्त दृष्टि में पाते हैं।"

इस रेखाचित्र में उनकी उदारता, दान-वृत्ति, अतिथि-प्रेम विशेष रूप से व्यक्त किया गया है, फिर भी आलंकारिक शैली में उनका व्यक्तित्व इस प्रकार कहा जा सकता है,

"जीवन की दृष्टि से निराला जी किसी दुर्लभ सीप में ढले सुडौल मोती नहीं हैं, जिसे अपनी महर्घता का साथ देने के लिए स्वर्ण और सौन्दर्य प्रतिष्ठा के लिए अलंकार का रूप चाहिए। वे तो अनगढ़ पारस के भारी शिला खंड हैं। न मुकुट में जड़ कर कोई उसकी गुरुता संभाल सकता है और न पदत्राण बनाकर कोई उसका भार उठा सकता है। वह जहाँ है, वहीं उसका स्पर्श सुलभ है। यदि स्पर्श करने वाले में मानवता के लौह परमाणु हैं तो किसी ओर से भी स्पर्श करने पर वह स्वर्ण बन जायगा। पारस की अमूल्यता दूसरों का मूल्य बढ़ाने में है। उसके मूल्य में न कोई कुछ जोड़ सकता है न घटा सकता।"

चार : प्रसाद

प्रसाद के प्रथम दर्शन का चित्र लेखिका ने इस प्रकार दिया है,

"उनका चित्र उन्हें अच्छा हृष्ट पुष्ट स्थावर बना देता है, पर स्वयं न वे उतने हृष्ट जान पड़े और न उतने पुष्ट ही। न अधिक ऊँचा न नाटा मझोला कद, न दुर्बल न स्थूल छरहरा शरीर, गौर वर्ण, माथा ऊँचा और प्रशस्त, बाल न बहुत घने विरल कुछ भूरापन लिये काले, चौड़ाई लिये मुख, मुख की तुलना में कुछ हल्की सुडौल नासिका, आँखों में उज्ज्वल दीप्ति, ओठों पर अनायास आने वाली बहुत स्वच्छ हँसी, सफेद खादी का धोती-कुरता।"

प्रसादमयी शैली में प्रसाद के महान् व्यक्तित्व का चित्र यह है,

"हिमालय के ढाल पर उसकी गर्वीली चोटियों से समता करता हुआ एक सीधा ऊँचा देवदारु का वृक्ष था। उसका उन्नत मस्तक हिम-आतप-वर्षा के प्रहार झेलता था। उसकी विस्तृत शाखाओं को आँधी-तूफान झकझोरते थे और उसकी जड़ों से एक छोटी पतली जलधारा आँख मिचौनी खेलती थी। ठिठुराने वाले हिमपात, प्रखर धूप और मूसलाधार वर्षा के बीच में भी उसका मस्तक उन्नत रहा और आँधी और बर्फीले बवण्डर के झकोरे सहकर भी वह निष्कम्प निश्चल खड़ा रहा। पर जब एक दिन संघर्षों में विजयी के समान आकाश में मस्तक उठाये, अलक-

स्नात वह उन्नत और हिमकिरीटिनी चोटियों से अपनी ऊँचाई नाप रहा था, तब एक विचित्र घटना घटी। जिस उपेक्षणीय जलधारा का प्रहार हल्की मुदमुदी के समान जान पड़ता था, उसी ने तिल-तिल कर के उसको जड़ों के नीचे खोखला कर डाला और परिणामतः चरम विजय के क्षण में वह देवदारु अपने चारों ओर के वातावरण को सौ-सौ ज्योतिश्चक्रों में मथता हुआ धरती पर आ रहा।"

मृत्यु से कुछ पूर्व उनका शिथिल शरीर रह गया था। व्यक्तित्व देवदारु के समान था जिसे जल की क्षुद्र धारा ने तिल-तिल कर काट कर गिरा दिया था।

पांच : पन्त

एक कवि सम्मेलन पर जब पंत को प्रथम बार देखा तो लेखिका ने क्या अनुभव किया, उसका स्मृतिचित्र अंकित किया गया है,

"अध्यापकों के परुषाकार समूह में कुछ हलचल-सी उत्पन्न करती हुई एक कोमल कान्त कृशांगी मूर्ति आविर्भूत हुई। आकण्ठ अवगुण्ठित करती हुई हल्की पीताभ-सी चादर, कंधों पर लहराते हुए कुछ सुनहले से केश, तीखे नक्श और गौर वर्ण के समीप पहुँचा हुआ गेहुआँ रंग, सरल दृष्टि की सीमा बनाने के लिए लिखी हुई-सी भवें, खिंचे हुए से ओठ, कोमल पतली उँगलियों वाले सुकुमार हाथ···यह सब देखकर मुझे ही नहीं मेरी अन्य संगिनियों को भी भ्रम होना स्वाभाविक था।"

उनके बाह्य आन्तरिक व्यक्तित्व पर एक टिप्पणी,

"सुमित्रानन्दन जी हिमालय के पुत्र हैं, पर उन्हें देखकर न उन्नत हिम-शिखरों का स्मरण आता है और न ऊँचे, चिर सजग प्रहरी जैसे देवदारु याद आते हैं। न सभीत करने वाले गहरे गर्त की ओर ध्यान जाता है और न उच्छृङ्खल गर्जन भरे निर्झर स्मृति में उदित होते हैं। वे उस प्रशान्त छोटी झील से समानता रखते हैं जो अपने चारों ओर खड़े शिखरों और देवदारुओं की गगनचुम्बी ऊँचाई को अपने हृदय में प्रतिम्बिबित कर उसे धरती के बराबर कर देती है, गहरे गर्तों को अपने जल से सम कर देती है और उच्छृङ्खल निर्झर के पैरों के नीचे तरल आंचल बिछाकर उसे गिरने, चोट खाने से बचा लेती है।"

पन्त कोमलता और सुकुमारता की मूर्ति मात्र हैं। उनमें प्रकृति प्रेम अटूट समाया हुआ है,

"उसे झरनों-नदियों में लास दिखाई दिया, पक्षियों-भ्रमरों में संगीत सुनाई दिया, फूलों-कलियों में हँसी की अनुभूति हुई, प्रभात का सोना मिला, रात में रजतराशि प्राप्त हुई, पर कदाचित् हँसने-रोने वाला हृदय इस भूलभुलैया भरी चित्रशाला में खोया रहा। आँसू के खारे पानी में डुबाये बिना सौन्दर्य के चित्र-रंग पक्के नहीं हो सकते, पर प्रकृति के पास सौन्दर्य है, आँसू नहीं।"

आज फिर वे अपने लम्बे गंगा-यमुनी केशों को लहराते हुए चिरपरिचित कवि रूप में उपस्थित हैं पर यह सब कुछ होते हुए भी उनके 'मन और शरीर दोनों में अपनी-अपनी सीमा में इस्पाती तत्त्व है।'

पन्त जी की हँसी पर लेखिका के विचार,

"सुमित्रानन्दन जी की हँसी पर श्रम-बिन्दुओं का बादल नहीं घिरा हुआ है, वरन् श्रमविन्दुओं के बादल के दोनों छोरों को जोड़ता हुआ उनकी हंसी का इन्द्रधनुष उदय हुआ है।"

छह : सियारामशरण गुप्त

शुद्ध गांधीवादी साहित्यकार 'बापू' की बाह्य आकृति इस प्रकार है,

"कुछ नाटा कद, दुर्बल शरीर, छोटे और कृश हाथ पैर, लम्बे उलझे रूखे से बाल, लम्बाई लिये सूखे मुख, ओठ और विशेष तरल आँखों के साथ भाई सियारामशरण ऐसे लगते हैं, मानो ठेठ भारतीय मिट्टी की बनी पकी कोई मूर्ति हो, जिसकी आँखों पर स्निग्धता का गाढ़ा रंग फेरकर शिल्पी, शेष अंगों पर फेरना भूल गया हो। उनकी जन्मतिथि भाद्र पूर्णिमा है जब आकाश, अपनी बादलों की गीली जटायें निचोड़ता रहता है और धरती वर्षा-मंगल के पर्वस्नान में भीगती रहती है।...वे शुद्ध खादी-धारी हैं। वस्त्रों का वजन कहीं क्षीण शरीर से अधिक हो जाय, इसी भय से मानो उन्होंने कम वस्त्रों की व्यवस्था की है। औरों की पाँच गज लम्बी और कम से कम बयालीस इंच चौड़ी धोती, इनके लिए तीन गजी और छत्तीस इंची हो जाती है।"

इन रेखाचित्रों में साहित्यकारों की निर्धनता का भी चित्रण किया गया है,

सुभद्रा---"एक बार जब भूख से रोती बालिका को बहलाने के लिए कुछ नहीं मिल सका तब उन्होंने अरहर दलने वाली महिला-कैदियों से थोड़ी सी अरहर की दाल ली और उसे तवे पर भूनकर

बालिका को खिलाया। घर आने पर भी उनकी दशा द्रोणाचार्य जैसी हो जाती थी जिन्हें दूध के लिए मचलते हुए बालक अश्वत्थामा को चावल के घोल से सफेद पानी देकर बहलाना पड़ा था।"

प्रसाद--"संभवत: रोग के निदान ने उनके सामने दो विकल्प उपस्थित किये। ऐसी चिकित्सा प्रचुर व्यय-साध्य होती है। और कभी-कभी रोग का अन्त रोगी के साथ होने पर परिवार को आत्मीय जन की वियोगावस्था के साथ विपन्नता का भार भी वहन करना पड़ता है।"

निराला--"निराला का सम्पूर्ण रेखाचित्र उनकी निर्धनता से भरा हुआ है।"

मुक्त हास में ममता, स्नेह तथा ऐसी आत्मीयता है जो सभी दुर्गुणों को बहा देती है।

पन्त जी की हंसी पर उनकी सूक्ष्म दृष्टि पड़ी थी उसका चित्रण दिया जा चुका है, प्रसाद जी की हंसी को आपने "ओठों पर अनायास आने वाली बहुत स्वच्छ हंसी" कहा है।

गुप्त जी की हंसी तो "जैसे तलवार का मखमली म्यान हो जाती है जिसका बाहरी स्पर्श भीतरी धार की पैनी कठिनता का आभास देता है।"

सुभद्राकुमारी चौहान की तो "हंसी को जमाकर गढ़े हुए से ओठ" माना है। उनके जीवन का ही मूलसिद्धान्त था, "मैंने हंसना सीखा है, मैं नहीं जानती रोना।"

इस प्रकार रेखाचित्र--साहित्य में महादेवी जी का स्थान मूर्धन्य है। आपने अपनी लेखनी से जहां अपने जीवन में आने वाले छोटे-छोटे पात्रों का चित्रांकन किया है वहां सहयोगियों पर भी अच्छे रेखाचित्र प्रस्तुत किये हैं। प्रसिद्ध उपन्यासकार जैनेन्द्र ने इन शब्दचित्रों पर अपना अभिमत व्यक्त करते हुए कहा था,

"मेरे ख्याल में वे शब्द-चित्र सुन्दर बन पड़े हैं और हम में सहानुभूतिपरक स्पन्दन जगाते हैं। यह कि वे महिम्न माने जाने वाले नायक-नायिकाओं के कल्पना चित्र नहीं हैं, एक अच्छी ही बात है।"

इस दिशा में विशेष प्रयास

१. हंस का रेखाचित्रांक

आन्तरप्रान्तीय साहित्यिक प्रगति का अग्रदूत 'हंस' का रेखाचित्रांक हिन्दी के सुप्रसिद्ध उपन्यासकार प्रेमचन्द के सुपुत्र श्रीपतराय के सम्पादकत्व में मार्च १९३९ ई. में प्रकाशित हुआ। हंस के सलाहकारी संपादक-मंडल में मौलाना अब्दुल हक़ (उर्दू),

वि. स. खाण्डेकर (मराठी), रा. वि. पाठक (गुजराती), कालिन्दीचरण पाणिग्राही (उड़िया), श्री नन्दगोपाल सेन गुप्त (बंगला), प्रो. मोहनसिंह (पंजाबी), नरोत्तमदास स्वामी (राजस्थानी), बी. अश्वत्थ नारायण राव, निट्टर श्रीनिवास राव (कन्नड़) जैसे विद्वान् थे अतएव यह अंक वस्तुत: जिस उद्देश्य को लेकर चला उसमें निरन्तर सफलता प्राप्त करता गया।

यह समय हमारे आलोच्य काल का ही प्रारम्भ नहीं था वरन् रेखाचित्र विधा का भी प्रारम्भिक काल था। कुछ गिने-चुने लेखक ही इस विधा में लिख रहे थे। फिर भी 'हंस' का यह विशेषांक सफल विशेषांक कहा जा सकता है। विशेषांक को प्रस्तुत करने में सम्पादक मण्डल को विशेष आयास करना पड़ा। स्पष्टत: सम्पादकीय में स्वीकार किया गया है,

"सच्चे और मार्मिक शब्द-चित्र लिखने का युग अभी भारत में नहीं आया है। हम में अभी आलोचना के प्रति सहिष्णुता का भाव नहीं आया है। हम अभी उचित मूल्यांकन का आदर करना नहीं सीखे हैं। बेलौस बात की क़द्र करना ज़रूरी है। पर हम वह धीरे-धीरे ही बर्दाश्त कर सकेंगे। और इसीलिए सूक्ष्म दृष्टि से हमारे गुण-दोषों पर प्रकाश डालने वाले भी हमारे यहाँ नहीं हैं। और किसी भी चीज़ की मर्यादाएं तो बनते ही बनते बनती हैं। इन कारणों से जैसा कुछ भी हम इस विशेष अंक को निकाल सके उसके अनुसार यह बहुत ही सफल कहा जा सकता है।"

रेखाचित्र विधा के शास्त्रीय पक्ष पर सम्पादक महोदय ने प्रकाश डाला है,

"रेखाचित्र शब्द का प्रयोग हिन्दी में रेखाओं से बनाये हुए चित्र (पेन्सिल स्केच) के लिए होता है। गुजराती में इसका प्रयोग अंग्रेज़ी के 'थम्ब नेल स्केच' जिसे हम हिन्दी में 'नखचित्र' कह सकते हैं के लिए किया जाता है। हमने गुजराती का 'रेखाचित्र' नखचित्र के स्थान पर अधिक उपयुक्त समझा है और उसका उपयोग किया है। 'शब्दचित्र' भी हम उसे कह सकते हैं पर वह उतना सफल अर्थवाहक न सिद्ध होगा।"

रेखाचित्रकार के कर्तव्य पर भी इसमें कुछ संकेत हैं,

"एक सफल रेखाचित्र के लिए आवश्यक है कि वह अपने विषय को अनजाने में पकड़े—उसकी तमाम बुराइयों और अच्छाइयों सहित, उसे मौका न दे कि वह प्रदर्शन का भाव लेकर उपस्थित हो। उसे चित्रित करने में केवल गुणों की ओर ही ध्यान न रहे, उसके अवगुणों का

भी सूक्ष्म और सहृदय निरीक्षण होना चाहिए। सहृदय यों कहा कि अन्यथा वह चित्र बहुत कटु हो जायगा क्योंकि बुराइयां किसमें नहीं हैं।"

इसमें केवल उन्हीं विभूतियों के शब्द-चित्र प्रकाशित किये गये हैं जो साहित्यिक हैं या राजनितिक होते हुए भी मूलतः साहित्यिक हैं। इसमें जिन विद्वानों पर रेखाचित्र संकलित हैं उनका विवरण इस प्रकार है—

हिन्दी

पत्रकार	बाबूराव विष्णु पराड़कर	ले. रामनाथ सुमन
साहित्यकार	सम्पूर्णानन्द	,, ,,
पत्रकार	पालीवाल जी	ले. बनारसीदास चतुर्वेदी
		पं॰ श्रीराम शर्मा
साहित्यकार	महापंडित राहुल	ले. अमिताभ (दिनकर)
साहित्यकार	पं॰ हजारीप्रसाद द्विवेदी	बलराज साहनी
अध्यापक	श्यामसुन्दर दास	जनार्दनप्रसाद झा
कवि	मैथिलीशरण गुप्त	जैनेन्द्रकुमार
	सियारामशरण गुप्त	अज्ञेय
	बच्चन	प्रकाशचन्द्र गुप्त
	सुकवि दिनकर	कामेश्वर शर्मा
	अज्ञेय	प्रभाकर माचवे
	निराला	रामविलास शर्मा
कथाकार	जैनेन्द्र	विष्णु
लेखिका-पद्य	महादेवी वर्मा	रामकुमार वर्मा
-गद्य	श्रीमती शिवरानी प्रेमचन्द	उषादेवी मित्रा

बंगला

शिल्पाचार्य	अवनीन्द्रनाथ ठाकुर	नन्दगोपाल सेन गुप्त
कवि	नजरुल इस्लाम	नन्दगोपाल सेन गुप्त
कथाकार	शैलजानन्द मुखोपाध्याय	नन्दगोपाल सेन गुप्त

मराठी

इतिहासकार	रियासतदार सर देसाई	श्री रा॰ टिकेकर

गुजराती

कवि	नानालाल दलपतिलाल	हीरालाल गोदीवाला
कवि	झवेरचंद मेघाणी	उमाशंकर जोशी
कवि	अरदेशिर एफ. खबरदार	सोफिया वाडिया
	रामनारायण विश्वनाथ पाठक	खंडेराव त्र्यंबक
कथाकार	काका कालेलकर	वामन चोरघडे
रेखाचित्रकार	श्रीमती लीलावती मुंशी	इन्द्र बसावड़ा

तमिल

साहित्यकार	राजाजी और उनकी धुंधली एनक	रा. कृष्णमूर्ति 'कल्की'
साहित्यकार	वी. एस. सामय्या	एन. चिदंबर सुब्रह्मण्यन
		का. श्रीनिवासाचार्य
सम्पादक	टी. एस. चोक्कलिंगम	ना. शिवरामन्
	ना. पिच्चमूर्ति	कु. प. राजगोपालन
	म. म. स्वामीनाथ अय्यर	के. स्वामिनाथन

कन्नड़

साहित्यकार	टी. पी. कैलासम	एस. कृष्ण शर्मा
	मास्ति श्रीनिवास	दा. रा. बेंद्रे

उर्दू

कवि	शब्बीर हसन जोश 'मलीहाबादी'	भुवनेश्वर प्रसाद
कवि	हफ़ीज जालंधरी	हरीचन्द्र अख्तर
	मौ. चिरागहसन हसरत	कृष्णचन्द्र

अन्य भाषाओं के अनुवादकों में बंगला से श्री रामचन्द्र वर्मा, गुजराती से इन्द्र बसावड़ा, श्यामू संन्यासी, तमिल से श्री का. श्री निवासाचार्य, कन्नड़ से गुरुनाथ जोशी, मराठी से श्री रामचन्द्र वर्मा प्रमुख रहे हैं।

सम्पूर्ण रेखाचित्रों में से केवल एक व्यक्ति ऐसा है जिसके दो रेखाचित्र लिखे गये हैं, वह हैं श्री कृष्णदत्त पालीवाल। दोनों लेखक भी हिन्दी के सुप्रसिद्ध वरिष्ठ रेखाचित्रकार हैं---पं० बनारसीदास चतुर्वेदी तथा पं० श्रीराम शर्मा। महादेवी जी

पर तो शब्द-चित्र हैं पर उनके द्वारा लिखा हुआ कोई नहीं है, यह अभाव खटकता है। एक रेखाचित्रकार हिन्दी में श्री रामनाथ सुमन ऐसे हैं जिन्होंने दो रेखाचित्र प्रस्तुत किये हैं––पराड़कर तथा सम्पूर्णानन्द। बंगला में श्री नंदगोपाल सेन गुप्त ने तीन रेखाचित्र प्रस्तुत किये हैं। कुछ साहित्यकार ऐसे भी हैं जिन्होंने रेखाचित्रकार के रूप में भी लिखा है और जिन पर रेखाचित्र लिखवाया भी गया है, जैसे गुजराती के सुप्रसिद्ध कवि उमाशंकर जोशी, हिन्दी में सर्व श्री जैनेन्द्र, अज्ञेय तथा दिनकर।

इस अंक में संकलित रेखाचित्रों का परिचय रेखाचित्र के विकासक्रम में रेखाचित्रकारों के साथ दिया जायेगा।

२. मधुकर का रेखाचित्रांक (१९४६)

इस दिशा में दूसरा सफल प्रयास रेखाचित्र के वरिष्ठ लेखक श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के सम्पादकत्व में 'मधुकर' का यह विशेषांक है। इसके सहकारी सम्पादक श्री यशपाल जी जैन थे। 'हंस' के विशेषांक से इसमें मौलिक भेद यह रहा कि जहाँ हंस का क्षेत्र भारत तक सीमित रहा वहाँ इसका परिवेश अधिक विस्तृत था। यद्यपि हंस के विशेषांक के अपेक्षाकृत यह सूक्ष्म था पर इसमें विश्व-प्रसिद्ध इस विधा के लब्ध-प्रतिष्ठ लेखकों की रचनाओं का संकलन किया गया था।

प्रारम्भ में ही 'सातवां व्यक्ति' शीर्षक से प्रिन्स आफ वेल्स पर एक मार्मिक रेखाचित्र है। काफी मना करने पर भी युद्ध के घायलों को देखने वह गये और एकाएक झुके और उन्होंने उस लोथड़े का, जो कभी आदमी था, अहिस्ता से मुख चूम लिया। उस वक्त ऐसा जान पड़ा मानो कमरा किसी दैवी करुणा एवं पवित्रता की आभा से दीप्त हो गया हो। इन्हीं प्रिन्स आफ वेल्स को इंगलैंड के दकियानूसियों ने गद्दी से उतारकर देश निकाला दे दिया था।

दूसरा श्री वनचर लिखित एक सच्ची घटना पर आधारित 'स्वातन्त्र्य परिचय' है।

तीसरा श्री रामवृक्ष बेनीपुरी का सुप्रसिद्ध रेखाचित्र 'बलदेवसिंह' है जिसकी चर्चा आगे बेनीपुरी जी के विस्तृत अध्ययन के साथ की जायगी।

चौथा श्रीमती मेरी बायल ओ रीली का 'एक-दो-तीन' शीर्षक से मार्मिक शब्द-चित्र है जिनके अनुवादक श्री ब्रजमोहन वर्मा हैं।

विश्वप्रसिद्ध रेखाचित्रकार ए. जी. गार्डिनर का 'युद्ध की एक घटना' शीर्षक रेखाचित्र है।

सातवें के अन्तर्गत तुर्गनेव के चार स्केच हैं, १. मूर्खराज, २. दो धनी, ३. माशा, ४. भिखारी ।

आठवें में 'एक सच्ची कहानी' में पं. सुन्दरलाल ने यह प्रतिपादित किया है कि आदमी की जिन्दगी में कब कैसा क्रान्तिकारी परिवर्तन हो जाय इसको कोई नहीं जानता ।

नवें में 'खानचन्द गौतम' ने पिल्ले लड़ाने की तरकीब में हिन्दू-मुसलमानों के दंगे का डरावना स्वप्न प्रस्तुत किया है ।

दसवें में विश्वप्रसिद्ध उपन्यासकार गोर्की का किसान-सेवक 'गुसेव', ए. जी. गार्डिनर का 'वह अमर मल्लाह' तथा 'ग्रामीण शिक्षक—शालिग्राम सिंह', 'बुकसेलर मकलारिन', 'चार सिपाही' शीर्षक से संकलित हैं ।

ग्यारहवें में श्रीराम शर्मा का 'वे कैसे जीते हैं' शीर्षक से ऐसे पिता की करुण कहानी है जिसका पुत्र मर गया है । आपका एक दूसरा प्रसिद्ध रेखाचित्र 'चन्दा' भी इसमें सम्मिलित है ।

बारहवें में वाशिगटन इरविंग का 'विधवा और उसका बेटा' शीर्षक चित्र है जिसके अनुवादक हैं श्री यशपाल जैन ।

तेरहवें में वंशीधर विद्यालंकार जी ने 'माता जी की स्मृति में' शीर्षक स्मृति-चित्र प्रस्तुत किया है ।

चौदहवें में सम्पादक बनारसीदास चतुर्वेदी ने स्वयं गोर्की और लेनिन की भेंट का चित्र 'वह दिव्य आलिगन' शीर्षक से प्रस्तुत किया ।

पन्द्रहवें में स्व. नन्दकुमार देव शर्मा का 'रुद्रदत्त शर्मा' शीर्षक जीवन-चरित है ।

सोलहवें में प्रसिद्ध कहानीकार श्री विष्णु प्रभाकर का 'सियारामशरण : मेरी नजर में' शीर्षक शब्द-चित्र है ।

सत्रहवें में नेविनसन का 'स्वामिभक्ति का पुरस्कार' शीर्षक से कुत्ते पर लिखा हुआ मार्मिक चित्र है ।

अठारहवां श्री हरिशंकर शर्मा का 'पंक्चुऐलिटी' शीर्षक से एक व्यंग्य-चित्र है ।

आदर्श कुमारी यशपाल का 'मेरे नाना जी', सत्यवती मल्लिक का 'फ़रीदी साहब', संत निहाल सिंह का 'अमर पत्रकार विलियम टामस स्टैड' तथा वंशीधर विद्यालंकार का 'मौलवी अब्दुल हक़' पर लिखे गये रेखाचित्र भी इस अंक में प्रकाशित हुए हैं ।

विशेषांक के प्रारम्भ में सम्पादक महोदय ने संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित भूमिका में रेखाचित्र के विकास पर प्रकाश डाला है ।

३. संकेत

प्रयाग से विभिन्न विधाओं में लिखी सामग्री का संकलन छठवें दशक में प्रकाशित हुआ। इसकी सूची में 'स्केच' के अन्तर्गत छह रेखाचित्र हैं जब कि पुस्तक के भीतर प्रारम्भ में ही तीन रेखाचित्र हैं तथा मध्य में फिर तीन 'स्केच' शीर्षक के अन्तर्गत हैं। प्रारम्भ में ही इस विधा को स्थान मिलना इसके महत्त्व को प्रतिपादित करता है। प्रारम्भ में तीन रेखाचित्र इस प्रकार हैं,

१. महेश पांडे : लेखक आचार्य शिवपूजन सहाय
२. बूढ़ा कुत्ता : रामवृक्ष बेनीपुरी
३. पुराना नगर : प्रकाश चन्द्र गुप्त

मध्य में 'संस्मरण' शीर्षक के अन्तर्गत हजारीप्रसाद जी द्विवेदी का 'गुरुदेव' शीर्षक से संस्मरणात्मक शैली में लिखा हुआ रेखाचित्र है।

पुन: मध्य में स्केच के अन्तर्गत ओंकार शरद का 'मौत का सट्टा', तेज बहादुर चौधरी का 'सूखी बेल' तथा कौशल्या अश्क का 'नरोत्तम बाबू' शीर्षक से तीन स्केच हैं।

४. विशाल भारत का शहीद अंक

'चाँद' के फांसी अंक की परम्परा में हिन्दी के वरिष्ठ रेखाचित्रकार पं. श्रीराम शर्मा जी के सम्पादकत्व में 'विशाल भारत' का शहीद अंक १६५६ में प्रकाशित हुआ। इसमें शहीदों पर श्रीराम शर्मा, बनारसीदास चतुर्वेदी, मन्मथ नाथ गुप्त, हरिशंकर शर्मा आदि के सुन्दर संस्मरणात्मक शैली में रेखाचित्र हैं। 'शहीद अंक' में शहीदों पर लिखे गये रेखाचित्रों में बाह्याकृतियों के अंकन और आलेखन में प्रधान दृष्टि यही है कि शहीद महामानव थे, साथ ही मानवता के उद्धारक।

गणेश शंकर विद्यार्थी जी पर नवीन जी का एक सुन्दर रेखाचित्र है,

> "गणेश जी बहुत दुबले-पतले व्यक्ति थे। बड़े मिताहारी थे······ उनकी मुखाकृति सुन्दर थी। अत्यन्त संवेदनशील, तेजपूर्ण नेत्र, गुणग्राही चेतनावान अधर, दृढ़ चिबुक, स्थिर संकल्पपूर्ण जवड़े, जिन्तन कष्ट तपरेख मण्डित भाल प्रदेश, खद्दर की धोती, खद्दर का कुर्ता, जिसका ऊपर का बटन खुला हुआ, कभी नग्न सिर, कभी खद्दर की टोपी, कभी गले में दुपट्टा, अधिकतर नहीं। आकर्षणयुक्त मुस्कान, नेत्रों से झांकती हुई करुणा, निश्छल वदन, जल्दी-जल्दी निर्भीकता से डग भरते हुए चलना, आडम्बर की आत्यन्तिक शून्यता, मुक्त हास। कुछ ऐसा था गणेश जी का स्वरूप।"

५. पंत-स्मृति-चित्र

इधर लगभग सभी अभिनन्दन ग्रन्थों के प्रारम्भ में व्यक्तित्व के अन्तर्गत कुछ अच्छे रेखाचित्र भी प्राप्त होते हैं। इस परम्परा में हम सेठ गोविन्ददास, मैथिलीशरण गुप्त आदि के अभिनन्दन ग्रन्थ ले सकते हैं। इस दिशा में एक उल्लेखनीय प्रयत्न 'श्री सुमित्रानंदन पंत-स्मृति-चित्र' शीर्षक से किया गया जिसमें लगभग ३९ व्यक्तियों द्वारा विभिन्न दृष्टिकोण से खिचे चित्र हैं। कुछ चित्र इस प्रकार हैं,

"दुबला छरहरा बदन, गेहुंआ रंग, कोमल त्वचा, भिनती हुई मूंछें, लम्बे काले घुंघराले घने संभालकर रखे हुए बाल, बन्द गले का लम्बा काला कुछ ढीला-सा कोट, ढीला ही पाजामा, कुछ अपने में खिची हुई मुद्रा, एक ओर हल्की झुकी गर्दन, ज़रा ऊपर उठी अधखुली आंखें और चेहरे पर मन्द स्मित--जो अब सोचता हूं कि घूरने वालों की दृष्टि से रक्षा के लिए कवच का काम देता रहा होगा। उस समय का पंत का यह रूप, मेरे मन में आता है। सब कुछ मिलाकर उनका एक अत्यन्त सुकुमार और आकर्षक व्यक्तित्व था।"

(रामचन्द्र टण्डन)

"वह सज्जन विद्यार्थी-से नहीं लगते थे, हालांकि उम्र उनकी इतनी कम थी कि विद्यार्थी हो भी सकते थे। उनकी धजा विद्यार्थियों-जैसी न थी, सुनहरी पुट लिये हुए लम्बे-लम्बे केश उनके ईषत् गौरवर्ण, चमकीले मूंगे के रेशमी कुरते तथा दूध से सफेद झकाझक पाजामे पर बड़े खिल रहे थे।"

(आर. एन. देव)

श्री देव के ही कुछ अन्य रेखाचित्र भी द्रष्टव्य हैं—

"वे अब पहले जितने दुबले-पतले न थे, बड़ी ऊंची-सी जैकित और ढीली-सी पतलून पहने रहते थे, बाल अब भी वैसे ही लम्बे-लम्बे थे, पर उनकी पहले की सुनहरी कान्ति अब खो चुकी थी। वे एकदम अपने में डूबे हुए-से लगते, नित्य प्रति के यथार्थ जीवन से बहुत दूर। उनकी उस सुन्दर एकान्तता को भंग करना क्रूरता होती। उस समय वे मानो अत्यन्त निर्मल भावनाओं के संसार में रमते थे।"

"उनमें अपनी जन्मभूमि के रंगों का सौन्दर्य मानो समाया हुआ है—हरीतिमा, नीलशोण और रत्नजटित नीलिमा का समुच्चय, कौसानी से दीख पड़ने वाली धूप में चमकती हुई शान्त पर्वत शृंखला की

उत्तुंगता मानो प्रतिबिम्बित होती है । आभामंडल की तरह उनके व्यक्तित्व को वलयित करने वाले इस सौन्दर्य को भला थोड़े-से रंगों के सहारे चित्रफलक पर कैसे उतारा जा सकता है ? यही कवि का सच्चा मुखमण्डल है—वह नहीं जिसमें परिवर्तन आ गया है, जिसमें ओठों के कोने पहले की अपेक्षा कुछ सिमिट आये हैं और कपोल युवावस्था की भांति उभरे हुए नहीं रह गए ।"

कविवर नरेन्द्र शर्मा के दो वाक्य इस संबंध में द्रष्टव्य हैं,

"पंतजी का व्यक्तित्व तब भी बरगद-जैसा छायादार नहीं था, पर्वतीय 'सरल' वृक्ष के समान सरल था । आज वही व्यक्तित्व सरल से देवदारु बन गया है ।"

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी

"उनकी वेश-भूषा अप-टु-डेट विलायती ढंग की थी । सूट पहने हुए थे । उनके बाल खूब बरीने से सजे हुए-बाब हैली में संवारे गए थे, तेल न लगा होने के कारण वे कुछ रूखे और छितराये हुए थे । उनका मुख दीप्तिमान था, पर वह दीप्ति पुरुषोचित न थी । रंग कापली निखरा हुआ—गौर ही कहा जा सकता था ।"

राष्ट्रकवि दिनकर

"पंतजी को देखते ही सहसा यह भान होता है, मानो आप परियों के देश से उतरे हुए किसी देवर्षि के सामने खड़े हों । छोटा, हलका शरीर, चेहरे पर सौम्य शान्ति जो सचमुच ही देवताओं की शांति है, और सिर पर घने लहराते बाल, जो सुन्दर-से-सुन्दर रमणी को भी और सुन्दर बना सकते हैं । केवल बाल ही नहीं, पंत जी का कोट, पंत जी की पतलून, यहां तक कि उनका कुरता भी ऐसे काट का होता है जिससे नारी-जाति के प्रति उनके असीम आदर की सूचना मिलती है, जिससे यह साफ जाहिर होता है कि यह पुरुष नारीत्व पर आसक्त नहीं, स्वयं नारी बन जाने को बेचैन है । कविता को कविता कहिए या काव्य, धर्म से वह नारी ही होती है । यह नारीत्व पंतजी के मात्र काव्य में ही नहीं, उनके व्यक्तित्व और स्वभाव में भी समाविष्ट है ।'

शिवदानसिंह चौहान

"पुश्किन और शेली जैसी सूक्ष्म वृत्तियों, सूक्ष्म भाव-भंगियों, सूक्ष्म स्वर-लहरी, सूक्ष्म और कोमल शरीर का यह कवि, जिसकी केश-सज्जा और पोशाक भी एक सौन्दर्यप्रेमी नारी की तरह है, कम-से-कम साधारण अर्थों में व्यावहारिक और दुनियादार तो खैर नहीं हो सकता, शायद युग की हलचलों के प्रति भी जागरूक नहीं हो सकता।"

इस पुस्तक में सबसे उल्लेखनीय रेखाचित्र है—स्नैपशाट टेक्नीक में पंतजी के व्यक्तित्व पर 'रेशमी बाल, फूल और अजंता की मुद्राएं' शीर्षक से। इसके लेखक हैं प्रसिद्ध कवि गिरिजाकुमार माथुर,

"बाहर फुलवारी, भीतर चिन्तन डूबा गोधूलिमय कमरा, जिसमें पंतजी रहते हैं। व्यक्तित्व के बाहरी उपकरणों में अपने ही डिजाइन किये उनके कपड़े हैं। गोल कालरदार कमर तक का एक काज वाला कोट, गोल कंगूरे बनाते बुने हुए ऊनी बेरेज। कभी-कभी इन कपड़ों के संबंध में मासूम मजाक भी हो जाते हैं। हमारे एक हंसोड़ मित्र ने एक बार कहा कि कहावत तो थी कि 'एक पंथ दो काज होते हैं', यहाँ तो एक पंत एक ही काज है।"

"लगता है कि जब वे बात करते हैं, तो भीतरी मन कहीं दूर होता है—किसी अनबूझी, अभेद्य, धुंधला आभास देती समस्या के समाधान में, जो अभी-अभी मन में हौले-से उदित हुई, पर जिसका स्पष्ट परिचय नहीं मिला है। लगता है जैसे दो व्यक्तित्व समान्तर चल रहे हों—एक यहां, अभी, इसी जगह, एक दूर, समय पार, कहीं।"

इसमें ही महादेवी वर्मा तथा जगदीश चन्द्र माथुर के शब्द-चित्र भी उल्लेखनीय हैं।

'कौमुदी' का रामकुमार-विशेषांक भी इस दिशा में सफल प्रयास है, जिसमें अनेक व्यक्तियों ने डा. वर्मा पर लिखा है। कुछ स्थल उद्धृत कर रहा हूं—

डा. सियारामशरण प्रसाद

"गेहुंआ रंग, कसा हुआ स्फूर्तिमान शरीर, लम्बा कद, दीप्त ललाट, मुस्कानयुक्त अधर, गहराई में पैठने वाली तीक्ष्ण आंखें वर्मा जी के सौन्दर्य पूर्ण व्यक्तित्व के उपकरण हैं। उनके भाल की चमक किसी भी मिलनेवाले व्यक्ति पर बिना छाप डाले नहीं रहती। और यह तेज

उनके दृढ़ व्यक्तित्व, निष्ठायुक्त आचरण, धार्मिक मनोबल का परिचायक है ।"

गोपीकृष्ण गोपेश

गोपेश जी का 'सावनी सावनी-सा व्यक्तित्व' शीर्षक डा. वर्मा के सात स्मृति-चित्रों में है, जिसका प्रारम्भ इस प्रकार है,

"बादलों की सुरमई कोरों के उभार और दबाब की बात है···यह है शब्द-चित्रों का एक इन्द्र धनुष···ऐसे जाने कितने इन्द्रधनुष बन सकते हैं डाक्टर रामकुमार वर्मा के जीवन की झांकियों से। बड़ा सावनी-सावनी-सा व्यक्तित्व है उनका।"

इसके अतिरिक्त इसमें प्रो. प्रकाशचन्द्र गुप्त, डा. वृन्दावनलाल वर्मा, डा. बलदेव प्रसाद मिश्र, डा. प्रभाकर माचवे तथा डा. कमलेश के शब्द-चित्र भी उल्लेखनीय हैं ।

६. आलोचना

'आलोचना' के स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी साहित्य विशेषांक में प्रसिद्ध साहित्यकारों पर रेखाचित्र भी हैं ।

अध्याय ५

हिन्दी रेखाचित्र साहित्य का उत्कर्ष

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' हिन्दी के वरिष्ठ पत्रकार होने के साथ-साथ साहित्यकार भी हैं। शैली की दृष्टि से बेनीपुरी जी की टक्कर का यदि कोई दूसरा रेखाचित्रकार हो सकता है तो वह प्रभाकर जी ही हैं। जीवन को प्रेरणाएँ देने वाले निबन्धों को लिखने में तो आपकी सानी नहीं है—आप अग्रणी हैं, छोटे-छोटे विषयों पर भी रोचक शैली में निबन्ध लिखने में आप सिद्धहस्त हैं जो पाठक को नवजीवन प्रदान करने वाले सिद्ध होते हैं। 'नया जीवन' पत्र आपके सम्पादन में वस्तुतः नया जीवन ही प्रदान करता है। सीधे, सरल तथा छोटे-छोटे वाक्यों में इतनी मार्मिक तथा गम्भीर बात आप लिख देते हैं कि देखते ही बनता है। स्निग्ध, मधुर तथा स्नेहासिक्त व्यक्तित्व प्रभाकर जी के निबंधों में भी झांकता है।

संस्मरण लिखने की कला में तो आपको कोई पा नहीं सकता। आपने कभी भी अपने जीवन के किसी भाग में किसी घटना को या व्यक्ति को देखा है, बस उसको ही आप अपना विषय बना सकते हैं। घटना या व्यक्ति बड़े-से-बड़ा और छोटे-से-छोटा हो सकता है। कोई भी विषय आपकी चुस्त शैली और प्रांजल भाषा में ढलकर निखर उठता है। प्रभाकर जी के पास शैली की ऐसी खराद है कि कितना भी भद्दा खराब 'रॉ मैटीरियल' हो आपके पास से साफ़-सुथरा और निखार लेकर निकलेगा। जीवन के स्वर-साधक प्रभाकर जी एक नई शैली के जन्मदाता हैं। उनकी शैली का एक नमूना द्रष्टव्य है,

> 'दुमंजिले छज्जे पर और नीचे कोई ८-१० हजार आदमी। दस हजार आदमी तो बीस हजार आँखें और दस हजार दिल, दिमाग़ और चेहरे। इन बीस हजार आँखों में एक तस्वीर जवाहरलाल, इन दस हजार दिल-दिमागों में एक धुन जवाहरलाल और यह चेहरे? उमगों में फूटे पड़ते हैं खुशी से खिले-से, जैसे हजारों कैमरे एक साथ एक ही आदमी का फोटो ले रहे हों।'

यह घटना कांग्रेस महासमिति के अधिवेशन की है ।

'इन्दौर के आंगन में' से, 'नया जीवन', १२ सितम्बर १९५२

आपके 'भूले हुए चेहरे' में रेखाचित्र के कई अच्छे उदाहरण हैं ।

'ज़िन्दगी मुस्कराई' १९५३ के संबंध में लेखक ने स्वयं लिखा है,

> 'ज़िन्दगी मुस्कराई' असल में कोई पुस्तक नहीं जीवन की 'रिफ़ाइनरी' (संशोधनशाला) है जिसमें जीवन शुद्ध हो उद्‌बुद्ध होता है । इसी की शाखाएँ हैं—बाजे पायलिया के घुंघरू, माटी हो गई सोना, महके आंगन चहके द्वार, दीप जले शंख बजे, और जिन्दगी लहलहाई ।'

ज़िन्दगी मुस्कराई में ३९ विशेष रूप से लिखे गये संस्मरणात्मक निबन्ध हैं। पुस्तक की पृष्ठभूमि में ही लेखक ने स्वीकार किया है कि 'अपने प्रारम्भिक जीवन में एक दिन खेतों पर गया तो अजब हरियाली थी । उससे प्रेरणा मिली और हृदयेश जी की शैली में मैंने एक गद्यकाव्य लिखा, कई पेज का । आज सोचता हूँ उसमें **गद्यकाव्य और स्केच का समन्वय था ।**'

> 'नगर के एक प्रधानाध्यापक गंगाप्रसाद 'प्रेम', बढ़े हुए बाल, खादी का कुरता, चिनी हुई खादी की धोती, हाथ में घड़ी, माथे पर चन्दन की बिन्दी और अत्यन्त मधुर बोल के सम्पर्क में रहकर आपको लाभ हुआ ।'

आपने लेखकीय जीवन के रहस्य भी लिखे हैं,

> 'छपाने के लिए कभी मत लिखो, सिर्फ़ लिखने के लिए लिखो··· कभी फ़ालतू चीज न लिखो, वही लिखो जिसमें पूरा मन लगे, पूरा रस मिले और पूरी डुबकी आये ।'

रेखाचित्र, संस्मरणादि विधाओं में लिखने का विधिवत् प्रयास सन् १९३२ की जेलयात्रा में हुआ जब प्रभाकर जी ने सहारनपुर जेल के खेतों पर बैठकर अपने पिता के संस्मरण लिखे कोई साठ सत्तर पेजों में, और फैजाबाद पहुँचकर कुछ ऐसे लेख लिखे जिन्हें बाद में **श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने स्केच बताया ।**···

> 'अपने स्केच और संस्मरणों की कलम को माँजने में मैंने बहुत परिश्रम किया। ···श्री चतुर्वेदी जी का प्रारम्भ मुझे गज़ब का लगा। शर्मा (पं. श्रीराम) जी की प्रवाह, शक्ति-और चित्रण, सुमनजी (रामनाथ) के विश्लेषण-कौशल और इन्द्र जी की घटना-शृंखला के सामने मेरा सिर झुक गया । इस अध्ययन की छाया में मैंने **कोई सौ तरह से स्केच और संस्मरण लिखे होंगे।** लिखे, काटे, फिर लिखे

और फाड़े।'''इस तरह मैं अच्छे स्केच और संस्मरण लिखने लगा और कमाल पैदा करने का नया सूत्र मैंने रखा। अपनी कमियों पर हमेशा आँख गड़ाये रहो और दूसरों की उन विशेषताओं पर गहरा ध्यान दो कि जिनसे उन्हें यश और सफलता मिली।'

'मैंने सोचा मैं ऐसी शैली पर लिखूंगा जिसमें यह सब हो और इस तरह हम जनता को वह देंगे जिसकी उसे जरूरत है, पर इस ढंग पर कि वह उसे ले सके, पचा सके, बिना कोई बोझ भार उठाये। संक्षेप में, ज्ञान उपनिषद् का-सा, पर अभिव्यक्ति लोरियों की-सी।

सन् १९३५ से १९५० तक के इन पन्द्रह वर्षों में मैं अपने स्केच और संस्मरणों में भी नये प्रयोग करता रहा और बराबर उन्हें नयी चमक देता रहा। इस तरह अनजाने ही इन लेखों में स्केच की चित्रता और संस्मरण की आत्मीयता भी आती गयी।'

स्केच लिखने की पृष्ठभूमि पर्याप्त रूप से लेखक के इन उद्धरणों से स्पष्ट हो जाती है।

'जब वे मुशायरे के कन्वीनर थे' में नानकराम जी का रेखाचित्र इस प्रकार है,

'उनकी हुलिया एक फ़टीचर का तामझाम रहती है। पैरों में ऐसा सैण्डिल, जिसके तस्मे नदारद या फिर मुड़कर पंजों में दबे हुए, जो हर कदम पर सैण्डिल की सपरसट ध्वनि के साथ मंजीरे की टुनक-सी ताल देते चलें। पैरों में एक पजामा, जो साइकिल में उलझने के कारण पाँवचों पर फटा हुआ और जिसमें कभी तो आलपीन से जोड़ लगाया हुआ, कभी गाँठ बाँधकर और कभी यों ही लपर-सप्प, रास्ते की मिट्टी से हर हालत में कृष्णमूर्ति। गले में एक कमीज, जिसमें पूरे बटन एक ही तरह के कभी किसी ने नहीं देखे, इस बारे में मैं कसम खा सकता हूँ। उनके सिर पर चाहे उनके ही पड़बाबा की खरीदी फैल्ट कैप रहे या धोबी के घर से भूल में किसी दूसरे की आई गांधी कैप, उसके चारों ओर तेल की चिकनाई का काला घेरा आवश्यक है। बात यह है कि सरसों के तेल की उपयोगिता में बाबू नानकराम का अखंड विश्वास है।'

जीवन की सामान्य से सामान्य घटनाओं को कुशलता से प्रस्तुत किया गया है 'बाजे पायलिया के घुंघरू' में। इसमें मिश्र जी के ३६ व्यक्तिगत निबन्धों का संग्रह है। निबंधों में चित्रात्मकता है। सन्ध्या का एक चित्र द्रष्टव्य है,

'सन्ध्या का समय, सामने के ऊँचे पर्वत-शिखर पर काले बादल का एक टुकड़ा और उसके किनारे डूबते सूर्य की किरणों के आलोक में स्वर्णाभा, प्रकृति की कारीगरी का यह प्रदर्शन, यह अद्‌भुत प्रदर्शन।

पर्वत-सुन्दरी गोटे का चूनर ओढ़े किसी की प्रतीक्षा में है या ताल के सम पर छम से ठुमककर नृत्य की मुद्रा में स्थिर हो गयी है।

बादल का टुकड़ा नीचा हो गया है और वह स्वर्णरेखा ठीक शिखर पर आ लगी है। सन्ध्या के झुरपुट में हरित श्यामल शिखर और शुद्ध स्वर्ण की यह मोटी रेखा। वातावरण शान्त, आँखों में स्वर्ण-प्रकाश और मन लीन।'

'महके आँगन चहके द्वार' (१९६३) भी लेखक के व्यक्तिगत निबंधों का संग्रह है पर इसकी भूमिका में एक रेखाचित्र 'श्रीमती रमा जैन' शीर्षक से है, इस शब्द-चित्र का अन्तिम भाग इस प्रकार है,

'श्रीमती रमा रानी जैन का व्यक्तित्व विशिष्ट है, बहुमुखी है। उस पर संक्षेप में कुछ कहना असम्भव है। वे आदर्श नारी, आदर्श सास, आदर्श माता, आदर्श समाज-सेविका और आदर्श नागरिक हैं। उनमें दृढ़ता और कोमलता का अद्‌भुत संगम है। वे चाँदनी का इस्पात हैं, इस्पात की चाँदनी हैं। वे चिर-प्राचीन हैं, नित-नूतन हैं। संक्षेप में गृहस्थ का एक जीवन्त विश्वविद्यालय हैं—वे, वे हैं।'

कहीं-कहीं एक वाक्य में ही सारा व्यक्तित्व सामने खड़ा हो जाता है,

'श्रीमती एलेन राय विचारक-लेखिका और श्रीमान् राय विचारकता एवं साहित्य के सागर---एलेन राय में लीन हो गयीं। राय क्रूर कठोर क्रान्ति की लपटों के खिलाड़ी और एलेन सुकुमार, शान्ति एवं सन्तुलन की गागर।'

'माटी हो गई सोना' में बल और बलिदान की जीवन-चेतना देने वाले सत्रह अमर अक्षर-चित्र हैं, प्राचीन काल से लेकर आधुनिक राष्ट्रीय महापुरुषों के हृदयस्पर्शी रेखाचित्रों का संग्रह, जिनमें वर्णित कथाओं को लेखक ने खून से लिखा है, कलेजे के खून से, आत्मा के खून से और कलेजे का खून ही इन कथाओं की कला है।

लेखक ने राष्ट्रहित के लिए जीवन की बलि लगा देने वाले शहीदों के रेखाचित्र इसमें प्रस्तुत किये हैं–

'बयालीस के ज्वार की उन लहरों में' से एक लोमहर्षक उद्दाम तरंग,

'लोहे की नोंकदार खूंटे पर, जबर्दस्ती उन्हें (पटना के

प्रतिष्ठित नागरिक-रामसिंह को) गुदा के सहारे बैठाया गया और दो गोरे सिपाहियों ने उनके कंधों पर अपना जोर डालकर उन्हें तब तक दबाया, जब तक कि वह खूंटा उनके पेट, कलेजे, कण्ठ और खोपड़ी को फाड़कर ऊपर नहीं निकल गया।'

'रूस के दमन-दावानल की उन लपटों में' लुजेनोवस्की की निर्लज्जता, पैशाचिकता और अराजकता की तामसी तमिस्रा का करुण चित्रण मिलता है।

'अबीसीनिया के उस सूने शहर में' रोमांचकारी मार्मिक चित्र है 'घुटनों तक जमीन में गड़ी हुई लाइना, अर्धनग्न और स्तनहीन लाइना, हण्टरों से पिटती हुई लाइना' का।

'लाल अंगारों की उस मुसकान में' रणथम्भोर के किले के युद्ध का वर्णन सजीव हो उठा है।

'जलती चिता की उस गोद में' ताहिरा का सफल मार्मिक शब्द-चित्र है जिसने ईरान में पहली बार बुर्का उतारकर फेंका था—

"बोल बन्द हुए तो बुरका हिला और दो कमल नाल सी कोमल भुजाओं ने अपने को ढके उस बुरके को फाड़कर तार-तार कर दिया। अब सबके सामने एक जवान औरत, जिसका रंग चांदनी-सा और रूप गुलाब-सा, जिसके बोल बुलबुल-से, स्थिरता पहाड़-सी और गरमी ज्वालामुखी की तरह। पत्थर की अहिल्या-से सब जहाँ-के-तहाँ खड़े रह गये, सन्न भी और सन्नाटे में भी। सबको ऐसा लगा कि ईरान में एक भंयकर भूकम्प उमड़ आया है।"

फिर इस अपराध पर सुनयना, सुवयना, सुमुखी, सुकण्ठी, सुकुमारी ताहिरा एक खच्चर की पूंछ से पैरों के द्वारा बँधी थी और धड़ सड़क पर घिसटता जा रहा था।

'ग्रीस के उन तूफानी दिनों में' हेलेना का रेखांकन है—स्फुरणमयी, अंगारमयी, विद्रोहमयी हेलेना का।

'स्वतन्त्रता और संहार के उन अद्‌भुत क्षणों में' शहीद सरदार अजीतसिंह का चित्र है।

'रोम की उस अंधेरी दुनिया में' वीरवर ब्रूनो का शब्द-चित्र है जिसमें अखण्ड यौवन, अमिट स्फुरण, अथक उल्लास और अम्लान प्रगति के लक्षण विद्यमान थे।

'जेल की उन डरावनी दीवारों में' एक ग ीब मुसलमानी हाजरा का चित्र है।

'पेरिस की झील की उस भयानक सन्ध्या में' देशभक्त मारिसेट तथा सोवेज की गाथा है।

'मानवीय पशुता की उस बाढ़ में' अकीला--आभा सी चमकदार, स्वस्थ, कुन्दन देह, बाल बिखरे और आँखों में पथराई भावनाएं--का शब्द-चित्र है।

'झूठ के उस कड़वे धुएं में,' 'रेल के पहियों की घड़घड़ाहट में', 'पहाड़ की उन चोटियों से नीचे', 'शहादत की ज़िन्दगी के तूफ़ान में,' 'अखण्ड भारत की ब्रह्म वेला में,' 'प्रतिहिंसा के उन पावन क्षणों में' भी रेखाचित्र हैं।

'दीप जले शंख बजे' प्रभाकर जी के सजीव, सशक्त एवं सप्रवाह भाषा में लिखे हुए २६ रेखाचित्रों का संकलन है जिसमें चतुर्दिक बिखरी हुई छोटी-छोटी घटनाओं को भी महान् और असाधारण बना दिया गया है। इन चित्रों में पात्रों एवं घटनाओं का बारीकी से अध्ययन किया गया है। छोटी-से-छोटी घटना भी प्रभाकर जी की कुशल लेखनी पाकर अमर हो गई। ये घटनाएं भी वे हैं जिन पर कोई ध्यान नहीं देता पर मिश्र जी की तीक्ष्ण दृष्टि ने उनका जीता-जागता चित्र खींच दिया है। मर्मस्पर्शी तथा सजीव शैली में लिखे गये इन रेखाचित्रों ने अनेक पात्रों का व्यक्तित्व खड़ा कर दिया है।

लेखक ने प्रारम्भ में 'ये दीप, ये शंख' शीर्षक से स्पष्ट किया है कि किन परिस्थितियों में उसमें साधारण में असाधारणता देखने की भावना प्रस्फुटित हुई।

> 'साथ ही आगे चलकर जब मैं बहुत-से बड़े आदमियों के निकट सम्पर्क में आया और मैंने उनमें से अधिकांश को मनुष्यता की दृष्टि से एकदम खोखला--इन्सालवैंट--पाया तो साधारण में असाधाणरता देखने-खोजने की यही भावना, मेरे पूरे जीवन पर छा गयी, और मेरे लिए साहित्य जीवन का अंग था, शौक व्यापार नहीं। जीवन का धर्म था, एक नये शब्द में जीवन का संविधान था, इसलिए आकाश की कल्पना में न उलझकर जीवन में ही सत्य-सौन्दर्य की खोज मेरे साहित्य की आतमा बन बैठी।'
>
> संस्मरणात्मक शैली में लिखे गये ये रेखाचित्र उन व्यक्तियों के हैं जो साधन या शक्ति के कारण नहीं, साधना और भक्ति के कारण ही दीप्तिमान् हैं, यहीं मैंने उन्हें कहा है दीप, जो प्रकाश फैलाते हैं और शंख, जो जागरण का सन्देश देते हैं।'

पहला रेखाचित्र मिश्र जी के पिताजी का है, जिसमें उनके व्यक्तित्व की सहज झांकी है।

'मुहम्मद अली कोतवाल' का सजीव चित्र उनके दूसरे रेखाचित्र में है।

यह उन व्यक्ति का शब्द-चित्र है जो स्वतन्त्रता के युद्ध में तो सैनिक नहीं थे पर दूर खड़े होकर भावना से उसके बीच में थे।

तीसरा चित्र 'मुखिया मुचेल' शीर्षक से है। हजरत मौलाना मदनी का शब्द-चित्र बड़ा सजीव है,

> "तारीखी इंसान थे, हदीस—इस्लामी धर्मशास्त्र के विश्वविख्यात विद्वान् थे, देश की सबसे महान् मुस्लिम शिक्षा-संस्था, दारुल उलूम देवबन्द के प्रिन्सिपल थे, वे जीते जी शहीद थे, आचार्य सन्त थे, संक्षेप में एक महान् व्यक्तित्व—एक ऊंची शख्सीयत थे, पर उनकी जिन्दगी के इंसानी पहलू इतने मुलायम और मनोरम थे कि उनके पास बैठकर लगता था कि मैं चटाई पर नहीं, उनकी गोद में बैठा हूं। ओह, कितने मीठे, कितने प्यारे, कितने भले और कितने भोले इंसान थे वे।"

'हां, वे मीठे-मुलायम थे, पर इतने सख्त कि पहाड़ शरमाएं।' यह एक वाक्य ही उनका अन्दर का चित्र खींचने में समर्थ है। एक और चित्र द्रष्टव्य है,

> 'उनका व्यक्तित्व एक बब्बर शेर का व्यक्तित्व था और उनकी विशिष्टता अनजाने आदमी को भी प्रभावित और प्रकाशित करती थी, पर उनके व्यक्तित्व की सबसे बड़ी चीज़ थी, उनकी आवाज। एक अजीब मिठास थी उसमें, जैसे कन्दरा से स्वर्ग के किसी देवता की आवाज़ आ रही हो। पण्डित जवाहरलाल नेहरू की आवाज़ हमारे देश की एक मास्टर पीस आवाज़ है। वह एक कवि और कलाकार की आवाज़ है पर मौलाना की आवाज़ में निर्झर और सागर का अद्भुत संगम था, स्त्रीत्व का माधुर्य और पौरुष का गाम्भीर्य एक साथ उसमें आ मिले थे।'

पांचवां ठा. लेखराजसिंह शीर्षक से उस व्यक्ति का 'चित्र है जिसे मनहूसियत से दुश्मनी थी', न खुद सुस्त होते थे, न दूसरों को सुस्त होने देते थे···उनके दिमाग में हर मौके की कहानी तैयार थी। कहानी को वे चटपट चूरन की जगह भी इस्तेमाल करते थे और पैने तीर की तरह भी।'

> 'हरिजन नेता चौधरी बिहारीलाल—चेहरा अनजाना-अनपहचाना तो नाम अनसुना-सा, पर व्यवहार लंगोटिए यार का।···रंग गाढ़ा-पक्का। आंखें बड़ी-बड़ी चंचल, बिना हंसे भी हंस पड़ते से होंठ, जानकी लाली से रचे मसूड़े और दांत, लम्बी छरहरी देह और बिना

रूप के भी एक रूपवान व्यक्तित्व, खादी के वेश में झकाझक एक लीडरनुमा इन्सान यह।'

लाला नन्दलाल पर 'नन्दा गाटा' शीर्षक से तथा 'गोरा दीवान' शीर्षक से मुल्क की आजादी के एक वफादार सिपाही का शब्द-चित्र है। विप्लव-गीत गाने वाले बलदेव बाबा का चित्र भी मार्मिक है,

'लम्बा कद, छरहरा बदन, कानों में सोने की लौंग, चन्दन-चर्चित उन्नत ललाट, मन्द मलयानिल के झोंके-सा अपने में डूबा भाव, मधुर भीना स्वर और सौजन्य से ओत-प्रोत बातचीत--यह चित्र सहारनपुर के भाई ललिताप्रसाद 'अख्तर' का है जिनमें निर्माण वृत्ति और निर्माण शक्ति भरपूर थी। आज भी लेखक को उनकी अल्हड़ हंसी, उनकी वह झूमती-सी चाल, उनकी वे मस्ती भरी बातें, उनके वे आसमानी मनसूबे और उनके वे मदभरे तराने याद हैं।'

'सुल्हड़ मिश्र' संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित थे, जीवन भर वे ब्रह्मचारी रहे और उन्होंने अपनी इस 'दार्शनिकता' से अपने आस-पास के वातावरण को सदा हास्यमय रखा।

'भराभरा शरीर, गौर वर्ण, सिर पर केशरिया जोधपुरी साफा और मीठा व्यवहार, पहली झांकी में ही एक प्रभावशाली राजपुरुष--यह चित्र स्व. पंडित उमरावसिंह का है।'

कांग्रेस का एक स्वयंसेवक मुरारी--गाने में मस्ती थी, बातों में चुलबुलापन, चलने में चुस्ती, व्यवहार में मधुरता, पर यह सब एक बाँकपन के साथ, एक पैनापन लिये हुए--का रेखाचित्र 'मुरारी भाई' शीर्षक से है।

'पंडित रामेश्वर लाल का व्यक्तित्व भी आकर्षक है--देश के प्रति उनकी निष्ठा अनथक है। छुट्टी का उनके जीवन में कोई स्थान नहीं है। विचारों की स्पष्टता और विश्वासों की गहराई उनमें इतनी अधिक है कि वे कभी उलझते नहीं हैं, उलझाये जा सकते नहीं हैं। वे सख्त भी हैं, सरल भी हैं। संक्षेप में स्वतन्त्र भारत के प्रशासनाधिकारी का एक मौडल है। दूसरे शब्दों में वे, उस शासन शक्ति के एक प्रामाणिक पुर्जे हैं जिसने राष्ट्र की प्राप्त स्वतन्त्रता को प्रतिक्रान्ति के पहले खूनी झटके से बचाने का ऐतिहासिक श्रेय प्राप्त किया है।'

उनके शब्द-चित्रों में सहारनपुर के मीरू खलीफ़ा हैं तो दूसरी ओर प्रभावशाली सुपरिण्टेण्डैण्ट एल. बी. बैजल।

गोरा वर्ण, भरी-पूरी देह, बड़ी-बड़ी आंखें और हंसमुख चेहरा भी है।

'देश के हीरे, मोती, लाल' में कई स्मृतिचित्र हैं। साधूसिंह की अज्ञान श्रद्धा, नायब जेलर की अथाह आस्था, सुदर्शन की अडिग दृढ़ता, देहरादून के स्वयंसेवक की निष्ठा, फैजपुर के तरुण का विश्वास और बिहारी नगर के उन भोले विद्यार्थियों की व्यवस्था ऐसे हीरे हैं जो विश्व के किसी भी देश के क्रान्ति-संग्रहालय में फीके नहीं पड़ सकते, उनकी बहुमूल्यता कहीं भी कम नहीं हो सकती।' इनमें से एक--'चले आ रहे हैं, मेरी स्मृतियों की क्यारी पर टहलते-घूमते एक सज्जन। पैर में मामूली जूता, जिस पर पालिश उसके निर्माता ने ही कभी की होगी, साधारण कपड़े का धोती-कुरता, जिसने धोबी का घर ही शायद ही कभी देखा हो, सिर में आगे की खोपड़ी सपाट, पीछे गुद्दी से कनपटियों तक पढ़ी बालों की एक पट्टी और उसमें लटकती बिना गाँठ की चुटिया।'

नायब जेलर--शिवनारायण

'लाल तागा फुर्र' में लालाजी का स्मृतिचित्र है।

'यशपाल सिर्फ यशपाल था' पर अपनी कर्मनिष्ठ मृत्यु के उन शतशत कार्यकर्ताओं का मेरे लिए प्रतीक हो गया, जिन्होंने राष्ट्र की स्वतन्त्रता के लिए अपने जीवन का सर्वोत्तम ही नहीं, अपना सर्वोत्तम जीवन ही अर्पण कर दिया, और यों मूक-निष्कम्प रहकर कि जैसे उनका जीवन उपयोग या उपयोग की कोई वस्तु न होकर, पूजा का एक अक्षत ही था।

'श्री शम्भुनाथ 'शेष', लम्बा कद, बाल और वेश दोनों अस्तव्यस्त, मुख पर सरलता, मुद्रा में सरसता। आंखों में शील और व्यवहार में संकोच।'

'हमारा बहुरूपिया' भी नये युग का एक प्रतीक है।

'ये चरित्रहीन' में कुछ चरित्रहीन व्यक्तियों के लघु स्मृतिचित्र हैं।

'ये भाषाशास्त्री' में ग्रामीणों के रोचक संस्मरणात्मक चित्र हैं।

'और ये'--गारफील्ड तथा पं. हरीराम वैद्य के रेखाचित्र हैं।

अन्तिम स्मृतिचित्र भाई राजाराम का है। इस प्रकार यह पुस्तक पिताजी के शब्द-चित्र से प्रारम्भ होकर बड़े भाई के चित्र के साथ समाप्त होती है। लेखक की लेखनी के एक-एक शब्द में उसका व्यक्तित्व झाँक रहा है।

सामान्य व्यक्तियों के दुर्गणों को भी मिश्र जी ने गुण बना दिया है।

'शब्दबेधी तीरों के अक्षय तूणीर' प्रभाकर जी की इस कृति के संबंध में प्रसिद्ध साहित्यकार ब्रजकिशोर नारायण ने अपना मत इस प्रकार दिया है,

> "दीप जले शंख बजे में लघुता के अणु में महानता का विराट प्रदर्शन करने वाले कुछ रेखाचित्र हैं। वे शब्दों की ऐसी रेखाएं हैं जिनसे सचमुच वर्ण्य व्यक्तियों की सम्पूर्ण सत्ता साकार हो उठती है।"

रेखाचित्रों में मानव-जीवन के सत्यों का उद्घाटन मात्र करना मिश्र जी की कुशल लेखनी द्वारा ही संभव है। चक्रधर शास्त्री जी का मत है कि 'समूची पुस्तक उज्ज्वल नक्षत्रों की ऐसी मोहक भाषा है जो हमारे भीतर-बाहर को सुशीतल करने के साथ-साथ हमारे अन्तर के अन्धकार को भी दूर करने वाली है।'

इस पुस्तक का समर्पण प्रताप तथा त्रात्स्की को किया गया है।

प्रभाकर जी की अन्तिम पुस्तक 'क्षण बोले कण मुसकाये' उन उदात्त भावनाओं और विशाल परिवेश में फैले हुए अनुभवों की संश्लिष्ट छबि हमारे सम्मुख प्रस्तुत करती है जिसकी एक-एक रेखा में व्यक्ति का व्यक्तित्व उभर कर आया है, हर व्यक्ति जीवन्त है और शैली अपूर्व।

भाषा-शैली

जीवन की छोटी-से-छोटी घटना को भी पकड़कर उसे उपयुक्त भाषा-शैली में सहज रूप में पाठकों के समक्ष आप प्रस्तुत कर देते हैं। प्रभाकर जी ने अपनी शैली को माँजा है और उसमें अभिव्यंजना शक्ति भर दी है। रीतिकाल में घनानन्द ने ब्रजभाषा को निखार दिया था, आधुनिक काल में हिन्दी गद्य में प्रभाकर जी ने वही कार्य किया है। उनकी भाषा में अंग्रेजी-उर्दू के चलते शब्दों की भरमार है, एक-एक शब्द अपने स्थान पर अटल बैठा है, उसे आप बदल नहीं सकते।

उनके कुछ वाक्य उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं,

> 'वाकई वे गरीबों के गौर का चिराग थे और उनके नैतिक प्रभाव का यही रहस्य था।'

> 'मेरे सिर पर ठण्डी चाँदनी है, घरों, सड़कों, पर्वतों पर चाँदनी है, मैं उसे देख रहा हूं, पर क्या सचमुच मैं उसे देख रहा हूँ।'

शैली का एक भिन्न स्वरूप

इसके कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं,

'बिछुड़े हुए मित्र का मिलन, स्वर्गीय स्रोतस्विनी की विमल प्रवाह-धारा है। इसका पुण्य-स्पर्श विरह की ताप-ज्वाल-माला से मूच्छित दो सुकुमार हृदय-वल्लरियों को पुनः नवजीवन प्रदान कर विश्व में सरसता का संचार कर देता है। प्रेम-प्रसून खिल उठते हैं, पवन निष्काम देव-दूत की भाँति अपने आँचल में उस सुरभि का संकलन कर उसे विश्व में बखेर देता है, द्वेष की दुर्गन्ध से दूषित विश्व का तामसी हृदय-प्रदेश सुरभित हो उठता है।"

कुछ अंग्रेजी शब्दों का सटीक प्रयोग

वे आन्दोलनकारी थे, **आर्मीटैश्ट** नहीं।

वह असन्तोष एक निराकार **डायनामाइट** है जो शक्ति के पर्वतों को खील-खीलकर बिखेर देता।

क्या सचमुच ये गीता में वर्णित निष्काम कर्मयोग के सर्वोत्तम जीवित **स्टैच्यू** न थे ?

उपमाओं का विशिष्ट प्रयोग

यह महाकवि बायरन का खंजर था, उसकी कविता-सा पैना और उसकी कला-सा चमकदार, देखने में सुन्दर और व्यवहार में मर्म-भेदी।

एक अजीब मिठास थी उसमें, जैसे कन्दरा से स्वर्ग के किसी देवता की आवाज आ रही हो।

जनता की नदी में जोश का पानी पुल पर से उतर गया।

श्री अयोध्याप्रसाद गोयलीय के दिमाग में हर मौके का शेर हाजिर है तो उनके दिमाग में हर मौके की कहानी तैयार थी।

ओह यह हंसी, प्रलय की बिजलियों से भी अधिक बेधक।

सिद्धान्त-वाक्य

उनके निबन्धों में सिद्धान्त वाक्य भी भरे पड़े हैं,

घर जीवन के सुख का पावर-हाउस है और सुख है साधना का

फल। जिसमें जीवन है, गति है और गति की सही दिशा में प्रगति भी है वह मनुष्य है।

जीवन का आदर्श साँचे में ढला पुरजा नहीं, वृक्ष पर खिला पुष्प है। वह बटन दबाते ही खिंच जाने वाली फोटो नहीं, ब्रुश और उँगलियों की कारीगरी से धीरे-धीरे बनने वाला चित्र है।

यौवन रक्त है, बुढ़ापा ओज है। यौवन समेटता है, बुढ़ापा सहेजता है। यौवन यात्रा है, बुढ़ापा पड़ाव है।

सुहागरात जीवन का प्रवेश-पर्व है। ···सुहागरात बैंक की पासबुक है, और विधान उसकी चेक-बुक। पहला ज्ञान है, दूसरा कर्मकाण्ड।

बिना लेबिल की शीशी सांप का बच्चा है।

अन्त में हम प्रभाकर जी की शैली पर डा. स्नातक की टिप्पणी के साथ इस विवेचन को समाप्त करते हैं,

> 'जब कभी प्रभाकर जी के लेख, रेखाचित्र या संस्मरण पढ़ता हूँ, मेरे अन्तर्मन में शैली और व्यक्तित्व का एक समन्वित चित्र उभर आता है। उनकी मुद्रा, मस्ती और मौजी तरंग उनकी रचना के शब्दों में जिस तरह भासमान होती है, वही शैली लेखक के सच्चे समाहार का स्थल है।'

प्रो. प्रकाशचन्द्र गुप्त

रेखाचित्रकारों में श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त अग्रणी हैं। रेखाचित्र, हो सकता है प्रकाशचन्द्र जी का पहला लिखा हुआ न हो पर इस विधा के नामकरण में आपका काफ़ी योग रहा है। अपने 'रेखाचित्र' शीर्षक निबन्ध में आपने स्वयं घोषित किया है, 'रेखाचित्र हिन्दी साहित्य में एक नया कलारूप है, जिसे लोकप्रिय बनाने का श्रेय एक हद तक इन पंक्तियों के लेखक को भी मिल सकता है।···मैंने लगभग सन् १९३९ से ही स्केच और रेखाचित्र नियमित रूप से लिखे हैं। वह युग भारतीय इतिहास में क्रान्तिकारी हलचलों का युग है। पहले-पहल छात्रावस्था में मैंने अंग्रेजी में कुछ स्केच लिखे थे, जिनमें से कुछ इलाहाबाद यूनिवर्सिटी मैगजीन में छपे भी थे। इसके पूर्व मैंने कुछ कहानियाँ लिखी थीं जो 'हिन्दी मनोरंजन' में कौशिक जी की कृपा से सन् १९२६-२७ में छपी थीं। इन दिनों में काशी विश्वविद्यालय में इण्टरमीडिएट में पढ़ता था। बी. ए. में पहुंचकर मुझे अनुभव हुआ कि कहानी मेरी भावनाओं की अभिव्यक्ति

का उपयुक्त साधन नहीं। मैंने कुछ गद्यगीत लिखे और 'उस पार' नाम का स्केच भी जो 'माधुरी' में छपा था। अंग्रेजी के प्रभाव से मैंने अपनी भावनाओं को स्वरबद्ध करने के लिए गद्यकाव्य और कहानी के बीच की भूमि खोजी।...अपने लिए उपयुक्त साहित्यिक माध्यम अनेक प्रयोग करने के बाद ही मैं खोज सका और कुछ स्केच लिख चुकने के बाद उनके लिए 'रेखाचित्र' शब्द मेरे मस्तिष्क में बार-बार प्रतिध्वनित होने लगा था। मैं शब्दों की रेखाओं से अपने अनुभव के चित्र उतारने का प्रयास कर रहा था, और निरन्तर सोचता था कि मैं इन रेखाओं को तूलिका या पेंसिल से खींच सकता, तो कितना अच्छा होता। बी.ए. में लिखा मेरा स्केच 'उस पार' गद्यकाव्य या कहानी की कोटि में अधिक था। एम.ए. में पढ़ने के समय मैं दिल्ली गया था। वहां काश्मीरी दरवाजे के दृश्य से प्रेरित होकर मैंने अंग्रेजी में 'हैड लाइट्स' शीर्षक रेखाचित्र बनाया था। इसी अनुभव के आधार पर आगे चलकर मैंने अन्य प्रयोग किये। काश्मीरी दरवाजा और उसके पास से दूर तक फैलती पुरानी शहर दीवार, बिजली के खम्भे के नीचे खड़ा पुलिसमैन, शाम के समय तेज़ बरसाती नदी के समान बहता दिल्ली का ट्रैफिक, ठण्डी हवा के झोंके, बिजली की बत्तियों की दिवाली के समान चकाचौंध,-मोटरों की तेज रोशनी जो किसी भयानक वन-पशु के नेत्रों के समान जगमगाती हुई चली जाती थी, उसके आलोक में पुलिसमैन की 'सिलहुट' के समान काली छाया। यही सब देखकर मैं पुलिसमैन के एक-रस गरीबी भरे जीवन की कल्पना करता था, और सोचता था कि इस वैभव और ऐश्वर्य का परिचालक होते हुए भी यह भोग-विलास से कितना अलग है। इन्हीं भावों को व्यक्त करने के लिए मैंने शब्दों की टेढ़ी-मेढ़ी रेखाएं खींची थीं। बड़े परिश्रम से मैंने यह स्केच बनाया था और उसे शैली की दृष्टि से परिमार्जित करने का प्रयत्न किया था।'

प्रो. गुप्त ने अपने १ जनवरी, ६६ के पत्र से लेखक को सूचित किया है कि उन्होंने रेखाचित्र पहले-पहल रूपाभ और हंस में लिखने शुरू किये थे। पुस्तकें इस प्रकार हैं,

१. रेखाचित्र (प्रकाश गृह प्रयाग) जुलाई १९४०, अब अप्राप्य।
२. पुरानी स्मृतियाँ (इंडिया पब्लिशर्स, प्रयाग) १९४७–४८, अप्राप्य।
३. विशाख (राजकमल प्रकाशन) १९५७, लोकभारती, इलाहाबाद से प्राप्य।
४. रेखाचित्र (परिवर्द्धित संस्करण) विद्यार्थी ग्रंथागार से, १९६२–६३ अप्राप्य।

'पुरानी स्मृतियों' में १५ स्मृतिचित्र और 'नये स्केच' या 'रेखाचित्र' में निम्नलिखित रेखाचित्र संकलित हैं,

ताई, गाँव की साँझ, अलमोड़े का बाजार, रानीखेत की रात, नया नगर, कुली, नल, अंधी, इक्केवाला, बंगाल का अकाल, सीमान्त पूर्व, अमलतास, एक डायरी के पन्ने, नानी का घर, बुद्धिजीवी, शेरशाह की सड़क, गांधी के प्रति, देहली दरवाजा, पीपल, पैट्रोल पम्प, लेटर बाक्स, कश्मीरी दरवाजा, खंडहर, राजा की मंडी, तोता का ताल, मिट्टी के पुतले, लालाजी कलाकार, जागते रहो, मसूरी, अपराजित, उस पार।

इन रेखाचित्रों में से अधिकांश पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके थे। पत्र-पत्रिकाओं में हंस, रूपाभ के अतिरिक्त नया पथ, नया साहित्य, आजकल आदि उल्लेखनीय हैं। जैसे,

होटल (रानी खेत की मोटर रोड पर गरीब होटल) हंस अगस्त १९४१
अलमोड़े का बाजार —हंस १९४१, पृष्ठ ६६४
ज़ेल का फाटक —हंस अप्रैल १९४२
इक्केवाला —हंस अक्टूबर १९४३
दशाश्वमेध —नया पथ, नवम्बर १९५३
चीड़ का वन —नया साहित्य
कुमाऊँ के आँचल में—दो रेखाचित्र

हंस का मार्च १९३९ में जो 'रेखाचित्र विशेषांक' प्रकाशित हुआ था उसमें भी श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त को स्थान मिला। आपने 'बच्चन' पर उसमें लिखा था। इधर प्रयाग से प्रकाशित होने वाले 'संकेत' में भी जो छह स्केच संकलित किये गये उनमें से एक प्रो. गुप्त का 'पुराना नगर—प्रयाग' है।

इन सभी रेखाचित्रों में से एक बात स्पष्ट परिलक्षित होती है कि लेखक निर्जीव वस्तुओं, पदार्थों, स्थानों पर अधिक संवेदनशील दृष्टि डालता है। तब ही तो आपके पहले संग्रह 'रेखाचित्र' की देहली रेडियो स्टेशन पर आलोचना करते हुए 'अज्ञेय जी' ने कहा था कि "मैंने (प्रो. गुप्त ने) मानवता का चित्रण न करके खंडहरों का चित्रण किया था" 'लेखक ने यह आरोप स्वीकार करते हुए लिखा है—"यह सच था, लेकिन मानवता से प्रेरणा पाकर ही मैंने अपने विचार और भाव ऐतिहासिक भग्नावशेषों पर आरोपित किये थे। बाद में मैंने 'अलमोड़े का बाजार' आदि स्केच लिखे जिनमें साम्राज्यवादी शोषण के प्रति विद्रोह मेरी प्रेरणा का मुख्य आधार था। मैंने व्यक्तियों के चित्र खींचने के भी अनेक प्रयास किये, किन्तु इन चित्रों को भावना के गहरे रंगों में रंगने में मैं असमर्थ ही रहा।'

फिर भी यह तो स्वीकार करना ही पड़ेगा कि गुप्त जी की विशिष्ट शैली ने 'लेटर बॉक्स', 'दिल्ली दरवाजा' आदि को मानवीय रूप में प्रस्तुत कर उन्हें 'सजीव और सप्राण

बना दिया। देहली दरवाजा को सम्बोधित करते हुए लेखक कहता है, 'कालिज के मुख्य द्वार के सामने जो भारी काली अजगर-सी ड्रमण्ड रोड गई है उसके एक किनारे कुछ हटकर संकुचित से तुम खड़े रहते हो। यहीं से अनेक सुकुमार मुगल राजकुमार अपनी बेगमों को साथ लिये विलास और वैभव की अतृप्त प्यास बुझाने निकलते होंगे।' इस शैली में ही शेरशाह की सड़क का चित्र है।

इस संबंध में लेखक के विचार पठनीय हैं--

> "सबसे पहले देहली और आगरे के पुराने खण्डहरों के मैंने रेखाचित्र बनाये। 'रूपाभ' में 'देहली दरवाजा' शीर्षक मेरा स्केच सबसे पहले प्रकाशित हुआ था। आगरे में मैंने दस वर्ष शिक्षक की हैसियत से बिताए। यह नगर ऐतिहासिक स्मृतियों से भरा है। आगरा फोर्ट स्टेशन से उतरते ही आप मानो मुगलों के भारत में पहुँच जाते हैं।··· मैं नित्य प्रति घर से कालिज और कालिज से घर आता हुआ देहली दरवाजे के पास से निकलता था, और मेरी कल्पना के रुद्ध द्वार अनायास ही खुल जाते थे। मैं आज की विपन्नता और दयनीयता से मुड़कर मुगलों के समृद्ध, शालीन युग के स्वप्न देखने लगता था। इन खण्डहरों में मैं गुरुदेव के 'क्षुधित पाषाण' देखता, जिनकी अतृप्त वासना अभी भी उनमें चतुर्दिक मँडराती है। मैं आज की दासता और परवशता से भागकर सामन्ती भारत के स्वप्न देखता था, और उस सामाजिक व्यवस्था की दारुण असमानताओं को भूल जाता था।"
>
> "मैंने एक बार रवि ठाकुर की ईरान-यात्रा पर एक निबन्ध 'मार्डन रिव्यू' में पढ़ा था। इसमें गुरुदेव झुटपुटे में ग्राण्ड ट्रंक रोड से हवाई अड्डे की ओर जा रहे थे, और सोते पेड़-पक्षियों ने उनके हृदय में ऐतिहासिक स्मृतियां हरी कर दी थीं। अनेक वर्ष बाद इस निबन्ध की धुंधली याद को मैंने दूसरे स्केच के लिए पहला कदम बनाया।"

'दशाश्वमेध' (काशी) का वर्णन करते हुए लेखक लिखता है कि मनोरंजन और आमोद के आकांक्षी नवयुवक रहते हैं और अनेक अपाहिज, भिखमंगे, साधू, फकीर रहते हैं। धर्मार्थी, यात्री, पंडे, फकीर, कोढ़ी, कलंकी--दशाश्वमेध पर नित्यप्रति सुबह शाम इनकी भीड़ जड़ती है।

'कुमायूं के अंचल में' प्रो. गुप्त ने दो रेखाचित्र प्रस्तुत किये हैं,

१ : वन, २ : शेरसिंह की दुकान

इन रेखाचित्रों में लेखनी से तूलिका का काम लिया गया है। पहले रेखाचित्र का अन्त बड़ा मार्मिक है,

"डूबते सूर्य की किरणें आकाश में उन्नत त्रिशूल और नन्दादेवी के शिखरों पर जान पड़ती हैं…अंधेरा होने पर केवल श्यामल रेखाएं क्षितिज पर रह जाती हैं। उतने कोमल और सुकुमार यह रंग और उनकी रेखाएँ हैं कि हिमालय की महान् गरिमा भूलकर हम सोचते हैं गुलाब का एक बड़ा फूल फूला और मुर्झा गया। किन्तु फिर हम सोचते हैं कितनी छोटी उपमा है यह। इन स्वर्ण-शृंगों को अलकापुरी के गढ़ ही कहना चाहिए, जो कालिदास कह गये हैं।"

दूसरे रेखाचित्र का प्रारम्भ,

"शेरसिंह की दुकान पर बैठे हम गरम गिलासों में चाय पी रहे हैं। यह स्थान एक तरह से पर्वत मार्ग का चौराहा है। यहाँ निरन्तर आते-जाते यात्रियों का जमघट रहता है।"

प्रकृति चित्रण का सफल प्रयास 'रानीखेत की रात', 'चीड़ का वन' आदि रेखाचित्रों में भी हुआ है। प्रो. गुप्त ने स्वीकार किया है कि उन्हें गर्मी में पहाड़ पर जाने के लिए विवश होना पड़ता था, 'इन प्राकृतिक चित्रों में मानव और प्रकृति का अभूतपूर्व सामंजस्य है। मैंने प्रकृति को मनुष्य के संघर्ष से अलग करके नहीं देखा, वरन् उसी पृष्ठभूमि में देखा है। अपने-अपने विचार-दर्शन और दृष्टिकोण के अनुसार भिन्न-भिन्न व्यक्ति प्रकृति के सौन्दर्य को देखते हैं और उससे प्रेरणा पाते हैं।'

गुप्त जी के दर्जनों रेखाचित्रों में निर्जीव पदार्थों से इतर जहाँ एक ओर सम्मिलित परिवार की समस्या, विधवा-विवाह, संतान-प्रेम आदि सामाजिक ज्वलन्त प्रश्न उठे हैं, वहाँ उनके स्कूली जीवन की मधुर स्मृतियों में संजोये हुए दृश्य, उनके पर्यटक जीवन पर आधारित ऐतिहासिक, सांस्कृतिक स्थलों के चित्र भी हैं।

मानवीकरण की शैली भी अपनायी गई है, जैसे लेटर बाक्स में,

"उत्सुक प्रेमी, कालिज के छात्र, व्यवसायी और सरकारी दुनिया के दूत तुम्हारी अतृप्त क्षुधा निवारण का प्रयत्न करते हैं किन्तु तुम्हारी क्षुधा का अन्त नहीं।" संवेदनशीलता तो लेखक का वास्तविक गुण है जिसके कारण वह एक सड़क के प्रति भी द्रवित हो जाता है, "अनेक बार इस सड़क का हृदय खंड-खंड हुआ है और फिर वही मरदम, परती हुई है। अनेक बार वह मर कर जी उठी है।"

'उस पार' को भावात्मक शैली में लिखा गया है। स्टेशन के समीप रहने वाले

एक ग्रामीण का रेखाचित्र पठनीय है। लेखक ने अनेक प्रयोग शैली के क्षेत्र में किये हैं। डायरी के पृष्ठ के रूप में रेखाचित्र लिखे गये हैं। कथा के अंश के रूप में 'विशाख' लिया जा सकता है।

श्री कृपाशंकर ने इन विविध चित्रों का इस प्रकार विभाजन किया है—

संवेदन चित्र	नल, अंधी आदि
अध्ययन चित्र	इक्केवाला, शेरशाह की सड़क आदि
रेखाचित्र छवि	एक डायरी के पन्ने, गांधी के प्रति
मिश्र रेखाचित्र	अमलतास

(प्रमुखतया निबंधप्रधान शीर्षक)

श्री वल्लभ शुक्ल ने 'कलाकार' शीर्षक रेखाचित्र को सर्वोत्कृष्ट स्वीकार किया है। इसमें एक यथार्थ कलाकार के वास्तविक जीवन का चित्र है।

'अलमोड़े का बाजार' में देश की गरीबी, पूंजीवादी सरकार के अड्डे, 'ताई' में सामंती समाज पर व्यंग्य है।

'मानवता' को रेखाचित्रों में व्यक्त करने का सफल प्रयास 'पुरानी स्मृतियां' शीर्षक रेखाचित्रों में है। इन स्केचों में उन्होंने उन व्यक्तियों के चित्र बनाये हैं जिनके बीच उनका शैशव बीता था। आपने युवक 'बच्चन' पर आज से लगभग तीस वर्ष पूर्व एक रेखाचित्र लिखा था। उनके बाह्य व्यक्तित्व की झलक देखिए उन्हीं के शब्दों में—

> "बच्चन के रूखे, बिखरे बाल, कृश गात, किसी घोर तपसाधन में सुखाया शरीर, मस्ती, अलस भावभरी आंखें, कुछ चीनियों जैसे सूजे-से पलक—उनके मुख का पूरा भाव, उनकी सम्पूर्ण आकृति मानो 'मधुशाला' का साकार रूप हो। किन्तु 'बच्चन' का शरीर व्यायाम से गठा, स्वस्थ और कठिन है। हम सोचते हैं अवश्य ही इस व्यक्ति का समाज से विरोध होगा, और इस संघर्ष में केवल अभिमान ही उसका सहायक होगा। कुछ-कुछ फाउस्ट का हमें स्मरण हो आता है।"

फिर आगे लिखते हैं—

> "बच्चन विद्रोही कवि हैं। आपका व्यक्तित्व विद्रोह की प्रतिमूर्ति है। यद्यपि नियति के वारों से आपका मस्तक रक्ताभ है किन्तु अभी तक वह झुका नहीं। —आपके अस्त-व्यस्त बाल और कपड़े, आपकी मधु-पूजा, आपकी भाषा में उर्दू का कुछ पुट, आपका काव्य-संगीत सभी में कुछ नवीनता है।"

घटना प्रधान रेखाचित्र लिखने में भी आप सिद्धहस्त हैं। इन रेखाचित्रों में आप निरपेक्ष भाव से घटनाओं को यथार्थ रूप में पाठकों के सम्मुख रखने में समर्थ हुए हैं।

'रेखाचित्र' विधा के आदि प्रारम्भकर्ताओं में प्रो. गुप्त का नाम उल्लेखनीय है और जिन चार-पांच व्यक्तियों को इस विधा में निष्णात कहा जा सकता है, उनमें से आप भी एक हैं। गुप्त जी रेखाचित्र को आज के क्रान्तिकारी युग का साहित्यिक माध्यम मानते हैं, जिसमें जीवन की हलचलों को सीधे स्वर प्रदान किया जा सकता है। इस विधा के लिए कहीं आपने 'स्केच', (संकेत में) कहीं शब्द-चित्र (आजकल में) ड्रमैटिक स्केच (हंस में) नाम दिया है पर सर्वाधिक रेखाचित्र और स्केच शब्दों का ही प्रयोग किया है। श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने आपके रेखाचित्र साहित्य पर टिप्पणी करते हुए लिखा है,

> "प्रकाशचन्द्र जी छोटी-छोटी चीज़ों पर बड़े मज़े के साथ लिखते हैं। उनके कुछ रेखाचित्र ए. जी. गार्डिनर की याद दिला देते हैं।"

सत्यजीवन वर्मा 'भारतीय'

श्री सत्यजीवन वर्मा 'भारतीय' उपनाम से बहुत समय पूर्व कहानियाँ लिखा करते थे। कहानी-साहित्य में आपने अपना स्थान बना लिया था। 'जानी दुश्मन', '१६ कहानियाँ', '६ मनोहर कहानियाँ', 'रूमानिया की कहानियाँ', 'तार के खंभे', 'खलीफ़ा' आदि आपके सुप्रसिद्ध कहानी-संकलन हैं। आपकी 'मुनमुन' कहानी को प्रेमचन्द ने मास्टरपीस कहा था। कहानी-साहित्य के साथ आपने अच्छे रेखाचित्र भी लिखे हैं जिनका संग्रह 'एलबम' या 'शब्द-चित्रावली' शीर्षक से सन् १६४६ में प्रकाशित हुआ है।

इस संग्रह में 'गृहिणी', 'सामाजिक दम्पति', 'बनारसी', 'भाई साहब', 'अफ़सर', 'सेठजी', 'मिस्टर पी', 'भुलई', 'त्रिवेणी तट का एक प्राचीन दृश्य', 'माँ का हृदय', 'हिन्दुस्तानी लेक्चर', 'मूंछों की स्मृति में', 'रामावतार की पुनरावृत्ति', 'ब्रेक', 'वट-वृक्ष,' 'रज्जब', 'घाट की कहानी' शीर्षक शब्द-चित्र संकलित हैं। ये रेखाचित्र प्रारम्भिक अवस्था में लिखे गये हैं अतएव कहीं-कहीं कहानी से भ्रान्ति होती है और कुछ कहानियों में यत्र-तत्र रेखाचित्र के तत्त्व समाहित हो गये हैं।

'भाई साहब' शीर्षक शब्द-चित्र में 'वकील साहब बैठे हुए एक दुबले-पतले, मझोले कद के, साँवले पर हलके रंग के, घुंघराले बाल और नवोत्थित मूंछोंवाले, सुपरिधानयुक्त किसी सज्जन से मुसकरा-मुसकरा कर बातें कर रहे थे।'

'अफ़सर और मातहत' का अन्तर अफ़सर में स्पष्ट किया गया है—'उसके

मातहत यदि तीन पैर की मेज पर काम करते हैं तो अफ़सर चार पैर की मेज पर काम करेगा। यदि उसके मातहतों की कलम दो पैसे की होगी तो उसकी चार आने की होगी, यदि वे बादामी कागज पर लिखेंगे तो वह सफेद और विलायती कागज पर लिखेगा।

इसमें ही एक मास्टर का बाह्य चित्र—'उस समय तो उस बेंतधारी, बृहत्-काय, लंबोदर, रक्तमुख, अंगारे सी आंखों वाले को देखकर हमारे प्राण तो चुटिया में स्थान ढूंढने लगते थे।'

'सेठ जी' भी अच्छा रेखाचित्र है। मिस्टर पी में एक प्रकृति का दृश्य देखिए,

> 'आसमान की बदली यद्यपि घनी न थी फिर भी अमावस की रात को अंधेरी बनाने में वह काफी सहयोग दे रही थी। सड़क के बीच लगी हुई बिजली की बत्तियों की पंक्ति उस अंधकार के विस्तार में केवल ज्योति की एक सीधी रेखा खींचती-सी जान पड़ती थी। कहीं-कहीं दुकानों पर लटकते हुए बल्ब जुगनू की भाँति चमक रहे थे। बीच-बीच में विस्तृत अंधेरा प्रदेश था जो रोमांसप्रेमियों के लिए सुअवसर प्रतीत होता है। मिस्टर पी इन्हीं प्रदेशों में अपनी रोमांस पिपासा से पीड़ित चक्कर काटने लगे थे।'

'वट-वृक्ष' का चित्रण तो कमाल का है। रेखाचित्रों के संग्रह का जितना सार्थक नाम इस पुस्तक का 'एलबम' या 'शब्द-चित्रावली' रखा गया है उतना फिर बहुत समय बाद जगदीशचन्द्र माथुर की 'दस तसवीरें' से व्यंजित होता है।

रेखाचित्रकार निराला

'निराला' जी की कुछ रचनाएँ साहित्य विधा की दृष्टि से सर्वथा नवीन हैं। इस कोटि में सर्व प्रथम उनकी दो रचनाएं 'कुल्ली भाट' (१९३९) और 'बिल्लेसुर बकरिहा' (१९४१) ली जा सकती हैं जिनके संबंध में पर्याप्त मतभेद है। सामान्यत: ये दोनों लम्बी कहानियां हैं जिनके संबंध में यह कहा जा सकता है कि इनमें हास्य और व्यंग्य की प्रधानता है। अधिकांश महानुभाव इस दृष्टि से इनको कहानी साहित्य में सम्मिलित करते चले आये हैं। समाज पर गहरा व्यंग्य मिलता है। कुछ समीक्षकों ने इनको 'उपन्यास' की कोटि में रखा है। डा. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने 'निराला का कथासाहित्य' की भूमिका में इन्हें उपन्यास ही मानते हुए लिखा है, 'इनके कुछ उपन्यासों में हास्य एवं व्यंग्य के सजीव चित्र प्राप्त होते हैं वे आज तक हिन्दी साहित्य में दुर्लभ हैं। आज भी 'कुल्ली भाट' और 'बिल्लेसुर बकरिहा' हिन्दी में

अपने ढंग के अकेले एवं अनूठे हास्य रस एवं व्यंग्य के उपन्यास हैं।' पुस्तक की लेखिका डा. कुसुम वार्ष्णेय ने 'कुल्ली भाट' और 'बिल्लेसुर बकरिहा' को निराला के सर्वश्रेष्ठ यथार्थवादी उपन्यास मानते हुए शिल्प की दृष्टि से इन्हें पिकारेस्क उपन्यास की संज्ञा दी है,

'हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में 'पिकारेस्क' उपन्यास विधा नितान्त नवीन वस्तु है। निश्चय ही 'निराला' के **'कुल्ली भाट' और 'बिल्लेसुर बकरिहा' हिन्दी साहित्य के सर्वप्रथम 'पिकारेस्क उपन्यास'** हैं। उपर्युक्त दोनों उपन्यासों के नायक समाज में परित्यक्त और उपेक्षिक व्यक्ति हैं, किन्तु मानवता दोनों में कूट-कूटकर भरी है। ऊपर से दुर्बल दीखने वाले इन पात्रों में समाज से लोहा लेने की अद्भुत क्षमता है। लांछित जीवन पाने पर भी ये हँसते-हँसते समस्त पीड़ा और समाज के व्यंग्य विद्रूप को झेल ले जाते हैं। कुल्ली भाट अल्पशिक्षित है और बिल्लेसुर निरक्षर, फिर भी दोनों आत्मप्रबुद्ध व्यक्ति हैं। उनकी आत्मचेतना सजग है और वे जीवन के प्रति अत्यन्त जागरूक हैं।'

लेखक ने स्वयं 'कुल्ली भाट' को हास्यरस-पूर्ण चरितोपन्यास की विधा में रखा है। पं. पथवारीदीन जी भट्ट (कुल्ली भाट) निराला के मित्र थे—

> 'उनके परिचय के साथ मेरा अपना (निराला का) चरित भी आया है, और कदाचित् अधिक विस्तार पा गया है।
>
> कुल्ली सबसे पहले मनुष्य थे, ऐसे मनुष्य, जिनका मनुष्य की दृष्टि में बराबर आदर रहेगा।'

इस पुस्तक के प्रारम्भ में ही लेखक ने स्पष्ट किया है—

> 'बहुत दिनों की इच्छा---एक जीवन चरित लिखूँ---अभी तक पूरी नहीं हुई, चरितनायक नहीं मिल रहा था, ठीक जिसके चरित में नायकत्व प्रधान हो। बहुत आगे-पीछे, दाएँ-बाएँ देखा। कितने जीवन-चरित पढ़े, सबमें जीवन से चरित ज्यादा, भारत के कई महापुरुषों के पढ़े---स्वहस्त-लिखित, भारत पराधीन है, चरित बोलते हैं। बहुत दिनों की समझ—सत्य कमजोरी है, शहजोरी उसकी प्रतिक्रिया, अगर चरित में अंधेरा छिपा, प्रकाश आंखों में चकाचौंध पैदा करता है जो किसी तरह भी देखता नहीं—जड़ पकड़ गई।
>
> 'मैं तलाश में था कि ऐसा जीवन मिले, जिससे पाठक चरितार्थ हों, इसी समय कुल्ली भाट मरे।'

'लेखक की इस भूमिका के आधार पर क्षेमचन्द्र सुमन ने 'जैसा हमने देखा'

की भूमिका में लिखा है कि 'निराला जी ने 'कुल्ली भाट' में जीवन के सहारे अपनी आत्मकथा का भी कुछ अंश अव्यक्त रूप में दे दिया है किन्तु वह कहानी की कोटि में ही रहेगी। आधुनिक साम्यवादी प्रवृत्ति के अनुकूल उनके 'बिल्लेसुर बकरिहा' और 'कुल्ली भाट' जीवनी के विषय बन जाते हैं।'

इस प्रकार निराला की ये कृतियां उपन्यास, कहानी, जीवनचरित तथा आत्मकथा के इर्द-गिर्द घूम रही हैं। वस्तुतः ये विस्तृत रेखाचित्र हैं जिनमें हास्य एवं व्यंग्य की प्रधानता है और कल्पना का पुट होने से कहानी, विस्तृत होने से लघु उपन्यास, यथार्थ व्यक्तियों के जीवन पर आधारित होने से जीवन-चरित तथा लेखक के व्यक्तिगत जीवन की घटनाओं के मिश्रण से आत्मकथा की झलक मिल जाना स्वाभाविक है।

प्रथम बार लेखक के डलमऊ पहुँचने के 'कुल्ली भाट' में से कुछ शब्द-चित्र द्रष्टव्य हैं,

> "गेट पर टिकट कलेक्टर के पास एक आदमी खड़ा था बना-चुना, बिल्कुल लखनऊ-ठाट, जिसे बंगाली देखते ही गुंडा कहेगा। तेल से जुल्फें तर, जैसे 'अमीनाबाद' से सिर पर मालिश कराकर आया है। लखनऊ की दुपलिया टोपी, गोट तेल से गीली, सिर के दहिने किनारे रक्खी। ऐंठी मूँछें। दाढ़ी चिकनी। चिकन का कुर्ता। ऊपर बास्कट। हाथ में बेंत। काली मखमली किनारी की कलकतिया धोती, देहाती पहलवानी फैशन से पहनी हुई। पैरों में मेरठी जूते। उम्र पच्चीस के साल दो साल इधर-उधर। देखने पर अंदाजा लगाना मुश्किल है—हिन्दू है या मुसलमान। साँवला रंग। मजे का डीलडौल। साधारण निगाह में तगड़ा और लम्बा भी।"
>
> (पृष्ठ २०-२१ से)

> "कुल्ली एक घंटा पहले आए थे। बहुत बने-ठने। बालों से तेल जैसे टपकने पर हो। चिकन का धुला कुरता। ऊपर बास्कट। हाथ में बेंत। गर्मी के दिनों में भी पैरों में मौजे। विनीत, अप्रतिभ दृष्टि और श्री-हीन मुख।"
>
> (पृष्ठ ४० से)

मानव के ही नहीं जड़ पदार्थों के चित्र खींचने में भी निराला दक्ष हैं। एक किले का चित्र देखिए,

> "मिट्टी के दो काफ़ी ऊंचे टीले हैं, एक दूसरे से जुड़े हुए। इन्हीं पर इमारत थी। इस समय केवल एक बारहदरी दूर से देख

पड़ती है। किले के चारों तरफ़ ईंटों की चहारदीवारी थी, जगह-जगह मालूम देता है। ईंटें कहीं-कहीं बहुत बड़ी हैं। बाकी इमारत की ईंटें लखनऊ की जैसी कागज़ी थीं, लेकिन पकी हुई मजबूत।"

(पृष्ठ ४४ से)

बाह्य ही नहीं कुल्ली के अन्तर का चित्र भी निराला ने अपनी चमत्कारिक शैली में खींच दिया है,

"गृह की दशा देखकर मैंने सोचा--कुल्ली त्यागी मनुष्य है, जंबुकों के वन में अकेला सिद्ध वेदांत-केसरी की तरह रहता है।"

व्यंग्य के दृष्टान्त तो पग-पग पर मिल जायेंगे,

"अंगरेजों के वक्त ही अंगरेज़ी इतनी अपना ली गई कि चाल-ढाल, बात-चीत, अदब-कायदा, खान-पान, उठक-बैठक, देत-व्यवहार यहां तक कि राजनीतिक विचारों तक में अपना ली गई, और इतनी जल्दी।"

(पृष्ट ६४ से)

कुल्ली के रूप में एक ऐसा प्रखर व्यक्तित्व निराला की लेखनी ने प्रदान किया है जिसका सामाजिक जीवन संघर्षमय है और कटु अनुभवों से भरा हुआ है। यह दूसरों के दोषों को अपने पर ले लेता है और समाज के हित में जो संभव है उस कार्य को ही करता है। हास्यमय ढंग से घटनाओं का वर्णन कर लेखक ने कुल्ली के चरित व जीवन की तसवीर खींची है। एक उदाहरण पर्याप्त होगा,

"नायक अपने एक मित्र के यहां आवश्यक कार्य से गये। वे कनकौआ उड़ाते रहे और बिना मुड़े हुए बोले—देख ही रहे हैं कि अभी फुर्सत नहीं।"

"सास ने पूछा, भैया, मेरी लड़की पसन्द आई। उत्तर मिला, मुझे उसे देखने का अभी तक सौभाग्य ही न मिला। मैं जाता था तो दिया बुझा दिया जाता था।"

"रेखाचित्र की दृष्टि कैमरे के लैंस की भांति सीमित परन्तु सूक्ष्म और पैनी होती है। वह दृष्टिरूपी लैंस की परिधि में आनेवाले अर्थात् दृश्य स्वरूप का ही सूक्ष्म अंकन करता है, अदृश्य का नहीं, क्योंकि अदृश्य के अंकन में कल्पना की आवश्यकता होती है जो रेखाचित्र के क्षेत्र से सर्वथा निष्कासित है। फोटोग्राफ़ की तरह उसमें लम्बाई और चौड़ाई होती है, मोटाई नहीं--अर्थात् वह चित्रकला है, मूर्तिकला (स्थूल) नहीं, यद्यपि मोटाई या स्थूलता का अभ्यास इन रेखाओं से चित्र

की तरह अवश्य हो जाता है ।" श्री प्रभाकर जी के इस उद्धरण के अनुरूप ही निराला की दृष्टि तथा शैली ने एक ऐसे रेखाचित्र की सृष्टि कर दी है जो हिन्दी साहित्य की अनौखी रचना बन गई, जिसकी विधा को निश्चित करने में विद्वानों को सोच-विचार करना पड़ रहा है ।

कुल्ली सुधारक भी हैं । वह एक मुसलमानिन से विवाह करना चाहते थे, समाज ने बाधा डाली, पर लेखक ने सहृदयता से इस कार्य में रुचि ली ।

समाज सेवा के अतिरिक्त वे राजनीति में भी सक्रिय भाग लेते हैं । नेताओं की तरह केवल लम्बे-लम्बे भाषण देना ही उनका कार्य नहीं वरन् सेवा ही प्रधान उद्देश्य था । इसके बहाने वह राजनीतिक नेताओं पर व्यंग्य करते हैं । अवसर आने पर गांधी जी तथा नेहरू पर भी व्यंग्य के छींटे हैं ।

रोगियों की भी आप सेवा करते हैं । अछूतों की सेवा का कार्य भी करते हैं । अछूत बालकों को प्रेम से पढ़ाते हैं । यही कारण है कि लेखक ने 'आनन्द की मूर्ति साक्षात आचार्य' रूप से उन्हें संबोधित किया है ।

हास्य-व्यंग्य के छींटे तो सर्वत्र हैं,

> "आप बहुत-बहुत बड़े ज्ञानी हैं—कुल्ली ने हाथ जोड़कर मुंह के सामने हाथी की सूंड़ उठाई । मैंने मन में कहा, देखो, अब कौन ज्ञानी है ।"
>
> "देखो कुल्ली--मैंने कहा—गणेश जी जितने ज्ञानी हैं, मैंने सुना है, उतने ही मूर्ख हैं । बंगाल में हस्तिमूर्ख कहते हैं । यानी हाथी की तरह का मूर्ख, इससे बड़ा मर्ख दूसरा नहीं ।"

आत्मकथा के काफ़ी अंश भरे पड़े हैं । कुल्ली के माध्यम से निराला ने अपने ससुराल प्रसंग को भी लिख दिया है--

> "चंद्रिका (नौकर) ने दरी बिछायी, रूह की शीशी ले आया । मैं चित लेट गया और छाती दिखाकर कहा, यहां लगाओ—ससुर जी सूँघते-सूंघते बाहर निकल आये, और सूंघते और आंखें तिलमिलाते हुए बोले--अरघानें उठ रही हैं, बच्चा ! इतना इतर-फुलेल न लगाया करो, हूरें पकड़ती हैं ।"
>
> "घर भर का भोजन हो जाने पर कल की तरह आज भी श्रीमती जी आई । लेकिन गति में छन्द नहीं बजे । पान दिया, पर दृष्टि में अपनापन न था । मैं एक तरफ हट गया, उनकी आधी जगह खाली कर दी, बेमन पैर दबाकर लेटीं ।"

इस प्रकार कुल्ली भाट में निराला ने अपने जीवन के मधुरतम क्षणों का भी रेखाकन किया है। सुहागरात तक का रोचक वर्णन इस कृति में है। कुल्ली भाट से यह भी सिद्ध होता है कि निराला जी जब काफी बड़े हो गये थे तब भी पिताजी उनको पीटा करते थे और निराला उस मार को सहते भी थे,

> ससुराल चलने पर उन्हीं पिताजी ने कहा, 'ससुराल जाओ। लेकिन यहां से तिगुना खाना···।' इस प्रकार मार खाने वाले निराला ने पिता का स्नेह भी पाया था।

'बिल्लेसुर बकरिहा' एक लम्बी चित्रात्सक कहानी है। इसका नायक भी कुल्ली की भांति ही निम्न वर्ग का है। वह मूर्ख नहीं है पर निरक्षर है। इसका परिचय इस प्रकार दिया गया है—'बिल्लेसुर जाति के ब्राह्मण 'तरी' के सुकुल हैं जिनकी गाथाएं एक ही तार में गुंथी हुई हैं। ब्राह्मण कुल में जन्म लेकर भी निर्धनता के कारण अछूत-से हैं। 'बिल्वेश्वर' नाम है। बकरी चराने के कारण बकरिहा कहलाते हैं। व्यंग्य से प्रारम्भ में लेखक कहता है, 'इनमें बिल और ईश्वर दोनों के भाव साथ-साथ रहे।'

'बिल्लेसुर बर्दवान महाराज के जमादार 'सत्तीदीन' के यहाँ रहने लगे। ऐसी हालत में गरीब की तहज़ीब जैसे, दबे पांव, पेट खलाये, रीढ़ झुकाये, आंखें नीची किये आते-जाते रहते।'

'बकरी चराने का धन्धा ही प्रारम्भ करना पड़ा। क्यों यह धन्धा किया इसका उत्तर देते हैं, हां, बैलवाला विचार अब छोड़ दिया है, कौन हमारे सानी-पानी करेगा ? बकरियों को पत्ते काटकर डाल दूंगा। बैलों को बांधकर बैल ही बना रहना पड़ता है।'

जिस मकान में बिल्लेसुर रहते हैं उसका शब्दचित्र द्रष्टव्य है,

> 'मकान के सामने एक अन्धा कुंआ है और एक इमली का पेड़। बारिश के पानी से धुलकर दीवारें ऊबड़-खाबड़ हो गई हैं जैसे दीवारों से ही पनाले फूटे हों। भीतर के पनाले का मुंह भर जाने से बरसात का पानी दहलीज़ की डेहरी के नीचे गड्ढा बनाकर बहा है। गड्ढा बढ़ता-बढ़ता ऐसा हो गया है कि बड़े जानवर, कुत्ते जैसे आसानी से उसके भीतर से निकल सकते हैं, दहलीज़ का फ़र्श कहीं भी बराबर नहीं, उसके ऊपर लेटने की बात क्या, चारपाई भी उस पर नहीं डाली जा सकती। दूसरी तरफ़ एक ख़मसार है और उसी से लगी एक कोठरी।'

एक व्यंग्यचित्र देखिए,

'चढ़ गये और चबूतरे के ऊपर से मुंह की गुठली वहीं फेंककर महावीर जी के पैर छुए और रोज की तरह कहा, मेरी बकरियों की रखवाली किये रहना। तुलसीदास जी या सीता जी की जैसी अन्तर्दृष्टि न थी, होती, तो देखते---मूर्ति मुस्कराई।'

तगड़े बकरे दीनानाथ के बिछुड़ जाने पर,

'उर्र्र्, उर्र्र् । दिनवा अ ले-अ ले उर्र्र् । आव-आव, दिनवा। उर्र्र्-उर्र्र्, बेटा दीनानाथ उर्र्र्। टुरुई मिमियाने लगी। दीनानाथ की कोई आहट न मिली।'

इस प्रकार के अनेक चित्र इस पुस्तक में भरे पड़े हैं,

'दीनानाथ जब नहीं मिले तो बिल्लेसुर का हृदय रो पड़ा और प्रकृति भी, सूरज डूब गया। बिल्लेसुर की आंखों में शाम की उदासी छा गई। दिशाएं हवा के साथ सांय-सांय करने लगीं। नाला बहा जा रहा था जैसे मौत का पैगाम हो। लोग खेत जोतकर धीरे-धीरे लौट रहे थे, जैसे घर की दाढ़ के नीचे दबकर, पिसकर, मरने के लिए। चिड़ियां चहक रही थीं अपने-अपने घोंसले की डाल पर बैठी हुई, रो-रोकर साफ कह रही थीं, रात को घोंसले में जंगली बिल्ले से हमें कौन बचायेगा?

फिर क्या, गुस्से में बिल्लेसुर ने आंखें मिलाये हुए महावीर जी के मुंह पर वह डंडा दिया कि मिट्टी का मुंह गिल्ली की तरह टूटकर बीघे भर के फासले पर जा गिरा।'

बिल्लेसुर के जीवन की परिस्थिति बड़ी विषम है, पग-पग पर अनेक बाधाएं उसकी प्रगति में बाधक होने को आती हैं। बाधाओं से वह घबड़ाता नहीं, उत्प्रेरित हो आगे के कार्य में जुट जाता है। कठिनाइयों और संघर्षों से जूझते हुए बिल्लेसुर निराश नहीं। अर्थ की प्राप्ति के लिए न मालूम क्या-क्या कार्य करता है।

इस पुस्तक के प्रारम्भ में ही व्यंग्य है---

'हिन्दी भाषा साहित्य में रस का अकाल है, पर हिन्दी बोलने वालों में नहीं, उनके जीवन में रस की गंगा-जमुना बहती है, बीसवीं सदी साहित्य की धारा उनके पुराने जीवन में मिलती है। उदाहरण के लिए, अकेला बिल्लेसुर का घराना काफ़ी है। बिल्लेसुर चार भाई आधुनिक साहित्य के चारों चरण पूरे कर देते हैं।'

इसी प्रकार तंत्र-मंत्र, पूजा-पाठ आदि धार्मिक आडम्बरों पर करारी चोट है। हास-परिहास तो सर्वत्र भरा पड़ा है।

इस पुस्तक पर टिप्पणी करते हुए डा. कुसुम वार्ष्णेय ने लिखा है,

> 'बिल्लेसुर बकरिहा' में बड़े साधारण और सरल ढंग से सरल व्यक्ति, सरल वर्णन, चित्रों और सरल अभिव्यक्ति द्वारा एक अत्यन्त स्वस्थ जीवन-दर्शन आप ही आप अभिव्यंजित हुआ है। न तो लेखक इसमें किसी प्रकार का दार्शनिक विवेचन करने में व्यस्त रहा है, न हीं जीवन की तात्त्विक व्याख्या करने में। इस प्रकार रचना में किसी प्रकार की गूढ़ता और रहस्यात्मकता उत्पन्न कर उसमें नीरसता की सामग्री प्रस्तुत नहीं की है। इसी कारण सम्पूर्ण रचना अत्यन्त सरस और मनोरंजक बन गई है।'

समाज और राजनीति के प्रति विद्रोहात्मक भाव इन उपन्यासों के माध्यम से निराला ने व्यक्त किया, इसी दृष्टि से ये कृतियां प्रगतिशील साहित्य की प्रतिनिधि रचनाएं हैं। लेखक ने भी पुस्तक के निवेदन में लिखा है,

> 'बिल्लेसुर बकरिहा' प्रगतिशील साहित्य का नमूना है।—बहिरंग चित्रण पर ही अंग-चित्रण सूचित है जो प्रगतिशील साहित्य का प्रथम चरण है। कला ऐसी है जैसे तीन छोटी-बड़ी कहानियाँ एक जोड़ के साथ रख दी गई हैं। अन्त समाप्त होकर भी लटका हुआ है जिससे पाठक को एक धक्का-सा लगता है, पर दिल को ताकत पहुँचती है।'

'बकरिहा' का स्पष्टीकरण लेखक ने कई स्थान पर किया है,

> 'अच्छी आमदनी हो चली थी। गाँव वालों की नजर में और खटकने लगे थे।···गाँववाले दिल का गुबार बिल्लेसुर को बकरिहा बककर निकालने लगे। जवाब में बिल्लेसुर बकरी के बच्चों के वही नाम रखने लगे जो गाँववालों के नाम थे।'

डा. कुसुम ने इन्हें यथार्थवादी उपन्यासों के अन्तर्गत रखते हुए भी स्वीकार किया है कि 'वस्तुतः शिल्प की दृष्टि से दोनों उपन्यासों में हास्यरस के रेखाचित्र के तत्त्व मिलते हैं। रेखाचित्र किसी इतिवृत्त और घटना पर आधारित नहीं होता वह व्यक्ति पर आधारित होता है। इसमें व्यक्ति की रूपरेखा, उसकी वेशभूषा, चलने-फिरने के ढंग, दूसरों से बातचीत करने एवं व्यवहार करने के ढंग आदि का चित्रण होता है। रेखाचित्र में शैली तथा अभिव्यंजना का महत्त्व है जब कि कहानी में कथा या

घटना का। यहीं स्पष्ट हो जाता है कि 'कुल्ली भाट' एवं 'बिल्लेसुर बकरिहा' शिल्प में रेखाचित्र के अधिक निकट हैं।'

'निराला का साहित्य और साधना' के लेखक डा. विश्वम्भर नाथ उपाध्याय ने स्वीकार किया है, 'निराला जी की कुल्लीभाट, बिल्लेसुर बकरिहा जैसी कृतियों की दीर्घ कथाओं में ही गणना होनी चाहिए। इन्हें दीर्घ रेखाचित्र भी कह सकते हैं किन्तु कथा-तत्त्व इनमें काफी प्रबल है और रेखाओं पर ही निराला का ध्यान केन्द्रित न रहकर कथा के सूत्र सुलझाने में लगता है।'

श्री प्रभाकर श्रोत्रिय बिल्लेसुर को सफल रेखाचित्र मानते हैं जब कि दूसरे रेखाचित्र 'कुल्ली भाट' को असफल। उनकी दृष्टि में 'बिल्लेसुर बकरिहा के व्यंग्य केवल छूते हैं—कुल्ली भाट के व्यंग्य की भाँति वेधते नहीं।'

सभी लेखक जो इन कृतियों को किसी अन्य विधा में भी रखते हैं, रेखाचित्र के तत्त्व स्वीकार करते हैं फिर क्यों न इनको शुद्ध रूप से 'रेखाचित्र' स्वीकार किया जाय।

रेखाचित्र की कोटि में निराला के कथासाहित्य में से दो कहानियाँ भी स्पष्ट रूप से आती हैं——१. चतुरी चमार, २. देवी।

'चतुरी चमार' डाकखाना चमियानी, मौजा गढ़ाकाला, जिला उन्नाव का एक कदीमी बाशिंदा है।···वैसे देहात में तीन दिन हिरन, चौगड़े और बनैले सुअर खदेड़कर फाँसते हैं, किसान अरहर की ठूंठियों पर ढोर भगाते हुए दौड़ते हैं—कटीली झाड़ियों को दबाकर चले जाते हैं, छोकड़े बेल, बबूल, करील और बेर के काँटों से भरे रुँधवाए बागों से सरपट भागते हैं लोग जेंगर पर मड़नी करते हैं, द्वारिका नाई न्योता बाँटता हुआ दो साल में दो हजार कोस से ज्यादा चलता है।

चतुरी का दृढ़ चरित्र एवं आत्मविश्वास उसे समाज से जूझने के लिए शक्ति देता है। अदम्य सहनशक्ति और साहस के साथ संघर्षमय जीवन से टक्कर लेता है। 'चतुरी चमार' एक यथार्थवादी कहानी है, जो हमारे विवेच्य काल से पूर्व ही १६३४ ई. में लिखी गई थी। निराला का व्यक्तित्व निराला था। इस व्यक्तित्व पर टिप्पणी करते हुए डा. रामविलास शर्मा लिखते हैं, 'बैसवाड़े का पुरुषार्थ जब बंगाल की कोमलता से मिल जाता है तो 'जुही की कली' लिखी जाती है, दोनों में प्रतिस्पर्धा होने पर 'तुलसीदास', जब केवल वह किसान रहता है तब 'देवी', 'चतुरी चमार', 'परिमल की बहुत सी कविताएँ।'

चतुरी के चरित्र की व्याख्या इस प्रकार है,

'वह एक ऐसे जाल में फँसा है, जिसे वह काटना चाहता है, भीतर

उसका पूरा जोर उमड़ रहा है, पर एक कमजोरी है, जिसमें बारबार उलझकर रह जाता है।'

व्यंग्य की इसमें भी प्रधानता है। चतुरी चमार गाँव के रिश्ते में लेखक का भतीजा लगता है,

'दूसरों के लिए वह श्रद्धेय अवश्य है, क्योंकि वह अपने उपानह साहित्य में आजकल के अधिकांश साहित्यिकों की तरह अपरिवर्तनवादी है।'...'चतुरी के जूते अपरिवर्तनवाद के चुस्त रूपक—जैसे टस से मस नहीं होते।'

'चतुरी चतुर्वेदी' आदिकों से सन्त-साहित्य का कहीं अधिक मर्मज्ञ है, केवल चिट्ठी लिखने का ज्ञान न होने के कारण एक क्रिया होकर भी भिन्न फल है। वे पत्र-पुस्तकों के सम्पादक हैं, यह जूतों का।'

समाज पर सीधे और करारे व्यंग्य हैं,

'चमार दबेंगे, ब्राह्मण दबाएँगे। दवा है, दोनों की जड़ें मार दी जायं, पर यह सहज-साध्य नहीं।'

निराला का व्यंग्य बुराई, क्षुद्रता और विषमता पर है, व्यक्ति विशेष पर नहीं। वे अपने सुपुत्र के ब्राह्मण संस्कारों पर प्रहार करते हैं,

'यद्यपि अर्जुन उम्र में उस (रामकृष्ण त्रिपाठी) से पौने-दो-पट था, फिर भी पद और पढ़ाई में मेरे चिरंजीव बड़े थे, फिर वह ब्राह्मण के लड़के भी थे। अर्जुन को नई और इतनी बड़ी उम्र में उतने छोटे से काका को श्रद्धा देते हुए प्रकृति के विरुद्ध दबना पड़ता था। इसका असर अर्जुन के स्वास्थ्य पर तीन ही चार दिन में प्रत्यक्ष हो चला।'

इस प्रकार के अनेक स्थलों पर व्यंग्य के छींटे मिलेंगे। किस प्रकार समाज का एक वर्ग, वर्ग-भेद को मिटाने में व्यस्त तथा चिन्तित है दूसरा रूढ़ियों की जड़ें जमाने में व्यस्त है। इसके माध्यम से निम्न कोटि के पात्रों को भी नायकत्व पर प्रतिष्ठित किया गया है।

इस कहानी में आत्म-जीवन भी उभर कर आया है। कहानिओं में पात्र रूप में लेखक स्वयं विराजमान रहता है और महत्त्वपूर्ण पात्र के रूप में। इस दृष्टि से आत्म-कथात्मक अंश स्वीकार किये जा सकते हैं।

'उन दिनों बाहर मुझे कोई काम न था, देहात में रहना पड़ा। गोश्त आने लगा। समय-समय पर लोध, पासी, धोबी और चमारों का

ब्रह्मभोज भी चलता रहा। घृत-पक्व मसालेदार मांस की खुशबू से जिसकी भी लार टपकी, आप निमंत्रित होने को पूछा।'

'मैं अर्जुन को पढ़ाता था तो स्नेह देकर, उसे अपनी ही तरह का एक आदमी समझकर, उसके उच्चारण की त्रुटियों को पार करता हुआ। उसकी कमजोरियों की दरारें भविष्य में भर जायेंगी, ऐसा विचार रहता था।'

दूसरी कहानी 'देवी' है जिसको हम इस विधा के समीप पाते हैं। 'देवी' कहानी में निराला ने पगली को देवी बनाकर पूजा है। एक चित्र द्रष्टव्य है,

'वह रास्ते के किनोर बैठी हुई थी, एक फटी धोती पहने हुए। बाल कटे हुए। तअज्जुब की निगाह से आने-जाने वालों को देख रही थी। तमाम चेहरे पर स्याही फिरी हुई। भीतर से एक बड़ी तेज भावना निकल रही थी, जिसमें साफ़ लिखा था—'यह क्या है?' उम्र पच्चीस साल से कम। दोनों स्तन खुले हुए। प्रकृति की मारों से लड़ती हुई, मुरझाकर, मुमकिन है किसी को पच्चीस साल से कुछ ज्यादा जँचे, लड़का डेढ़ साल का खेलता हुआ।

समाज में प्रायः दलितों पर ही चोट की जाती है, परन्तु 'निराला' के लेखनी-बद्ध होकर ऐसे पात्र महिमा-मण्डित हो गये हैं। समाजविहित पगली निराला की दृष्टि में 'देवी' है, समाज के अत्याचारों से प्रताड़ित यह नारी वस्तुतः दैवी गुणों से भरपूर है। समाज-व्यवस्था पर 'देवी' के माध्यम से व्यंग्य है। पूरी कहानी ही प्रतीकात्मक है।

होटल के नौकर संगमलाल ने मुस्कराकर बताया, 'वह तो पगली है, और गूंगी भी है, बाबू।' यह सुनकर लेखक लिखता है,

'मेरी बड़प्पनवाली भावना को इस स्त्री के भाव ने पूरा-पूरा परास्त कर दिया। मैं बड़ा हो भी जाऊँ, मगर इस स्त्री के लिए कोई उम्मीद नहीं। इसकी किस्मत पलट नहीं सकती। ज्योतिष का सुख-दुःख-चक्र इसके जीवन में अचल हो गया है। सहते-सहते अब दुःख का अस्तित्व इसके पास न होगा। पेड़ की छाँह या किसी खाली बरामदे में दोपहर की लू में, ऐसे ही एकटक कभी-कभी आकाश को बैठी हुई देख लेती होगी। मुमकिन है इसके बच्चे की हँसी उस समय उसे ठंडक पहुँचाती हो। आज तक कितने वर्षा-ग्रीष्म इसने झेले हैं, पता नहीं। लोग नेपोलियन की वीरता की प्रशंसा करते हैं। पर यह कितनी बड़ी शक्ति है। कोई नहीं सोचता।'

'एक दिन नेताजी का जुलूस जा रहा था, भीड़ के लोग जय-जयकार कर रहे थे। पगली मुंह फैलाकर, भौंहें सिकोड़कर आंखों की पूरी ताक़त से देख रही थी, समझना चाहती थी, वह क्या है ?'

इस कहानी के माध्यम से समाज तथा राजनीति पर करारा व्यंग्य है, जिनके लिए कुछ किया जाना चाहिए वे देवी के बच्चे की तरह कुचल दिये जाते हैं और नेताजी थैली लेकर जनहित करने चले गये।

कुछ चित्र उनकी 'राजा साहब को ठेंगा दिखाया' शीर्षक रचना में भी मिलते हैं और अच्छे। चित्रात्मकता निराला की भाषा की मुख्य विशेषता है,

'बड़े-बड़े तालाबों में श्वेत और रक्त कमल खुले हुए अनुभव जैसे लोट रहे हैं। स्वच्छ, कीमती, चौड़ी किनारीवाली, बारीक ठोस-बुनी, बंगला-ढंग से कोंछीदार शान्तिपुरी धोती, रेशमी शर्ट और सुनहरी स्लीपर पहने, चश्मा लगाये राजा साहब नाव की सैर के लिए चले।'

निराला के सभी रेखाचित्र विषयवस्तु तथा शैली की दृष्टि से उच्चकोटि के हैं। सर्वत्र मार्मिक व्यंग्य, समाज की विषमताओं, ढोंगों, बाहरी दिखावों आदि पर करारी चोट पहुँचायी है। भाषा सरल, सहज, चित्रात्मकता लाने योग्य शब्दावली से युक्त प्रवाहमय है और शैली है निराली जिसमें सर्वत्र 'निरालापन' है।

रेखाचित्रकार राजाजी

राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध शैलीकार हैं, जिनकी लेखनी का चमत्कार उनकी कृतियों में दृष्टिगत होता है। राजाजी जैसा शब्द-शिल्पी कोई दूसरा नहीं। उनकी गद्यात्मक कृतियों में कला की कारीगरी मिलती है। उपन्यास, कहानी, गद्यकाव्य, नाटक सभी विधाओं में उनकी लेखनी ने धाक जमायी है। उनके द्वारा लिखित उपन्यासों, कहानी तथा संस्मरणों के मध्य सूक्ष्म विभाजक रेखा खींचना कठिन है, फिर भी कला और शिल्प के आधार पर मोटा भेद किया जा सकता है। वैसे तो राजा साहब ने अपने उपन्यासों तथा कहानियों में पात्रों के चित्र भी बड़ी सफलता से प्रस्तुत किये हैं पर संस्मरणों के मध्य उनके सफल रेखाचित्र उभरकर आये हैं, एक प्रकार से इनको हम संस्मरणात्मक शैली में लिखे गये 'रेखाचित्र' कह सकते हैं। राजाजी की कुशल लेखनी में ऐसे व्यक्तियों के चित्र अधिक हैं जो कर्म की दृष्टि से प्रधान हैं, पैसा या स्थान अथवा पद की दृष्टि से नहीं। इस दृष्टि से राजाजी रेखाचित्रकार के रूप में महादेवी वर्मा तथा बेनीपुरी जी के अधिक निकट हैं।

इस प्रकार की उनकी पहली पुस्तक 'सावनी समां' (सन् १९३८) में राजा साहब की बस्ती का ४०-४५ वर्ष पूर्व का चित्र है। यह 'वस्तु-जगत्' की सृष्टि है। इसमें तत्कालीन दृश्य उपस्थित किये गये हैं। इस पुस्तक के नायक हैं गोपाल बाबू जिनके चले जाने से सावन सूखा हो गया। इसके अतिरिक्त इसमें ही बाद में 'बाप की रोटी' तथा 'मां' को सम्मिलित कर लिया गया है। जिस समय के चित्र इस रचना में हैं उस समय काव्य और शायरी का जोर था और एक मंच पर हिन्दू एवं मुसलमान दोनों उपस्थित थे। 'ईद और होली, गंगा और जमुना की लहर सी मिलकर एक साथ मौज लेती।' इस कृति में गोपाल बाबू, मीर साहब, मंटू, लालू, कमला, बूटी तथा रधिया के चित्र उपस्थित किये गये हैं। गोपाल बाबू का एक चित्र द्रष्टव्य है,

> 'गोपाल बाबू बड़े भड़कीले जवान थे। घुंघराली जुल्फ, कसरती देह, लम्बी कलम, खड़ी-खड़ी मूंछें, बड़ी-बड़ी शोख आंखें, आंखों में रस और हवस, रंगीन तबियत, कानों में मोतिया के फाहे, मुंह में मगही पान के तबकदार बीड़े, शरबती साटन की चुस्त नीमास्तीन पर आबेरवां का घेरदार पंजाबी, गले में बतासफैनी चादर और सर पर चौगोशिया कमरखी टोपी।'

उनका ही दूसरा रूप देखिए,

> 'गोपाल बाबू रामनामे की चादर कंधे पर रखे, वैष्णवी फटाका सर पर दिये, गले में तुलसी की माला डाले, कुशासन पर बैठकर 'हनुमान चालीसा' का पाठ कर रहे हैं।'
>
> माली की बेटी का चित्र--'बारह साल की दुबली-पतली, मालती की लोनी लता-सी फूली फली, मक्खन-सा बदन, कजरारी चितवन। वह जरा लजाती-सी आई, चुराती-सी आई, मुस्काती-सी आई।'
>
> कमला का--'पंजाब में पली, पंजाबी चालढाल थी। न घूंघट था, न परदा। अठारह उन्नीस का सिन--एक अल्हड़ लचीलापन।'

विभिन्न व्यापारों का मिला-जुला चित्र जो राजाजी की जादू भरी लेखनी से उभरा है वह अन्यत्र दुर्लभ है। कुछ चित्र द्रष्टव्य हैं,

> 'वह तो सुध-बुध भूली उड़ाने में मस्त थी, लचती, इठलाती, बल-खाती, डोरी सरकाती, खींचती, ढील देती, झटका देती। उसका अंग-अंग मुस्कराता, बोटी-बोटी फड़कती, रेशा-रेशा चमकता।' (पृष्ठ ४७)
>
> 'मुझे तो किसी की अदाओं ने लूट लिया। लटों के उभार ने लूटा, आंचल के निखार ने लूटा, डोरी के संचार ने लूटा।' (पृष्ठ ४७)

'लजाते ही आंचल को संभाला, जूड़े को बांध डाला, आखें चुराई, सिटपिटा गई।'

'वह बेहद ढीठ थी, बेहद निडर, बेहद ला-दिमाग। बाती नौबत तो न आई, मगर आखों-आखों से शरारे, इशारे और पैंतरे जारी रहे।'

'होठ लपके, नथने फड़के, फलियां चनकीं, चूड़ियां खनकीं।'

'उसके होठों पर कंपकंपी थी, अंगों पर थरथरी। सीना उठ-उठकर फूल रहा था। आंखों से शरारे छूट रहे थे।'

'गुलगुले से गुलफुल गाल, रस-भरी जलेबी से होठ, संकोच-भरी, लोच-भरी गर्दन, चुहल-भरी, चाह-भरी चितवन।' (पृष्ठ ६७)

'लम्बे, काले, बिखरे बाल। सांप की आंख सी आंख। खून की तलवार सी मांग। एक एक लट नागिन की लोल जिह्वा-सी लपलपाती। एक-एक दांत छुरी की धार-सा चमचमाता।'

'लचर-लचर, मचर-मचर। कभी लचती, कभी लरजती, कभी भड़-भड़ाती, कभी एकाएकी खड़ी हो जाती।'

'गोपाल बाबू ने पैरों में घुंघरू बांधा, कमर में घांघरा दिया, सर पर शरबती ओढ़नी डाली, तपाक से घूंघट काढ़ा, एक हाथ कमर पर रखा, दूसरे में फूलों की चंगेली ली, फिर लहराते हुए चमककर सामने आ गये।'

लेखक शब्द-चित्र उपस्थित करने में उपयुक्त विशेषणों, ध्वन्यात्मक शब्दावली तथा विशिष्ट उपमाओं का सहारा लेता है–

उपयुक्त विशेषण

चुक्की दाढ़ी, लटपटी पगड़ी, टह-टही चांदनी, जाफरानी रबड़ी, खासी, कटकी करधनी, जड़ाऊ बन्दी, खाईदार कंगनी, चूहादन्ती पहुंची, शेरदहां कड़ा, गोलमटोल गुलफुल मुख आदि विशेषण भरे पड़े हैं।

ध्वन्यात्मक शब्दावली

वासना फनफना उठी, टिपटिप टिपटिप। घुंघरू की रुनझुन। बारिश की रिमझिम। मुट्ठी के रुपयों की ध्वनि---झनक। आदि प्रयोग उल्लेखनीय हैं। समस्त साहित्य से सारी शब्दावली एकत्र की जानी चाहिए।

विशिष्ट उपमाएं

'घर में बीबी, जैसे उनके अस्तबल में कुम्मैत घोड़ी बंधी थी। न अड़ती, न पुश्ता चलाती, न कभी बाग लेने में कंधे फाड़ती।'

'चितवन में तमंचे की चोट।'

'दगे सांड़ की तरह।'

'टूटा तारा' (सन् १९४०) राजा साहब के संस्मरणों की दूसरी पुस्तक है जिसके अन्तर्गत 'मौलवी साहब' और 'देवी बाबा' शीर्षक से दो विस्तृत संस्मरण हैं। पुस्तक की भूमिका में ही लेखक ने स्वीकार किया है,

'बस जो कुछ हमने देखा, सुना या समझा, उन्हीं आड़ी-तिरछी रेखाओं पर ज़बान ने रंग भरने की कोशिश की है।'

इस पुस्तक में ही 'मौलवी साहब' का एक रेखाचित्र इस प्रकार है,

'मौलवी मुरादबख्श काले थे—कुचकुच। वे कोलतार से पुते तो न थे, मगर जो रंग था वह गाढ़ा ही था। और वह हर्गिज़ खुशरंग नहीं था। चेहरे की बनावट भी कुछ अजब टेढ़ी-मेढ़ी थी। उस पर चमक तो थी ही नहीं, नमक भी नहीं था। बकरों की-सी दाढ़ी और गर्दन तक ज़ुल्फों की तैयारी। छटांक भर के आदमी थे—दुबले-पतले कुछ अजब, भक्कू या दब्बू कहें तो कोई शिकायत न होगी। छोटी-छोटी चुंधी आँखें। उनमें चमक न थी, शर्म थी।'

एक दूसरा रेखाचित्र द्रष्टव्य है,

'उनकी गर्दन का रूमाल, उनके हाथ का डंडा, उनकी जिस्म का आबनूसी रंग, उनके गले की कोयल सी कूक, उनकी ठुड्डी की दाढ़ी की तरतीब, उनके सर पर घुंघराले काकुल की करामात, उनकी किफायतशारी की अनूठी बारीकियां, उनकी राम की चर्चा की खब्ती—यारों में आपस की ठिठोली के लिए काफी सरंजाम था।'

'देवी बाबा' में राजा साहब के एक संबंधी का करुण इतिहास है जिसमें त्यागमय जीवन का चित्र प्रस्तुत किया गया है। आंसू और उसास की जीवित प्रतिमा हैं—देवी बाबा।

'सूरदास' (सन् १९४० ई.) आपकी तीसरी पुस्तक है जिसमें अन्धों की दुनिया की एक निराली झांकी प्रस्तुत की गयी है। सूरदास राजा साहब का पंखा-कुली है। उसका नाम मुरारी है, आंखें न रहने से उसको सूरदास कहते हैं। उसकी मां भक्त प्रकृति की थी अतः बेटा भी वही संस्कार लेकर जन्मा। भजन-कीर्तन ही

उसके जीवन का आधार बन गया। उसको गद्दी मिलनी चाहिए थी पर नहीं मिली और परिणाम स्वरूप मन्दिर के नये महन्त ने उससे भीख मंगवाई, जिससे पीड़ित हो वह पंखा कुली बन गया। यहीं उसके साथ सुखिया और मंगरू भी थे। राजा साहब ने बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से अंधों के जीवन का अध्ययन किया है। पुरुष और नारी के आकर्षण-विकर्षण का परिचय भी मिलता है। इसमें अन्धों के रोमांस का भी चित्रण है। चारित्रिक दृढ़ता की दृष्टि से सूरदास का चरित्र आदर्श है। सूरदास के चाचा बुलाकी का चित्र भी इसमें उपस्थित किया गया है।

इस संबंध में प्रसिद्ध आलोचक डा. कमलेश का कथन द्रष्टव्य है, 'सूरदास' में अन्धों के पवित्र प्रेम का प्रदर्शन है। इन संस्मरणों के आधारभूत व्यक्तियों में से प्रत्येक अपनी करुण छाप छोड़ता है और पाठक उसके प्रति सहानुभूति से भर उठता है। स्वयं लेखक की अन्तर्दृष्टि और संवेदना के प्रति भी आकृष्ट हुए बिना नहीं रहा जाता। उसके व्यक्तित्व की अनेक ज्ञातव्य बातें इनमें पिरोयी हुई हैं। वह आत्मीयता से इन व्यक्तियों के अन्तः–बाह्य जीवन को चित्रित करता है कि शब्द-शब्द सजीव होकर लघुता के प्रति उसके अन्तर की सहानुभूति का जय-जयकार करता है।

शैली का चमत्कार देखिए, 'आंख गई तो गई, आंख का परदा तो उठ गया। दिल रोशन है तो फिर दुनिया की रोशनी का क्या मोल ?'

> 'लू में जला, पानी में भींगा और सर्दी में ठिठुरा, पर ड्यूटी की पाबन्दी में कभी कमी न आई।'

> बुलाकी का चित्र देखिए, 'एक लम्बे कद का खुर्राट सिकन्दर—चौड़ी छाती, शेर की गर्दन, बड़ी-बड़ी डरावनी आंखें, घनी-सुफेद मूंछें।'

'जानी सुनी देखी', 'हवेली और झोंपड़ी', देव और दानव', 'चुम्बन और चांटा' आदि कृतियों में भी आपने मानव चरित्रों के अनेक चित्र प्रस्तुत किये हैं। 'जानी-सुनी-देखी' माला के अन्तर्गत 'अबला क्या ऐसी सबला' शीर्षक पुस्तक में संस्मरणात्मक शैली में नारी के विविधरूपों की झांकियां प्रस्तुत की हैं।

सूरदास का सिद्धान्त वाक्य उल्लेखनीय है,

> 'शील होने के लिए कुल होना जरूरी नहीं है, आदमी का दिल होना जरूरी है।'

कुछ वर्ष पूर्व राजाजी ने हिन्दी के अनन्य सेवक तथा गुजराती के महान् साहित्यकार मुंशी का रेखाचित्र इस प्रकार प्रस्तुत किया था,

> "हमारे श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी भी गुजरात के वैसे ही अनमोल मोतियों में एक हैं जिनकी पूरी परख सीपी चुननेवालों

की आंखों पर भले न खुले, मगर जौहरी की निगाहों पर तो उसके जलवे का जादू जमाने से जम चुका है। और तभी तो हमारे जवाहर ने उन्हें अपने उत्तर प्रदेश के राज्यपाल का गुरु-गम्भीर पद सौंपकर उस पद की मर्यादा को भी मर्यादा दी। और, यह एक ही व्यक्ति एक पूरी संस्था की आलमगीरी अपने चारों ओर समेटे राजनीति के गम्भीर गर्जन और साहित्य के सरस सर्जन दोनों के गेंद दोनों हाथों से बारी-बारी और लगातार इस तेजी और खूबी से उछाल रहा है कि देखने वाले दंग हैं कि

'य' क्या खूब, वह सामने आ रहे,
रोब भी जम रहा, रस भी बरसा रहे।'

मगर आप इस जादूगर कलाकार को निकट से देखें तो आप पायेंगे, उसके चेहरे की सतह पर रोब की रेखा घड़ी-दो-घड़ी भले ही झांक जाये, उसके दिल की तह की गहराई में रस की फुहार एक पल को भी पट नहीं पड़ती। तभी तो वह चोटी के राजनेताओं से लेकर चौपा के फटेहाल तक और घर की माताओं-बहनों से लेकर आंगन में खेलते-खुलते नौनिहालों तक--सबका प्यारा दुलारा कन्हैयालाल है।"

इसी शैली में आपका डा. सच्चिदानन्द शीर्षक से एक रेखाचित्र 'नई धारा' में प्रकाशित हुआ।

इस छोटे से लेख का उपसंहार मैं डा. कमलेश द्वारा दिये गये राजाजी के एक रेखाचित्र से ही कर रहा हूं जिसमें उनका समस्त व्यक्तित्व समाहित हो गया है, "मंझोला क़द, दो-लंगी धोती, साधारण पंप-शू, कुरता और उस पर बन्द गले का ऐसा कोट, जिसके बटन अक्सर खुले रहते हैं, टोपी और कन्धे पर चादर। इस वेश में उन्हें देखकर कौन कहेगा कि वे पांच लाख की रियासत के स्वामी रहे होंगे।" गद्य-शैली के कलात्मक कारीगर के प्रति मैं इन शब्दों के साथ अपनी श्रद्धांजलि प्रस्तुत करता हूं और परम पिता परमात्मा से प्रार्थना करता हूं कि वे शतायु हों और इसी प्रकार मां भारती के भंडार को भरते रहें।

सत्यवती मल्लिक

श्रीमती सत्यवती मल्लिक हिन्दी साहित्य की उन वरिष्ठ लेखिकाओं में से हैं जिन्होंने साहित्य के भंडार को लघु कथा, कहानी, जीवनी, निबन्ध आदि सभी विधाओं के माध्यम से भरा है। 'रेखाचित्र' विधा में तो आप हिन्दी की वरिष्ठ लेखिकाओं में

स्थान रखती हैं। आपके द्वारा सम्पादित 'अमिट रेखाएँ' शीर्षक रेखाचित्रों का संग्रह सन् १९५१ में प्रकाशित हो चुका है। आपकी प्रारम्भिक रचनाएँ 'विशाल भारत' में प्रकाशित होती थीं जिनमें (पत्र के सम्पादक की दृष्टि में) वह अपनी सूक्ष्म बुद्धि, अद्भुत निरीक्षण शक्ति, उत्कट प्रकृति-प्रेम तथा स्वाभाविक सहृदयता से मुग्ध कर रही थीं। इस संग्रह की प्रेरणा श्री बनारसीदास चतुर्वेदी से प्राप्त हुई थी जिसकी भूमिका स्व. दीनबन्धु ऐण्ड्रयूज साहब लिखते पर दुर्भाग्य से अब यह पुस्तक उनकी स्मृति में ही प्रकाशित हुई है। इसकी संक्षिप्त, उपयोगी भूमिका श्री बनारसीदास चतुर्वेदी को ही दीनबन्धु जी के अभाव में लिखनी पड़ी।

श्रीमती मल्लिक का एक रेखाचित्र 'यात्रा में' बहुत पहले हंस के फरवरी १९४२ के अंक में प्रकाशित हुआ था जिसमें उनकी 'मूविंग कैमरा' यात्रा के साथ चित्र खींचती रही। यह कैमरा और कुछ नहीं, उनकी लेखनी थी। इसका एक चित्र द्रष्टव्य है,

> 'बृहद् भाल, लम्बी पतली नाक, शुक ग्रीवा पर लटकते कर्णफूल, चिकन के बारीक कुरता, रेशमी सलवार और पतले महीन दुपट्टे से ढकी कमनीय छवि। नाजुक शुभ्र कलाइयों में बेला के गजरे, मेंहदी-भरे हाथ और पास ही मुंह-हाथ धोने का भभका तथा साँवला रंग, शोरन आँखों वाली बाँदी।'

इसके पश्चात भी समय-समय पर आपके रेखाचित्र पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे। इनमें से एक महत्त्वपूर्ण रेखाचित्र 'मधुकर' के रेखाचित्रांक में दिसम्बर १९४६ के अंक में 'आमों के अन्वेषणकर्ता फरीदी साहब' शीर्षक से प्रकाशित हुआ।

'अमिट रेखाएँ' शीर्षक पुस्तक की भूमिका में श्रीमती मल्लिक ने लिखा है,

> 'सुन्दर वस्तुओं के, वे चाहे चित्र हों या फूल-पत्ते, गीत हों अथवा कविताएँ, संग्रह करने का मुझे हमेशा शौक रहा है। ऐसे कार्य मेरे लिए बहुत ही रोचक एवं मनोरंजक होते हैं। प्रस्तुत संग्रह में रेखाचित्रों, संस्मरणों और विश्व के उत्कृष्ट मार्मिक स्थलों को चुनकर दिया गया है।'

इस पुस्तक का दो दृष्टियों से महत्त्व है,

अ—सम्पादन-कला की दृष्टि से

ब—रेखाचित्रों की दृष्टि से

सम्पादन-कला की दृष्टि से पुस्तक के कई गुण हैं। संभवतः रेखाचित्रों की यह पहली सम्पादित पुस्तक है जिसमें उच्चकोटि के प्रेरणाप्रद ऐसे रेखाचित्रों का संग्रह है जो रोचक, सजीव एवं भावमय होने के साथ हृदयस्पर्शी तथा प्रेरणाप्रद हैं। इन रेखाचित्रों

को पढ़ने पर मैंने स्वयं यह अनुभव किया है कि जीवन की धारा को मोड़ने में ये कितने सफल हो सकते हैं। विद्यार्थियों को यदि यह पुस्तक अनिवार्य रूप से पढ़ाई जाय तो वह सैकड़ों भाषणों एवं प्रवचनों से अधिक सार्थक सिद्ध होगी।

श्री चतुर्वेदी जी के अनुसार इस संग्रह के पीछे एक व्यक्तित्व है, एक आत्मा है, एक योजना है। वस्तुतः इसमें सत्यवती जी के आकर्षक व्यक्तित्व का प्रतिबिम्ब, उनकी सात्विक सुरुचि का प्रदर्शन और उनके समन्वयकारी दृष्टिकोण का प्रमाण विद्यमान है।

'अमिट रेखाएँ' शीर्षक संग्रह के रेखाचित्र पाँच वर्गों में विभाजित है,

१. मेरी माताजी
२. अमर व्यक्तित्व
३. नीव की ईंटें
४. स्मृति की रेखाएँ
५. अमर क्षण

१. मेरी माता जी

इसके अन्तर्गत छह रेखाचित्र हैं जो क्रमशः महात्मा गांधी, दीनबन्धु, डा. कैलासनाथ काटजू, श्री जैनेन्द्र कुमार, इन्दिरा गांधी तथा सत्यवती मल्लिक के लिखे हुए हैं। 'मेरी माताजी' शीर्षक लेखमाला का प्रारम्भ 'विशाल भारत' और 'मधुकर' में आदरणीय चतुर्वेदी जी ने किया था। एक ही विषय पर विभिन्न व्यक्ति किस प्रकार विभिन्न शैलियों में लिखते हैं, यह महत्त्वपूर्ण है। निस्सन्देह लेखक तथा लेखिकाओं की माताजी भिन्न-भिन्न थीं पर महान् व्यक्तित्व के पीछे किस प्रकार उसकी माता का व्यक्तित्व भी छिपा रहता है, कहीं-कहीं झांकता रहता है। इन्दिरा जी अपनी माता जी के संबंध में लिखती हैं,

> 'डाँटती तो वह कभी भी नहीं थीं, न ऊँची आवाज से बोलती थीं, लेकिन उनका प्रभाव ऐसा था कि जो कहती थीं, वही होता था। हमारे यहाँ पंडित मदनमोहन मालवीय के भतीजे संस्कृत पढ़ाने आते थे। वह मां का बहुत आदर करते थे और उनसे डरते भी थे। मुझे बड़ा आश्चर्य होता था कि इतनी मधुर, दुबली पतली औरत से डर कैसा ? पंडित जी कहते, 'अरे, तुम्हें नहीं मालूम। यह बड़ी शक्ति की देवी है। जो चाहे कर सकती है।' इस पर माँ हमेशा हंसती थीं। कुछ शक्ति उनमें जरूर थी, जो भी उनसे मिलता, उस पर गहरा प्रभाव पड़ता। मैं तो मानती हूँ कि मेरे पिताजी पर भी उनके विचारों का गहरा असर पड़ा। अक्सर उनके पास साधु महात्मा भी आकर बैठते थे।'

२. अमर व्यक्तित्व

इसके अन्तर्गत आजाद की माँ, पतिव्रता जयिनी मार्क्स, सरोज नलिनी दत्त, डोरोथी वर्ड्सवर्थ, राष्ट्रमाता बा, अमर लेखिका स्टो, ग्रेस डार्लिंग, मैडम क्यूरी––शीर्षक आठ प्रेरणाप्रद रेखाचित्र हैं जिनमें से आजाद की माँ श्री वैशम्पायन तथा 'जयिनी मार्क्स' तथा 'स्टो' बनारसीदास चतुर्वेदी द्वारा लिखे हुए हैं। शेष सभी सत्यवती जी ने स्वयं लिखे हैं। मैडम क्यूरी का रेखाचित्र तो बापू के आदर्श से ही लिखा गया था। बापू आपके बहुत प्रशंसक थे।

३. नींव की ईंटें

इस शीर्षक के अन्तर्गत डा. अब्दुल हक़ का 'नामदेव माली', श्रीराम शर्मा का 'पीताम्बर हकीम', सत्यवती जी का 'जून देदी', हरिभाऊ उपाध्याय का 'सेवादास' तथा बनारसीदास चतुर्वेदी का 'पं. जयराम जी' शीर्षक से पाँच श्रेष्ठ रेखाचित्र हैं।

४. स्मृति की रेखाएँ

इस स्तम्भ के अन्तर्गत महादेवी वर्मा, चीनी यात्री, सत्यवती जी का 'कैदी', डा. अख्तर हुसैन रायपुरी का 'बड़ी बी' तथा विष्णु प्रभाकर का 'टीपू सुल्तान' शीर्षक रेखाचित्र संस्मरणात्मक शैली में लिखे हुए हैं।

५. अमर क्षण

इस स्तम्भ के अन्तर्गत एक दो तीन (मेरी बायल ओ' रीली), सातवाँ आदमी, वह दिव्य आलिंगन, वे कैसे जीते हैं, दो धनी, उत्सर्ग, भद्रजनों की श्रेणी में, संयोग, नूरी, माँ-बेटा, स्वातन्त्र्य-परिचय, बेचारा पीटर, सुकरात का विषपान––तेरह शब्दचित्र हैं जिनमें से अधिकांश श्रीमती मल्लिक द्वारा लिखित हैं। कुछ संकलित हैं। दिव्य आलिंगन चतुर्वेदी जी द्वारा लिखित है। 'माँ-बेटा' की लेखिका सुशीला नैयर हैं। 'वे कैसे जीते हैं' के लेखक श्रीराम शर्मा हैं। 'स्वातन्त्र्य परिचय' एक सच्ची घटना पर आधारित है जिसके लेखक 'वनचर' हैं।

इस पुस्तक में विश्व के प्रसिद्ध अथवा सामान्य व्यक्तियों पर बिना किसी भेदभाव के लिखे गये ३६ रेखाचित्रों में से श्रीमती मल्लिक के ग्यारह रेखाचित्र हैं।

पहला रेखाचित्र 'अपनी माँ' पर है। दूसरे वर्ग 'अमर व्यक्तित्व' के अन्तर्गत आठ महिलाओं में से पूर्व और पश्चिम का अद्भुत समन्वय करने वाली सरोजिनी नलिनी दत्त प्रमुख हैं। सरल हृदया डोरोथी वर्ड्सवर्थ के संबंध में लेखिका ने लिखा है।'

'वास्तव में आजन्म कुमारी डोरोथी का जीवन स्वयं ही झीलों, प्रपातों, झरनों के समान निर्मल और किसी सुन्दर पक्षी की उड़ानों के सदृश स्वच्छ रहा है। उन्हें निर्भयतापूर्वक वनों में विचरते देखकर एक ग्रामीण महिला ने मुग्ध होकर कहा था, "वह तो स्वयं प्रकृति का एक अंश है।

राष्ट्रमाता बा--'बा की तुलना महलों में वियोग के आँसू बहाने वाली यशोधरा एवं उर्मिला से नहीं अपितु चिरसंगिनी सीता अथवा प्राणदात्री सावित्री से हो सकती है। शरत्-चाँदनी की तरह उज्ज्वल, जाह्नवी की पुण्यधारा सी निर्मल, युगान्तर से अपने अस्तित्व को मिटाकर पुरुष को गौरव प्रदान करती हुई भारतीय नारी का श्रेष्ठ स्वरूप, जिसके दोनों महिमामय हाथ पलना झुलाते, पलकें प्रतीक्षा में और प्राण छाया की भांति साथ-साथ चलते हैं।'

शेष दो ग्रेस डालिंग तथा मैडम क्यूरी पर हैं,

'क्यूरी दम्पति ने अपने यौवन का सर्वोत्तम भाग एक टूटे-फूटे छप्पर के नीचे परीक्षा करते-करते काट दिया। न उनके पास पैसा था, न प्रयोगशाला के लिए सरकारी सहायता। एक प्रकार से शून्य में से सृजन करना था। धूल और एसिडभरा पुराना-सा चोगा पहने, बाल हवा में उड़ते हुए, धुंए से भरा गला, दुखती आँखें, दिन-भर वह लम्बी सी छड़ी हाथ में लिये रासायनिक द्रव्य में घुमाया करती और साँझ को मकान में चूर होकर पड़ जाती।'

'नींव की ईंटें' में 'जून देदी' (जून कश्मीरी भाषा में चाँद और देदी मां को कहते हैं) जिसका चित्र नहीं लिया जा सका, पर उस असंख्य झुर्रीदार चेहरे की सौजन्यता एवं अपार वातसल्य आजीवन भूलने की वस्तु है ? का सफल रेखाचित्र श्रीमती मल्लिक ने खींचा है।

'स्मृति की रेखाएँ' में कैदी शीर्षक रेखाचित्र है जिसके संबंध में श्री बनारसीदास चतुर्वेदी अपनी पुस्तक 'रेखाचित्र' की भूमिका में इस प्रकार लिखते हैं,

'बहन श्रीमती सत्यवती मल्लिक के 'कैदी' नामक स्केच ने हमें चेखव की कला का स्मरण दिला दिया और मधुर भावनाओं के चित्रण में हम उन्हें अद्वितीय मानते हैं।'

कैदी का पहला चित्र ही देखिए,

'वह एक जीवित मांस की लोथ-सा दिखाई देता। सफेद रक्त-हीन

चेहरे पर कीच-युक्त अधखुली आँखें, मुंह से बहती हुई लार, जो उसकी बढ़ी हुई दाढ़ी पर से एक डोरे की तरह टपक रही थी और जिस पर मक्खियों ने अधिकार जमा लिया था। उसके काँपते हुए सिर ने, जिसे वह हथकड़ियों की रगड़ से दोनों घाव-युक्त कलाइयों के सहारे थामे हुए औंधा पड़ा था, उसकी आकृति को और भी भयावना बना दिया।'

'अमर क्षण' में तो लेखिका के अनेक शब्दचित्र हैं। इसमें से एक चित्र पहचानिए'

'किन्तु किसी दिन इस प्रकार अकस्मात् समुद्र-सी गंभीर, मानसरोवर-सी निर्मल, हिमालय के उत्तुंग धवल शिखर-सी उज्ज्वल यह भव्य मूर्ति---वाणी जिसके मुख से साकार शीतल निर्झर-सी झरती है--मेरे घर को पवित्र करेगी, इसकी मुझे कल्पना भी न थी।'

यह चित्र है राष्ट्रपति राधा कृष्णन् जी का। 'नूरी' शीर्षक चित्र में प्रकृति के मनोहर चित्र हैं,

'कहीं सथू (नदी का बांध) के नीचे बैंत वृक्षों के झुरमुट में से होकर, जहाँ आज मक्का के हरियाले खेत, ओस-बिन्दुओं से भरकर, मुक्ता-से जड़ित, जगमगा रहे हैं। इस ऊँची-ऊँची मक्का की भीतों से उस पार का समूचा सुनहला दृश्य ढंक गया है, कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता। सफेदों से पर्वतों की ढलान पर बनी कोठियों से घिरा, दूर नदी का बाँध, इस श्यामल भू-भाग के दोनों ओर वितस्ता की मन्थर गति।'

अधिकांश रेखाचित्र 'मनुष्य' को केन्द्रबिन्दु मानकर ही लिखे गये हैं पर जब वह मनुष्य या वस्तु की सीमा लाँघ जाते हैं तो प्रायः गद्यकाव्य बन जाते हैं। चित्र के उभारने के लिए कल्पना का सहारा लेना पड़ता है तो वह गद्यकाव्य बन जाता है। श्रीमती मल्लिक के रेखाचित्रों में विशिष्ट व्यक्तियों के वर्णन में इस प्रकार की शैली के दर्शन होते हैं।

श्री वृन्दावनलाल वर्मा

हिन्दी के वरिष्ठ तथा सुप्रसिद्ध उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा ने अपने उपन्यास तथा कहानियों में पात्रों के चरित्र का विश्लेषण करते समय तथा स्थान (पर्वत, नदी, घाटी, टीले, किले आदि) का परिचय देते समय चित्रात्मक भाषा का प्रयोग किया है। वे समस्त अंश यदि पृथक् रख दिये जायँ तो हिन्दी-रेखाचित्र साहित्य

की सुन्दरतम कृतियां होंगे। हिन्दी में रेखाचित्र शैली का प्रारम्भिक विकास वर्माजी के उपन्यासों के माध्यम से भी स्वीकार किया जा सकता है।

रेखाचित्र के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

'एक की आयु सत्रह या अठारह वर्ष से अधिक न होगी। प्रशस्त ललाट, कुछ लंबाई लिये गोल चेहरा, आँखें कुछ बड़ी और बादाम के आकार की, हल्की काली नाक सीधी और होंठ लाल, ठोड़ी आधार में एक हल्के से गढ़ेवाली और ज़रा-सी आगे को झुकी हुई और गर्दन सुराहीदार। केश पीछे गर्दन तक लंबे और खिंचे हुए पलक दीर्घ। सीना चौड़ा और कमर बहुत पतली, बाहु लंबी और हाथ की उँगली पतली। मूँगिया रंग के कपड़े पहने हुए छोटी-सी ढाल और तरकस पीठ पर, कमर में तलवार और कंधे पर कमान। भाल पर लगा हुआ रोरी का तिलक किसी समय हाथ पड़ जाने से पुछ गया था और माथे पर तिरछी लकीर के आकार में बन गया था। इस आरक्त वक्र रेखा ने मुख के हलके गेहुएँ रंग को और भी तेजोमय बना दिया था।'

(गढ़कुण्डार से)

व्यक्ति की आकृति का चरित्र और स्वभाव से घनिष्ठ संबंध होता है। इस दृष्टि से व्यक्ति का बाह्य रेखांकन मात्र भी उसके अन्तर की झलक प्राप्त करने में सहायक होता है,

मृगनयनी से अंगों की शोभा का चित्र

'दोनों ने अपने लंहगों को घुटनों के ऊपर समेट कर कसकर कच्छ बाँधा। दोनों की गोरी-गोरी जांघें आधी उघड़ गयीं। लाखी की पतली सुती हुई सी थीं और निन्नी की मांसल पट्टों वाली जैसे बैठकें लगाने वाले किसी पहलवान की हों।'

'करघई की टेढ़ी-मेढ़ी डालें सिर से बाँधी हुई ओढ़नी में अटक-अटक जा रही थीं। गोरी-सलोनी भुजाओं में काँटे खरोंचें कर कर रक्त की पतली लीकें निकाल रहे थे, धूल और धूप उनको सुखाकर मरहम का सा काम कर रही थी···बिना तेल के लम्बे-काले केश कुन्तलों में आँधी के एक-दो झोंकों ने ही धूल और करघई के छोटे-छोटे सूखे पत्ते भर दिये।'

एक दूसरा चित्र

'निन्नी बलिष्ठ और पुष्ट काया की। निन्नी की बड़ी-बड़ी आँखें थीं, निन्नी की गोरी देह पुष्ट है। लम्बी-लम्बी बरौनियों ने भौंहों को छू लिया। आँखें इतनी बड़ी कि उनको वास्तव में हिरन के छौने की आँख कहा जा सकता है। बाँहें सांप की रस्सी जैसी हैं। निन्नी के पैर का पंजा बड़ा था। निन्नी की नाक पतली थी।'

एक पुरुष चित्र

'युवावस्था के आगे जा चुका था। बड़ी काली आँखें, भरी भौंह, सीधी लम्बी नाक, चेहरा भरा हुआ कुछ लम्बा। ठोड़ी दृढ़, होठ सहज मुस्कान वाले। सारा शरीर जैसे अनवरत व्यायाम से तपाया और कसा गया हो। क़द लम्बा और छाती चौड़ी। घनी नाकदार मूंछें।'

वर्मा जी का लिखा हुआ 'आकाश अपना' शीर्षक एक रेखाचित्र 'नई धारा' के मई १९५१ के अंक में प्रकाशित हुआ था। नई धारा के मार्च १९५४ के अंक में स्वामिभक्त नौकर 'हलकू' पर एक अन्य रेखाचित्र प्रकाशित हुआ है जिसमें उसके मनोभावों, उसकी निष्कपटता और स्वामिभक्ति का मार्मिक चित्र है।

आचार्य शिवपूजन सहाय

शिवपूजन सहाय जी ने 'आज' में नियमित रूप से लिखा जिसका संग्रह 'कुछ' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। व्यंग्य-विनोद से वेष्टित एवं हास्य रस से पोषित, सरल, मुहावरेदार भाषा में लिखे हुए ये निबंध वस्तुतः व्यक्तिगत निबंध हैं। व्यंग्य-विनोदात्मक निबंधों का संग्रह 'दो घड़ी' शीर्षक से भी प्रकाशित हुआ है। आपकी शैली के संबंध में डा. माचवे[1] का मत है, "उनके लिए विषय प्रधान नहीं, है, कुछ भी विषय काफ़ी होता है। उनमें परिहास और व्यंग्य का पुट बराबर रहता है। मुहावरे की मीनाकारी और लोकोक्ति का साधन अवश्य दर्शनीय है। यद्यपि विषय प्रासंगिक महत्त्व का या वैसे नगण्य-सा जान पड़े, फिर भी वे अपनी लेखनी के चमत्कार से उसमें 'अपूर्व वस्तु-निर्माण' अवश्य कर देते हैं।'

रेखाचित्र विधा में भी सहाय जी की लेखनी निरन्तर चलती रही। विविध विधाओं के संकलन 'संकेत' में पहला रेखाचित्र 'महेस पांडे' शीर्षक से आचार्य जी का ही सम्मिलित किया गया। इस रेखाचित्र का एक अंश इस प्रकार है,

'मंझोला क़द। गठीला बदन। रोबीली आँखें। शिला जैसी

छाती। घनी भौंहें और मूछें, मुग्दर की तरह पीन-प्रबल भुजदण्ड। वृकोदर भीम का पेट और सुदामा की गरीबी।

...महेस पांडे का प्रिय भोजन था मालपुआ, तस्मई, मखाने की खीर, बेसन का लड्डू। पेट और जीभ में कभी पटरी न बैठती। पेटू और चटोर का बलवान होना दुर्लभ है। महेस पांडे को विधाता ने अपवाद बनाया।

...पहले भरा कठौता देख लेते तभी आसन जमाते। उन्हें हिया-भर कोई चकाचक खिला दे, फिर भी जड़ से बाँस उखड़वा ले, कुएं से मोट खिचवा ले, कीचड़ में धँसी बोझिल गाड़ी निकलवा ले, भुजाओं पर मेढ़े की टक्कर लगवा ले, ऐसे-ऐसे और भी जो पुरुषार्थ देखना चाहे––देख ले।'

समय-समय पर संस्मरणात्मक शैली में विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के लिए लिखे गये आपके रेखाचित्रों का संग्रह 'वे दिन वे लोग' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है। ये शब्द-चित्र आचार्य जी के ज्योत्स्ना', 'योगी', 'नई धारा', 'उत्तर बिहार' आदि पत्रों के लिए लिखे गये थे––

म. म. सकलनारायण शर्मा

आपके शब्द-चित्र का एक अंश इस प्रकार है–

'उनकी वेशभूषा साधारण थी। दिल्लीवाला जूता, पंडिताऊ धोती और गोल टोपी, बन्ददार मिर्जई और चादर। मिर्जई के बन्द कभी खुले हुए और चादर भी आगे या पीछे एड़ी तक लटकती हुई। कहीं किसी सभा-सम्मेलन में जाते समय बन्ददार बटनदार अंगरखा पहनकर रेशमी साफ़ा बाँधते थे। वह साफा सिर में ऐसा लटपट बँधता कि बोलते समय खुलता जाता और वे समेटते-खोंसते रहते।'

पं. जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी

'चमकता हुआ फीतेदार काला जूता, चुस्त पाजामा, रेशमी अंगरखा, वसन्ती साफा, सामने की जेब में चेनदार घड़ी, चिर प्रसन्न मुखड़े पर मन्द-मन्द हास्य रेखा लिये जब चौबे जी मंच की ओर चले तब तालियों की गड़गड़ाहट से पण्डाल गूंज गया।...उनका मँझोले

कद का गौर वर्ण शरीर सब तरह की पोशाकों में खूब फबता था। उनके सौम्य रूप में उनके मनःप्रसाद से और भी भव्यता झलकती थी। ललाट का चन्दन तिलक, स्वच्छ सघन दन्तावली, श्वेत यज्ञोपवीत, मनहर वाणी, सुपुष्ट शरीर आदि उनके स्वस्थ जीवन के दर्पण थे।'

निराले निराला

शिव जी का निराला जी के साथ भी अभिन्न संबंध रहा है,

कलकत्ते में निराला—'निराला जी ऊपर के तल्ले से प्रायः कम ही नीचे उतरते, अगर बाहर निकलते भी तो चुपचाप अपनी राह चले जाते, दाएँ-बाएँ देखते तक नहीं। नंगे पैर, तलहथी पर सुरती मसलते हुए ट्राम की सड़क तक निकल जाते। कभी-कभी उसी दशा में ठनठनिया और मछुआ बाजार तक बढ़ जाते, मानो चिन्तनशीलता की धारा में स्वतः बहे जा रहे हों। मौनावलंबन से शान्त मुखाकृति कभी-कभी मन्द स्मित से विकसित हो उठती, क्षण भर मुखड़ा प्रसन्न दीखता, फिर गम्भीर-धीर-प्रशान्त।'

एक अन्य चित्र—'आकर्षक रूप, लम्बे तगड़े डील-डौल का शरीर, व्यायाम के अभ्यास से सुघटित स्वास्थ्य, विलक्षण मेधा शक्ति, ललित मनहर कंठ, दयार्द्र हृदय, चिन्तनशील मस्तिष्क, उद्भावना शक्ति-सम्पन्न बुद्धि—सब कुछ भगवान् ने उन्हें भरपूर दिया था। बड़ी-बड़ी सुहावनी-लुभावनी आँखें, दमकती दाड़िम दशनावली, घुंघराली अलकावली, लघु मुख-विवर, पतले-पतले अधर, पतली-पतली बाँकी अँगुलियाँ, प्रशस्त वक्षस्थल, हर तरह सिरजनहार ने उन्हें सँवारा था।,

कृष्णबिहारी मिश्र

'चुस्त पाजामा और बटनदार अंगरखा, गांधी टोपी और चश्मा, घड़ी और छड़ी, मझोला कद, पान से रंगे दाँत, अँगूठियां, बालवाली मूँछों में डूबी मुस्कान, बातों में मार्मिक सूझ, भाषा में आडम्बरशून्यता, रहन-सहन में कुलीनता की छाप, मिलनसारी की मिठास, यही मिश्र जी का अत्यन्त संक्षिप्त परिचय है।'

सहाय जी अपने दीर्घ साहित्यिक अनुभव पर आधारित अनेक शब्द-चित्र हिन्दी साहित्य को दे गये हैं।

इन्द्र विद्यावाचस्पति

संस्मरणात्मक शैली में रेखाचित्र लिखने की कला में इन्द्र जी सिद्धहस्त थे। इस शैली में आपके लिखे निबंधों का संग्रह 'मैं इनका ऋणी हूं' शीर्षक से प्रकाशित हो चुका है। लेखक का दृष्टिकोण जानने के लिए भूमिका का कुछ अंश भी द्रष्टव्य है,

'चित्रकार यदि केवल एक जड़ 'माडल' बनाना चाहता है, तो चित्रणीय व्यक्ति को कुरसी पर बिठाकर उसका चित्रण कर सकता है, परन्तु यदि वह उसका चेतन चित्र बनाना चाहता है तो उसे ऐसे क्षण की प्रतीक्षा करनी होगी, जब वह अपनी स्वाभाविक मुद्रा में हो और अधिक अच्छा होगा कि असावधान हो। मैंने अपने संस्मरणों में स्मरणीय व्यक्तियों का जो चित्रण किया है, वह ऐसे ही क्षणों में प्राप्त किये अनुभवों पर आधारित है। आशा है, पाठक इन संस्मरणों को पढ़ते हुए इस बात का ध्यान रखेंगे कि ये शब्द-चित्र चलते-फिरते लिये गये हैं, स्टूडियो में परदे के सामने खड़े करके नहीं।'

इस पुस्तक में पठनीय अंश हैं तिलक, बापू, मोतीलाल नेहरू, हकीम अजमल खां, पं. मदनमोहन मालवीय, लाला लाजपतराय आदि। पुस्तक के कुछ उद्धरण यहां पर्याप्त होंगे—

लोकमान्य तिलक

लोकमान्य तिलक के व्यक्तित्व, भाषण, जुलूस आदि सभी के चित्र उपस्थित किये गये हैं। उनके बाह्य व्यक्तित्व का एक रेखाचित्र द्रष्टव्य है,

> 'उनके मुखमण्डल पर असाधारण बुद्धि, गम्भीरता और तपश्चर्या के चिह्न स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे थे। थोड़ी देर तक उनके शांत चेहरे को देखने से यह प्रतीत होने लगता था कि हम सचमुच एक क्रांतिकारी को देख रहे हैं। माथे पर विचार की रेखाएँ थीं, आंखें चेतन और स्थिर थीं, होठ दृढ़ता से मिले हुए थे और मुद्रा स्तब्ध थी, मानो क्रांति का शरीर-धारी पुतला हो।'

मोतीलाल नेहरू

इसमें तत्कालीन एसेम्बली का दृश्य अंकित है,

> 'कौंसिल प्रवेश के विरोधियों में श्री राजगोपालाचार्य का तर्क कैंची की तरह तेज चलता था, सरदार पटेल की चुनौती भरी उक्तियां विरोधियों को दहला देती थीं और बाबू राजेन्द्र प्रसाद की भावुकता पूर्ण वकालत परिवर्तनवाद के पांव हिला देती थी।'

हकीम अजमल खां

उनके बैठने की मुद्रा का एक चित्र—

'मंच पर बढ़िया ईरानी गलीचे पर गाउदम तकिये के सहारे हकीम साहब विराजमान थे। हकीम साहब के एक ओर पानों की डिबिया पड़ी थी और दूसरी ओर उगालदान। उनके मुंह में दो पानों की एक जोड़ी थी।'

पंडित मदनमोहन मालवीय

पंडित जी की भाषण कला सर्वत्र ज्ञात है, उसका ही एक चित्र इस प्रकार है,

'उनके भाषण की बड़ी विशेषता यह थी कि वह श्रोताओं के अन्तस्तल में प्रवेश करने के लिए अपनी सारी शक्ति लगा देते थे। सब बातें ऐसे मीठे ढंग से कहते थे कि श्रोताओं के कानों में बिना किसी प्रतिरोध के घुस जायें। अप्रिय या खटकने वाली बात एक भी नहीं करते थे। कोई अप्रिय बात कहनी पड़े तो उसे इतने परदों में लपेटकर कहते थे कि कोई बाहर न रह जाय और चुभे बिना हृदय तक चली जाय। उनके भाषणों में भाषा का प्रवाह सुरेन्द्रनाथ या विपिनचन्द्र पाल की तरह बाढ़ बनकर नहीं बहता था, शीत ऋतु की भरी हुई गंगा के प्रवाह की तरह हलकी-सी गूंज करता हुआ अनवरत बहता था।'

लाला लाजपतराय

लाला जी की भव्य आकृति, भरा हुआ चेहरा और ओज से भरपूर आंखें आज किसको स्मरण नहीं, उनकी आवाज़ का एक शब्द-चित्र द्रष्टव्य है,

'क्या उपमा दी जाय—शंख का स्वर भारी होता है, सिंह का गर्जन भयानक होने के कारण डरा सकता है, रुला नहीं सकता और वाद्य की ध्वनि में गरज नहीं होती। लाला जी के स्वर की निकटतम उपमा किसी कुशल धनुर्धारी द्वारा प्रयुक्त धनुष की टंकार से दी जा सकती है, जिसके उतार चढ़ाव प्रयोक्ता के वश में रहते हैं। लाला जी का स्वर कर्कश न होते हुए भी तीव्र और ऊँचा था।'

डाक्टर अंसारी

'अंसारी साहब पर तुर्की टोपी, हंटिंग कोट और ब्रीचेज के साथ

काला बूट खूब सजता था। दायें हाथ में एक मोटी-सी छड़ी थी। उस चेहरे पर अनवर पाशा की शान बरस रही थी। तेजभरी आँखें, राजपूती मूंछें दोनों ओर से ऊपर को चढ़ी हुई, सुडौल शरीर।'

सरदार वल्लभभाई पटेल

सरदार का एक छोटा-सा चित्र सारा व्यक्तित्व सामने ला देता है,

'उनकी लम्बी-लम्बी मूंछें होंठों में अंतर्हित भावों को छिपाकर चेहरे को उसी प्रकार कठोर रूप दे रही थीं, जसे मार्शल स्टालिन की मूंछें।'

उपन्यास-सम्राट प्रेमचन्द

प्रेमचन्द का यह चित्र आज किसको स्मरण नहीं,

'सिर पर खद्दर की टोपी थी, चेहरे पर घनी मूंछें, शरीर खद्दर कुरते और धोती से ढका हुआ और पैरों में चप्पल।'

इसके अतिरिक्त बाबू शिवपूजन सहाय, बापू, सुभाषचन्द्र बोस, मौलाना आजाद, मिस्टर आसफ़अली, देवदास गांधी तथा अपने पिता श्रद्धानन्द जी के अच्छे चित्र हैं।

विनोदशंकर व्यास

श्री विनोदशंकर व्यास ने 'प्रसाद और उनके समकालीन' शीर्षक पुस्तक में कुछ अच्छे चित्र प्रस्तुत किये हैं। इनमें से निराला का चित्र इस प्रकार है,

'१६ वर्ष की अवस्था में उनका कद ५ फुट ६ इंच का था। उनका व्यक्तित्व अपने आप अपनी ओर खींच लेता था। लम्बे केश, लम्बा गठा शरीर, चमकीली और चढ़ी आँखें अपने आवेश में उन्मत्तता का स्वरूप धारण कर लेती थीं। ऊँचा स्वर और खरी बातें विशिष्टता से मैत्री कर चुकी थीं। लोग देखकर चकित हो जाते, पूछते कौन हैं? उत्तर मिलता कवि हैं, हिन्दी में बेतुके छन्द के स्रष्टा निराला।'

महाकवि प्रसाद पर उनका पठनीय रेखाचित्र इस प्रकार है,

'महाकवि प्रसाद जी का व्यक्तित्व देखने में ही विशाल मालूम पड़ता था। ललाट की तेजस्विता, आँखों की गम्भीरता और बातों की मधुरता उनकी विशेषता थी।

प्रसाद जी का कद मध्यम श्रेणी का था और गौर वर्ण गोल मुंह,

दाँत सब एक पंक्ति में हंसने में बहुत स्वाभाविक मालूम पड़ते थे। जवानी में ढाका की मलमल का कुरता और शान्तिपुरी धोती पहनते थे, लेकिन बाद में खद्दर का भी उपयोग करते रहे। जाड़े में सुंघनी रंग के पट्टू का कुर्ता अथवा सकरपारे की सींवन का रुईदार ओवरकोट पहनते थे। आंखों पर चश्मा और हाथ में डण्डा—प्रसाद का व्यक्तित्व बहुत ही आकर्षक था।'

शिवचन्द्र नागर

नागर जी ने 'महादेवी : विचार और व्यक्तित्व' शीर्षक पुस्तक में महादेवी के बाह्य तथा आन्तरिक व्यक्तित्व का अच्छा चित्रण किया है, इसका एक अंश इसप्रकार है,

'फूलों वाली सुन्दर चादर पर महादेवी जी पाल्थी मारकर बैठ गईं। श्वेत वस्त्रों से परिवेष्टित वे उस उच्च स्थल पर ऐसी ही लग रही थीं जैसे हिमाचल की उच्चतम श्रेणी का सर्वोच्च भाग वहां लाकर रख दिया गया हो और वह पिघला न हो। उनके मुख पर शांति थी और प्रसन्नता भी। उनके नेत्रों में संतोष की आभा थी—ऐसी ही आभा जैसी एक कलाकार के नेत्रों में कला का सृजन कर लेने पर होती है।'

नागर जी का 'पन्त का व्यक्तित्व : एक रेखाचित्र' भी पठनीय है।

शान्तिप्रिय द्विवेदी

श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी हिन्दी के उन विचारकों तथा आलोचकों में अपना विशिष्ट स्थान बना चुके हैं जो उदार दृष्टि से साहित्य का मूल्यांकन करते हैं। द्विवेदी जी सफल आलोचक ही नहीं शैलीकार भी हैं। द्विवेदी जी ने समकालीन साहित्यकारों का जीवन-चित्र अपनी लेखनी से संस्मरणात्मक शैली में बनाया है। द्विवेदी जी की 'पथचिह्न' शीर्षक पुस्तक में इसी प्रकार के लेखों का संकलन है। साहित्यकारों से इतर राजनैतिक साहित्यकारों, जैसे नेहरू जी पर भी उनकी लेखनी ने सन् १९४४ में ही 'जवाहरलाल : एक मध्यविन्दु' शीर्षक से लिखा जिसमें नेहरू का चरित्रांकन तो है पर शुद्धतः रेखाचित्र नहीं। यह लेख उनकी 'वृन्त और विकास' शीर्षक पुस्तक में सम्मिलित हुआ है। इस पुस्तक के शेष लेख शुद्ध साहित्यिक हैं,

'पथ-चिह्न' में मैंने अपनी स्वर्गीया बहिन को भारतमाता की आत्मा के रूप में स्मरण किया है। उसी के व्यक्तित्व को केन्द्र-बिन्दु बनाकर अपने जीवन और युग की समस्या को स्पर्श किया है। इस

प्रकार यह पुस्तक व्यष्टि से समष्टि की ओर है।

अपने कलामय व्यक्तित्व में वह चित्रलेखा थी, गीतिका थी। ड्राइंग की रंगीन पेंसिलों से अंकित उसके चित्र घर की दीवारों पर सुशोभित होते थे, उसका संगीत रागिनियों के बीच कलरव करता था। चित्रपट की तरह उसने अपने जीवन-पट को भी रुचिर बना लिया था। उसका केशविन्यास किसी अनुरागिनी का था। वह रंगीन वस्त्र और चूड़ियाँ भी पहनती थी, अलंकार भी धारण करती थी। उन सभी प्रसाधनों में उसके मन का वही निर्मम आनन्द निहित था जो कवि का कविता में, चित्रकार का अपनी रचना में।'

'स्मृतियाँ और कृतियाँ' में भी १० संस्मरणात्मक शब्द-चित्र हैं। दैनिक जीवन के अनुभव 'चित्र और चिन्तन' में हैं।

गणेश वासुदेव मावलंकर

आपने बंदियों के जीवन की कुछ हृदयस्पर्शी यथार्थ घटनाएँ 'मानवता के झरने' शीर्षक पुस्तक में संकलित की हैं। इनमें जहाँ घटनाओं का यथार्थ चित्रण है वहां संस्मरणात्मक शैली है। अनेक व्यक्तियों के रेखाचित्र हैं।

घनश्याम दास बिड़ला ने भूमिका में लिखा है,

'मिट्टी में जो प्रच्छन्न सोना है, उसी पर जौहरी की नज़र जा गड़ती है। दादा साहब की नजर खूनी हृदय में जो प्रच्छन्न सोना था उसी पर जा गड़ी, जिसका विवरण उन्होंने रोचक ढंग से इस पुस्तक में दिया है। गुणों के इस उतार-चढ़ाव का साक्षात् दर्शन इस पुस्तक में कुछ नायकों के चरित्रों में होता है। यह दर्शन हमारी कुँठित बुद्धि को विशाल बनाने में सहायक होगा।'

मावलंकर जी ने अपने जीवन के अन्य भी संस्मरण लिखे हैं जो मूलतः गुजराती में हैं जिनमें उल्लेखनीय हैं 'मेरे संस्मरण', 'गांधी जी के सम्पर्क में' तथा 'मेरा वकालती जीवन' (मूल अंग्रेजी से अनूदित)।

बाबू गुलाबराय

हिन्दी-निबंध के विकास में गुलाबराय जी का स्थान अपूर्व है। विषय की दृष्टि से उनके निबंधों में जितना विशाल परिवेश है और शैलियों में जितना वैविध्य है उतना किसी दूसरे निबंधकार में नहीं। द्विवेदी युग से निरंतर निबंध साहित्य को आप अपनी रचनाएं देते रहे।

आत्म-संस्मरणात्मक निबंधों के क्षेत्र में उनका स्थान सर्वोच्च है। इस शैली में लिखते समय ही आपने अनेक रेखाचित्र प्रस्तुत किये हैं। रेखाचित्र में शैली की वैयक्तिकता के साथ विषय में भी वैयक्तिकता होती है। विषय देशकाल संबंधी रहता है। बाबूजी के 'ठलुआ क्लब' में हास्यव्यंग्यात्मक निबंध हैं परन्तु वे रेखाचित्रों के अधिक निकट हैं। ये व्यक्तियों पर आधारित हैं। इनमें से (१) मधुमेही लेखक की आत्मकथा, (२) बेकार वकील, (३) विज्ञापन युग का सफल नवयुवक, (४) निराश कर्मचारी, (५) प्रेमी वैज्ञानिक आदि निबंध रेखाचित्र के अधिक निकट हैं।

'मेरे नापिताचार्य' जिसके संबंध में आगे विस्तृत प्रकाश डाला जा रहा है एक सफल रेखाचित्र है। यह 'जीवन और जगत' में तथा 'मेरी असफलताओं' के परिशिष्ट में संकलित है। इसमें ही संकलित 'मेरे शिकारपुरी मित्र' उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त 'कुछ उथले कुछ गहरे' में संकलित 'सांवलिया बीजवाला' भी रेखाचित्र ही है। 'नवभारत' के २४ अप्रैल १९६० में प्रकाशित 'मेरे जीवन को सफल बनानेवाला' शीर्षक लेख फलविक्रेता 'राधेलाल' के रेखाचित्र से युक्त है।

'मेरी असफलताएं' में से 'शरीरं व्याधिमन्दिरम्' में बाबू जी ने शंकराचार्य जी का उद्धरण देकर रेखाचित्र प्रस्तुत किया है,

> 'यद्यपि मैं अभी 'अंगं गलितं पलितं मुण्डम्, दशन विहीनं जातं तुण्डम्, कर धृतकम्पित शोभित दण्डम्' वाली शंकराचार्य द्वारा की गई वृद्ध की परिभाषा से कम से कम दो तिहाई अंश में दूर हूं और इस भय से कोई यह न कह दे कि 'वृद्धो याति गृहीत्वा दण्डम्'।'

हास्यव्यंग्य का चटपटा पुट उनके गंभीर निबंधों को भी रोचक बना देता है। आपके व्यंग्यात्मक निबंधों का अनुपम संग्रह 'ठलुआ क्लब' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था।

'जीवन और जगत' के 'मेरे निबंध' शीर्षक से मेरे नापिताचार्य उल्लेखनीय है, यही 'मेरी असफलताओं' के परिशिष्ट संख्या ३ में भी है,

> 'मेरे नापितदेव न तो वामन ही हैं और न विशालकाय। मेरी बुद्धि की भांति वे भी मध्य श्रेणी के हैं और कुछ लघुता की ओर झुके हुए हैं। जैसा उनका मुख, वैसी उनकी छोटी मूंछें और आंखें हैं। उनका छोटे अण्डाकार शीशोंवाला डेढ़ कमानी का चश्मा उनके गाम्भीर्य और वार्धक्य को बढ़ाता रहता है। जैसे मैं अपनी पोशाक की व्यवस्था सम्हालने में असफल रहता हूं, वैसे ही वे अपनी पेटी की व्यवस्था सुधारने में असमर्थ रहते हैं, क्योंकि वह पेटी उनके

स्वरूपानुरूप है। पेटी का आवरण-पट, जो बाल कटाने वाले यजमानों का भी बालों की बाण वर्षा से सुरक्षित रखने में रक्षा-कवच बनता है, साबुन के प्रयोग से उतना ही अछूता रहता है, जितना आजकल का विद्यार्थी भगवन्नाम से।'

इस रेखाचित्र में कुछ अनुपम उपमाएं हैं--

…मैं चाहता हूं की उनमें कुछ सुधार हो, किन्तु वे चर्चिल की भांति अपरिवर्तनवादी हैं।

…जिलेट से लगाकर ढाई आने तक के उस्तरों को मैंने अजमाया, किन्तु वे मुझे अपने रक्तपात से बचाने में उतने ही असमर्थ रहे, जितनी कि यू. एन. ओ. की सुरक्षा परिषद् राष्ट्रों को रक्तपात से बचाने में।

…बाल बीरबधूटी-सी एक आधी रक्त बिन्दु मेरे मुखमण्डल पर झलक ही आती थी।

सूक्तियों की भरमार है--

संस्कृत--स्वयं दासाः तपस्विनः।
नराणां नापितो धूर्तः पक्षिणां चैव वायसः।
क्षमा रूपं तपस्विनाम्।
अंगीकृतं सुकृतिनः परिपालयन्ति।

तुलसी--अन्तहु तोहि तजेंगे पामर तू काहे न तजै अब ही ते।

सूर--कारी कामर चढ़े न दूजो रंग।

'जीवन रश्मियों' में यात्रा संबंधी लेखों में अच्छे चित्र हैं, जैसे सांची के स्तूत, छतरपुर, खजुराहो, भोपाल आदि।

'मेरी असफलताएं' (आत्मकथा) में 'नमो गुरुदेवेभ्यो' से अनेक शब्द-चित्र लिये जा सकते हैं, कुछ गुरुओं के शब्द-चित्र यहां उद्‌धृत हैं--

पं० कृष्णलाल मिश्र

"आपके भव्य शरीर से 'वागर्थाविव संपृक्तौ' पेन्ट और छकलिया अचकन का बेजोड़ जोड़, गोल मखमली टोपी, आत्मसंतोषपूर्ण प्रसन्नवदन पर लहराती घनी मूंछें, उन सबके साथ लम्बी डगभरी सबल बण्डाश्रित व्यालविनिन्दित चाल, आपको तीन लोक से न्यारी छटा प्रदान करती थी। जिस प्रकार ऋषियों की क्रियाएं फलानुमेया कही गई हैं, उसी प्रकार आपका स्मित हास्य मूंछों की गति से अनुमेय रहता था।'

डब्ल्यू. टी. मलीगन

'ये महाशय थे तो विशुद्ध आइरिश, लेकिन इनके मुखमण्डल तथा हाथों पर भारत की प्रखर सूर्य रश्मियों का प्रभाव अच्छी तरह पड़ा था। जब कभी ये आस्तीनें चढ़ाते तो उनके हाथों और बाहों का अन्तर तुरन्त मालूम पड़ने लगता था। उनकी श्वेत बाहुओं में तांबे के रंग के हाथ ऐसे प्रतीत होते थे मानो किन्हीं अश्विनीकुमारों के अवतार ने उनको ऊपर जोड़ दिया हो। 'आकार सदृश प्रज्ञ:' के अनुसार जसा ठोस उनका शरीर था वैसा ही ठोस उनका पाण्डित्य था।'

प्रो. एन. सी. नाग

'उनका ईषत् श्याम वर्ण, छोटा कद, गठा शरीर, फुर्तीली चाल, हंसता हुआ चेहरा, उनके विद्यार्थियों के हृदय में एकदम उच्च स्थान दे देता था। वे एक चौथियाई मुस्कराकर हाथ के इशारे करते थे, एक चौथियाई बोर्ड पर लिखते थे और कौशल और हस्तलाघव के साथ आधा प्रयोगात्मक रूप से बतलाते थे।'

मेजर ओ-डोनैल

'उनकी स्वच्छ रक्ताभ हंसमुख सौम्य आकृति, गोल्ड फ्रेम में से झांकती हुई आंखों की विशिष्ट चितवन एवं विलायत से नौवारिद साहब की सिविलियन सजधज, भय और आतंक को भगाकर श्रद्धा और विश्वास उत्पन्न कर देती थी।'

आचार्य टी. सी. जोन्स

'आप आगरा कालेज के प्रिन्सीपल थे। आपका हृष्ट-पुष्ट लम्बा फौजी शरीर, स्वास्थ्य एवं अधिकार सूचक रक्ताभ वर्ण, प्रिन्सनेज चश्मा तथा लार्ड टेनीसन की सी उमड़ती-घुमड़ती, लहराती आवाज विद्यार्थियों में भारी आतंक पैदा कर देती थी। उनको केवल पढ़ाने से काम था। परीक्षा-प्रेमी विद्यार्थियों के आदर्श गुरु थे। नपे-तुले कटे-छटे द्विशब्दी पैराफ्रेज, टकसाली रुपयों की भांति खनाखन निकलते आते थे।'

प्रो. चार्ल्स डाबसन

'उनका मझोला कद, कुछ मांसलता की ओर झुका हुआ मुखमण्डल, प्रसन्नानन पूर्ण व्यक्त मूंछें और कुछ नीची कलमें, गोल-मटोल सम्पन्नतासूचक खल्वाटोन्मुख सिर, जिस पर कभी-कभी पुरानी चाल का ऊंचा रेशमी हैट विभूषित दिखाई देता, एकदम विश्वास, निर्भयता, सज्जनता, सौम्यता और पाण्डित्य का आतंक नवागत विद्यार्थियों के हृदय में जमा लेता था।'

प्रो. जोन बंगारू राजू

'मेरे गुरुदेव प्रलम्बता की मूर्ति थे। उनकी शरीरयष्टिका की लम्बाई को उनके दुबलेपन ने और चेहरे की लम्बाई को पुच्छाकार दाढ़ी ने निखार में ला दिया था। उनको अपनी दाढ़ी पर गर्व था। उन्होंने आक्सफोर्ड में भी जो मुछमुण्डता का गढ़ है उसकी इज्जत कायम रखने का साहस किया था। यदि कभी विद्यार्थीगण उसके विदा करने का आग्रह करते थे तो वे कह देते थे कि जिसको किंग जार्ज ने अपनाया है उसे किस प्रकार हेय कह सकते हो। उनके मुखारविन्द ने अपने प्रेमी की ईषत् अनुरूपता धारण कर ली थी और उसे केशों के साथ कम्पिटीशन में केवल एक-चौथाई नम्बरों से हार माननी पड़ती थी। उनका अलपका का कोट उनके शरीर के वातावरण में साम्य-सा उपस्थित कर देता था। उनके ललाट और मुखमण्डल की भावानुरूप तीव्र गति से बदलनेवाली रेखाएं उस साम्य में एक सुखद वैषम्य उपस्थित कर देती थीं। व्याख्यान देते समय उनकी शरीर-यष्टिका वेत्रलता के समान आगे-पीछे को लहराती, उनकी पदगति ताल का काम देती और उनकी यक्ष की सी लम्बी उंगलियां अधर पुटों के साथ नृत्य करतीं। उनकी आंखों में एक विशेष दीप्ति थी जो श्रोताओं को अपनी सम्मोहन कला द्वारा मन्त्र-मुग्ध कर देती थी।'

डाक्टर हंटले

'खुले गले का कोट, उसके नीचे घुटनों पर बटन लगनेवाली ब्रीचेज या निकरबुकर, ऊनी मोजे, काला जूता और सर पर कभी सोला और कभी बूहर हैट-सा या उस आकार की कोई वस्तु, नाइट कैप तक

शोभायमान होती थी। कुछ-कुछ झुर्री पड़ा हुआ सदा प्रसन्न चेहरा जिसमें एक दांत कुछ बाहर को आने के उद्योग में रहता था और भूरी विरल डाढ़ी उनकी शीघ्र पहचान करा देती थी।'

इरिक ड्रू

'कद कुछ नाटेपन की ओर झुका हुआ और शरीर में कुछ स्थूलता आ चली थी। उनकी दार्शनिकता उनकी बढ़ी हुई भौंहों, छोटी आंखों और ईषत् लम्बी नाक से लक्षित होती थी। उनके बोलने में एक विशेष गति थी। वे अखीरी शब्द को कुछ अधिक खींच देते थे जिससे उसकी आवाज देर तक घंटे की टंकार की तरह ध्वनित होती रहती थी।'

इस प्रकार गुलाबराय जी ने अपने सभी गुरुओं के स्केच खींचे हैं जिनमें उनके आन्तरिक तथा बाह्य व्यक्तित्व का चित्र हमारे सामने प्रस्तुत होता है।

'एक स्केच' शीर्षक से भी एक सुन्दर रेखाचित्र है जिसमें गुलाबराय जी ने अपने एक शिकारपुरी मित्र का शब्द-चित्र प्रस्तुत किया है। इस रेखाचित्र का एक अंश यहाँ उद्धृत है,

'जर्जर ऋषिषों के-से उनके दुबले-पतले शरीर में चेहरे का प्रत्येक अवयव अपने शुभ अस्तित्व की घोषणा-सा करता प्रतीत होता था। उनकी रजत-मेखला विभूषित कटि सिंहनी और भिड़ (बर्र) की कटि को लज्जित करती थी। उसी खिसियानेपन के कारण सिंहनी मनुष्य मात्र से बैर करने लग गई है, और भिड़ जहाँ-तहाँ लोगों को काटती फिरती है। उनके परस्पर स्पर्धाशील नेत्र-युग्मों की कज्जल-कला छिपती थी। उनकी 'भुंई' में लोटनेवाली नहीं किन्तु कमर को विना प्रयास स्पर्श करनेवाली, काली, मोटी, गुंथी-गुंथी, गोरस और दधि से धुली, स्वच्छ चेचक मसृण, नागिन-सी चोटी सबके आकर्षण का विषय थी।'

इसमें भी आपकी कुछ उपमाएँ द्रष्टव्य हैं,

...'अपने दुग्ध-फेन-सम धवल रिक्त कालर कफों पर उन्हें गर्व था।

...'जरूरत पड़ने पर वे पंचपात्र में खरिया घोलकर यज्ञोपवीत से अपने 'केन्वस' शू को दुग्धफेनतुषार हार तथा कर्पूर-कुन्देन्दु-सम धवल बना लेते थे।'

इस प्रकार बाबू जी ने शुद्ध रेखाचित्र भी लिखे हैं, अपनी आत्मकथा के अन्तर्गत भी कुछ पात्रों के शब्द-चित्र प्रस्तुत किये हैं। साथ ही अनेक निबंधों में रेखाचित्र के तत्त्व मिलते हैं जिनमें उनकी हास्य-व्यंग्य की शैली तथा विदग्धता के भी दर्शन हो सकते हैं। गंभीर से गंभीर विवेचनों में भी उनके व्यंग्य का पुट विषय को रोचक बना देता और सरस।

बाबू जी के ये निबंध तथा रेखाचित्र उनके निजी जीवन के अनुभव और साधना से प्रसूत हुए थे। उन्होंने अपने सरसठवें वर्ष में कहा था,

> 'मैं सरसठ शरद देख चुका हूँ। मेरे बाल सफेद हो गये हैं, किन्तु धूप में नहीं वरन् शारदीय शुभ्रता देखते-देखते...मैं जीवन की धूप से अपरिचित नहीं हूँ और जितना समय धूप में बिताया है उसका मुझे गर्व है। मेरे पैर में बिवाई फट चुकी है और मैं परायी पीर भी जानता हूँ।'

इस प्रकार अपने अनुभवों पर आधारित चित्रों में वे अधिक सरसता तथा आत्मीयता व्यक्त कर सके हैं।

श्री श्रीप्रकाश

जमनालाल बजाज की स्मृति में प्रकाशित 'स्मरणांजलि' में १०३ व्यक्तियों के संस्मरण हैं। इसमें ही श्रीप्रकाश जी का संस्मरण है। इधर राजनीति से प्रायः अवकाश लेकर श्रीप्रकाश जी ने संस्मरणात्मक लेखमालाएँ लिखीं हैं जिनमें अनेक अच्छे शब्द-चित्र भी मिलते हैं। आपके बारे में पं. बनारसीदास चतुर्वेदी लिखते हैं,

'किसी का रेखाचित्र चित्रित करने अथवा संस्मरण लिखने में श्री श्रीप्रकाश जी को कमाल हासिल है। वह कोरमकोर प्रशंसा न करके चरित्र का विश्लेषण भी करते हैं---मंजे हुए शब्दों में, तुली हुई भाषा में और अपनी स्वाभाविक शालीनता के साथ। अत्युक्तिमय प्रशंसा या बेशुमार निंदा करना आसान है, पर तूलिका को इस खूबी के साथ चलाना कि छाया तथा प्रकाश का यथोचित सम्मिश्रण होता चले, किसी सिद्धहस्त चित्रकार का ही काम है।'

आपका एक जवाहरलाल पर शब्द-चित्र द्रष्टव्य है,

> 'उज्ज्वल गौर वर्ण, छह फुट से भी ऊँचा कद, भरा हुआ शरीर, आत्मिक तथा शारीरिक स्वस्थता से आलोकित मुखमण्डल, बालसुलभता तथा सौम्यता—यह चित्र मेरी आँखों के सामने आया।'

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी

बख्शी जी ने इस शैली में कुछ निबंध लिखे हैं। आपके निबंध उस काल के हैं जब इस विधा की प्रारम्भिक अवस्था ही थी अतः ये निबंध परिचयात्मक ही अधिक हैं, उनमें कहीं-कहीं आलोचनात्मक अध्ययन के अंश भी हैं। इस प्रकार के निबंध बख्शी जी के 'कुछ' शीर्षक संग्रह मे संकलित हैं,

रामलाल पण्डित

प्रेमचन्द

महावीर प्रसाद द्विवेदी

इस संग्रह में ही आपने एक छात्र 'कुंज बिहारी' पर भी लिखा है।

रामनाथ सुमन

हिन्दी पत्रकारिता के प्रकाशस्तम्भ 'बाबूराव विष्णु पराड़कर' पर एक अद्वितीय रेखाचित्र श्री रामनाथ सुमन ने 'हंस' के रेखाचित्रांक (१९३९) में प्रस्तुत किया था। पत्रकार जगत् के आदर्श पराड़कर जी पर यह आदर्श शब्द-चित्र है। शब्द-चित्र के लिए नायक के जीवन-स्रोत की गहराई में प्रवेश करना, उसके जीवन की उठान और उसकी प्रधान धारा को देख लेना ही पर्याप्त होता है। अनेक अंग्रेजी उद्धरणों से परिपूर्ण यह शब्द-चित्र है, कहीं गार्डिनर का उद्धरण है, "He is the Stock Exchange man in the sphere of journalism" तो कहीं सैलिबरी का "Written by office-boys for office-boys." इस शब्द-चित्र के कुछ अंश इस प्रकार हैं--

> 'पराड़कर जी ऐसी पत्रकार-कला की दुनिया में मानो एक शक्तिमान प्रतिषेधक, एक गहरे विरोध–प्रोटेस्ट की भांति अचल खड़े हैं। कोई भावना, गलती के विरोध में, उनकी क़लम की गति रोक नहीं सकती।
>
> उन्होंने हिन्दी पत्रकारिता का जन्म देखा है, उसका बचपन देखा है, और आज उसकी किशोरावस्था के बीच मानो विवेक और आत्म-नियंत्रण का टार्च लिये हुए उसे दिखा रहे हैं।...उनका जीवन, आकाश में एकाएक चमक उठने वाली विद्युत् की भाँति, प्रकाश-पुंज का स्मरण नहीं दिलाता। यह ध्रुव की भाँति निश्चितता को प्रकट करता है। वह मेहनत की कमाई का द्योतक है। वह तिल-तिल करके निरन्तर परिश्रम से गढ़ा हुआ जीवन है। उनके जीवन में प्रतिभा की लपक नहीं है। पर बुद्धि के संस्कार, विवेक के उपयोग का शान्त और स्थिर प्रकाश है। उनके साथ

आरम्भिक दिनों में काम करने वाले एक पत्रकार मित्र एक बार कह रहे थे कि 'जब इन्होंने काम शुरू किया तो मैं इनसे 'सीनियर' था, पर इनमें अथक स्फूर्ति और कार्य करने की शक्ति थी। इनको जो काम दिया जाता, उसे करके यह सदा और काम देने का अनुरोध करते रहते थे। फलतः आज जब मैं वही कलम घिसनेवाला सहकारी ही हूँ, वह हिन्दी सम्पादकों के आदर्श बन गये हैं।' इस काम से कभी न भागने की वृत्ति पर ही उनके सारे जीवन की उठान है। उनका जीवन निरन्तर श्रम से निर्मित हुआ है।'

इस शब्द-चित्र में एक-एक पंक्ति मार्के की है—

१. परिश्रम और कार्य में यह तन्मयता ही इनके जीवन की कुंजी है।
२. श्रम ही इनका आनन्द है, विवेक ही इनकी प्रेरणाशक्ति है, सेवा ही इनका मार्ग है और स्वतन्त्रता तथा मानवता की साधना ही इनका लक्ष्य है।
३. इनमें महाराष्ट्रीयों की सादगी, उनकी श्रमशक्ति, उनका वैज्ञानिक और गंभीर चिन्तन, उनकी गहराई है, पर उनकी अनुदारता, उनकी प्रान्तीयता, अहंकार और आत्मवंचना नहीं है।

'पराड़कर हिन्दी-पत्रकार कला के मस्तिष्क हैं। वह तरंगहीन यौवन के प्रतिनिधि हैं—शान्त, आँधियों के बीच स्थिर और उमंगों पर नियंत्रण रखने की ओर इशारा करते हुए, पर अतिशय क्रियाशील, निरन्तर गतिमान्।'

'हंस' के इसी विशेषांक में सम्पूर्णानन्द जी पर 'एक बहुमुखी व्यक्तित्व : सम्पूर्णानन्द' शीर्षक से दूसरा रेखाचित्र, है जिसका प्रारम्भ इस प्रकार होता है—

'लम्बे बाल, चौड़ा माथा, उस पर एक बड़ी बिन्दी-जिसे पुरुषों के साथ टीका कहने का रिवाज है–मस्ती भरी चाल और इन सबके बीच कुछ खोजती हुई आँखें, स्थूलता की ओर झुकने को लालायित शरीर—यह कई विरोधी बातों के सम्मिश्रण-से, सम्पूर्णानन्द हैं।

जीवन में जितने आदमियों को मैं जानता हूँ–और उनकी संख्या कुछ ऐसी कम भी नहीं है–उनमें कदाचित् सम्पूर्णानन्द सबसे अधिक जटिल व्यक्तित्व का उदाहरण हैं। मनोविज्ञान के विद्यार्थी के लिए उनका जीवन एक पूरी की पूरी प्रयोगशाला है। उसमें दार्शनिक की खोज है, उसमें सन्देहवादी और संशयात्मा का प्रश्न-चिह्न है, उसमें भक्त और सेवक का आत्म-निवेदन है, उसमें विद्रोही की हुंकार है और राजनीति

का समझौता। एक स्काच की तरह वह अनेक एवं बहुरूपी व्यक्तित्व के व्यक्ति हैं।

मेरेडिथ ने एक बार कहा था–'Blood, brain, spirit', सम्पूर्णानन्द में भी इन तीनों बातों का समन्वय नहीं मिलता है।'

जैनेन्द्र

सुप्रसिद्ध उपन्यासकार, कहानीकार एवं विचारक जैनेन्द्र जी ने कभी-कभी शब्द-चित्र भी लिखे हैं। वैसे उनके उपन्यासों तथा कहानियों में चित्रात्मकता के काफी उदाहरण मिल सकते हैं। हंस के रेखाचित्रांक में ही आपका मैथिलीशरण गुप्त पर एक रेखाचित्र है। रेखाचित्र बड़े मनोयोग से लिखा गया है।

प्रथम दर्शन में ही जैनेन्द्र जी ने लिखा है,

'पास नीम के पेड़ में पड़े हुए एक झूले में छोटी पटरी रखे एक अधेड़ वय के महाशय, कृशकाय नीमास्तीन मैली-सी बंडी पहने धीमे-धीमे झूल रहे थे। वह बंडी खद्दर क्या टाट की थी और सच कहूँ तो सफ़ेद नहीं थी। और धोती ऐसी कि मानो कृपापूर्वक उसे घुटने से ज़रा नीचे तक आ जाने की इजाज़त मिली हो। धोती वह बस यथावश्यक ही थी और अपने नाम से अधिक काम नहीं करती थी। कपड़े का टुकड़ा ही उसे कहिये।

चिरगाँव का वह गुप्त-बन्धुओं का घर बहुत-सी बातों में आधुनिक नहीं है : पुरातन है, या कहो सनातन है। वह घर, यानी मैथिलीशरण एक ही बात है। घर और वह एक हैं। दोनों में प्रकृति की एकता है।'

प्रेमचन्द जी ने दोनों भाइयों के संबंध में जैनेन्द्र जी से कहा था—

'मैथिलीशरण और सियारामशरण दोनों भाइयों को देखकर मैं हैरत में रह जाता हूं। लक्ष्मण भी क्या रामचन्द्र के प्रति ऐसे होंगे? जैनेन्द्र, दो भाई ऐसे अभिन्न कैसे हो सकते हैं? मेरी तो समझ में नहीं आता, कहीं मैंने उनमें भेद नहीं देखा। या तो दोनों में से किसी एक में कुछ कमी है, दम नहीं है, जान नहीं है। या नहीं तो फिर क्या कहूँ?'

गुप्त जी के व्यक्तित्व से जैनेन्द्र प्रभावित नहीं हुए,

'नाम बड़े, दर्शन थोड़े। उनकी पहली छाप मुझ पर यह पड़ी। शुरू में चाहे यह अनुभव मुझे कैसा भी लगा हो, पर पीछे ज्यों-ज्यों मैं जानता गया हूँ, मालूम हुआ कि दर्शन को थोड़ा रखकर ही उन्होंने अपना

नाम बड़ा कर पाया है। अपने चारों ओर दर्शनीयता उन्होंने नहीं बटोरी। बल्कि कहो कि वह उससे उलटे चले हैं। रूप उन्होंने आकर्षक नहीं पाया, इतने से ही मानो मैथिलीशरण सन्तुष्ट नहीं हैं। अपनी ओर से भी वह किसी तरह आकर्षक न बनने दें, मानो इसका भी उन्हें ध्यान रहता है। लिबास मोटा, देहाती और कुढंगा। सज्जा, यदि हाँ तो तदनुकूल और आधुनिक फैंसी के प्रतिकूल। सिर पर बुंदेलखंडी पगड़ी, घुटने तक गया कुरता और लगभग घुटने तक ही रहनेवाली धोती। बाल इतने छोटे कि उन्हें चाहकर भी संवारा न जा सके। शरीर कृश और श्यामल। मूंछें बेरोक उगती हुई, जिममें कोई छँटाव नहीं। मानो दीखनेवाले अपने समूचेपन से मैथिलीशरण घोषित करना चाहते हों कि मैं किसी सम्भ्रम के योग्य प्राणी नहीं हूँ। उत्सुकता का, या शोभा का, या समादर का पात्र कोई और होगा। मैं साधारण में साधारण हूँ।'

'गाम्भीर्य' के संबंध में टिप्पणी करते हुए लिखते हैं--

'और कुछ मैथिलीशरण आवश्यकता से अधिक हों, गम्भीर आशा से कम हैं। शायद आवश्यकता से भी कम हैं। मैं अनुमान कुछ करता था, निकला कुछ। विद्वान को गंभीर होना चाहिए। पर मैथिलीशरण जी के ऊपर विद्वत्ता ढंग के साथ टिकती मैंने नहीं देखी।'

उनके व्यक्तित्व पर कुछ उपमाएँ दृष्टव्य हैं--

'एक और उपमा व्यक्तित्व की दी जाती है कि पर्वत की नाईं अचल, वज्र की भाँति अनिवार्य और कठोर, इत्यादि। ये उपमाएँ सन्त-महात्माओं पर फबती हैं। दूसरी तरह की उपमाएँ हैं कि कुसुमवत कोमल, जल-सरीखा तरल, आदि। इन उपमाओं के योग्य कवि होते हैं। जैसे बारीक तार का कसा हुआ कोई कोमल वाद्य-यन्त्र। तनिक चोट लगी कि उसमें से झंकार फूट आई।'

संक्षेप में, उनका व्यवितत्व इस प्रकार था--

'बहुत कुछ उनको अनायास सिद्ध है। कविता में शब्द और तुक। सफर में तीसरा दर्जा। भूषा में सादगी। वेश में चिरगाँवता। प्रेम में अपत्य प्रेम। वाणी में मित भाषण और साहित्य में सुरुचि। इन सभी के लिए प्रयासी को प्रयास लगता है। राष्ट्रीय व्यक्ति के लिए रेल का तीसरा दरजा अभी तक सहज नहीं है, वह गौरव का विषय है। किन्हीं को जरूरत रहती है कि कोई उन्हें देखे, किन्हीं को जरूरत रहती है

कि कोई उन्हें न देखे। यही हाल हमारे साथ सादगी का है। पर मैथिलीशरण जी को मालूम होता है कि दूसरी कोई बात मालूम नहीं।'

'गुप्त जी साधना के कवि' शीर्षक से आपका लगभग यही रेखाचित्र गुप्त जी के अभिनन्दन ग्रन्थ में भी प्रकाशित हुआ है।

प्रेमचन्द के भी आप समकालीन रहे हैं। 'आजकल' में आपके लिखे संस्मरण प्रकाशित हुए थे, उनमें रेखाचित्र के तत्त्व भी समाहित थे।

'प्रतीक' के शिशिर अंक में आपने ही स्व. नलिन विलोचन शर्मा पर अच्छा रेखाचित्र लिखा था। 'ये और वे' (१९५४ ई.) में 'प्रसाद' और 'महादेवी' पर इंटरव्यू शैली में विचार व्यक्त किये गये हैं। अपनी 'माताजी' पर भी अच्छा रेखाचित्र है।

कामेश्वर शर्मा

श्री कामेश्वर जी का दिनकर पर एक अच्छा रेखाचित्र 'हंस' के रेखाचित्र विशेषांक में 'सुकवि दिनकर : एक शब्द-चित्र' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था, जिसका प्रारम्भ इस प्रकार होता है--

'एक छह फीट लम्बा नौजवान, रंग गोरा, शरीर भरा हुआ, कानों तक की लम्बाई ध्यान खींचनेवाली, आँखों की ज्योति न तो शीतल और न कुपित—मानो उन्होंने संसार से समझौता कर लिया हो, मूंछें चौड़ी नहीं, किन्तु यत्किंचित घनी, जिनकी ऐंठन पुरुष के व्यक्तित्व का अंग बन चुकी हो--ठीक वैसे ही जैसे पंतजी के वेश में उनके केश प्रधान हैं। स्वभाव और आकार दोनों में क्षत्रियत्व की झांकी, मित्रों के मिलते ही जिनकी आकृति पर नैसर्गिक मुसकान खिल आती है, आंखें चमकने लगती हैं, शैशव-सा सरल, यौवन-सा मस्त, ऐसी निष्कपटता का वासस्थान जो कभी-कभी दोष भी बन जाय--यह हैं 'दिनकर' जी हमारे साहित्य में अपने ढंग के एक ही कवि, जिन्होंने राष्ट्रीयता, शौर्य और सामूहिक दुःखानुभूति को साहित्य में स्थापित करके निष्प्राण और अशक्त कही जाने वाली हिन्दी कविता में जीवन डाला है।'

आपने दिनकर का आन्तरिक चित्र भी उपस्थित करने की चेष्टा की है,

'वह पापी से प्यार ही नहीं करते, बल्कि कभी-कभी उसके पास से घृणा भी करना भूल जाते हैं। कहने में हिचक होती है, किन्तु मुझे आशंका है कि शालीनतावश वह उसके पाप का मार्ग रोकना भी छोड़ देते हैं।'

वासुदेवशरण अग्रवाल

वेद, पुराण, उपनिषद्, भारतीय संस्कृति, पुरातत्त्व के अध्येता डा. वासुदेवशरण अग्रवाल के 'पाणिनि कालीन भारत', 'हर्ष चरित का सांस्कृतिक अध्ययन', 'पद्मावत का संजीवनी भाष्य' आदि ग्रन्थ सुप्रसिद्ध हैं।

समय-समय पर अग्रवाल जी ने मनीषियों के व्यक्तित्व पर रेखाचित्र भी लिखे हैं। डा. राधाकुमुद मुखर्जी पर 'भारतीय गौरव के एकनिष्ठ साधक' शीर्षक से साप्ताहिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित हुआ था। वासवानी महोदय पर 'सच्चे अध्यात्म-साधक साधु टी. एल. वासवानी' शीर्षक से प्रकाशित रेखाचित्र का एक अंश इस प्रकार है। वासवानी जी के आश्रम का एक चित्र--

> 'आश्रम के चारों ओर बहुत शान्ति थी। वृक्ष-वनस्पतियों के रूप में प्रकृति की अपूर्व शोभा आश्रम के चारों ओर छाई हुई थी। आश्रम के आसपास और भी साधु-सन्तों के स्थान थे। उसकी एक विशेषता ठंडे-मीठे जल से भरे हुए कुण्ड थे, जिनमें किसी अदृश्य भूमि स्रोत से आता हुआ जल भर जाता था। शक्ति-आश्रम से लगभग आधे मील पर एक पहाड़ी झरना बहकर आता था। उसकी कल-कल ध्वनि चित्त को प्रसन्न करती थी।'

अन्य निबंधों में भी आपकी चित्रात्मक शैली उल्लेखनीय है। 'जनपदीय अध्ययन की आँख' शीर्षक निबंध का यह भाग इसका जीता-जागता उदाहरण है—

> 'किस प्रकार खोइद् रूप में गेहूं का दाना जुड़ी हुई पत्तियों के साथ प्रथम जन्म लेता है, किस प्रकार नरई पड़ने से वह बड़ा होता है, किस प्रकार गमौदे के भीतर बाल के साथ घरिआएँ रहती हैं जो बढ़ने पर बाहर आ जाती है, और फिर किस प्रकार उन घरिआओं के भीतर मक्खन फूल बैठता है जब उसके भीतर का रस श्वेत दूध के रूप में बदलकर हमारे खेतों और जीवन को एक साथ लक्ष्मी के वरदान से भर देता है, मानो क्षीर सागर की पुत्री साक्षात् प्रकट होकर जनपदों में दर्शन देने आयी हो--यही गेहूं की निज वार्ता है। यदि बर्फीली हवा न बहे, बढ़िया समा हो, मोटी धरती हो और पानी लगा हो तो एक-एक गमौदा राष्ट्र के जीवन का बीमा लेकर अपने स्थान पर खड़ा हुआ स्वयं हंसता है और अन्य सबको प्रसन्न करता है। गेहूं के पौधे का यह स्वरूप

जनपदीय आंख की बढ़ी हुई शक्ति का एक छोटा-स उदाहरण है।'

(**पृथ्वी पुत्र**, पृष्ठ ४५ से)

क्या इस प्रकार का सजीव चित्र कोई कृषि-विशेषज्ञ भी खींच सकता है। इस प्रकार के सहस्रों वर्णन वासुदेवशरण जी के निबंधों में भरे पड़े हैं जिनमें भरपूर चित्रात्मकता है।

अज्ञेय

हीरानन्द सच्चिदानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' कवि, कहानीकार, उपन्यासकार, विचारक तथा पत्रकार सभी रूप में अपना स्थान बना चुके हैं। आपने यत्र-तत्र अच्छे रेखाचित्र भी लिखे हैं, जिनमें से एक पठनीय रेखाचित्र श्री सियारामशरण जी पर है जो 'हंस' के रेखाचित्रांक में प्रकाशित हुआ था। लगभग तीस वर्ष पूर्व लिखे हुए इस छोटे से रेखाचित्र से सियाराम जी का अच्छा चित्र प्रस्तुत होता है—

'दमा के कारण अत्यन्त कष्ट से खींची गई एक-एक साँस, आप्त जनों के वियोग की एक-एक चोट, लेखक-कवि की हैसियत से बहुत हाल तक पाई हुई उपेक्षा की एक-एक हताशा को एक ही शान्त, निर्वाक्, आस्थाभरे हृदय में पकाकर उससे खींचा हुआ अनुभव–कि स्वीकृति का ही अधिकार हमें है, आरोप का नहीं, कि सविनय आत्मदान ही जीवन है।

वह झुका हुआ है, पर वह झुकना दीन का नहीं, अत्यधिक संवेदनशील दानी का है, जो दान देने की परिस्थिति में अपने को पाकर लज्जित है।'

बाह्य रूप का चित्रण भी किया गया है--

'देखने में वह अत्यन्त साधारण है, चिरकालिक शारीरिक यातना के सख्य से उसका चेहरा मंजा हुआ है, आँखें दमा की कष्टकर साँसों के कारण कुछ उभर आई हैं और पीली पड़ गई हैं, रूखे उलझे हुए बालों के बोझ से दबा क्रुश शरीर केम्पिस के वाक्य की याद दिलाता है--'मैं एक बाँस की पोरी-सा हूँ जिसमें से तेरा श्वास-प्रश्वास आता है और चला जाता है।' पर उसका सामना होते ही लगता है जैसे उस श्वास-प्रश्वास की एक हल्की-सी लहर दर्शक को भी छू गई है।'

'उनकी रचनाओं में चट्टान की-सी परुष महानता नहीं है, उनमे उस नदी का नीरव प्रसार है जो रेतीले पाट के नीचे अन्तःसलिला होकर

बहती है। यह ठीक है कि वह लहू से नहीं लिखता, आँसुओं से लिखता है, किन्तु उसके आँसू उसके ज्वलन्त मानव-प्रेम से लाल हैं।'

अज्ञेय जी घुमक्कड़ भी रहे हैं। यात्रा-वर्णनों के साथ स्थानों के आपने कुछ अच्छे रेखाचित्र प्रस्तुत किये हैं। सन् १९५४ में आपका 'शिलांङ' पर रेखाचित्र आकाशवाणी से प्रसारित किया गया था।

अज्ञेय जी की 'आत्मने पद' शीर्षक पुस्तक भी उल्लेखनीय है। आपने सैनिक में सन् १९३७ ई. के प्रारम्भिक मासों में सम्पादकीय टिप्पणियाँ लिखीं। विशालभारत के महिला अंक के एक लेखक डा. अब्दुल लतीफ़ एम. ए., पी-एच. डी. तथा 'समाजद्रोही नं. १' शीर्षक शब्द-चित्र के लेखक प्रो. गजानन पंडित 'अज्ञेय' ही थे। उपन्यासों तथा कहानियों में तो आपके सुंदर से सुन्दर स्केच मिलते ही हैं। 'अरे यायावर रहेगा याद' (१९५३) में भारतीय-यात्रा अनुभवों के स्केच हैं।

जनार्दनप्रसाद झा 'द्विज'

'द्विज' जी जीवन-चरित्र लिखने में अच्छी सफलता प्राप्त कर चुके थे। आपका लिखा हुआ बाबू श्यामसुन्दरदास जी पर एक अच्छा रेखाचित्र हंस के रेखाचित्र विशेषांक में प्रकाशित हुआ था। यह शब्द-चित्र छोटा है पर गठा हुआ, इसका एक भाग यहाँ द्रष्टव्य है,

> 'छुई-मुई की तरह ये तुरन्त मुरझा भी जाते हैं और तुरन्त ही खिल भी उठते हैं, सही, लेकिन झूठे शिष्टाचार और झूठी खुशामद से आप इनके कृपा-पात्र बन जायँ, यह कभी सम्भव नहीं। इनकी वास्तविक प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए आपको सबसे पहले अपने उद्देश्य की सचाई प्रकट कर देनी होगी और उसके बाद नियम-निष्ठा के साथ कर्तव्य का पालन करना पड़ेगा। कृतज्ञता-ज्ञापन के लिए, केवल 'धन्यवाद' देकर ही आप इनके उपकारों से उऋण नहीं हो सकते। कार्य-क्षेत्र में सच्चा सहयोगी बनकर इनकी मदद कीजिये, तभी आपके 'धन्यवाद' का कोई अर्थ होगा। इनकी उपकार-वृत्ति कर्मवीरों की उद्भावना करने वाली है। निश्चेष्ट बनकर केवल 'हाँ में हाँ' मिलाने वाले को ये स्नेह और सहानुभूति की दृष्टि से देख ही नहीं सकते चाहे वह इनका अपना बेटा ही क्यों न हो।
>
> जैसे ये स्वयं राजसी स्वभाव के हैं, वैसे ही राजसी ठाट-बाट के इनके सब काम भी हैं। ये किसी भी बात से दीनता नहीं टपकने देते,

किसी भी काम से दरिद्रता का बोध नहीं होने देते। स्वयं शान से रहते हैं, तो अपने अधीन की संस्थाओं को भी शानदार बनाये रखते हैं। भगवान् ने जैसा रोबीला और शानदार व्यक्तित्व दिया है, वैसी ही कड़कती हुई वाणी भी दी है। बोलने लगते हैं, तो मालूम होता है, अभी बुढ़ापा इनसे कोसों दूर है।'

बलराज साहनी

आज के मूर्धन्य साहित्यकार आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी पर लगभग ३० वर्ष पूर्व एक चटपटा रेखाचित्र साहनी जी ने लिखा था जिसको हंस के रेखाचित्र विशेषांक में स्थान मिला था। इस रेखाचित्र के कुछ अंश आज भी उतने ही सत्य हैं जितने जब थे,

'द्विवेदी जी में एक दोष है। ढीलम-ढालम रहते हैं, हजामत हफ्ते में एक बार से अधिक नहीं करते, तिस पर जो व्यक्ति पहली नज़र में उन्हें जँच जाय उसकी ख़ैर जो न जँचे, उसे सामने बैठाकर उसके मुंह की ओर देखते रहते हैं। इसलिए कई महानुभाव शान्तिनिकेतन से यह धारणा बनाकर लौटते हैं कि द्विवेदी जी वैरागी आदमी हैं।

दूर बैठे हुए लोग द्विवेदी जी के आलोचनात्मक लेखों को पढ़कर यह अनुमान कर लेते हैं कि शास्त्राचार्य पचपन और साठ के दरमियान होंगे। प्रेमचन्द तक को यही भ्रम रहा। वास्तव में यह दोनों बातें ग़लत हैं।'

नोट--अब लगभग ३० वर्ष बाद आप साठ के समीप आये हैं।

गंगाप्रसाद पांडेय

हिन्दी के प्रसिद्ध निबंध-लेखक तथा आलोचक श्री पांडेय जी की लेखनी से सजीव रेखाचित्र भी प्रसूत हुए हैं। अधिकांश शब्द-चित्र आपने साहित्यकारों के ही लिखे हैं पर अनेक वर्ष पूर्व 'दस्यु' शीर्षक से हंस (अक्टूबर १९४३) में आपका एक रेखाचित्र प्रकाशित हुआ था,

'काला, दुबला-पतला शरीर, गंगा-जमुनी घनी मूंछें, निस्तेज छोटी-छोटी आँखें, गन्दी फटी-पुरानी बंडी और घुटने तक चढ़ी चीकट धोती पहने इधर-उधर झाड़ू घुमाता हुआ दस्यु मेरे मित्रों में से है।'

साहित्यकारों में से राष्ट्रकवि गुप्त जी पर आपके अधिक रेखाचित्र हैं। सन्

१९५० में 'आजकल' में आपका 'रेखाचित्र' प्रकाशित हुआ जिसका एक अंश यहाँ उद्धृत है,

'मोटा कुर्ता, मिरजई, बुन्देलखंडी बनियाऊ पगड़ी—ऊपर की होड़ लेती-सी, चढ़ती हुई घुटनों तक धोती, लम्बा लटकता हुआ दुपट्टा और सबसे सटीक बिना किसी काट-छाँट अथवा रोकथाम से मनमानी गति से बढ़ती हुई मूंछें—-काली, घनी ठीक गोर्की या स्टैलिन जैसी। सब मिलाकर एक पुरानापन लिये हुए दिव्य व्यक्तित्व, अपने सगे बाबा जैसे आत्मीय।'

आपने आकाशवाणी इलाहाबाद से गुप्त जी पर एक वार्ता प्रसारित की जो बाद में आकाशवाणी के २२-२-६५ के अंक में प्रकाशित भी हुई। लहर के द्वितीय अंक में भी एक रेखाचित्र प्रकाशित हुआ। आपके सभी रेखाचित्र मिलते-जुलते हैं।

कुछ काल के बाद आपने गुप्त जी का एक चित्र और प्रस्तुत किया,

'क्लीन शेव, छकलिया कुर्ता, अलीगढ़ी पाजामा, कलाई में घड़ी और हाथ में एक छरहरी छड़ी। मैं स्तब्ध भाव से उनकी ओर देख रहा था कि उनका ठहाका छूटा और हास-कम्पन में उनके गले की तुलसी कंठी दिख गई। मैं कुछ आश्वस्त हुआ। इसके उसके पास घूमते-फिरते चुटकियाँ ले ले एक किशोर सुलभ चंचलता के साथ बूढ़े, मसखरे, हँसोड़ तथा सर्वप्रिय जीवंत व्यक्ति के रूप को देखकर मुझे प्रथम बार विराट् दर्शन का अनुभव हुआ।'

'लहर' वाले रेखाचित्र में उनके वणिक रूप पर भी टिप्पणी है,

'ठीक गांधी की तरह वणिक, दुबले-पतले, स्नेह सौहार्द के व्यवसायी।'

'हरिऔध' जी पर लहर (तीन) में 'बसंत' उपनाम से उनका शब्दचित्र द्रष्टव्य है—

'पूरे सिख, सिर में सफ़ेद साफा जिसे पगड़ी कहना शायद अधिक उपयुक्त है, घुटनों के नीचे तक शेरवानी और पंडिताऊ धोती और हाथ में पतली छड़ी। उनकी दिव्य दृष्टि से प्राचीनता और नवीनता के समन्वय का संबंध लिये हुए एक सरस-स्वच्छ आभा विकीर्ण हो रही थी।' बदन की गोराई अवस्था की गंभीरता में निखर उठी थी। चौड़े माथे में चमक और त्रिपुंड जैसी स्पष्ट रेखाएँ, पतले ओठों के साथ नाक अपेक्षाकृत लम्बी और नुकीली। सब मिलाकर एक सौम्य स्निग्ध व्यक्तित्व में जैसे किसी देवर्षि की दिव्यता दमक रही थी।'

आपके निबंध संग्रह 'निबंधनी' (१९४० ई.) के लेखों में आचार्य द्विवदी पर लिखा निबंध रेखाचित्र के अधिक समीप है। इसके कुछ अंश यहाँ दे रहे हैं—

'तुलसी का महावीर मरणासन्न लक्ष्मण को जीवन प्रदान करने के लिए संजीवनी लाया था, हमारी हिन्दी का 'महावीर' हमारे साहित्य की मृत प्रायः आत्मा के लिए संजीवन लेकर आया था। तुलसी का महावीर अमर है, दिव्य है, हमारा महावीर भी आत्म-अमर है, दिव्य है अपनी साधना में।'

'सत्य-आरूढ़ता की, सत्य प्रदर्शन की तथा सत्य के पथ में परम लगन की यही मनोवृत्ति हम उनके समस्त जीवन काल में देखते हैं। उनकी यही सत्य की उपासना, उनका वह आत्महठ उनके शैशव से लेकर जरा और मृत्यु तक एक रस एक प्राण रहा है और जिसकी प्रस्तरमयी प्रस्फुटित किरणें चिरकाल तक रहेंगी, हमारे मानसों के अन्धकार में, हमारी आत्मा के प्रगुम्फन में हमारी भावना अचेतना में।'

काव्यात्मक भाषा में लिखा हुआ यह रेखाचित्र उत्कृष्ट कहा जा सकता है। हिन्दी के प्रारम्भिक रेखाचित्रकारों में पाण्डेय जी का नाम लिया जा सकता है।

राय कृष्णदास

श्री राय कृष्णदास जी मैथिलीशरण गुप्त के अभिन्न मित्रों में से रहे हैं। आपने प्रसाद, गुप्त जी के अच्छे रेखाचित्र लिखे हैं। गुप्त जी पर लिखे गये उनके शब्द-चित्र 'प्रतीक-पावस' का एक अंश इस प्रकार है—

'सन् १९११ ई. में जब वह पहले-पहल मेरे अतिथि होकर आये, तब बुन्देलखंडी वैश्यों की पगड़ी, छकलिया अंगा, दुपट्टा और पायजामा–यही उनका परिधान था। माथे पर सांप्रदायिक तिलक, बड़ी-बड़ी विलक्षण आँखें, मूछें, सांवला रंग, इकहरा शरीर।

फिर अंगा का स्थान कुरते ने लिया, किन्तु दुपट्टा और पगड़ी ज्यों की त्यों रही। सन् २८ ई. में जब खादी ग्रहण हुई तब से पगड़ी कुछ और भारी होने लगी, तभी कुछ समय के लिए दाढ़ी भी रख ली थी। सन् ४१ में उस गिरफ्तारी के बाद कारण आज तक भी स्पष्ट नहीं हो सका है, उन्होंने पगड़ी का परित्याग कर दिया, तब से गांधी टोपी ही

पहनते हैं। बीच-बीच में अद्धा कुरता और जाँघिए पर ही रह जाते हैं। दाढ़ी-मूंछ अब साफ़ हैं। अपरिचित के लिए सहसा उन्हें देखकर ही यह कल्पना कर लेना असंभव है कि यह व्यक्तित्व वही मैथिलीशरण गुप्त है जिसे काशीप्रसाद जायसवाल ने 'द्विवेदी युग की सबसे बड़ी देन' कहा था।'

कृष्णानन्द गुप्त

'जैसा मैंने देखा' में संकलित विद्यार्थी जी पर गुप्त जी द्वारा लिखित शब्द-चित्र के पढ़ने मात्र से शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी का सजीव चित्र सामने प्रस्तुत हो जाता है—

> 'मंझोला कद, दुर्बल देह यष्टि, बदन पर साफ़ कुरता, जिसकी निर्मलता में एक प्रकार की आध्यात्मिक शुचिता थी। गला खुला हुआ, केश जरा बड़े—सद्यः स्नान से भीगे और अपनी कोमलता से आप ऊपर की ओर कुछ मुड़े हुए। नाक सीधी, भौंहों के मध्य बिन्दु से कुछ नीचे नासिका की अस्थि पर चश्मा के निरन्तर उपयोग का परिचायक एक हलका-सा गड्ढा। नेत्र तेजस्वी। ठोड़ी के पास काला तिल। होठ पतले, निश्चयपूर्ण।'

आचार्य विनयमोहन शर्मा

आचार्य विनयमोहन शर्मा हिन्दी साहित्य के वरिष्ठ साहित्यकारों में से हैं। आलोचना के क्षेत्र में तो आपने 'साहित्य कला', 'कवि प्रसाद', 'आंसू तथा अन्य कृतियां', 'साहित्यावलोकन' आदि ग्रन्थों से अपना विशिष्ट स्थान बना लिया है। 'हिन्दी को मराठी संतों की देन' शोध प्रबन्ध हिन्दी-शोध की परम्परा में नई दिशाएं खोलता है। 'साहित्य, शोध, समीक्षा' तथा 'दृष्टिकोण' आपके विवेचनात्मक निबन्धों के संग्रह हैं। प्रोफ़ेसर, निबन्धकार, आलोचक आदि रूपों में तो कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभागाध्यक्ष आचार्य विनयमोहन जी को सभी जानते हैं पर रेखाचित्रकार के रूप में डा. शर्मा को कम ही जानते हैं। अभी हाल में आपके 'रेखा और रंग' पुस्तक का अद्वितीय संस्करण प्रकाशित हुआ है। इस पुस्तक में चौदह रेखाचित्र संगृहीत हैं। प्रथम संस्करण में एक रेखाचित्र कम था, इस संस्करण का प्रकाशन बहुत समय पूर्व नागपुर के प्रज्ञा प्रकाशन से हुआ था। अधिकांश रेखाचित्र बहुत पहले ही विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके

थे जिसकी सूचना आचार्य जी ने १५ सितम्बर १९६४ के पत्र द्वारा इस प्रकार दी---'रेखाचित्रों में 'नजर नसाय गई मालिक' (संभवत: ४१-४२ के) विशाल भारत में, 'वह वृक्ष और वह चिड़िया' नागपुर से प्रकाशित आलोक में (४३-४४), 'जग्गू काका' हैदराबाद की कल्पना (५३-५४) में, 'ब्लैकी' 'मध्य प्रदेश संदेश' के (१९५५ के) किसी अंक में, 'इला' विशाल भारत (१९४४) के किसी अंक में छप चुके हैं।

पुस्तक का रंगीन आवरण अपने में सार्थक है। आरम्भ में सात पृष्ठों में रेखाचित्र का शास्त्रीय विवेचन है जो संक्षिप्त होते हुए भी मौलिक है, अन्य विधाओं से रेखाचित्र का अन्तर भी स्पष्ट किया गया है।

'रेखा और रंग' के रेखाचित्रों में आचार्य जी ने सभी शैलियों में चित्र प्रस्तुत किये हैं। पात्रों का बाह्यांकन तो है ही उनके 'भीतर की झलक' भी है।

'डबली बाबू' शीर्षक से उनका पहला रेखाचित्र नर्सरी में काम करने वाले एक व्यक्ति का है,

> 'जिनका कद न ऊंचा, न ठिगना, मजे के मझौल आदमी हैं। न मोटे हैं, न पतले। आंखें मझोली ही हैं, कपोलों में फंसी हुई पीली-पीली सी। दांत विरल हैं। उनका कत्थई रंग पान और तम्बाकू के अतिरेक की शहादत दे रहा है। धोती बाबूआना ढंग की पहने हुए हैं पर मैल खाने से बादामी रंग की हो गयी है। पैरों में कोंकणी चप्पल हैं, जो काफी मोटी और मजबूत हैं। और हां, काले धारीदार कुरते के ऊपर बटन-विहीन खाकी रंग का कोट भी पहने हुए हैं। दाहिने हाथ में एक छड़ी झुलाते हुए वे चले जा रहे हैं।'

दूसरा एक नौकर 'शंकर' पर 'नजर नसाय गई मालिक' शीर्षक से है।

> 'एक अधेड़ उम्र का दुबला और लम्बा-सा आदमी अपने दोनों हाथों को जोड़े खड़ा था। शरीर पर एक मैला कुर्ता था, जो कंधों और बालों पर फटकर अपने जीर्ण होने की शहादत दे रहा था। वह घुटनों तक पहुंचने वाली बरसाती पानी के रंग की धोती पहिने था। सर पर सिर्फ बाल थे और पैरों में बिबाई की दरारें। भाल चन्दन से पुता हुआ था। आंखों में आशा-निराशा आंख-मिचौनी-सी खेल रही थी।'

तीसरा चित्र वकील साहब 'गदाधर सिंह' का है जिनको मुख-सुख के कारण 'गद्दू वकील' उच्चरित किया जाता है।

चौथा रेखाचित्र 'वह वृक्ष ! और वह एक चिड़िया' शीर्षक से है। निर्जीव पदार्थों का भी उतना ही सजीव चित्रण है जितना इससे पूर्व सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों का किया गया है । एक चित्र देखिए,

> 'खड़-खड़-खड़—सुन पड़ता है। पानी, पत्थर चट्टानों की छाती को चीरता हुआ बहाव ढूंढ़ रहा है, सतह पर आने के लिए उसे बड़ा श्रम उठाना पड़ता है, इसलिए उसमें 'कल-कल' की मस्ती नहीं है । फिर भी उस प्रवाह में आसक्ति है, उस वर्षीले वृक्ष की । वह किनारे पर खड़ा है। न जाने कितनी बार सूरज आग बरसा चुका है । न जाने कितनी बार अमृत चुआकर, उसे जिला चुका है । वह खड़ा है अपने मारने और तारने वालों को समान भाव से असीसता हुआ, सिर के ऊपर 'भुजाओं' को जोड़े हुए । जब प्रभंजन खीझता है, तो कांप उठता है, घबराकर चारों तरफ से झुकने लगता है । बिजली चमकती है तो समझता है, कोई वरदान मिलने वाला है, खिल उठता है । तुषार में न जाने कहां से आ जाने वाले कम्पन के दर्द को खुद ही पी जाता है, वह किसी की आंखों तक नहीं पहुंच पाता ।'

इस चित्र का कारुणिक अन्त भी द्रष्टव्य है,

> 'वह (तरु) अब भी आकाश की ओर चहचहाहट सुनकर आंखें फैला देता है । पर वह पक्षी, जिसने कोटर को एक बार बसाकर सूना कर दिया है, दिखाई नहीं देता । अब उसकी शाखाओं पर हरियाली नहीं रही । पतझड़ के पूर्व ही उसके पत्तों का निपात होने लगा । रोज सवेरे उसके आसपास की धरती भीगी दिखाई देती है । लोग कहते हैं, मालूम होता है, उस बेवफा पक्षी की याद में यह वृक्ष रात-रात भर आंसू बहाया करता है ।'

पांचवां रेखाचित्र 'जग्गू काका' शीर्षक से पुलिस में नौकरी करने वाले एक व्यक्ति का है,

> 'उनके कोई संतान नहीं थी । वे थे और उनकी पत्नी थी, घर में गाय-भैंस पली रहतीं । कमरे में तोते का पिंजरा टंगा रहता, पर जब अम्मा उसे उंगली उठाकर कहती 'राम-राम बोलो, बेटा मिट्ठू सीताराम कहो, राम-राम कहो ।' तो वह गम्भीर होकर एक-दो-बार 'सीताराम-सीताराम' बोलकर फिर 'टें-टें' शुरू कर देता ।'

'अम्मा को बिल्ली का भी शौक था। काका को तंत्र-मंत्र का शौक था। भूत-प्रेत भी वे उतारते थे। उन्हें पेड़ पर कीलते और शीशी में भी उतारते।' लेखक के अनुसार 'जग्गू काका की ओझाई बड़ी प्रसिद्ध थी। उनका विश्वास ही नहीं, अनुभव भी था कि भूत, चुड़ैल, जिन आदि प्रेतात्माओं का अस्तित्व होता है। पर कमज़ोर मन वालों पर ही उनका विशेष प्रभाव दीख पड़ता है। इनसे बचने के लिए वे लोगों को हनुमान चालीसा और गायत्री के जप का नुस्खा बतलाया करते थे। वे मन्त्र से बिच्छू का विष उतारना जानते थे। शायद ही कोई दिन खाली जाता, जब एक-दो बिच्छू के मारे हुए या प्रेत के सताये हुए उनके पास न आते हों। वे अपने इस गुण का पारिश्रमिक नहीं लेते थे। उनका विश्वास था कि जिस दिन उन्होंने हाथ से ताँबे का पैसा छुआ कि उनकी विद्या उनके पास से गयी।'

अगला शब्द-चित्र 'ब्लैकी' शीर्षक से एक कुत्ते का है,

'वह पूछ हिलाता हुआ मेरे पास आ जाता और मेरी आँखों में आँखें डालकर 'ऊं-ऊं, चूं-चूं' करने लगता है। कभी चित्त लेटकर, सामने के हाथ सिकोड़कर दायें-बायें होने लगता है। बड़ी ईमानदारी के साथ मेरे घर की रखवाली करता है। रात को ज़रा भी कहीं से आहट पाता है, भौंकने लगता है। सजातीय स्वर को तो दूर से ही सुनकर उसकी जीभ बेहद खुजलाने लगती है। 'भों-भों' से परेशानी हो जाती है।'

इसमें कुत्ते का भौंकना, रोना, गुर्राना, खेलना सब क्रियाओं का चित्रण है।

एक शब्द-चित्र नागपुर के धरमपेठ में खाली जगह पर झोंपड़ी डालकर रहने वाले उत्तर प्रदेश के एक अहीर 'कन्हैया' का है,

'वह जीते हुए खिलाड़ी की तरह हुर्रे-हुर्रे की आवाजें लगाता बकरियों के झुण्ड के पीछे लपका जा रहा है। सिर पर किमचियों और पत्तों का बना हुआ टोप, हाथ में बांस की गाँठदार अनगढ़ छड़ी, शरीर उघड़ा, धोती नितम्बों पर, कमर की अरगनी पर चढ़ी। देह की रंगत न डामर-सी, न गेहूं-सी, कुछ-कुछ मटमैले चने-सी। आंखें बिज्जू-सी धंसी-सी। नासिका न चीनी-सी, न सुग्गे-सी, दोनों के बीच-सी। ओठ सूखे, मुख की खिड़की की तरह खुले हुए, सिर संन्यासी-सा मुड़ा, मूंछ 'क्लीनशेव' ठुड्डी पर, कभी-कभी बकरे की दाढ़ी की छटा।

चिल्ला रहा है, अरे ईमू आव ना··· कहाँ भागी जात हव···!'

कन्हैया प्रथम महायुद्ध में फ्रांस तक की सैर कर आया है। उसकी बहादुरी का सिक्का सब मानते हैं।

कन्हैया के घरेलू जीवन की विस्तृत झांकी डा. शर्मा ने प्रस्तुत की है।

आठवाँ रेखाचित्र एक पूसी (बिल्ली) का है।

नवाँ रेखाचित्र हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रह्लाद लाज के एक धोबी का है। यह चित्र आज से ४० वर्ष पूर्व के धोबी का है जिसने एक कपड़ा खो जाने पर मरते समय अपने भाई को आदेश दिया था कि साल भर तक पैसा न लेना।

दसवाँ एक दूध वाले बंसी अहीर पर 'ये बंसी हैं' शीर्षक से है। बंसी एक कर्मनिष्ठ व्यक्ति है,

> 'ठिगनी, थलथली, लम्बोदरी आकृति, निर्मेघ नभ-सा रंग, लट्ठे की दुकच्छी घुटनवा धोती, सिर पर मोटे कपड़े की गुंडली, उस पर लोहे का घड़ा, घड़े पर बायां हाथ और दायें हाथ में सिर से ऊंची लाठी—ये गमकते चले आ रहे हैं, बंसी अहीर काशी विश्वविद्यालय के निकटवर्ती चित्तूपुर ग्राम के रहवासी। छात्रावास का कमरा-कमरा झांकते चलते हैं, दूध, दूध, दही बाबू?'

एक बेईमान बाबू पर अहीर की फबती देखिए—'अगर पानी का पैसा पानी हो सकता था तो बेईमान बाबूओं की पढ़ाई पर भी तो पानी फिर सकता है।'

ग्यारहवाँ चित्र 'इला' शीर्षक से है जिसमें आचार्य जी ने काव्यमय भाषा में वर्णन किया है।

> 'कई दिनों बाद इला मन्दिर की सीढ़ी पर बैठी है। संध्या की अंजन-रेखा उसकी आंखों में नहीं खिचती, उषा की क्रीडा उसके कपोलों का अनुसरण नहीं करती। वह चकराई-सी, पथराई-सी बैठी है। रोना चाहती है, रो नहीं सकती। कहना चाहती है, कह नहीं सकती।'

बारहवाँ चित्र सन् १९५० के हैदराबाद स्टेशन पर 'थर्ड क्लास का डिब्बा' शीर्षक से है। डिब्बे के अन्दर का एक चित्र पृष्ठ ७६ से देखिए,

> 'माफ कीजिए' कहता जाता और संभलता तथा गफलत करता जाता। जब आंखें खुलतीं तो चारों ओर यह दृश्य दिखाई देता, कोई किसी के चरण पर माथा टेके हुए है, कोई किसी के अंक का परिधान

बनाये हुए है, कोई किसी के कंधे पर सिर टेके हुए है, कहीं दो सिर रह-रहकर टकरा रहे हैं।'

ऐसी गांधी क्लास में से उतरते समय भी आचार्य जी को काफी परेशानी होती है।

तेरहवां एक अस्पताल में पड़ी हुई रोगिणी का 'तेजस्विनी' शीर्षक से रेखाचित्र है जिसमें से एक दृश्यचित्र उपस्थित है,

'कमरा अनुमानतः दस फुट चौड़ा और पन्द्रह फुट लम्बा है। सामने बन्द जंगले के सहारे जहाँ दो तस्वीरें रखी हुई हैं, एक तरुण की, दूसरी असि-धारिणी तरुणी की जिस पर फूलों की माला चढ़ी हुई है, जो मुरझाये-से जान पड़ते हैं। दरवाजे के दोनों ओर दो लोहे की खाटें पड़ी हुई हैं।' रोगिणी का रेखांकन इस प्रकार है 'उसका शरीर दुहरा है। रंग सांवला है। आंखें बड़ी हैं। नाक में सोने की लौंग है। भौंहों के मध्य न कांच की टिकुली है, न सिन्दूर की लाल बिन्दी। इसी तरह मांग भी कंचन-रेखा से रिक्त, पर मुख-मण्डल तेज से आपूर है। गले तक कम्बल ओढ़े हुए है पर हाथ बाहर निकाले हुए है। दाहिने हाथ के कंधे का भाग पट्टियों से बंधा हुआ है। 'हम गोआ के लिए मरेंगे, गोआ के लिए जियेंगे।' उन्हीं प्रणधारियों में यह रोगिणी थी—सुभद्रा राय।'

चौदहवां १६१६ में खंडवा के हाई स्कूल के एक मास्टर का चित्र 'कुठार मास्टर साहब' शीर्षक से है।

'वे बन्द गले का पारसी कोट और पतलून पहनते थे। सफेद रंग उन्हें बहुत प्रिय था। सफेद टोप, सफेद पेंट और केनवास के सफेद जूते उनके गोरे शरीर पर खूब फबते थे। शरीर यष्टि लम्बी थी, पर उसे दुबला नहीं कहा जा सकता—अंगों में अनुपात था, आंखों में गजब की आभा थी। उनमें असूया का अभाव था। वे कभी पर-छिद्रान्वेषण न करते, क्रोध से कभी उनकी भौंहों पर बल न चढ़ते।'

सभी रेखाचित्रों में आचार्य जी की सरस, सरल तथा प्रवाहमयी भाषा के दर्शन होते हैं। रेखाचित्र अधिकतर महाराष्ट्र के होने के कारण मराठी शब्दों का यत्रतत्र प्रयोग यथार्थ चित्र खींचने में सहायता देता है, जैसे बाई, कुंडे (गमले), मिलून (साथ-साथ), खोली (कोठरी), हम्माल (कुली), ईमू (इस ओर), बुकरियन, (बकरियों को), गर्दी (भीड़)। कहीं-कहीं पूर्वी रूप भी मिलते हैं। लोकभाषा के उदाहरण तो बिखरे पड़े हैं,

'दो ठौ आम के बिरवा हैं। थोड़ी जमींदारी है। भाई है, भौजाई है। मुदा भौजाई से हमारी बनती नहीं है। रमैया की माँ मैके में है। उहि का मनिआडर भेजत रहत हन।'

'का कही महाराज। बुढ़ौना बहुतै तंग करत है। खाये का नहीं देत···कपड़ा-लत्ता नहीं लात···का खांव? का पहिरौं? यहि का ऊ मनराखन अहीर बहकावत है···सादी की बात चलाये है···' (कन्हैया से)

भाषा को आलंकारिक रूप भी प्रदान करने से चित्रों में जान पड़ गई है,

'स्वयं डबली बाबू बच्चों के आगे-आगे सारस-सी डगें धरते हुए बढ़े चले आ रहे थे।'

'बंगले के पीछे ऊंघती-सी झोंपड़ी में डबलू बाबू वर्षों से रहते थे।'

'रात जब कृष्णाभिसारिका बनती है रह-रहकर सिहरन पैदा होने लगती है।'

भाषा में मोती की तरह सूक्तियाँ भी भरी पड़ी हैं, जैसे, 'नींद के मीठे नशे में समाज और प्रकृति के वर्ग-भेद का भान बहुधा नहीं रह जाता।'

वातावरण को यथार्थ रूप देने के लिए प्रकृति का चित्रण भी पर्याप्त किया गया है, पहले ही पृष्ठ पर,

'वन-महोत्सव का दिन था। नन्हीं-नन्हीं फुहारें रिमझिमा रही थीं। आज का दिन कजरारे बादलों के साथ कितना मातल, कितना मोहक लग रहा था। मेरी आंखें कभी आकाश में उड़ने वाले कज्जल-कूटों पर जमतीं, कभी उन पर चढ़ने वाले विशालकाय हाथियों पर और कभी सहसा इन्द्र-धनुषी पुल पर। पूसी के प्रारम्भ में ही, पूस का महीना। जाड़े की रात। स-स-स-स दांत बजाने वाला शीत। नागपुर चिलकती धूप के चटकों के लिए प्रसिद्ध है, सर्दी के सीत्कार के लिए नहीं। पर आज तो उसकी प्रसिद्धि पर ही पानी फिरा जा रहा है, उसका विपर्यय हो गया है। जिस प्रकार तारों की छाया के पूर्व ही पखेरू फरफर अपने घोंसलों की ओर उड़कर पंख समेट उनमें समा जाते हैं, उसी प्रकार नागपुरिए भी सांझ होते ही सड़कों को खाली कर घरों में गरमाहट खोजने चले गये हैं।'

व्यंग्य के छींटे भी बिखरे हुए हैं। इससे भाषा में चुटीलापन आ गया है और चित्र मार्मिक बन गये हैं। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

१. स्वराज्य स्थापित हो जाने के पश्चात् पुराने देशभक्तों और नये राजभक्तों ने इसका नाम 'जवाहर गंज' रख दिया।
२. कुत्ते के ब्लैकी नाम पर मैंने 'कुत्ते को लोगों पर आतंक जमाने के लिए पाला है और अभी हमारे देश में अंग्रेजी का आतंक है।'
३. वह मनुष्य पर, जो विजातीय है, अकारण आक्रमण नहीं करता परन्तु स्वजातीयों से अकारण ही लोहा लेता रहता है। ज्यों ही वे उसके सामने पड़ते हैं, सम-सामयिक कवियों की तरह उनकी ओर बुरी तरह घूरता, गुर्राता और झपटता है।
४. जब ब्लैकी जान्सटन के पास से नहीं लौटा तो मित्र ने साश्चर्य कहा,

'यह तो अजीव बात है। कुत्ता तो ऐसा प्राणी है जो वफादार होता है, जिसने सब परिजनों के, यहां तक कि अर्धांगिनी के त्याग देने पर भी युधिष्ठिर का अंत तक साथ दिया था।'

मैंने हंसकर कहा, 'मित्र ! वह द्वापर का कुत्ता, धर्म-रूप था। यह कलियुग का कुत्ता, मनुष्य-रूप है।'

शब्द-चित्रों में आचार्य जी के व्यक्तिगत जीवन के संस्मरण भी घुले-मिले हुए हैं, कहीं-कहीं उन्होंने अपना चित्र भी प्रस्तुत कर दिया है, 'उनके भारी भरकम शरीर से मेरी दुबली-पतली हड्डियों का स्पर्श असह्य हो गया।' (वकील साहब से)

पुस्तक में शब्द-चित्र ही नहीं वास्तविक रेखाचित्र भी हैं जिनसे पुस्तक का मूल्य बढ़ गया है। ब्लैकी का रेखाचित्र है। पहले तथा दूसरे रेखाचित्र के साथ भी चित्र हैं। शर्मा जी के ये चित्र केरल, गुजरात, महाराष्ट्र में विशेष लोकप्रिय हो चुके हैं। डा. सिद्धेश्वर वर्मा ने तो 'तमिल' में भी इनका रूपान्तर कर दिया है। इससे इस पुस्तक का मूल्य स्वयंसिद्ध हो जाता है। पुस्तक का समर्पण भी 'नजर नसाय गई मालिक' शीर्षक रेखाचित्र के पात्र 'शंकर' को सादर किया गया है। आशा है भविष्य में भी हमको आचार्य जी की लेखनी से ऐसे ही जीते-जागते चित्र पढ़ने को मिलते रहेंगे।

सेठ गोविन्ददास

सेठ गोविन्ददास जी ने हिन्दी साहित्य के भंडार को अनेक रूपों में भरा है। प्रसिद्ध नाटककार सेठ जी ने हिन्दी-रंगमंच के लिए भी अनेक स्तुत्य प्रयत्न किये हैं। ब्रज कला केन्द्र, ब्रज साहित्य मंडल, हिन्दी साहित्य सम्मेलन आदि अनेक साहित्यिक तथा सांस्कृतिक संस्थाओं के तो आप प्राण हैं। हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार के लिए आप अथक प्रयास कर रहे हैं।

रेखाचित्र विधा में भी आपने काफ़ी साहित्य लिखा है। आपने राजनैतिक, सामाजिक, साहित्यिक और व्यापारिक जीवन में आनेवाले अनेक महान् व्यक्तियों का चित्रण किया है। सन् १९५९ में 'स्मृति कण' संस्मरणात्मक शैली में लिखे गये ४० रेखाचित्रों का संकलन है जो पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं, जो तिलक, गांधी, मालवीय, नेहरू, मोतीलाल तथा जवाहरलाल, पटेल, बोस, जिन्ना, आजाद, डा. राजेन्द्र प्रसाद, राधाकृष्णन, बिनोबा भावे, राजगोपालाचार्य, राजर्षि टंडन आदि राजनीतिज्ञों, रवीन्द्र, द्विवेदी, हरिऔध, प्रेमचन्द्र, गुप्त जी, मुंशी जी जैसे साहित्यकारों तथा बिड़ला तथा पृथ्वीराज कपूर के हैं। विभिन्न क्षेत्रों में सार्वजनिक रूप से जिन सज्जनों से उनका सम्पर्क हुआ, उनका चित्रण किया गया है। पुस्तक में स्मृतियों के झरोखे से अनेक व्यक्तित्व झांक रहे हैं। बाह्य व्यक्तित्व की कुछ झलक देखिए,

तिलक

> 'गेहुंआ रंग, न ठिगना और न ऊँचा तथा न दुबला और न मोटा शरीर, देखने में ज़रा भी आकर्षक नहीं। सिर पर पगड़ी, ऊपर से शरीर पर मराठी ढंग का अंगरखा और उस पर दुपट्टा··· ।'

लाजपतराय

> 'गेहुंआं रंग, ऊंचा-पूरा तगड़ा शरीर, आनन और तना पर नाजुकता का लवलेश नहीं···जैसा भारीपन उनकी आकृति में था, वैसी ही भारी थी उनकी आवाज, जो अन्तःकरण की बड़ी भारी देशभक्ति से भीगी हुई निकलती थी।'

इधर डा. गोविन्ददास की एक नई कृति 'चेहरे जाने पहचाने' शीर्षक से प्रकाशित हुई जिसमें १७ रेखाचित्र संकलित हैं। अधिकांश चित्र पारिवारिक व्यक्तियों के हैं—पितामह, पिताजी, माताजी, सच्चा सौन्दर्य (पत्नी), भौजाई रामकुंवर, हम दो (पुत्र)। कुछ निकटतम व्यक्तियों—मुनीम पूनमचंद, मिस्टर डिगविट, हाउ, मकदूम बख्श, लखनऊ वाले चाचा, दराब खां जमादार, बल्ला धीमर, लालचन्द रसोइया, सप्रे जी, गोपीनाथ जी। एक चौबनजी पर है जो उनकी माताजी के साथ रहती थीं।

इस चित्रावली में सबसे सुन्दर चित्र है उनके पिताजी का जिसमें उनके विलासमय जीवन की झांकियां बहुत ही सजीव हैं।

पितामह

'चौबीस घंटे में केवल एक बार भोजन करते थे—मंदिर में राजभोग के दर्शन के पश्चात् प्रसाद के रूप में वह किसी थाली, कटोरी, कटोरे आदि में नहीं केले के पत्ते पर पत्तों के ही दोनों और मिट्टी के सकोरों में। वेशभूषा भी बड़ी सादी। गर्मियों में धोती, कुरता, बाहर जाने के समय कुरते पर अत्यन्त साधारण कपड़े का अंगरखा, दुपट्टा और सिर पर पगड़ी। जाड़े में यह अंगरखा साधारण ऊनी कपड़े का हो जाता था। कभी-कभी दरबार आदि में वे पैजामा भी पहनते थे। अंगरखा, पैजामा, दुपट्टा और पगड़ी उस काल की प्रतिष्ठित पोशाक मानी जाती थी।···निसर्ग ने उन्हें बलिष्ठ और स्वस्थ शरीर दिया था, परन्तु इसमें यह दिनचर्या भी एक कारण थी जिसकी वजह से सत्तर वर्ष की अवस्था में भी आठ-दस मील पैदल चलना उनके लिए मामूली बात थी।'

माताजी

'वे गौर वर्ण की परम सुन्दर महिला थीं। जैसा उनका तन था, वैसा ही मन भी। स्वभाव की वे अत्यन्त मृदु थीं परन्तु सिद्धान्तों पर चलने और उसके लिए सर्वस्व त्याग करने पर भी स्वभाव में जो एक दृढ़ता, निर्भीकता और तेजस्विता आ जाती है वह उनमें भी आ गई थी।'

मुनीम पूनमचंद

'सेवा-सागर नाम हमारे कारबार को इसलिए दिया गया था कि जिस तरह सागर में पानी की थाह नहीं उसी प्रकार हमारे घर में धन की थाह नहीं मानी जाती थी। जब यह कर्ज़ बढ़ना आरम्भ हुआ तब चर्चा शुरू हुई कि सेवा सागर का पानी सूख रहा है। इसी पानी के साथ पूनमचन्द का खून भी सूखने लगा।'

मिस्टर डिगविट

'डिगविट साहब ऊंचे पूरे दोहरे शरीर के व्यक्ति थे, रंग तो अंग्रेजों के सदृश था ही क्योंकि वे एंग्लो इंडियन या यूरेशियन न होकर शुद्ध अंग्रेज थे। उनकी भूरी मूछों की दोनों नोकें मोमेड (एक प्रकार का रोगन) लग.कर काकातुए की कलंगी के सदृश रहतीं और लम्बी कि कान तक पहुंच जायं। पतलून न पहनकर वे हमेशा ब्रीचेज ही पहनते थे, पिण्डलियों पर चमड़े की गेटिस रहती क्योंकि उन्हें घोड़े की सवारी बहुत प्रिय थी।'

हाऊ

'उनकी ऊंचाई छह फुट से दो तीन इंच अधिक ही होगी और जितनी ऊंचाई थी, उतनी मोटाई भी। पर यह मोटाई पहलवानी मोटाई थी जिसमें प्रायः पेट से छाती कुछ ऊँची रहती है और भुजाओं तथा जांघों पर मछलियां पड़ी रहती हैं। होना भी यही चाहिए था क्योंकि वे नित्य एक हजार डण्ड और दो हजार बैठक करते थे। सिर और मूंछ दाढ़ी पर ही बाल नहीं थे सारा शरीर बालों से भरा हुआ था, यद्यपि वैसा नहीं जैसा बनमानुष का होता है। ऐसे ऊँचे, भारी-भरकम बालों वाले शरीर के कारण वे रात्रि को तृणों से भरा हुआ जैसा एक छोटा-सा शैल-शिखर दिखता है, उस प्रकार दिखाई देते थे।'

अस्तबल के इंचार्ज मकदूम बख्स

'यह आदमी एकदम आबनूस के रंग के सदृश काले रंग का था। उस रंग में उसकी बड़ी-बड़ी लाल आंखें थीं। क़दम छै फुट से अधिक ही होगा। और जितनी ऊँचाई थी उतनी ही मौटाई भी। काले रंग की दाढ़ी थी जो छाती पर न फैलकर बड़े ढंग से संवारी जाकर राजपूती दाढ़ी के सदृश कानों में लिपटी रहती थी।'

लखनऊ वाले चाचा

'सफेद रंग के कारण इनके बाल भी कुछ भूरापन लिये हुए सफेद ही थे, सिर पर लम्बे पट्‌टे, चेहरे पर मूंछें और दाढ़ी, परन्तु मूंछें इस तरह कटी हुई जिससे मूंछों के बाल मुंह में न जा पायें। सिर और दाढ़ी-मूंछों

के ये बाल वे मेंहदी से लाल रंगते। कपड़े बारहों महीने पतले तनजेब के पहनते और लखनऊ की शाही चित्रशाला में वाजिद अली शाह के चित्र में अंगरखे के बावजूद उनकी बायीं ओर का वक्षःस्थल जिस तरह खुला हुआ है, उसी प्रकार इन वाज़िद अली का भी रहता।'

चौबन जी

'रंग गोरा, शरीर में न बहुत मोटी न दुबली, न बहुत ऊंची, न ठिगनी, सबसे अधिक ध्यान आकर्षित करता था उनके पेट का एक बड़ा-सा गुल्म जिसे उनकी साड़ी भी पूर्ण रीति से न ढांक पाती थी और साड़ी के पल्ले से ढका रहने पर भी वह अदृश्य न हो पाता था।'

सप्रेजी

'गेहुंआ रंग, ठिगना और दुबला शरीर, छोटी-छोटी सफेद मूंछें परन्तु तीखी दृष्टि, काली आंखें और आध्यात्मिक अन्तरंग जो कर्म त्याग वाला संन्यास न होकर फलत्याग वाले कर्मयोग से ओतप्रोत था। ऐसे पं. माधवराज जी सप्रे का जीवन, उस जीवन की अनेक बातें और घटनाएं अनायास ही मेरे मन और मस्तिष्क में अनेक बार चक्कर लगाने लगती हैं।'

गोपीनाथ जी

'खूब ऊंचा पूरा छह फुट लम्बा, भरा हुआ हृष्ट-पुष्ट शरीर, गोलमटोल मुखाकृति, जिस पर उन्नत ललाट, शूरवीरों-क्षत्रियों का विस्तीर्ण वदन, सिंहों जैसी चाल जिस पर अत्यन्त शिष्ट और शीतल वाणी। गोपीनाथ शर्मा के व्यक्तित्व का एक आकर्षक रूप था।'

सेठजी की ये दो कृतियां--स्मृतिकण, चेहरे जाने पहचाने—रेखाचित्र साहित्य में अपना स्थान बना लेती हैं जिनसे न केवल व्यक्तियों का ही चित्र सामने आता है वरन् तत्कालीन वातावरण, सेठजी के जीवन की व्यक्तिगत गोपनीय बातें भी प्रत्यक्ष सामने आती हैं। कुछ आलोचकों ने 'स्मृतिकण' के रेखाचित्रों को गार्डिनर के स्केच साहित्य के टक्कर का बताया है।

सियारामशरण गुप्त

गांधीवादी विचारधारा के पोषक श्री सियारामशरण गुप्त कवि होने के साथ-साथ अच्छे निबंधकार हैं। आपके निबंधों का संकलन 'झूठ-सच' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है। जीवन और जगत से संबंधित विषयों पर इसमें निबन्ध हैं। आचार्य विनयमोहनजी ने भी स्वीकार किया है कि 'झूठ-सच' के निबन्ध भी रेखाचित्र की भ्रान्ति उत्पन्न करते हैं,

> 'मेरी दृष्टि में कुछ निबन्धों में भ्रान्ति हो सकती है पर कुछ तो वस्तुत: रेखाचित्र की सीमा के अन्तर्गत आते हैं। व्यक्तिव्यंजक निबन्धों की परम्पराओं में इस संकलन का विशेष महत्त्व है। शैली की दृष्टि से भी इन रेखाचित्रों का महत्त्व कम नहीं। वाक्य सीधे, सरल तथा चुभते हुए हैं। आपकी शैली पर टिप्पणी करते हुए प्रभाकर माचवे का कथन सत्य है कि उनकी कहानियाँ, निबन्ध और रेखाचित्र जैसे एक ही कलम से बनाये गये चित्र हैं, उनके रंग भी एक-से हैं। वर्ण-संयोजना भी एक-सी है।'

उनके शब्द-चित्रों से कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

मुंशी अजमेरी

'मुंशी जी' एक अच्छा रेखाचित्र है। मुंशी जी जन्मना मुसलमान होकर भी संस्कारत: वैष्णव थे। प्राय: लोगों को विश्वास न होता था कि वे मुसलमान हैं। चित्रों में भावात्मकता भी है,

> 'ग्रीष्म की लू प्रखर हो रही थी। वृक्ष सरसराहट के साथ सां-सां करते दिखाई दिये। इधर यह दूर तक फैली हुई पक्की सड़क सूनी-सी दिखाई दे रही है, उसके बाद वह कुआँ, फिर वे वृक्ष, उसके भी बाद आकाश में घुली-मिली दूर की पहाड़ियों की वह नीलिमा। कहीं कुछ नहीं। इतने अधिक जनसमूह के साथ भी मानो हम अकेले पड़ गये।'

सत्य अपने स्वाभाविक रूप में ही कितना मनोहर हो सकता है यह बात मुंशी जी से समझनी चाहिए।

शुष्को वृक्षः

एक चित्र इसमें से भी द्रष्टव्य है--

> 'खेत की मेंड़ पर बबूल का एक वृक्ष है। सूखा हुआ है।

एकदम सूखा हुआ नहीं। कहीं न कहीं इसमें जीवन रस अब भी प्रवाहित है। पर कहां, किस जगह है इसका वह जीवन रस, यह इन आँखों से नहीं देखा जा सकता। छाल इसकी स्निग्ध-सचिक्कण नहीं है, बहुत पहले से नहीं है। वह जगह-जगह उखड़ी हुई है। उसे मानो इस बात को किसी तर्क से प्रमाणित करने की आवश्यकता नहीं कि वह इन अनगिनत काँटों की ही सहोदरा है, अग्रजा है।'

'घूंघट' में सुन्दर शब्द-चित्र इस प्रकार है—

'देखे थे, लहराते हुए घाँघरे, हिलते-डुलते हुए रंगीन अंचल, लाल, पीले, नीले, हरे, सफेद रंग, चमकती हुई कितनी ही चूड़ियाँ, पीठ की ओर ओढ़नी के भीतर जूड़ों का अस्पष्ट आकार, कण्ठ में किसी आभूषण का झलकता हुआ एक कोना, आधी भुज-लताओं तक चोली की आस्तीन की गोटें जो ओढ़नी के झीनेपन में ऊपर की ओर उभर-उभर पड़ी थीं।'

सियाराम जी इतनी जल्दी हम लोगों के बीच से रामजी की शरण चले गये अन्यथा और अधिक मार्मिक रेखाचित्र प्राप्त होते।

देवेन्द्र सत्यार्थी

लोक-कला, लोक-संस्कृति एवं लोक-गीत के क्षेत्र में सत्यार्थी जी की देन साहित्य जगत में सर्वविदित है। 'कहानी' कला में भी आप निष्णात हैं। रेखाचित्रकार के रूप में आप नई शैली के जन्मदाता कहे जाते हैं। भावात्मक रेखाचित्रों का एक संग्रह 'रेखाएँ बोल उठीं' शीर्षक से सन् १९४९ ई. में प्रकाशित हुआ। इसमें रेखा-चित्र के साथ कुछ निबन्ध भी हैं जिससे भ्रान्तिवश इसको निबन्धों का संकलन भी कह दिया गया।

इस संग्रह में संकलित चित्रों में 'रेखाएँ बोल उठीं, सौन्दर्य बोध, आज मेरा जन्म दिन है' भावात्मक रेखाचित्रों में से हैं। इनके अतिरिक्त रवीन्द्रनाथ ठाकुर, अच्छे भले आदमी की बात, चिर नूतन चित्र, दादा दादी भी रेखाचित्र के अन्तर्गत लिये जा सकते हैं। 'आज मेरा जन्म दिन है' का एक चित्र उपस्थित है—

'कौन मुझे माला पहनाने आयेगा। फूल तो बहुत खिलते हैं। माला का कहीं अभाव नहीं पर क्या सचमुच माला बहुत आवश्यक है, क्यों न अपने हाथों से माला गले में डाल लूं। इसके लिए बाबा जी तो आने से रहे, अरे कोई है, जो बाबा जी तक मेरा संदेश ले जाये। घर

में आज कोई नहीं। एकान्त भी तो सदैव नहीं मिलता। पड़ोस में किसी के यहाँ से प्रसव पीड़ा का समाचार आया था। मेरी पत्नी वहाँ चली गयी। पुत्री स्कूल को भाग गयी। बस रह गया मैं अकेला। कोई नहीं जानता कि आज मेरा जन्मदिन है।'

'रवीन्द्रनाथ ठाकुर' में जीवन प्रसंगों की रेखाओं के मध्य चित्र उपस्थित किया गया है। 'गांधी जी' के व्यक्तित्व पर चित्र 'चिर नूतन' में है। 'सौन्दर्य बोध' में भावुक महात्मा बुद्ध के चरणों में बैठकर प्रेयसी का गान बीणा के स्वरों में संजोकर रख रहा है। भावात्मकता सत्यार्थी जी के रेखाचित्रों की ही विशेषता नहीं वरन् यह तत्त्व उनके निबन्धों तथा कहानियों में भी भरपूर है।

सत्यार्थी जी ने साहित्यकारों पर भी उच्चकोटि के रेखाचित्र लिखे हैं। बहुत समय हुआ महादेवी जी पर 'महाश्वेता महादेवी' शीर्षक से 'कल्पना' में तथा 'अश्क मेरा मित्र' 'आजकल' के जनवरी १९५१ ई. के अंक में प्रकाशित हुए थे। 'आजकल' में ही 'संगीत में नई आवाज' शीर्षक से एक शब्द-चित्र प्रकाशित हुआ था।

'क्या गोरी, क्या साँवरी' में सत्यार्थी जी ने ऐसे कई आत्मपरक निबन्ध लिखे हैं जो रेखाचित्र विधा के अधिक निकट आते हैं। 'उनमें कहीं रामू भाई और उसकी कन्या गुलवदन के चित्र उभरते हैं, कहीं स्वर्गीय श्री झवेरचन्द मेघाणी के प्रति स्नेह-धारा बहती है।'

'कला के हस्ताक्षर' शीर्षक से इधर सत्यार्थी जी की एक पुस्तक और प्रकाशित हुई है जिसके मुखपृष्ठ पर लेखक ने स्वयं घोषणा की है 'इसमें बारह रेखाचित्र हैं।' वस्तुतः ये सभी शुद्ध रूप में 'इण्टरव्यू' विधा के अन्तर्गत आते हैं, लेखक भी भ्रान्ति में रहा जिसके फलस्वरूप वह भूमिका में लिखता है 'कोई शायद यह बहस शुरू कर दे कि ये निबन्ध या संस्मरण भले ही हों, रेखाचित्र तो हर्गिज नहीं हैं।'

लेखक ने इनको किस विधि से लिखा इसका स्पष्टीकरण करते हुए लिखा है,

> 'मैं उनसे मिला, उनकी बातें सुनीं, उनका काम देखा, व्यक्तित्व की रेखाएँ उभरीं। मैंने हमेशा कुछ-न-कुछ प्राप्त किया। जहां भी मुझे जो चीज मिली, उसी का लेखा-जोखा इन रेखाचित्रों में मिलेगा। कला के हस्ताक्षर मुझे सदैव प्रिय रहे, क्योंकि मैं कला को किसी एक कटघरे में बन्द चीज नहीं समझता।'

प्रेमचन्द का एक चित्र

'मूंछें घनी और बड़ी-बड़ी, सिर पर गांधी टोपी से दोनों तरफ

और गर्दन पर निकले हुए बेतरतीब-से बाल, आँखों में अनुभव की चमक इन तीन चीजों का मुझ पर विशेष प्रभाव पड़ा, जब अक्टूबर १९३१ में लखनऊ में प्रेमचन्द से भेंट हुई।'

श्री बनारसीदास चतुर्वेदी जी को सत्यार्थी जी का 'जन्मभूमि' शीर्षक रेखाचित्र पसन्द आया था, जिस पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए 'रेखाचित्र' की भूमिका में लिखा है,

'बन्धुवर सत्यार्थी जी का 'जन्मभूमि' नामक रेखाचित्र निस्सन्देह फ़र्स्ट क्लास था और उसकी टीस अब भी हृदय को कुरेद देती है। अभी-अभी हमने उसे मंगाकर फिर से पढ़ा और सत्यार्थी जी के कलाकार रूप को प्रणाम किया।'

राहुल

अनेक यात्रा संबंधी संस्मरणों तथा रेखाचित्रों के लेखक महापंडित राहुल सांकृत्यायन का हिन्दी साहित्य में मूर्धन्य स्थान है।

आपने रेखाचित्र यात्रा-साहित्य, संस्मरण, जीवनी तथा कहानी विधा के अन्तर्गत लिखे हैं।

यात्रा-साहित्य में रूस में ढाई वर्ष, तिब्बत में तीन वर्ष, गढ़वाल, किन्नर के देश में, दार्जिलिंग परिचय उल्लेखनीय हैं।

संस्मरण साहित्य में 'बचपन की स्मृतियां', 'जिनका मैं कृतज्ञ', 'मेरे असहयोग के साथी' उल्लेखनीय हैं।

जीवनी-साहित्य के अन्तर्गत वीर चन्द्रसिंह गढ़वाली, कार्ल मार्क्स, लेनिन, माओचेतुंग, नये भारत के निर्माता, अतीत से वर्तमान, घुमक्कड़ स्वामी, सरदार पृथ्वी सिंह शीर्षक कृतियां उल्लेखनीय हैं जिनमें यत्र-तत्र अच्छे रेखाचित्र मिल जाते हैं।

निबंध-साहित्य के साथ आपका कहानी-साहित्य प्रसिद्ध है। आपकी कहानियों पर टिप्पणी करते हुए डा. माचवे ने लिखा है, 'कहानियों में निबंधकार की तरह लिखते हैं जब कि निबंधों में भी कहानी जैसी सूत्रमयता रहती है।'

आपका कहानी संग्रह 'सतमी के बच्चे' प्रसिद्ध है। इस कृति में ऐसे ही प्रत्यक्ष जीवन में देखे हुए गरीबों के चित्र हैं। जितनी अधिक तटस्थता रेखाचित्रकार रख सकता है उतना ही प्रभाव बढ़ता जाता है। चित्रवस्तु से चित्रकार की दूरी एक आवश्यक शर्त है अन्यथा चित्रवस्तु के रंगों के साथ चित्रकार भी बहने लगे या उसमें

लिप्त हो जाय तो उस चित्र का क्या अर्थ रह जायेगा। इस दृष्टि से 'सतमी के बच्चे' के रेखाचित्र आदर्श कहे जा सकते हैं।

भदन्त आनन्द कौशल्यायन

बौद्ध भिक्षु तथा साहित्यकार भदंत आनन्द कौशल्यायन स्केच लिखने में भी पटु हैं। पर्यटक होने के नाते यात्रा-साहित्य में आपने स्थान-विशेषों का भी चित्रण किया है।

रेखाचित्रों में हास्य-व्यंग्य का भी पुट है। 'जो लिखना पड़ा' उनकी इस दृष्टि से उल्लेखनीय कृति है। 'रेल के टिकट' में उनकी इस कला का निखार दिखाई पड़ता है।

बापू के साथ आप रहे थे अतएव आपकी लेखनी से अच्छे चित्र प्रस्तुत हुए हैं, जैसे 'भंगी बस्ती में गांधी प्रार्थना'। सांप्रदायिक दंगों पर भी आपने लिखा है। 'आह ऐसी दरिद्रता' में देश की गरीबी का रेखाचित्र है जिसमें रेल के भिखमंगे, अनाथालय के अन्धे लड़के, दवाई बिक्रेता, चंदा बटोरने वाले, अन्धों पर अधिक चित्र हैं।

'बहानेबाजी' इनका दूसरा संग्रह है जिसमें सामग्री इन्होंने अपने विशाल और विस्तृत अनुभवों के आधार पर संकलित की है। कहानी की भांति मनोरंजकता और छोटी-छोटी बातों से भी जीवन स्वस्थ तथा जागरूक बना सकने की इनमें क्षमता है, अत्यन्त सरल भाषा, सरस शैली में मार्मिक व्यंग्य हैं।

यशपाल

सुप्रसिद्ध उपन्यासकार यशपाल जी का एक रेखाचित्र 'हमने भी इश्क किया था' बहुत पहले 'रूपा' में प्रकाशित हुआ था। लेखक की 'तुमने क्यों कहा कि मैं सुन्दर हूं' शीर्षक कृति यद्यपि कहानियों का संग्रह है पर उसमें रेखाचित्र के तत्त्व भी समाहित हैं। उनकी कहानियों में घसियारिन, दफ्तर और बैंक के बाबू, पर्दे की केबिन, छोटे दुकानदार और टेलीफोन गर्ल पर अच्छे रेखाचित्र हैं। भूमिका में लेखक ने स्वयं स्वीकार किया है, 'लेखक कभी-कभी भावों और विचारों के उद्‌गार से ऐसी भी रचना में लिखते हैं जिनमें तथ्य या भाव को घटना के माध्यम से विचारों में प्रस्तुत न करके केवल विचारों की शृंखला या शब्दचित्र के रूप में पेशकर दिया जाता है।···मैंने शब्द-चित्रों और अनुभूति प्रधान निबंधों आदि की शैली का उपयोग किया है।' इस पुस्तक के एक अंश का उद्धरण देकर उसकी पुष्टि करेंगे,

"साधारण से ऊंचा सिर, निकलता कद, चौड़ा सीना, पतली कमर, खूब साफ गेहुएं चेहरे पर घनी-घनी काली भँवों के नीचे बड़ी-बड़ी आंखें, जरा पुष्ट होठों पर दबी हुई-सी मुस्कराहट।

लुम्बा ने एक युवती के चेहरे का पार्श्व चित्र छाया में बनाया, उसका शब्द-चित्र इस प्रकार है, 'कुछ उठी हुई सुघड़ ठोड़ी, भौंह के बीच के दबाव से उठा हुआ सुन्दर माथा, बिखरी उड़ती-उड़ती सी लटें, लम्बी पलकें, तीखी नाक और हंसी को रोकने की चेष्टा में उठे हुए कुल्ले, सजीव चुलबुलापन, बुद्धि का प्रकाश। खरादी हुई लम्बी गर्दन से अनुमान होता था युवती का शरीर तलवार के समान सुता हुआ और छरहरा होगा।'

उदयशंकर भट्ट

भट्ट जी का एक रेखाचित्र 'प्रो. माधवी प्रसाद' शीर्षक से संगम के दीपावली अंक (१९५१) में प्रकाशित हुआ था। उनके 'वह जो मैंने देखा' शीर्षक ग्रन्थ में अनेक अच्छे रेखाचित्र हैं। वैसे भट्ट जी के उपन्यासों में, विशेषकर 'सागर, मनुष्य और लहरों' में अनेक पठनीय शब्दचित्र मिलते हैं।

अमृतलाल नागर

नागर जी अपने उपन्यासों में चित्रात्मक शैली से पात्रों के शब्द-चित्र उपस्थित करने में पटु हैं। हंस (नव. १९४७) में 'अब न कहूंगी तुझे पतों फल' शीर्षक रेखाचित्र प्रकाशित हुआ था। चित्र करुणा से ओतप्रोत है जिसका अन्तिम अंश इस प्रकार है,

'ट्रेन के थर्ड क्लास कम्पार्टमेंट में सफर करती हुई एक कौम की बूढ़ी दादी को, उसके दूसरी कौम के जोशीले जवान पोतों ने छुरी से मार दिया। उसने सवाल किया, 'बेटा मुझे मारा' अपनी नानी दादी को?'

बेटा शब्द में न जाने कितना प्यार, कितनी क्षमा और इन्साफ के अनगिनत सवाल भरे हुए थे।

हजारीप्रसाद द्विवेदी

हिन्दी में वैयक्तिक निबंध लिखने की परम्परा का सम्यक् विकास द्विवेदी जी

के निबंधों से ही होता है। 'अशोक के फूल', 'कल्पलता', 'शिरीष के फूल' और 'कुटज' आदि संग्रह आपकी शैली के विकास-क्रम के उदाहरण हैं। आपके निबंधों तथा उपन्यासों में चित्रात्मकता पर्याप्त मिलती है।

गुरुदेव रवीन्द्र नाथ ठाकुर के संस्मरणात्मक निबंधों में रेखाचित्र के तत्त्व भी समाहित हैं। संकेत में संकलित 'गुरुदेव' शीर्षक रचना का एक अंश इस प्रकार है,

> 'मैंने उन्हें वृद्धावस्था में देखा था। फिर भी कैसी अपूर्व शोभा उनके इस वृद्ध शरीर में थी, मुख-मण्डल से कान्ति की धारा झरती रहती थी, बड़ी-बड़ी आँखों से स्नेह की पावन धारा बरसती रहती थी और श्मश्रु से आच्छादित अधरोष्ठों के मन्द स्मित से तो अपूर्व शांति की स्रोतस्विनी ही बह जाया करती थी। उनके विराट् मानस में औदार्य, तेज और प्रेम की त्रिवेणी लहराया करती थी और कुशाग्र बुद्धि जगत् की गूढ़ समस्याओं को अनायास भेद जाया करती थी।'

'रेखाचित्र' लिखने के लिए भी आप युवकों को प्रेरणा देते रहते हैं। श्री रामगोपाल चतुर्वेदी को जो एक पत्र आपने इस आशय का लिखा उसका कुछ अंश यहाँ उद्धृत है—

> 'मैं जानना चाहता हूं कि इस बीच आपने और क्या लिखा। मेरा विश्वास है कि आप यदि रेखाचित्र लिखें—सजीव रेखाचित्र—तो बहुत सफल होंगे। कौन क्या कहता है, इसकी परवा एकदम न करके अपनी ओर से भरसक सुन्दर और हितकर बनाकर लिखे जाओ। फिरोजाबाद में रहते रहते दो-चार रेखाचित्र तो लिख ही डालो। संसार में कोई सर्वज्ञ होकर नहीं आया है। करते-करते ही सब करना सीखते हैं। —सो मेरा विचार है कि आप अवश्य रेखाचित्रों को लिखने में लग जाएं। अपने ढंग, अपनी पसन्द से, अपनी रुचि से, अपनी उमंग से, परन्तु दूसरों के हित के लिए दूसरों को पसन्द करने के लिए, दूसरों की सेवा के लिए।'

नगेन्द्र

सुप्रसिद्ध आलोचक, निबंधकार तथा रसशास्त्री डा. नगेन्द्र ने अपने प्रारम्भिक लेखन में आधुनिक कवियों की समालोचना के साथ-साथ उनके व्यक्तित्व पर सुन्दर शब्द-चित्र भी प्रस्तुत किये हैं। 'कहानी और रेखाचित्र' तो आपके पठनीय निबंधों

में से है जिसमें इन दोनों विधाओं का सूक्ष्म अन्तर स्पष्ट किया गया है। रेखाचित्रों का संग्रह 'चेतना के बिम्ब' यंत्रस्थ है।

स्वतन्त्र रूप से भी आपने कुछ स्केच लिखे हैं। स्वर्गीया बहिन होमवती देवी पर 'बीबी' शीर्षक से प्रकाशित संस्मरणात्मक लेख में 'बीबी' का अच्छा रेखाचित्र भी है जिसका अंश यहाँ उद्धृत करना चाहते हैं,

> 'गहरे रंग का साधारण बिचोला शरीर--नियमित रूप से सिर पर ओढ़ी हुई मामूली सफेद धोती और उसके ऊपर उत्तर प्रदेश की सवर्ण स्त्रियों की वस्त्र-भूषा का अनिवार्य अंग चादर, उज्ज्वल ललाट और उससे नीचे चिर ममत्व से स्निग्ध आंखें। दुःख ने जिन्हें एक चिरन्तन करुणार्द्र ज्योति प्रदान कर दी थी और उधर जीवन का व्यावहारिक संघर्ष जिनमें एक संकल्पमय स्थिरता छोड़ गया था। यह है संक्षेप में बीबी का चित्र जो मेरे मन पर आज भी वैसा ही गहरा अंकित है जैसा कि पहली भेंट के दिन था।'

कुछ समय पूर्व आपका सी. वी. महाजन पर एक शब्द-चित्र धर्मयुग (२२ मई, १९६६) में प्रकाशित हुआ है। इसका एक भाग द्रष्टव्य है.

> 'एक छोटे-से कमरे में, जो बिल्कुल सादा और साफ था, बर्सर साहब बैठे हुए थे, उनकी चतुर-गम्भीर आकृति, जिसका आकर्षक अवयव था लम्बी नुकीली नाक और आक्सफोर्ड शैली की निहायत चुस्त-दुरुस्त पोशाक विद्यार्थी के मन पर बरबस प्रभाव डालती थी।'

प्रो. महाजन की पाठ-विधि पर उनकी प्रक्रिया इस प्रकार है,

> 'उनका वाचन सर्वथा स्पष्ट और प्रभावी होता था और व्याख्यान-शैली अत्यन्त स्वच्छ अनाविल थी। उनके उच्चारण में स्थिरता रहती थी, उच्छ्वास नहीं। वे वाक्यों का विच्छेद कर काव्य की सूक्तियों का भाष्य करते थे।'

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के आप निकटतम रहे हैं, दद्दा के महान् व्यक्तित्व का शब्द-चित्र डाक्टर साहब के ही शब्दों में,

> 'सब मिलाकर दद्दा का व्यक्तित्व एक भरा-पूरा और समृद्ध व्यक्तित्व था। सम्पन्न सामन्तीय परिवार का आभिजात्य--स्वाभिमान, विनय और औदार्य जिसके सहज अलंकार थे--उन्हें उत्तराधिकार में मिला था। पिता की रसमयी वैष्णव भावना ने इस आभिजात्य को मानव-हृदय के सहज माधुर्य से मंडित कर दिया था और गांधी-युग के

राष्ट्रीय-नैतिक आदर्शों ने उसमें प्राणों की ऊर्जा तथा चरित्र की गरिमा भर दी थी। उनका यह सहज और समृद्ध मानव-चरित्र ही उनकी सर्वप्रियता का रहस्य है।'

डाक्टर रामविलास शर्मा

हिन्दी के मूर्धन्य आलोचक डा. रामविलास शर्मा अच्छे रेखाचित्रकार भी हैं। लगभग तीस वर्ष पूर्व अप्रैल १९३९ के 'चाँद' में पं. सालिगराम 'परसों के मिसिर' पर एक जीवन-चित्र प्रकाशित हुआ। हंस के रेखाचित्रांक में सन् १९३९ में भी आपका एक रेखाचित्र 'निराला' पर प्रकाशित हुआ। हंस में ही बाद में नवम्बर ४३ के अंक में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के मंत्री पूरनचंद जोशी पर एक पठनीय रेखाचित्र प्रकाशित हुआ था। इस शब्द-चित्र का एक अंश इस प्रकार है,

> 'कद ठिगना, सिर भारी, रंग गोरा, आंखों पर चश्मा---वह हिन्दी कवि सुमित्रानन्दन के प्रान्त के निवासी हैं। तेज़ बोलने में दक्षिण निवासियों का कान काटते हैं, यद्यपि थोड़ा हकलाते हैं जिससे सुननेवालों को परेशानी और बढ़ जाती है।'

डा. शर्मा के चौरासी निबंधों, लेखों, आलोचनाओं, रेखाचित्रों एवं संस्मरणों का एक संग्रह 'विराम चिह्न' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है। इस संकलन के अधिकांश निबंध व्यंग्यप्रधान रोचक शैली में लिखे हुए हैं। इस संग्रह में आपके तीन रेखाचित्र भी हैं---

१. निराला
२. गुलाबराय
३. हृषीकेश चतुर्वेदी

इनके अतिरिक्त 'लक्ष्मीवाहन का दिव्य रूप', 'दिवाली-लक्ष्मीपूजा', 'नामकरण', 'छोटी बहू', 'अतिथि' आदि भी उल्लेखनीय निबंध हैं।

'निराला : एक शब्द-चित्र' शीर्षक १९३९ में लिखित रेखाचित्र का प्रारम्भ इस प्रकार होता है,

> 'निराला' को चित्रित करने के लिए 'फ्रेस्को' चाहिये, स्केच में उसकी विचित्रता, अचित्र ही रहेगी। बहुत मोटी आउट लाइन भर यहां दी जा रही है।
>
> वोटिंग के लिए जाते हुए गांवों में ठहरने पर पंत जी को कुछ देहाती टाइप्स देखने को मिले और तब वह समझे कि 'निराला' में

ठेठ किसानपन था। थोड़ा-सा और सूक्ष्म विवेचन करने पर मालूम हो जायगा कि 'निराला' का किसान बैसवाड़े का है, अवध के किसी अन्य भाग का नहीं।'

यह कसरती और उद्धत व्यक्तित्व उसके साहित्य की खास चीज है

मेरा अन्तर वज्रकठोर
देना जी भर सक झकझोर

'विधाता को चैलेंज देकर उसने बहुत पहले लिखा था। उसकी कविताओं में जो अद्भुत पुरुषार्थ व्यक्त है, जो विद्रोही की विजय-कामना की भावना वर्तमान है वह बैसवाड़े की भूमि की श्रेष्ठ देन है। सड़कों पर मैलेकुचैले कपड़े पहने, तहमद में स्याही का भारी धब्बा लगा हुआ, फटे चप्पल या नंगे पैर बड़े बाल रखाये उसे लापरवाही से अमीनाबाद में चलते देखा है।...सफेद कपड़ों में लकदक, हम फुलेल से सजकर किसी सभा में जाना भी उसे प्रिय है या कुछ दिन पहले था। उसके ओठों की रेखाओं में एक ऐसी स्त्रैण कोमलता है जो उसके शेष व्यक्तित्व के साथ साम्य नहीं खाती।'

'कलाकार : बाबू गुलाबराय' शीर्षक रेखाचित्र इस प्रकार प्रारम्भ करते हैं—

'बेशक, बाबू गुलाबराय कलाकार भी हैं। चित्रकार नहीं, शिल्पकार नहीं, कवि और गायक भी नहीं, आलोचक हैं, संपादक हैं, संकलनकर्ता हैं और इन सब कामों में कला का समावेश होता है। बाबू गुलाबराय के इन सब रूपों में चतुर कलाकार की झलक कहीं न कहीं दिखा दी है।

बाबू गुलाबराय अपने जीवन में कलाकार हैं। उनके हर काम में अदा है, कोट पहनने और टोपी देने से लेकर मकान बनवाने और भैंस पालने तक उनके हर काम में बांकपन है।

बाबू गुलाबराय आगरे के तमाम साहित्यकारों के बाबू जी हैं। नौजवानों की तो बात छोड़िए, बुजुर्गों तक को उन्हें बाबू जी कहते आप सुन सकते हैं। वह दार्शनिक और रसिक दोनों हैं यद्यपि रसों में वह हास्य रस को ही प्रधानता देते हैं। कभी-कभी सड़क पर बात करते-करते जब वह अचानक गायब हो जाते हैं और उनसे विदा लेने

का आकांक्षी घूमकर देखता है कि बाबूजी अनासक्त योगी की तरह वापस चले जा रहे हैं तब यह कहना कठिन हो जाता है कि उन्हें दर्शन से अधिक प्रेम है या हास्य रस से ।'

डाक्टर साहब जिन दो व्यक्तियों के निकटतम रहे हैं उनके सजीव रेखाचित्र आपने प्रस्तुत किये हैं ।

विष्णु प्रभाकर

श्री विष्णु प्रभाकर ने हिन्दी कहानी-साहित्य में अपना स्थान बना लिया है। कहानी के साथ-साथ आप बहुत पहले से रेखाचित्र भी लिख रहे हैं। हंस के रेखाचित्रांक (१९३९ ई.) में आपने प्रसिद्ध कहानीकार एवं विचारक श्री जैनेन्द्र कुमार पर एक रेखाचित्र लिखा था जो जैनेन्द्र जी के बाह्य तथा आन्तरिक व्यक्तित्व को स्पष्ट करता है। जैनेन्द्र जी के चित्र के कुछ अंश यहाँ उद्धृत हैं,

'जनेन्द्र जी अहंकारी आदमी बिलकुल नहीं हैं । केवल दार्शनिकता के कारण जो अलगाव उनमें आ गया है वही अहंकार-सा जान पड़ता है। पास जाकर देखें तो माथे की उठी हुई लाइनों के पीछे सरलता भरी पड़ी है । इतनी सरलता कि अचरज होता है । पर अपनी सरलता के प्रति जैनेन्द्र जागरूक हैं। इस कारण उसमें पूर्ण निरभिमानता नहीं आ पाई है, यानी जैनेन्द्र की सरलता सँवारी हुई है, अटपटी नहीं । खद्दरधारी वह व्यक्ति संयम और तप की परीक्षा में जान बूझकर आ बैठा है और अभी तक पास नहीं हो पाया है। पर पास होने के लिए वह जी-जान से प्रयत्नशील है।'

'इस व्यक्ति में अद्भुत विरोधी भावनाओं का मेल है। यह मानते हुए कि जो कुछ हो रहा है ईश्वर करता है, वह इस होनेवाले हर एक काम का विश्लेषण करना चाहता है ताकि जानकर उसे अपने दार्शनिक मूड में फ़िट कर ले।···दार्शनिक होकर भी जैनेन्द्र में दार्शनिक-सी अपने प्रति कम्पलीट उदासीनता नहीं है ।···जैनेन्द्र व्यवहार में खोखले हैं। उनकी दार्शनिक अकर्मण्यता और भवितव्यता उन्हें चारों ओर से बाँधे है। घर से बाहर निकलकर बाजार में वे उलझन में फँस जाते हैं और शंका पैदा हो जाती है। जैनेन्द्र में श्रद्धा और तर्क दोनों हैं, इसी कारण उनके दर्शन में तार्किक का क्रम नहीं है, उलझन

है। कहानी कहना इस व्यक्ति का उद्देश्य नहीं है, वह तो साधन-मात्र है। मूल में तो वह व्यक्ति मानव-जीवन की गुत्थियों को ही सुलझाना चाहता है।

एक साधारण मानव, देवता से कम, पशु से ऊपर। दिल आशा और आकांक्षाओं से पूर्ण, पर ये सब आशाएँ और आकांक्षाएँ दुनिया से मुंह मोड़कर ऊपर को उठानेवाली। यही कारण है कि जैनेन्द्र साधारणता से अलग हैं। वे चाहते हैं कि मे ी कलम का जोर वाणी में प्रकट हो और दुनिया मुझे माने।'

मैंने इस अद्वितीय रेखाचित्र से कुछ अंश जैनेन्द्र जी के दार्शनिक व्यक्तित्व को स्पष्ट करने के लिए दिये हैं। मैं समझता हूँ आज से ३० वर्ष पूर्व जैनेन्द्र जी को जितना विष्णु प्रभाकर जी ने समझा और अपनी कुशल लेखनी के माध्यम से शब्द-चित्र उपस्थित किया है उतना अभी तक जैनेन्द्र जी पर किसी दूसरे व्यक्ति ने नहीं। गार्डिनर का ५० वर्ष पूर्व चर्चिल पर लिखा रेखाचित्र आज भी उतना ही नया है। लेखक क्रान्तिदृष्टि रखता है।

विष्णु जी का ही जैनेन्द्र जी पर एक और स्केच लहर के जुलाई ४७ के अंक में प्रकाशित हुआ और उसमें उनके बाह्य व्यक्तित्व की एक झलक देखिए,

'इकहरा बदन, मझोला कद, प्रशस्त ललाट और प्रमुख नासिका, बातें करने पर अन्तर में लय हो जाने पर उठती हुई आँखें, और तदनुसार कुछ-कुछ अकड़ी हुई ग्रीवा।'

ये दोनों रेखाचित्र एक दूसरे के पूरक हैं।

मधुकर के रेखाचित्रांक (दिस. १९४६) में भी विष्णु जी का मार्के का एक रेखाचित्र 'सियारामशरण : मेरी नजर में' शीर्षक से प्रकाशित हुआ—

दृश्य—दिस. १९३७ :

'ये सियारामशरण···सियारामशरण। यह (नहीं) यह तो उस चित्र की छाया भी नहीं। सिर पर रूखे उलझे बालों का जंगल।' मोटे खद्दर का कुरता और घुटनों तक की धोती और शरीर जैसे जीवन-विहीन, किसी निर्विकार भार से दबा हुआ।'

दृश्य---दिल्ली साहित्य परिषद् :

> 'ऐसे हैं सियारामशरण जी, जिन्हें काल पुरुष ने पीड़ा के पालने में डालकर खूब झुलाया है। वे शरीर से जर्जरित और आत्मा से व्यथित हैं, पर फिर भी क्रोध से अछूते, अखण्ड विद्रोही पर दाहकता से रिक्त। रुक-रुक कर निकलने वाली साँस के कारण उनकी वाणी गम्भीर है। वे देखने में जरूरत से ज्यादा ग्रामीण मालूम होते हैं पर उनका हृदय सौजन्य और सौहार्द से परिपूर्ण है। नेत्र पीले पड़ गये हैं, पर वे अनुभूति और अनुराग से छलके पड़ते हैं।'

तीसरा एक महत्त्वपूर्ण पर लघु रेखाचित्र राहुल जी पर 'महापण्डित राहुल' शीर्षक से हिन्दुस्तान (कृष्ण ११, सं. २०२०) में प्रकाशित हुआ,

> 'वह तभी रूस से लौटे थे और भिक्षु के वस्त्र उतार कर कुर्ता धोती पहन लिया था, स्थूलता की ओर झुकता हुआ उनका विशाल शरीर, प्रखर ओजस्वी वाणी, उस विशाल सभा में जैसे सन्नाटा छा गया, हाँ जैसे ज्वालामुखी भभक उठा हो।···विरोधियों पर वे जितनी उग्रता से प्रहार करते थे उतने ही उत्कट प्रेम से उनका आतिथ्य भी करते थे। वह जितने जटिल थे उतने ही सरल थे। हिमालय के उत्तुंग शिखर पर रहकर भी चरण धूलि के लिए लालायित रहते थे।'

आपके पुराने रेखाचित्रों का संग्रह वाराणसी से 'जाने-अनजाने' शीर्षक से प्रकाशित हो चुका है, दूसरा अभी हाल में सस्ता साहित्य मंडल से 'कुछ शब्द : कुछ रेखाएँ' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है, जिसमें, विविध शैलियों में लिखे रेखाचित्र हैं जिनमें से अधिकांश पूर्ववत् पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। मामा वरेरकर का एक चित्र द्रष्टव्य है,

> 'श्वेत वर्ण, प्रशस्त ललाट, दृढ़ चिबुक, पैनी दृष्टि, वात्सल्यमण्डित मुख, खादी की पोशाक और हाथ में लकड़ी उनकी दृढ़ता और स्नेह के प्रतीक थे। वह एकान्त प्रिय नहीं थे, मित्र-जाति के थे। वह निस्संग नहीं थे, प्रत्युत दूसरों के सुख-दुख में रस लेते थे। वह आक्रमण करते थे और क्षमा भी करते थे। वह घर के उस बुजुर्ग की तरह थे जो भरे-पूरे परिवार में बैठकर शासन करता है और स्नेह की वर्षा भी। वह जैसे सदा स्मरण कराते रहते थे 'साधना की शक्ति असीम है और कि जो अपने पर हंस सकता है वही जीवन का अर्थ समझता है।'

हिन्दी के मूक और कर्मठ सेवक स्व. श्री पुत्तूलाल वर्मा 'करुणेश' जी पर रेखाचित्र पहले ही हिन्दुस्तान के रविवासरीय परिशिष्ट, श्रावण २८, शक १८८४ के अंक में प्रकाशित हो चुका था। इस संग्रह की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें विष्णु जी ने स्वयं अपना रेखाचित्र भी प्रस्तुत किया है। शीर्षक है 'विष्णु प्रभाकर, अपनी निगाह में।'

लेखक ने भूमिका में स्पष्ट किया है कि 'रेखाचित्र का एक प्रयोजन और है और वह है अंतर्मन की झांकी प्रस्तुत करना। व्यक्ति की बाह्य क्रियाओं को स्थूल आंखें सहज ही देख सकती हैं लेकिन किसी के मन में क्या चल रहा है, यह देखने के लिए सूक्ष्म दृष्टि अपेक्षित है।' इस संग्रह में इस दृष्टि की ही प्रधानता है।

प्रस्तुत संग्रह में हैं तिरुपति चेट्टियार, किरणों का जादूगर, खान साहब शेख मुहम्मद जान, प्योत्र बारान्निकोव, फामा अनुमान राजधन, मामा वरेरकर, रंगून का वह लाजुक डाक्टर, एक नेत्रहीन की दृष्टि : एक चित्र, ऐसे थे प्रथम राष्ट्रपति जिनके नयनों में स्वर्ग है, महात्मा भगवानदीन, एक बर्मी : एक कम्बोज, महाप्राण निराला : एक संस्मरण, पंडित जी, थाईलैंड के शर्मा जी, आचार्य शिवपूजन सहाय, कोलम्बस और अगस्त्य के अंशावतार, बर्मा का एक भारतीय व्यापारी, करुणेश जी, सबके दद्दा, विष्णु प्रभाकर : अपनी निगाह में।

मानव मन के गहरे पारखी विष्णु जी कुशल कथाकार होने के नाते पात्रों के मन की गहरी बातें प्राप्त भी कर लेते हैं और सुन्दर शैली में प्रस्तुत भी कर देते हैं जो पाठकों के मन पर सीधा प्रभाव डालती हैं।

बारान्निकोव के चित्र का एक अंश,

> 'पुरुष में जब एक सीमा तक नारी के गुण आ जाते हैं तो वह पूर्ण हो जाता है। इस उक्ति को मैंने इस रूसी युवक में मूर्त देखा। गौर वर्ण, दीप्त नैन, मुख पर खेलती, सदा एक आत्मीयता से लबालब सहज मुस्कान और वैसा ही सुकोमल शरीर। बोलते हैं तो न है उसमें उग्रता, न है व्यर्थ का तीव्र व्यंग्य।'

इन रेखाचित्रों के विश्लेषण के आधार पर मैं निस्संकोच कह सकता हूं कि विष्णु जी के पास पात्रों को देखने के लिए स्थूल आँखें ही नहीं वरन् सूक्ष्म दृष्टि है जिससे उनकी लेखनी ने कुशल चित्रांकन किया है।

श्रीमती मल्लिक द्वारा सम्पादित 'अमिट रेखाएं' शीर्षक संकलन में विष्णु जी का रेखाचित्र 'टीपू सुलतान' संकलित है। इसका कुछ अंश इस प्रकार है—

> 'यह चित्र मैसूर के सुप्रसिद्ध सुलतान का नहीं वरन् ऐसे व्यक्ति

का है जो मुसलमान होकर भी हिन्दुओं का मित्र था तथा एक दिन कुछ धर्मान्ध युवकों ने उसे कुत्ते की तरह गोली मारकर कुएं में डाल दिया था।'

'उसका शरीर कुछ चौड़ा और कद मझोला था। टांगें कुछ पतली थीं और चलते समय तिरछे कोण बनाया करती थीं। उसकी आँखें बड़ी और माथा ऊँचा था। उसके मुख पर सदा एक विचित्र प्रकार की अल्हड़ता खेलती रहती थी और हँसी के कारण अक्सर उसे सीधा खड़ा रहना दूभर हो जाता था। उसे आगे-पीछे देखकर साथियों का अट्टहास और भी गहरा हो उठता था। वह कुरता और तहमद पहनता था तथा उसके सिर पर एक सस्ती मैली झरोखेदार तुर्की टोपी रहती थी। उसके पैर में शायद ही मैंने साबुत जूते देखे होंगे, अक्सर वह फटफटिया ही पहनता था। आजकल की चप्पलों का उन्हें पूर्व रूप कह सकते हैं। पुराने जूतों की एड़ी काटकर वे तैयार की जाती थीं।'

यात्रा के चित्र भी विष्णु जी की लेखनी से बने हैं। इस प्रकार के अनेक चित्र उनके 'हँसते निर्झर दहकती भट्टी' में संकलित हैं। इनमें जानकारी देने का प्रयत्न इतना नहीं है जितना अनुभूति का वह चित्र प्रस्तुत करने का है जो मेरे मन पर अंकित हो गया है। कलकत्ते का एक शब्द-चित्र इस प्रकार है—

'कैसा अनोखा नगर है। गोमुख की भागीरथी यहाँ हुगली बन गई है। उसकी छाती पर नावें मचलती हैं। माँझी उत्ताल स्वर में गीत गाते हैं। नाटक घरों में प्रतिदिन सागर बिफरता है। बड़े बाजार और बम्बई स्ट्रीट की गद्दियों पर बैठे उद्योगपति पैसा गढ़ते हैं। फुटपाथों पर शरीर बिकते हैं और जेबें कतरी जाती हैं। और यह विशाल देश (जिसे गलती से नगर कहा जाता है) उमड़ता रहता हैं, उमड़ता रहता है, जैसे ज्वालामुखी से लावा सबको बहा ले जाता है और उसकी गर्म-गर्म वाष्प आकाश में भर उठती है।'

केदारनाथ दर्शन, वैशाली के खण्डहर, ये मुस्कारते उद्यान उल्लेखनीय यात्रा-चित्र हैं।

भविष्य में विष्णुजी की लेखनी से हमें अभी बहुत आशाएँ हैं।

डा. प्रभाकर माचवे

'तार सप्तक' के कवि, 'परन्तु' एवं 'साँचा' शीर्षक लघु उपन्यासों के रचयिता,

'संगीनों का साया' के कहानीकार, 'खरगोश के सींग', 'सन्तुलन', 'तेल की पकोड़ियाँ' शीर्षक निबन्ध संग्रहों के लेखक, आलोचक तथा सम्पादक प्रभाकर माचवे कुशल रेखाचित्रकार भी हैं। साहित्य-क्षेत्र में विविध विधाओं के माध्यम से लिखते हुए भी आप पहले रेखाचित्रकार हैं क्योंकि आपका प्रथम लेख, मैं समझता हूँ, एक रेखाचित्र ही था जो सन् १९३३ में लिखा गया, जिसको माचवे जी ने 'हिन्दी-निबन्ध' पृष्ठ ८२ पर स्वीकार किया है।

डा. माचवे हिन्दी के इस प्रकार से वरिष्ठ रेखाचित्रकारों में से एक हैं। आपका पहला रेखाचित्र १९३३ ई. में दानिश शीर्षक से प्रकाशित हुआ था। इसका संशोधन भी एक दूसरे रेखाचित्रकार श्री रामवृक्ष बेनीपुरी द्वारा किया गया। माधुरी (१९३५ ई.) में नीत्शे पर आपका लेख प्रकाशित हुआ जिसमें रेखाचित्र के भी तत्त्व हैं।

इसके बाद आप हंस में नियमित रूप से लिखने लगे। हंस में ही आपने 'जैनेन्द्रकुमार' पर लिखा जो बाद में जीवनसुधा में पुनर्मुद्रित हुआ। हंस के रेखाचित्र-विशेषांक (१९३८ ई.) में अज्ञेय पर एक पठनीय शब्दचित्र 'अज्ञेय : जितने कि वे मुझे ज्ञेय हुए' शीर्षक से प्रकाशित हुआ जिसके कुछ अंश इस प्रकार हैं,

> '(वात्स्यायन और अज्ञेय) ऊपर जो दो नाम बताये वे एक ही आदमी के हैं--एक खासे मोटे ताजे, कुछ पंजाबी गठन के, सौम्य भव्य चेहरे के भले आदमी के ही ये दो नाम हैं जो सचमुच स्वभाव से 'आग्नेय' हैं और 'अज्ञेय' भी। '···शिल्प-चित्रकार, सिपाही-विद्रोही, कवि-कहानीकार, सम्पादक-आलोचक, व्याख्याता-राजनीतिक कार्यकर्ता, प्रकृति और जीवन का सप्राण छाया-चित्रकार, 'अज्ञेय' साहित्येतिहास-समीक्षक भी है।'

डा. माचवे ने 'अज्ञेय' के अंग्रेजी स्पेलिंग का ही दूसरा पठनीय रूप 'आग्नेय' निकाल कर जो चमत्कार उत्पन्न कर दिया है वह प्रशंसनीय है।

सन् १९३९ के अक्टूबर में ही वीणा में 'शुक्ल जी' का रेखाचित्र प्रकाशित हुआ, शुक्ल जी का बाह्य रूप इस प्रकार देखा जा सकता है,

> 'भूरी अधकटी मूंछों के छप्पर के नीचे एक स्थिर गम्भीर मुस्कराहट, मोटे चश्मे के ऐनक और घनी भौंहों के नीचे गुरुत्व से भरी-सी आंखें, गदबदा बदन, ढीला ढाला अंग्रेजी लिबास और सादा रहन-सहन, सिर पर रुपहले केशों का विरल अधिराज्य।'
>
> 'सन्त बाव की आँखों की विद्वत्ताजन्य चमक, वाल्टर पेटर जैसी मूंछों का मोटापन, क्रोचे का गदबदा बदन शुक्लजी को मिला है।'

इसी समय आरती (१९४० ई.) में अहिन्दी भाषाभाषियों में सर्वाधिक प्रिय मैथिलीशरण गुप्त जी पर 'कलम और कूँची के साथ' प्रकाशित हुआ । संगम के विशेषांकों में निराला जी तथा एक भारतीय आतमा (माखनलाल जी चतुर्वेदी) पर शब्द-चित्र प्रकाशित हुए । यही बाद में दूसरे स्थानों पर भी प्रकाशित हुए । 'भारतीय आत्मा' पर लिखा शब्द-चित्र 'व्यक्ति और वाङमय' में संकलित किया गया । राहुल जी तथा मुक्तिबोध पर भी धर्मयुग में संस्मरणात्मक लेख प्रकाशित हुए जिनमें रेखाचित्र-कला का भी अंकन है । मुक्तिबोध पर साप्ताहिक हिन्दुस्तान के ११ अक्टूबर, १९६४ के अंक में प्रकाशित लेख भी उल्लेखनीय है जिसके कुछ अंश इस प्रकार हैं—

> 'प्रसन्न, हँसमुख, मुखर, लम्बे-लम्बे कदम भरने वाले, आंखों में समता-स्वतन्त्रता के सपने सँजोने वाले कवि मुक्तिबोध से—इधर की स्थिति बहुत भिन्न थी ।'

उनके घर का करुण चित्र——

> 'राजनांदगांव के उस खंडहरनुमा भुतहे मकान में, जहाँ उल्लू और सांप तथा चिमगादड़ आते, तीनों ओर तालाब था, मुक्तिबोध एक के बाद एक मुसीबत के शिकार बने । पुत्र पांच साल से बीमार था—दमे से । पिता को एकजीमा था । वह स्वयं पहले दद्रु से, बाद में मिर्गी से, पायरिया से, आंखों के किसी विकार से, अंत में पक्षाघात से बीमार हो गए । लोग कहते हैं कि वह जीवन की कटुता का विष पी गए, मेरे मत से वह पचा नहीं सके । उनके शरीर को व्याधि ने आ दबोचा । मानसिक तनाव, निरंतर चिंता, घोर अवहेलना के वह शिकार बने ।······पर पता नहीं किस धातु और जीवट के वह बने थे कि रोग से भी बराबर लड़ते रहे । शरीर पर सौ घाव जख्मों के होते हुए बराबर जूझते रहे । अजब हिम्मत और साहस के अदम्य पुंज ।'

इतना करुण, साथ ही जीवन्त चित्र माचवे की लेखनी ही खींच सकती थी।

राष्ट्रनायक नेहरू जी पर 'नई दुनिया' के दीपावली अंक में लेख प्रकाशित हुआ जो बाद में 'नेहरू : व्यक्तित्व और विचार' ग्रन्थ में विभिन्न झांकियां शीर्षक से प्रकाशित हुआ, इसके कुछ अंश इस प्रकार हैं,

१९३१

> 'एक तमतमाता हुआ ताम्रवर्णी चेहरा, खिड़की से पूरे हाथ

और कंधे बाहर निकालकर, दोनों हाथों से भीड़ को शांत करता हुआ, गुस्सैल स्वर में डांटता हुआ ।'

१६३६-३७

'वह वैज्ञानिक, संतुलित, विदेशों में जनतन्त्र सीखा हुआ व्यक्तित्व भीड़ से इतना आकर्षित और फिर भी उससे सदा दूर, एकाकी, आत्म केन्द्रित । वह आये, दो मिनट भी नहीं ठहरे, कुछ हजार रुपये विद्यार्थियों ने इकट्ठा किये थे, लेकर चले गये । जैसे कौंधती हुई बिजली ने क्षण-भर को दर्शन दिये ।...दूर से वह अग्निशिखा, वह बिजली, अब एक स्थिर, शोध प्रकाश के झिलमिलाते प्रभात की तरह दिखाई दी ।'

१६६४

'जो ज्योतिशिखा थी, चैतन्य की विद्युल्लता थी, वह अब 'विभूति' बन गई । करोड़ों आंखों में आंसू हैं और वह उस विदेह को लौटा नहीं सकते ।'

यशपाल अभिनन्दनांक में 'यशपाल' पर तथा कौमुदी के 'वर्मा अभिनन्दनांक' में डा. रामकुमार वर्मा पर लेख भी पठनीय हैं । 'निष्ठा' के विशेषांक में रांगेय राघव पर भी आपने उनके व्यक्तित्व का रेखांकन किया है । वी. राजेन्द्र ऋषि पर पंजावी भाषाविभाग के तत्वावधान में आपने लिखा । युवक के विशेषांक में गोपालसिंह नेपाली पर आपका शब्द-चित्र प्रकाशित हुआ ।

साहित्यकारों से इतर देश-विदेश के कलाकारों–शिल्पकार तथा चित्रकार–पर भी आपने लिखा है । पाँच प्रमुख चित्रकारों पर वीणा के कला अंक में, विदेशी शिल्पकार डेविड पर 'धर्मयुग' में, नन्दलाल वसु पर बहुत पहले विशाल भारत में लिखा था ।

'काका' और 'मामा' पर भी आपके अद्वितीय रेखाचित्र प्रकाशित हुए हैं । 'काका' (काका कालेलकर) पर तो सस्ता साहित्य मंडल से प्रकाशित 'संस्कृति के परिव्राजक' में संकलित हुआ रेखाचित्र काका के सहज, सौम्य, सहृदय, सुविचारी, संतुलित व्यक्तित्व का उद्घाटन करता है । 'मेधावी स्वतन्त्र विचारक' शीर्षक से यह रेखाचित्र मराठी तथा गुजराती में भी प्रकाशित हो चुका है ।

'मामा' पर साप्ताहिक हिन्दुस्तान (२ अक्टूबर, १६६४) में प्रकाशित रेखाचित्र के कुछ अंश इस प्रकार हैं—

'उनका व्यक्तित्व बहुत सरल था। मैंने उन्हें विगत तीस वर्षों में उसी एक वेश में देखा--सादा खादी का लम्बा कुर्ता, धोती या पाजामा, खादी की टोपी और एक बेंत। पहले मामा साहब बीड़ी पीते थे, वह एक बार उन्होंने मनोनिग्रह करके छोड़ दी। उन्हें किसी चीज का व्यसन नहीं था। पकी उम्र में भी वह बहुत अधिक उत्साही जीवन व्यतीत करते थे। कहीं नाटक देखने जा रहे हैं, कहीं किसी सलाहकार समिति में हैं तो यात्राएं कर रहे हैं आदि। उनका संभाषण सदा हास्य-परिहास और मधुर-व्यंग्य से भरा रहता था।'

आशा है भविष्य में डा. माचवे इस विधा के माध्यम से और भी अनेक प्रौढ़ कृतियाँ प्रस्तुत करेंगे।

उपेन्द्रनाथ अश्क

श्री उपेन्द्र नाथ 'अश्क' हिन्दी-उर्दू साहित्य के लब्ध-प्रतिष्ठ साहित्यकारों में से हैं जिन्होंने कवि, नाटककार, उपन्यासकार, कथाकार, निबन्धकार सभी रूपों में साहित्य के भंडार को भरा है। नवीनतम विधाओं में भी आप सिद्धहस्त लेखक हैं। आप एक कुशल रेखाचित्रकार तथा संस्मरण-लेखक भी हैं। आपने रिपोर्ताज भी लिखे हैं। आपके संस्मरण–साहित्य में भी यत्र-तत्र अनेक रेखाचित्र बिखरे हुए हैं। 'ज्यादा अपनी कम पराई' आपके आत्मपरक संस्मरणों का संकलन है जिसमें पत्र, डायरी, संस्मरण सभी शैलियों का मिश्रण है। इसमें उनका जीवन भी प्रतिबिम्बित होता है। डायरी के पृष्ठों में जीवन के नोट्स हैं।

इस दिशा में उनकी दूसरी पुस्तक 'मंटो मेरा दुश्मन' है। संस्मरणात्मक शैली में लिखी गई इस पुस्तक में स्थान-स्थान पर कुछ अच्छे रेखाचित्र भी हैं। इस पुस्तक में ही मंटो पर लिखा कृष्ण चन्दर का रेखाचित्र भी संकलित है। कुछ चित्रों के उद्धरण द्रष्टव्य हैं,

(पृष्ठ ५२ से)

'वह मुझे अच्छा लगा था–गोरा रंग, पतला-छरहरा शरीर, चौड़ा माथा, सुतवाँ नाक, बड़ी-बड़ी आकर्षक आँखें और ओठों पर व्यंग्य-भरी मुस्कान–मंटो की यही पहली झाँकी मेरे मानस-पट पर अब तक अंकित है।'

(पृष्ठ ६० से)

'आखिर अभिनेता महोदय पधारे–'लम्बूतरा-सा मुंह, जैसे किसी ने दोनों जबड़ों को शिकंजे में कसकर चपटा कर दिया हो।'

'रेखाएँ और चित्र' उनका ऐसा संग्रह है जिसमें अश्क के निबन्ध हैं, साथ ही उनके लिखे हुए 'स्केच' भी हैं। वैसे इसमें लेख, रिपोर्ताज, आलोचना सभी कुछ है पर कुछ विशिष्ट व्यक्तियों पर लिखे गये रेखाचित्र भी हैं, जैसे

१. यशपाल

२. होमवतीजी

यद्यपि पुस्तक के प्रकाशकीय व्यक्तव्य में 'रेखाचित्र' संज्ञा है पर विषय-सूची में 'संस्मरण' शीर्षक के अन्तर्गत रखे हैं। वस्तुतः ये दोनों ही लेख संस्मरणात्मक शैली में लिखे हुए रेखाचित्र ही हैं। 'यशपाल' (१९५० ई. में लिखा) रेखाचित्र में यत्र-तत्र बच्चनजी पर काफी सामग्री है। प्रथम दर्शन यशपालजी का लेखक को शिमला में होता है जिसका चित्र अश्क जी ने इस प्रकार खींचा है,

'मैंने देखा बढ़िया सूट पहने हुए मँझले कद और साँवले रंग का एक युवक सफ़ाई से कटे-छँटे बाल, चौड़े खुले-खुले अंग, मोटे ओठ, घनी भँवें और पिचके हुए कल्ले। किसी क्रान्तिकारी के बदले मुझे यशपाल किसी बिगड़े हुए ईसाई युवक-से लगे।'

अलमोड़ा में यशपाल (१९४९ ई.)

'दस-बारह वर्षों में यशपाल का बड़प्पन कुछ और बढ़ गया था। उनके बाल पक गये थे। यानी काली भँवें श्वेत हो गयी थीं और चेहरे पर समय ने रेखाएँ अंकित कर दी थीं। दाँत उन दिनों वे निकलवा रहे थे इसलिए कल्ले उनके धँसे हुए थे और जबड़े की हड्डियाँ उभरी हुई थीं। लेरिंजाडेटिस अथवा उसी प्रकार का कोई गले का रोग उन्हें था। स्वर बड़ा भारी था, जो उनके व्यक्तित्व में बड़प्पन को और भी बढ़ाता था। वेश-भूषा पूर्ववत् साहबी थी।'

इस रेखाचित्र में स्थान-स्थान पर तुलनात्मक शैली भी अपनायी गई है,

क्रान्तिकारी अज्ञेय से

(पृष्ठ १४७ पर)

'मैंने क्रान्तिकारी अज्ञेय का जेल से छूटने के बाद लिया चित्र

देखा था। हृष्ट-पुष्ट देह, लम्बे-लम्बे घुंघराले बाल, गहरी अनुभूति-प्रवण आँखें, नंगे शरीर पर धोती और चादर। यही चित्र 'भग्नदूत' में छपा भी था। उसी के अनुरूप मैंने यशपाल की कल्पना की थी। हृष्ट-पुष्ट देह की बात न सही, लेकिन लम्बे बालों और कुछ बेपरवाही के भाव की आशा तो थी ही। मैंने देखा (उपर्युक्त चित्र से) किसी क्रान्तिकारी के बदले यशपाल किसी बिगड़े हुए ईसाई युवक-से लगे।'

(पृष्ठ १६१ से)

'यशपाल को सैर-सपाटे का बेहद शौक है। अज्ञेय की भांति वे भी काफ़ी पैदल घूमे हैं। उनकी कई कहानियाँ और लेख इस बात के साक्षी हैं। अलमोड़ा में आते ही उन्होंने सारे बाजार अच्छी तरह देख डाले।'

कथाकार जैनेन्द्र से

(पृष्ठ १६२ पर)

'यशपाल प्रायः दो एक बैठकों में ही चीज़ लिख लेते हैं, पर वे लिखे को वेद-वाक्य नहीं समझते। मेरी तरह बार-बार काँट-छाँट भी नहीं करते, पर जैनेन्द्र की तरह उसे अन्तिम भी नहीं समझते। दूसरी बार वे लिखी चीज़ को देखते हैं तो उसे काँट-छाँट भी देते हैं।'

भाभी तथा यशपाल

'बहुत सी बातें भाभी (रानी पाल) और यशपाल में मिलती हैं, लेकिन शायद भाभी में अहं, गाम्भीर्य और काम करने की शक्ति यशपाल की अपेक्षा अधिक है। मैंने सुबह उठते ही उन्हें काम में जुटे पाया और उसी निष्ठा से दिन भर काम करते रह कर गयी रात तक अनथक उसी में निरत देखा। इस पर भी मैंने उन्हें झुंझलाते, चिड़चिड़ाते या खीझते नहीं पाया। नदी जैसे अनायास कंकर पत्थरों और गढ़ों के ऊपर बहती चली जाती है, मैंने उन्हें दैनिक कार्यक्रम की ऊबड़-खाबड़ता पर धैर्य से बहते देखा है।'

यशपाल के अहं पर विस्तृत विवेचन के उपरान्त अश्क जी लिखते हैं,

'सो अहं तो यशपाल में है। लेकिन पहली बात तो यह है कि जैनेन्द्र से लेकर सत्येन्द्र शरत तक अहं हिन्दी के हर लेखक में है।'

यशपाल जी के जीवन-दर्शन पर एक अच्छा चित्र खींचा गया है,

'यशपाल जीवन को जीने में विश्वास रखते हैं। खाने-पीने और जीवन को ढ़ंग से जीने में उनका विश्वास है। बढ़िया सूट-बूट के साथ वे नब्बे-सौ का शू पहनना चाहते हैं, रेफ्रिजिएटर में रखे पेय का आनन्द उठाना चाहते हैं और अधिक से अधिक खर्च करना चाहते हैं। इसका एक कारण तो वह गरीबी और अभाव हो सकता है जिसमें उनका बचपन और जवानी का अधिकांश समय बीता और दूसरा नास्तिकता तथा आवागमन के दर्शन में उनका अविश्वास। वे इसी जीवन में विश्वास रखते हैं और दूसरे जीवन की चिन्ता में इसे बिगाड़ने के बदले इसे ही बनाना चाहते हैं। यह बात कि कौसानी में जिस जगह बैठकर महात्मा गाँधी को अनासक्तियोग लिखने का विचार आया वहीं यशपाल को आसक्तियोग लिखने की सूझी, जहाँ उनके प्रचंड अहं की ओर संकेत करती है, वहाँ उस अंतर की ओर भी इंगित करती है जो महात्मा गाँधी और यशपाल की धारणाओं में है।'

दूसरा रेखाचित्र होमवती जी पर है। इसमें लेखक ने होमवती जी के बाह्य तथा आन्तरिक व्यक्तित्व का स्पष्टीकरण करते हुए अपनी बातें भी पर्याप्त मात्रा में लिख दी हैं। होमवती जी में कुछ बड़ी बहिन के स्नेह का रंग उन्हें मिला। सरल-हृदया और स्नेहमयी होमवती जी का रेखांकन इस प्रकार किया गया है,

'भरा-पुरा शरीर, गेहुँआ रंग, उन्नत ललाट, मुस्कराती आकृति और सरल स्वभाव! मेरठ से लौटा तो उनकी वह सरलता और घरेलूपन मेरे मन पर अंकित रहा। इसके बाद मैंने उन्हें फिर कभी उतना स्वस्थ और उस तरह ठहाका मारकर हँसते नहीं देखा।

किस प्रकार बिगड़ते हुए स्वास्थ्य के कारण उनकी हँसी परिवर्तित होती चली गई, देहली में एक बार कवि सम्मेलन के उन बेचारे संयोजकों की बेबसी पर हम लोग खूब हंसते रहे। होमवती जी के ठहाके हमारे ठहाकों से कम बुलन्द न थे।'

अश्क जी नक़ल उतारने की कला में भी प्रवीण हैं। एक बार उनकी नक़लों को सुनकर अज्ञेय जी हँसे या मौन रूप से अपने उत्तान-भ्रू (हाई ब्रो का अक्षरशः अनुवाद) होने का सबूत देते रहे यह मैंने नहीं देखा, पर होमवती जी, भाभी तथा चन्द्र जी आदि खूब हँसे।

फिर कुछ वर्ष बाद जब उनकी देह क्षीण हो गयी थी और हृदयरोग से पीड़ित थीं तब उन्हीं पुरानी नकलों की बात चली तो—

> 'वे हँसीं ' ' 'वह हँसी जिसमें ध्वनि न थी । ओठों का बायां कोना तनिक खुला, चेहरे की कुछ रेखाएँ मिटीं और बस ।'

प्रो. परशुराम ने 'सप्तसिन्धु' के अश्क विशेषांक में सत्य ही लिखा है,

> 'चतुर चितेरे का चातुर्य इसी बात पर आधारित है कि उस द्वारा चित्रित चित्र की एक-एक रेखा किसी भाव विशेष की द्योतक हो । दर्शक उस चित्र में से फूटती हुई भावनाओं को इस प्रकार देखें मानो वे रेखावलियाँ मुंह बोलती तस्वीरें हों ।'

श्री परशुराम जी ने ये चित्र उनके एकांकियों में देखे हैं । वैसे इससे सुन्दर चित्र उनकी कहानियों तथा कविताओं में भी मिल सकते हैं पर उनके द्वारा लिखे गये रेखाचित्रों में तो यह उद्धरण शब्दशः सत्य तथा खरा उतरता है ।

श्रीमती अश्क भी अच्छे रेखाचित्र लिख लेती हैं । आपका लिखा 'नरोत्तम बाबू' शीर्षक रेखाचित्र (स्केच) जिसमें काम भी अच्छा करें और तनख्वाह कम लें इस प्रकार के नौकरों को बदलते हुए व्यक्ति नरोत्तम बाबू का चित्र है। यह रेखाचित्र प्रयाग से प्रकाशित 'संकेत' में संकलित है ।

अश्क जी के जितने चित्र श्रीमती कौशल्या अश्क ने देखे हैं और खींचने का प्रयत्न किया है उतने किसी दूसरे ने नहीं । उनके चित्रों में कुछ देखिए,

> 'प्रकटतः उनमें अब भी बचपन है--चंचलता, शरारत, चुहलबाजी, छेड़छाड़ करना, दूसरों को बनाकर मजा लेना, कि लड़ाई-झगड़ा करना, बच्चों की तरह बड़ हांकना, ज़िद करना, रूठना और मनाना । मैं उनसे कहती हूँ कि आप बड़े (बुजुर्ग) हो गये हैं तो उत्तर में शरारत से ठहाका मारकर हंस देते हैं ।'

चंचलता का एक चित्र—

> 'खाने की मेज़ पर बैठकर ये प्रतीक्षा नहीं कर सकते । मेज पर खाना रखने और परोसने में थोड़ा समय लग ही जाता है। ये चमचे उठाकर बजाने लगते हैं । मैं चमचे इनके हाथ से ले लेती हूं । ये दूसरा चमचा लेकर प्लेट पर बजाने लगते हैं। मैं एक चमचे से सब्ज़ी परोस रही हूं ये दूसरा चमचा कटोरे में डाल देंगे ।'

अन्त में पत्नी के चित्र से ही अश्क की बाह्य तथा आन्तरिक झांकी ले सकते हैं—

> 'अपने लिखने की मेज़ पर ये लेखक उपेन्द्रनाथ अश्क हैं, जीवन

में आम इंसान। ऐसा इंसान जो अपनी सरल निश्छलता, उदारता, कर्तव्यपरायणता, चिन्ता, स्नेह-वेदना, सहानुभूति, लगन और निष्ठा-गंभीरता को अपने ठहाकों, हँसी-मज़ाक, शरारत, छेड़छाड़, बेतकल्लुफ़ी और रूखेपन के बेतुके आवरण में छिपाता फिरता है कि कहीं हवा न लग जाय, फिर चाहे कितनी सलवटें हों और कितने उभरे-दबे कौने, उसे परवाह नहीं।'

जगदीशचन्द्र माथुर

हिन्दी जगत् श्री माथुर को नाटककार के रूप में जानता है, पर नाटक और रंगमंच के अतिरिक्त 'रेखाचित्र' लिखने की कला में आप कितने निष्णात हैं, इसका ज्ञान आपकी नवप्रकाशित पुस्तक 'दस तसवीरें' पढ़कर चल सकता है। पुस्तक के प्राक्कथन में लेखक ने स्वीकार किया है कि मेरे साहित्यिक जीवन का श्रीगणेश वस्तुतः जीवन-चरित्रों के लेखन से हुआ। १४ वर्ष की आयु में मैंने अपनी पहली पुस्तक लिखी 'हेनरी फोर्ड का जीवन चरित।' ··· 'झांसी की रानी लक्ष्मीबाई और फ्रान्स की जोन आफ आर्क के ऊपर चरित-निबन्ध लिखने के बाद, हेनरी फोर्ड का जीवन-चरित्र एक पूरी पुस्तिका के रूप में लिख डाला।'

इस पुस्तक की भूमिका में ही आपने इस विधा की संज्ञा 'चरित लेख' से दी है। 'संस्मरण' आपको अनुपयुक्त लगा। उन्होंने स्वीकार किया है, 'आलाप' मैंने संस्मरणों की तरह ही उठाए हैं किन्तु उसके बाद रागिनी के विस्तार, तान, मुरकियाँ, बोलतान इन सब अलंकारों और गहराइयों के लिए संस्मरण का वाहन अनुपयुक्त पाया मैंने। चरितलेख ललित और गंभीर साहित्य का अंग है, संस्मरण उत्कृष्ट पत्रकारिता की एक वैयक्तिक और मनोरंजन विधा है।'

आपके इन लेखों की प्रमुख विशेषता है कक्षा के उद्‌घाटन के साथ-साथ नायक की अंतर्छवि का विश्लेषण। विश्लेषण, मात्र वर्णन नहीं। ···टिप्पणी, सिद्धान्तविचार, गहन विश्लेषण—ये ही कला की बारीकियां, जिनमें 'प्रोट्रेट' में गहराई आती है और चरितनायक का उजलापन और कालिमाएँ, जिनके कारण हर मानव एक निराला जीव है, सुस्पष्ट होती हैं।

श्री माथुर की इस कृति में दस पेन-प्रोट्रेट (व्यक्ति चित्रलेख) हैं जो उनके जीवन में आये प्रोफेसर और मास्टर, कवि और संगीतज्ञ, अभिनेता और पुरातत्त्ववेत्ता, राजनीतिज्ञ और प्रशासक से संबंधित हैं।

पुस्तक का पहला चित्र है--जीवन-निर्माता अध्यापक--अमरनाथ झा। यह चित्र सर्वांगपूर्ण है, इसके कुछ अंश इस प्रकार हैं,

'झा साहब अध्यापक थे--ऐसे गुरु जिनका सारा व्यक्तित्व, भव्यता और महिमा का वह विशाल प्रासाद--एक ही बुनियाद पर टिका था, अपने छात्रों के साथ उनका संबंध। अगर उस बुनियाद पर ही आघात होता तो मानो वह समूचा महल ही हिल उठता, और हम लोग जो उस महल की बुलंदी और स्थायित्व के अभ्यस्त थे, अचरज में पड़ जाते। झा साहब की ज़िंदगी अपने छात्रों के सम्पर्क से ही प्राणवान थी। उसी में उनकी शक्ति थी, उसी में उनकी सज-धज, उसी में उनका समूचा अस्तित्व। दैनिक अध्यापन, प्रशासन और सामाजिक व्यवहार की असंख्य परतों के नीचे एक नाजुक-सी, नन्हीं-सी मधुरिमा थी।

उनकी शक्ति थी—उनका बड़प्पन। बड़प्पन कैसा ? कहते हैं कुछ वृहत् वृक्षों की जड़ें धरती के भीतर उतनी ही दूर-दूर तक जाती हैं, जितनी उनकी शाखाएं वायुमण्डल में फैलती हैं और इसी तरह उनका बृहदाकार संतुलित रहता है। शायद झा साहब के बड़प्पन की अदृश्य बुनियादें बरसों के अभ्यास, प्रयास और संयम की गहराइयों में फैली हुई थीं। बड़प्पन कोई अस्त्र नहीं है, जिसे बाहर से पाया जा सके, न वह कोई पोशाक है, जो अवसरानुसार पहनी और उतारी जा सके। वह तो आंतरिक व्यक्तित्व की ऐसी अभिव्यक्ति है, जो व्यवहार और वचन में सर्वदा एक ही प्रकार से लक्षित होती रहती है। झा साहब ने इस बड़प्पन का अभ्यास किया था, स्वेच्छा से, परिश्रम से, अनुशासन से उसे अपनाया था। वही बड़प्पन उनके आचरण का अभिन्न अंग बन गया। सच्चे मानी में झा साहब 'गुरु' थे--गुरु यानी गरिमा--बड़प्पन, जिसका स्वाभाविक लक्षण हो। ...बड़प्पन, जिसकी वे प्रतिष्ठा और समादर करते हों, यदि कभी आत्मीयता के छोटे-छोटे संकेत दे दे तब उसका प्रभाव द्विगुणित हो जाता है, जैसे हिमालय की विशाल चट्टानों पर दो-चार नन्हें कुसुमों की मुस्कान मन को हर लेती है।'

उनके कक्ष का एक शब्द-चित्र इस प्रकार है,

'एक बड़ा कमरा जिसकी दीवारों ने किताबों से भरी अलमारियों का मानो जामा-सा पहन रखा है, और अवनींद्रनाथ ठाकुर, नन्दलाल बोस, हसित अलदर, रोरिक, सुधीर खास्तगीर इत्यादि के बनाये चित्रों के

अलंकारों से लदी है, नाना प्रकार की मूर्तियां और फोटोग्राफ, न सिर्फ साहित्यकारों के, बल्कि राजा महाराजाओं और गर्वनर इत्यादि के भी—मय उनके हस्ताक्षरों के, अगणित स्मृति-चिह्न और उपहार, शिल्पकला के चमत्कारपूर्ण पदार्थ। वह बड़ा कमरा मानो संस्कृति सुन्दरी का निजी शृंगारगृह था, जिसमें वह अपनी सज्जा, अंगराग और वेशभूषण करते-करते कहीं पायल छोड़ गई, कहीं कंचुकी, कहीं कर्णफूल।

उनका व्यक्तित्व और प्रयाग विश्वविद्यालय एकाकार हो चुके थे। उनका मन बार-बार वहीं आ जाता था, झा साहब के मन पंछी का जहाज़ था वह वट-वृक्ष, जो प्रयाग विश्वविद्यालय के शीर्षचिह्न (क्रेस्ट अथवा मोनोग्राम) पर गंगा-यमुना की धाराओं के संगम पर अपनी विशाल शाखाओं को फैलाए दिखाया गया है। ज्ञानगरिमा में जिसके असंख्य मूल शिराओं से बिछे हैं, वह अनादि वट वृक्ष, जिसकी पत्तियों पर नवीन पीढ़ियों के बालमुकुंद खेलते-खेलते अविकसित विश्व की विराट झांकियाँ दिखाते हैं, वही वटवृक्ष गुरुप्रवर अमरनाथ झा के शुक-स्वरूप व्यक्तित्व का चिरंतन नीड़ था।'

दूसरी और तीसरी तसवीर क्रमशः 'मतवाला कलाकार' शीर्षक से बंगला रंममंच के अद्वितीय अभिनेता और नाट्याचार्य श्री शिशिर भादुड़ी तथा 'अफसर जो विलक्षण अपवाद था' शीर्षक से उच्च सरकारी अफ़सर और मर्मज्ञ मराठी साहित्यकार पुरुषोत्तम मंगेश लाड की है। लाड साहब का एक चित्र इस प्रकार है,

'लेकिन लाड का व्यक्तित्व सदानीरा, चिरधवल निर्झरिणी की भांति उन्मुक्त गति से बिखरता ही रहता, अफसरों की पंगत में या गांधीवादी काका कालेलकर की मौजूदगी में अथवा कलामर्मज्ञों, लेखकों, फ़िल्म प्रोड्यूसरों, बौद्ध भिक्षुओं, नास्तिकों के बीच।'

चौथी तसवीर अंग्रेजी शिक्षक और भारत में पब्लिक स्कूलों के विशेषज्ञ एफ. जी. पीयर्स की 'आस्थावान अंग्रेज शिक्षक' शीर्षक से है। उनके बाह्य व्यक्तित्व का चित्र इस प्रकार है,

'सफ़ेद धोती-कुरता और चप्पल पहने किसी अंग्रेज को मैंने पहली बार देखा था। बड़े रूपवान थे मिस्टर पीयर्स और उस वेशभूषा में मेरी किशोर दृष्टि में वह किसी वेदवर्णित आर्य देवता के तुल्य जान पड़े। लेकिन उस समय भी भव्य बाह्य से अधिक मेरे मन में बस गया उनका मृदुल स्वर और मुझे भुलाए न भूली, अविकसित

सुमनों की दबी-दबी-सी सुगन्ध के समान उनकी सहज निश्छल मुस्कान ।'

'विराट स्वर का विधायक' शीर्षक से पन्नालाल घोष का रेखाचित्र है,

'वैसे चित्रों में वह स्मितवदन, श्यामल और भरे शरीर के व्यक्ति जान पड़ते थे । मिलने पर उनको आपादमस्तक देखा—भारी-भरकम और मांसल होने के अतिरिक्त उनके खड़े होने की भंगिमा कुछ ऐसी थी कि मुझे शंका हुई कि वह संगीतज्ञ हैं या पहलवान ।'

'व्यवहार कुशल और संवेदनशील पंडित' शीर्षक से इतिहासज्ञ और पुरातत्त्ववेत्ता 'अनंत सदाशिव अल्टेकर' का रेखाचित्र है जिसका अन्तिम परिच्छेद इस प्रकार है,

'संध्या आई, लेकिन कब, यह हम लोगों को, जो उनसे प्रायः मिलते रहते थे, ज्ञात ही नहीं हुआ । चरण थके नहीं, मन की गति शिथिल नहीं हुई, अतृप्त अभिलाषाओं और पछतावे की लम्बी होती हुई छाया कर्मठता की हरीतिमा पर आवृत नहीं हुई । इसीलिए ढलती सांझ का आभास कैसे होता ? लगन और मनोयोग की पुष्ट प्राचीर बुढ़ापे और शैथिल्य के आक्रमण से अल्टेकर के व्यक्तित्व को सुरक्षित रख सकीं । इसलिए काल की हिम्मत ही न हुई कि सामने से चुनौती दे । उसने पीछे से वार किया । भारतीय इतिहास परिषद् के सभापतित्व से दिये जाने वाले भाषण को एक रात पहले एकाग्रतापूर्वक तैयार कर रहे थे । उसके बाद ही हठात् आघात हुआ और विदा की घड़ी आ गई । कर्मक्षेत्र का वह योद्धा शायद ऐसी वीरगति की ही कामना कर रहा था ।'

'किशोर-जीवन की मुस्कान ही जिसकी साधना थी' नाम से बालचर संस्था के उन्नायक श्रीराम वाजपेयी जी का सफल रेखाचित्र है, जिसका एक अंश इस प्रकार है,

'गौर वर्ण चेहरा, जिससे ममत्व और शालीनता टपक रही थी, पोशाक स्काउट की, कद लम्बा, ···लेकिन मेरे निकट आकर नीचे झुके और मुझे जान पड़ा कि किसी बहुत ऊँचे वृक्ष की उच्चतम शाखा मेरी खातिर नीचे झुकी । फूलों की वाणी में वह गगनस्पर्शी तरु मेरे कानों में कह रहा था, 'शाबास, बच्चे ! ऐसे ही बेधड़क और मीठी बोली बोला करो ।' ···उनके नौजवानी में ही सारे बाल सफेद हो गए थे, किन्तु वह सफ़ेदी हिमालय के मस्तक पर चिरंतन कौमार्य की

धवलश्री के समान थी । आंखों में तेज, शरीर में ऋजुता, चाल में क्षिप्रता--ये सब लक्षण वाजपेयी जी के अक्षय स्वास्थ्य के थे ।'

इसी पुस्तक में 'एक जन्मजात चक्रवर्ती' शीर्षक से बिहार के अग्रगण्य निर्माता सच्चिदानंद सिन्हा तथा द्रष्टा, कर्ता और कवि शीर्षक से बंगला कवि, पत्रकार और पर्यटक 'सुधीन्द्रनाथ दत्त' की तसवीरें भी हैं ।

'सुधीन दत्त का व्यक्तित्व निस्सन्देह कमनीय और प्रभावशाली था । गौर वर्ण, उच्च स्कंध, विस्तृत ललाट । आंखें बंगाली परंपरा के प्रतिकूल, कुछ तिरछी और अर्धोन्मीलित थीं, लेकिन पैनी बुद्धि और अंतर्वेधिनी दृष्टि के सर्वथा योग्य ।'

अंतिम तसवीर लेखक ने अपने पिता लक्ष्मीनारायण माथुर की खींची है जो आदर्शवादी हेडमास्टर और शिक्षक थे ।

इन चित्रों में श्री माथुर मार्मिक शब्द-शिल्पी सिद्ध हुए हैं । इन चित्रों में जीवनचरित्र की तटस्थता, संस्मरण शैली की रोचकता तथा रेखाचित्र कला का कौशल समन्वित रूप में दृष्टिगत होता है । इस अमर कृति की आलोचना करते हुए आलोचना जगत् के प्रसिद्ध पत्र 'साहित्य सन्देश' की टिप्पणी यथार्थत: सत्य है—'व्यक्तित्व के भीतरी परदों को भेदकर उसके रहस्यों का मार्मिक और सजीव चित्रण तथा दूसरी है शैली पर उनका अभिनव अधिकार जो एक ओर अकृत्रिम और प्रवाहपूर्ण है, वहां दूसरी ओर सशक्त, अलंकृत एवं लोकप्रचलित गहन अभिव्यक्ति के अनेक उपकरणों से युक्त है । लगता है जैसे कोई सार्वदेशिक और सार्वकालिक सृजन-चेतना कुछ व्यक्तियों के माध्यम से मानव-मन के गहन रहस्यों को समाज के विगत और वर्तमान परिप्रेक्ष्य में रखती चल रही है और उसकी दृष्टि भविष्य पर टिकी है ।'

पिछले कुछ उद्धरणों में माथुर जी की उपमाएं आ चुकी हैं, फिर भी कुछ और उदाहरण द्रष्टव्य हैं,

"सफर की बौखलाहट और स्टेशन की हलचल, पुरी के समुद्रतट पर उन फेनिल तरंगों की तरह होतीं, जो नहाने वालों के ऊपर से गुजर जाती हैं, उन्हें बहा नहीं ले जातीं ।"

"किन्हीं सलौने हाथों में लगी मेंहदी की तरह मन से छूटती ही नहीं ।"

"उनकी मुद्रा और स्वर में कि साँझ की धूल की भांति कोलाहल कम होता चला गया, दर्शक वापस जाने लगे ।"

चरित्र की गहराई तक पहुंचने का ये प्रयत्न करते हैं जिसके लिए किसी

भी शब्द से बिम्ब प्रस्तुत कर सकते हैं, जैसे अंग्रेजी शब्द बैंक, डायनमो, बुलडोजर आदि ।

> **बैंक**—हमारी चिंताओं, हमारी आकांक्षाओं, हमारी समस्याओं के 'बैंक' थे झा साहब, ऐसा बैंक जो किसी तरह का कमीशन नहीं काटता, केवल पितृयोग्य बड़प्पन के प्रति समादर प्रदर्शन की अपेक्षा करता है ।
>
> **डायनमो**—उसी तरह मानवमात्र के विशाल समूह में यत्र-तत्र ऐसे डायनमों की आवश्यकता है, जिनके अंदर निस्सीम सौजन्य और करुणा की शक्ति भरपूर हो ।
>
> **बुलडोजर**—उस समय की बात है, जब होटल, रेस्तरां, सिनेमा इत्यादि ने रूढ़िगत संस्कारों के टीलों पर अपना बुलडोजर चलाकर समाज को समतल नहीं बना दिया ।

कहीं-कहीं गद्यकाव्य की-सी शैली का आनन्द आता है । इस एक पुस्तक के आधार पर श्री माथुर हिन्दी के शैली-शिल्पी सिद्ध हो चुके हैं ।

पहाड़ी

पहाड़ी सफल कहानीकार हैं । कहानी के साथ कभी-कभी स्केच भी लिख लेते हैं । विश्वमित्र, जून १९३७ में 'आखिरी स्केच' शीर्षक एक रेखाचित्र प्रकाशित हुआ था । 'धुंधली रेखाएँ' में एक निम्न मध्यकुल का चित्र खींचा गया है, युद्ध और मंहगाई के कारण जिसका सफेद पोशी का रहा-सहा ढोंग भी खत्म हो चुका है ।··· सामन्तवादी-युग का प्लास्तर सीलन पड़ जाने के कारण झड़ गया है । 'पतझड़' में बंगाल के अकाल का बीभत्स चित्र है ।

अमृतराय

प्रो. प्रकाशचन्द्र गुप्त ने अमृतराय के शब्द-चित्र को इस प्रकार खींचा है,

> 'गौर वर्ण, लम्बा छरहरा शरीर, शुभ्र, श्वेत खद्दर के वस्त्र, उन्मुक्त हँसी । उत्कट आदर्श कविता । सभी कुछ प्रेमचन्द का स्मरण दिलाता है । वही गौर वर्ण, लम्बा बदन, खुली हँसी । प्रयाग विश्व-विद्यालय के हिन्दी-विभाग में प्रेमचन्द का चित्र देखा था, अमृतराय से उस चित्र में अद्‌भुत समानता थी ।'

'नया पथ' के अगस्त १९५३ में अमृतराय जी का 'रेल की खिड़की से' स्केच प्रकाशित हुआ जिसमें उन्होंने प्रतिपादित किया है—

'रेलगाड़ी के चलते हुए डिब्बे की तरह ही वह जिन्दगी है, वैसी ही छोटी-सी, वैसी ही अलग-अलग खानों में बंटी हुई, वैसी ही तपती हुई ।'

इसके अतिरिक्त 'शाम की कथन', 'इति जम्बूद्वीपे', 'कचहरी', 'सावनी समा', 'डाक मुंशी की एक शाम' शीर्षक कहानियों में भी जीवन के सभी स्केच हैं। उनकी अनेक कहानियों में कहीं भारतीय जीवन के प्रतिनिधि चित्र हैं, कहीं देहात के चित्र और कहीं कायस्थ परिवारों के चित्र विद्यमान हैं ।

रामनारायण उपाध्याय

आपका एक पठनीय स्केच माखनलाल चतुर्वेदी पर 'दादा' शीर्षक से 'नई धारा' के जुलाई १९५१ के अंक में प्रकाशित हुआ है। 'नई धारा' के ही मई १९५१ के अंक में पुरुषोत्तमदास मोदी का एक स्केच 'भारतीय आत्मा की स्मृति पुस्तिका' शीर्षक से प्रकाशित हुआ ।

चतुरसेन शास्त्री

आपके उपन्यासों में तो सजीव चित्र मिलते ही हैं। पद्मसिंह शर्मा ने कहा था 'अन्तस्तल' एक सच्चे जादू की पिटारी है, मानस भावों के चित्रों का विचित्र अलबम है, अन्दरूनी वायस्कोप की चलती-फिरती जीती-जागती तसवीरें, जिनके दृश्य दिल की आँखों से देखे जा सकते हैं, चर्म चक्षुओं का यह विषय नहीं है ।

रांगेय राघव

'अजस्र प्रतिभा के धनी', 'अलीक निष्ठा के धनी' आदि विशेषणयुक्त शीर्षकों से स्मरण किये गये यशस्वी 'रांगेय राघव' ने हिन्दी साहित्य को सभी विधाओं के माध्यम से भरपूर किया है। रांगेय राघव कवि, आलोचक, कथाकार, इतिहासकार, दार्शनिक तथा चित्रकार सभी कुछ थे। मृत्यु से पूर्व उनका अनुवादक का सफल रूप भी उभरकर आया था ।

'रेखाचित्र' शैली में भी आप पैरे हुए थे। आपने प्रथम उपन्यास 'घरोंदे' में भी अनेक रेखाचित्र प्रस्तुत किये हैं। कहीं आवश्यकता से अधिक कटुता आ गयी है। जमींदार का चरित्र तथा गाँव के वर्णन उल्लेखनीय हैं। प्रो. प्रकाशचन्द्र गुप्त इसको सशक्त और मोहक भाषा में लिखे विद्यार्थी-जीवन के अतिरंजित, अतिशयोक्तिपूर्ण स्केचों का संग्रह मानते हैं। कुशल चित्रकार होने के नाते रांगेय राघव के उपन्यासों

में पात्रों की चरित्रगत विशेषताओं का चित्रा मक वर्णन किया गया है। उपन्यासों में उल्लेखनीय हैं—मुर्दों का टीला, विषाद मठ, कब तक पुकारूं, प्रोफेसर आदि।

आपने उपन्यासों तथा कहानियों से इतर रेखाचित्र तथा रिपोर्ताज भी लिखे। १९४३-४४ में बंगाल के भयंकर अकाल से उत्पन्न मार्मिक स्थिति पर आपने जो रिपोर्ताज लिखे उनकी शैली 'रेखाचित्र' की ही है। घटनाओं तथा पात्रों का चित्र-सा उपस्थित कर देने में आप सिद्धहस्त थे। ये रिपोर्ताज 'तूफानों के बीच' नाम से संगृहीत हुए हैं। इसमें दुर्भिक्ष की भयंकरता से पाषाण को भी द्रवित करने वाले यथार्थ चित्र अंकित किये गये हैं।

'पांच गधे' शीर्षक पुस्तक में भी पांच रिपोर्ताज संकलित हैं। इसमें ही तीन रेखाचित्र--मन, बुद्धि और पेट भी हैं। पुस्तक की भूमिका में लिखा है--रेख.चित्र को भी 'कथा' के व्यापक क्षेत्र में ही माना गया है। लघुकथा, दीर्घकथा इत्यादि भी इसी के अन्तर्गत हैं। इन रेखाचित्रों से ही कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं--

> **'मन'**—'आगरे की बड़ी जेल पर सूरज की शाम की किरणें पेड़ों और टीलों की छाया में से छन-छनकर गिरती हैं और फिर दीवार के विशाल वक्ष पर रेंगती-सी ऊपर चढ़ती हैं और अन्ततोगत्वा आकाश में कुछ देर पीली-पीली-सी झूमती हुई पश्चिम में डूब जाती हैं। उस समय ऐसा लगता है जैसे सूरज कहीं इन पेड़ों के या बेरियों के झाड़ों के पीछे ही छिप गया है और थिरकता अँधेरा-सा आने लगता है। पश्चिम के विशाल गड्ढे में जब बरसात में पानी भर जाता है तब उसमें से निकली काली टहनियों को देखकर लगता है कि दिन में जो अँधेरा सूनी टहनियां बनकर रह जाता है, वही अब मौका मिलते ही फैलने लगता है। वही मैदान-सा पड़ा है। उसमें सिपाही कवायद करते हैं, कभी-कभी कोई औरत भेड़-बकरियों को पीपल की छाया में बैठकर चराती है और अपने बच्चों को बिजली के कुएँ पर चढ़ने से बरजती है और कभी-कभी कैदी जेल के डाक्टर के आलीशान बंगले के लहलहाते बगीचे में काम करते हैं या सड़क पार करके क्वार्टरों के सामने के सूखे मैदान में के ऊँचे कुएँ से पानी उलीचते हैं। जाड़ों के दिनों में पुराने कैदी डंडों पर बैठकर डंडा-बेड़ी से लैस साथियों के कन्धों पर हाथ धरकर आते-जातों से बीड़ी या पैसे मांगते हैं, या फिर गाते हैं, और उनकी उस बरबाद ज़िन्दगी की आवाज़ जब जेल की दूसरी दूर की दीवार से टकराती है तब एकाध साधू भजन गाता है। साधुओं ने

जेल की दीवार के बराबर बगीची, मन्दिर बना लिये हैं जहां सिपाही ही अपना भाग्य पूछने आते हैं।'

'बुद्धि'—यह दूसरा रेखाचित्र है। इसमें पब्लिक स्कूल पर एक व्यंग्य देखिए—

'बाकी कई लोग पुकारते हैं कि हिन्दी नहीं प्रान्तीय भाषाएँ तरक्की करें। ठीक है। पर सब पढ़ाते हैं बच्चों को अँग्रेज़ी और अँग्रेजी का ही अभी बोलवाला है। समाज में जो अँग्रेज़ी नहीं जानता, उसकी कद्र नहीं है। अगर संस्कृत भी अंग्रेज़ी के साथ पढ़ी है तो दुगुनी कद्र है। वैसे यह भी सच है कि अंग्रेजी के हाथ-पाँव बड़े हैं, बड़ा मुंह है, बड़ा पेट है और ज्यादा खाने-पीने से उसका दिमाग भी बड़ा है। इसलिए शेखर को अँग्रेज़ी पढ़ने मैंने ही भेजा है कि कल के समाज में वह पिछड़ा हुआ न रह जाए। लेकिन अंग्रेज़ी पढ़ाई जाती है पब्लिक स्कूल में। पब्लिक का मतलब लगाया जाता है—संस्कृति का स्थान अर्थात् पण्डित सुन्दरलाल के भारत में—कल्चर की गद्दी। पर मैं समझता हूं कि पब्लिक का अर्थ है जनता और पब्लिक स्कूल का असली अर्थ है—वह स्कूल जहाँ जनता के बच्चे न पढ़ सके। पढ़ सकें उनके, जो कैसे भी हो पढ़ाते ही हैं।'

'पेट'—इस रेखाचित्र को काव्यात्मक शैली में लिखा गया है—

'प्रेम से प्रेम करने वाली आँख का पानी जब घास पर पड़ता है तो ओस का हीरा बनकर चमकता है, जब इंसान पर ज़ुल्म देखता है तो अंगारा बनकर गिरता है, जब दर्द देखकर गिरता है तो लहू की बूंद बनकर, और जब इंसान को भूखा देखता है तो वह गेहूँ बन जाता है। और नफरत से प्रेम करने वाली आँखों का पानी जब घास पर पड़ता है तो घास झुलस जाती है, जब इन्सान पर ज़ुल्म देखता है तो उसमें बर्फ-सी बेदिल ठंडक आ जाती है, जब दर्द देखकर गिरता है तो बन्दूक की गोली बनकर, और जब इन्सान को भूखा देखता है तो वह गुलामी का दस्तावेज़ बन जाता है।'

'जिस आँचल के साये में दुध-मुंहा अपने फूले-फूले गाल लिये, अधमिची आँखों से नन्हीं-नन्हीं-सी नाज़ुक हथेलियों को बाँधे दूध पीता है, उस आँचल पर गुलामी का दस्तावेज़ लिखा जाएगा, फिर दुध-मुंहा क्या पीएगा? वही जो कोरिया के बच्चे अपनी मुर्दा माँ के सीने पर उसका लहू पी रहे थे, यहाँ भी दुहराया जाएगा।'

'गेहूँ--आज गेहूँ नहीं है, वह बन्दूक की गोली है, वह कविता है, वह आज़ादी है, वह गुलामी है, वह लाशों का अम्बार है, या वह करोड़ों हँसते चेहरों की किलकारी है। तीनों सवाल हल हो गये हैं। मुझे किसी के जूते से पिसा गेहूँ नहीं चाहिए, मुझे चाहिए वह गेहूँ जिसमें से ज़िन्दगी की खुशबू आ रही हो।'

डा. रांगेय राघव का 'गूंगे' शीर्षक से शब्द-चित्र 'आजकल' के दिसम्बर १९४५ के अंक में प्रकाशित हुआ था। डा. राघव असमय में ही हमारे बीच से चले गये अन्यथा और उच्चकोटि के रेखाचित्र हिन्दी साहित्य को उपलब्ध होते।

भगवतशरण उपाध्याय

राहुल जी के बाद विश्व का भ्रमण करने वालों में उपाध्याय जी का शीर्षस्थान है। 'वो दुनिया' आपके रेखाचित्रों का संग्रह है जिसमें अमेरिका की यात्रा का सजीव वर्णन है। विश्व के अनेक राजनीतिज्ञों के रेखाचित्र आपने प्रस्तुत किये हैं। 'मैदान और जंगल, जंगल और मैदान और फिर कारखानों की कंटीली चहारदीवारी और कारखानों के समीप राष्ट्रसंघ के सदन' का सफल चित्रण किया गया है। 'वो दुनिया' पर टिप्पणी करते हुए प्रो. प्रकाशचन्द्र गुप्त ने लिखा है--

'वो दुनिया' श्री भगवतशरण उपाध्याय के व्यंग्यात्मक स्केचों का संग्रह है, इनमें बड़ा वेग, ओज और बल है। 'जान बूझ हंसता' शीर्षक स्केच में लेखक 'आज के साम्राज्यवादी कुचक्रों और युद्धों की विभीषिका पर कठोर व्यंग्य प्रहार करता है।'

इस कृति से कुछ रेखाचित्रों के अंश द्रष्टव्य हैं--

सर जफ़रुल्ला खां--चेहरा बादामी, बाल लम्बे, पीछे उलटे हुए, जिनके बीच में कुछ-कुछ गंजी चांद रह-रहकर चमक जाती है, लम्बी दाढ़ी जिसके काफी बाल सफेद हो चुके हैं, गहरा बादामी सूट और प्रायः स्याह टाई।'

सर ग्लैडविन जैब--'ठुड्डी भी कुछ आगे को उठ गई है, निचला होठ जरा आगे दब गया है।'

इस दृष्टि से उनकी दूसरी उल्लेखनीय कृति 'ठूंठा आम' है जिसके प्रारम्भ में लेखक ने स्वीकार किया है, 'ये कुछ स्केच तथा कुछ रिपोर्ताज पिछले सालों में लिखे हैं। अपने पाठकों के मनोरंजनार्थ समर्पित करता हूं।'

'ठूंठ' की व्याख्या करते हुए लेखक लिखता है--

> 'पर मैंने उसे सदा ठूंठ ही देखा है, पत्रहीन, शाखाहीन, निरवलम्ब, जैसे पृथ्वी रूपी आकाश से सहसा निकलकर अधर में ही टंग गया हो। रात में वह काले भूत-सा लगता है, दिन में उसकी छाया इतनी गहरी नहीं हो जाती जितना काला उसका जिस्म है।'

सुमित्रानन्दन पंत

पन्त जी मूलतः कवि हैं फिर भी यदा-कदा काव्यात्मक भाषा में ही महापुरुषों के जीवन पर रेखाचित्र भी लिखते रहे हैं। काव्य में चित्र उपस्थित करना तो पन्त जी की मुख्य विशेषता रही है जिसका उल्लेख पीछे किया जा चुका है। 'गांधी जी' पर आपका एक रेखाचित्र आकाशवाणी से प्रसारित हुआ था। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के शताब्दी समारोह पर भी आपका लिखा शब्द-चित्र प्रसारित किया गया जिसका कुछ अंश इस प्रकार है--

> 'गांधी जी ने खादी के ताने-बाने बुनकर जिस प्रकार इस अर्धनग्न विशालकाय देश की लाज को ढंकने का प्रयत्न किया, उसी प्रकार, जैसे क्रान्तदृष्टि, भविष्य द्रष्टा ने चालीस करोड़ निर्वाक, शब्दमूढ़ भारतीय जनता को भावनात्मक एकता में भूषित करने के लिए एक आर-पार व्याप्त सशक्त भाषा का मानसिक परिधान निर्मित किया, जिसमें असंख्य कण्ठ एक साथ ही भारतमाता का जयजयकार कर उठे।
>
> संक्रान्तिकालीन अनेक बाधाओं और विषमताओं के होते हुए भी आचार्य द्विवेदी जी ने एक सुज्ञ सारथी की तरह हिन्दी का रथ विचित्र विरोधी मतान्तरों से भरे युग के ऊबड़-खाबड़ पथ पर जिस दक्षता, साहस, धैर्य तथा कर्तव्य-निष्ठता के साथ हांककर आगे बढ़ाया, उसका स्मरण कर इस वृद्ध महारथी के प्रति मस्तक आप ही श्रद्धानत हो उठता है।'

पन्त जी पर स्वयं अनेक रेखाचित्र लिखे गये हैं जिनमें से यहां उनके ही एक अभिन्न साथी बच्चन जी का शब्द-चित्र प्रस्तुत करना चाहते हैं--

> 'सिर पर लम्बे बाल, लेकिन उनके सजाने-काढ़ने का ढंग ऐसा कि पहले देखा ही नहीं गया। बाल भी इतने सुनहरे कि लाल मालूम

होते हैं। पहनावा अंग्रेजी ढंग का, मगर जरा गौर करके देखिए तो उसमें भी कुछ निरालापन है। अंग्रेजी कोट को कुछ अपनी रुचि के अनुसार काट-छांट दिया गया है। टाई भी है पर खुली कमीज के ऊपर।

'उन्हें बालों से बड़ा मोह है। लोगों से बातचीत करते, चलते-फिरते उनकी उंगलियां उन्हें ठीक करने में व्यस्त रहती हैं और इन बालों की सुन्दरता के लिए वे नाई के ऋणी नहीं हैं, अपने जीवन में नाई को उन्होंने बहुत कम ही पैसे दिये होंगे। अपने बाल वे खुद काटते-छांटते हैं जैसे अपनी कविता की पंक्तियों को 'सरस्वती' के भूतपूर्व सम्पादक पंडित देवीदत्त शुक्ल कहा करते थे कि पन्त जी के बालों में भी कवित्व है।'

श्री रामधारी सिंह 'दिनकर'

श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' का नाम हिन्दी के मूर्धन्य साहित्यकारों में लिया जा सकता है। दिनकर जी मूलतः कवि हैं और कविता के क्षेत्र में ही निरन्तर प्रगति-पथ पर अग्रसर होते जा रहे हैं। पर संभवतः यह आश्चर्य के साथ पढ़ा जाय यदि मैं उन्हें कवि होने के साथ एक कुशल रेखाचित्रकार लिखूं। आज से लगभग ३० वर्ष पूर्व आपका एक उच्चकोटि का 'रेखाचित्र' हंस के रेखाचरित्रांक में 'अमिताभ' छद्म नाम से प्रकाशित हुआ। उन दिनों आप इसी छद्म नाम से लिखा करते थे, इसका ज्ञान भी मुझे उन पर लिखे एक रेखाचित्र से ही हुआ। मथुराप्रसाद मिश्र के नाम लिखे पत्र से यह स्पष्ट हो जाता है—

यह तो दिनकर का कृत्य नहीं,
अमिताभ देव का दुष्ट कर्म।

बाद में चलकर तो यही रेखाचित्र दिनकर जी ने अपने 'वट पीपल' शीर्षक निबन्ध संग्रह में संग्रहीत किया और इस रहस्य का स्वयं उद्घाटन भी कर दिया। सन् १९३९ में जिस व्यक्ति ने इतने उच्चकोटि का रेखाचित्र लिखा उसने आगे फिर इस विधा में क्यों नहीं लिखा इसका उत्तर दिनकर जी ही दे सकते हैं। वैसे काव्य-क्षेत्र में वह अपनी प्रतिभा का चमत्कार निरन्तर दिखाते रहे और काव्यमय रेखाचित्र खींचते रहे।

'वट पीपल' में संकलित २० निबन्धों में १३ निबन्ध विचार-प्रधान अथवा आलोचनात्मक हैं। शेष सात निबन्धों में से भी 'बालकृष्ण शर्मा नवीन' पर

तीन भागों में लिखे लेख शुद्ध संस्मरणात्मक हैं। वैसे उनसे नवीन जी का चरित्रांकन होता है। दिनकर जी नवीन जी के अभिन्न मित्रों में से थे और उनके साथ रहने का भी उन्हें विशेष अवसर मिला था। दिनकर जी राहुल जी की तरह नवीन जी का भी उच्चकोटि का रेखाचित्र प्रस्तुत कर सकते हैं। 'रुक्मिणी देवी और उनका कला क्षेत्र' बहुत कुछ इंटरव्यू विधा के अन्तर्गत आता है। पोलैण्ड के राष्ट्रकवि 'अदम मित्सकेविच' संक्षिप्त जीवनी है। हमारी दृष्टि में उल्लेखनीय रेखाचित्र हैं--

श्री राहुल सांकृत्यायन —सन् १९३९
श्री मामा वरेरकर —सन् १९५३
पं. सुमित्रानन्दन पन्त —मार्च १९६०
पुण्यश्लोक जायसवाल जी —मई १९६०

राहुल सांकृत्यायन—आरम्भ में ही एक वाक्य में जो अनुच्छेद भी बन गया है, राहुल जी के विशाल व्यक्तित्व की झांकी मिल जाती है,

'एक धर्म-प्रचारक, जिसमें उत्तरीय के सिवा धार्मिक परम्परा का कोई आडम्बर नहीं, ऐसा विद्वान, जिसने सारी विद्याओं में डूबकर केवल नास्तिकता को ग्रहण किया हो, एक साधु, जिसे राह चलते, अनावश्यक अवसरों पर भी, ईश्वर पर व्यंग्य, शास्त्रों की भर्त्सना और अण्डों के प्रचार में आनन्द आता हो, साहित्य में रहते हुए जिसे राजनीति का मोह हो, और राजनीति की ओर अग्रसर होते हुए जिसे कुछ घृणा, कुछ झिझक-सी लगे, युग-विधायक अनुसन्धान करते हुए भी जिसे अपना श्रम व्यर्थ मालूम होता हो, इतिहास के मुर्दों का क्षेत्र कह कर जो जिन्दों के बीच जाने की लालसा से, रूस दौड़े, और जिन्दों के जीवन के मर्म पर व्याघात लेकर फिर मुर्दों के देश में लौट आये, प्रकाण्ड विद्वान, बहुत बड़ा स्वतन्त्र विचारक, सांस्कृतिक क्रान्ति का उग्र नेता, क्रान्तदर्शी और विक्रान्त परिश्रमी, लेकिन अपनी पूरी शक्ति के उपयोग के योग्य निश्चित क्षेत्र के अभाव में अमूल्य विचारों का बहुत बड़ा बोझ ढोता-सा, संसार जिसे असाधारण एवं अज्ञेय रहस्य मान कर विस्मय करे, उसे साधारण—अतिसाधारण मान कर उसकी खिल्ली उड़ाता-सा, श्रद्धावान् हाथ जोड़कर जब गगनोन्मुख हो, तब ऐसा दिखलाता-सा मानो, मैं आकाश में भी घूम चुका हूं वहां कुछ नहीं है, देवताओं के सामने मनुष्य और स्वर्ग के सामने पृथ्वी को पूजने वाला हूं, जो अपने तर्क के तीखे बाणों से परम्परा, रूढ़ि और प्राचीन

संस्कारों पर कुटिल व्यंग्य कसने का आदी हो, धुन का पक्का, लगन का कड़ा, साँप के फन पर जानबूझ कर पैर रखनेवाला, ऐसी विचित्रताओं का आगार है वह मनुष्य, जिसे हम राहुल सांकृत्यायन के नाम से अभिहित करते हैं।'

उनका ही एक दूसरा चित्र द्रष्टव्य है—

'पीले उत्तरीय से आवृत एक दीर्घकाय मनोरम मूर्त्ति, नख से सिख तक प्रतापवान, ओठों पर अन्तरतम से पल-पल उल्लसित आनन्द की हलकी रेखा, आँखों की ऐसी प्रभा जैसे उनके पीछे बहुदृष्टता का कोष छिपा हो और जैसे वे अब भी कुछ हेर रही हों, आकृति प्रसन्न, आनन के चतुर्दिक् अमोघ शान्ति का आलोक, राहुलजी सचमुच अपनी परम्परा के गुरु तथागत से मिलते-जुलते हैं, सिवा इसके कि उनकी आँखों में बुद्धदेव की आँखों की नीलिमा नहीं है।'

शैली का चमत्कार कुछ तो इन उद्धरणों से स्पष्ट हो जाता है। छोटे, मार्मिक वाक्य लिखने में भी आप निष्णात हैं—

'मेंहदी का गुण लाली और अग्नि का गुण जैसे ताप है, उसी प्रकार, राहुल जी के स्वभाव की सबसे प्रधान विशेषता उनकी बुद्धिप्रियता और विचार-स्वातन्त्र्य है।'

'परिश्रम में शंकर, उग्रता में दयानन्द और शान्तिप्रियता में तथागत के समान।'

मामा वरेरकर—लेखक के ही शब्दों में,

'साहित्य का सामाजिक पक्ष कविता से अधिक उपन्यास में और उपन्यास से अधिक नाटक में निखर पाता है, और मामा साहब मुख्यतः नाटककार हैं।'—'वे बच्चों के समान सरल, युवक कवि के समान भावुक और पुराने मित्र के समान निश्छल और विश्वसनीय हैं।'—'मामा साहब की मुद्रा रसिक और कल्पक की रस-स्निग्ध मुद्रा है और उसके समीप पहुंचकर युवकों की भी कल्पना कुछ और हरी हो उठती है।'

पंडित सुमित्रानन्दन पन्त—पंत जी का एक शब्द-चित्र दिनकर जी की लेखनी से बना है,

'पंत जी को देखते ही सहसा यह भान होता, मानो आप परियों के देश से उतरे हुए किसी देवर्षि के सामने खड़े हों। छोटा-हलका शरीर,

चेहरे पर सौम्य शान्ति जो सचमुच ही देवताओं की शान्ति है और सिर पर घने लहराते बाल, जो सुन्दर से सुन्दर रमणी को और भी सुन्दर बना सकते हैं ।'

एक दूसरा चित्र,

'केवल बाल ही नहीं, पंत जी का कोट, पन्त जी का पतलून, यहाँ तक कि उनका कुरता भी ऐसे काट का होता है जिससे नारी-जाति के प्रति उनके असीम आदर की सूचना मिलती है, जिससे यह साफ जाहिर होता है कि यह पुरुष नारीत्व पर आसक्त नहीं, स्वयं नारी बन जाने को बेचैन है । कविता को कविता कहिये या काव्य, धर्म से, वह नारी ही होती है । यह नारीत्व पंतजी के मात्र काव्य में ही नहीं, उनके व्यक्तित्व और स्वभाव में भी समाविष्ट है ।'

पुण्यश्लोक जायसवाल--यह रेखाचित्र भी संस्मरणात्मक शैली में लिखा हुआ है,

'जायसवाल जी 'अगिनगिरि' छद्म नाम से लिखते थे । इससे उनके व्यक्तित्व की तुर्शी, चरपराहट और झाँस प्रकट होती है । कानून का आश्रय जायसवाल जी ने केवल जीविका के लिए लिया था । उनका हृदय और प्रायः समग्र अस्तित्व, वस्तुतः इतिहास को अर्पित था--- अपने समय में वे, शायद, संपूर्ण संसार के सबसे बड़े अनुसंधानी थे । यही नहीं, प्रत्युत अनुसन्धान के क्षेत्र में उनकी दृष्टि द्रष्टा की दृष्टि थी ।'

इधर दिनकर जी ने जननायक नेहरू पर धारावाहिक रूप से संस्मरणात्मक लेखमाला लिखी जिसमें कहीं-कहीं रेखाचित्र का भी आभास मिलता है। अब यह लेखमाला पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुकी है ।

ओंकार शरद

अनेक पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादकीय विभाग को सुशोभित करने वाले श्री ओंकार शरद जी ने उपन्यास तथा कहानी के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान किया है । रेखाचित्र तथा संस्मरण लिखने की कला में भी आप पटु हैं ।

आपके रेखाचित्र विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में बिखरे हुए हैं जिनके संग्रह अधिकांश अप्रकाशित हैं, फिर भी आपके रेखाचित्रों का एक संग्रह 'लंका महाराजिन' (१९४६) शीर्षक से न्यू लिटरेचर, इलाहाबाद से प्रकाशित हो चुका है जिसमें १७ स्केच और

कहानियाँ हैं। लंका महाराजिन शीर्षक स्केच पूर्ववत् 'लहर' के मई १९४७ के अंक में प्रकाशित हो चुका था। इसका एक चित्र द्रष्टव्य है—

> 'आँखें भीतर को घुसी हुई। चेहरे पर झुर्रियाँ। गर्दन कुछ हिलती हुई। कुछ तो बुढ़ापे के कारण, कुछ संसार के प्रति विराग और घृणा से। नाक में सोने की पुतली पहने हुए है जिसे रह रहकर घुमा देती है।'

शरद जी की अपनी कहानियों में भी रेखाचित्र के तत्त्व हैं। आप अपने आस-पास की दुनिया से ही सामग्री बटोर लेते हैं। संकलन की भूमिका में स्वयं लिखा है,

> 'इसी अनुभूति से प्रेरित होकर (इस 'लंका महाराजिन' में) काल्पनिक पात्रों के काल्पनिक चित्रण में जमीन आसमान के कुलाबे मिलाने की परम्परा से हटकर अपने जीवन में घुले-मिले जीवित पात्रों की ही बहुत सीधी-सादी तस्वीरें खींचने की मैंने कोशिश की है।'

इस संग्रह में ही 'केदार' का 'चित्र' भी पठनीय है। जो कहानियाँ हैं भी उनमें कथानक सूक्ष्म है, आँखें रेखाओं में ही अंकित की गई हैं। बाह्य चौखटे में तो तस्वीरों को बाँधा ही है पर तस्वीरों के पीछे जीते-जागते पात्र हैं।

'निशानियाँ' शीर्षक से मिरजापुर की जेल का एक शब्द-चित्र नई धारा के जून १९५० के अंक में तथा 'लोटू' शीर्षक से नई धारा के ही मार्च १९५२ के अंक में रेखाचित्र प्रकाशित हुए थे। साहित्यकारों पर भी शरद जी रेखाचित्र लिखते रहे हैं। निराला पर 'नरनाहर निराला' शीर्षक से नई धारा के मई १९५१ अंक में आपका लिखा हुआ रेखाचित्र प्रकाशित हुआ।

सबसे उल्लेखनीय बात यह है कि 'संकेत' के प्रकाशन पर इसमें जो छह प्रतिनिधि रेखाचित्रों का संकलन किया गया है उसमें से शरद जी का 'मौत का सट्टा' शीर्षक रेखाचित्र संकलित है। यह रेखाचित्र व्यंग्य प्रधान है। किस प्रकार एक सेठ की मौत के लिए गंगई और मुसई घाटवाले इंतजार कर रहे हैं—

> 'क्योंकि सेठ के पार्थिव शरीर के साथ उनकी किस्मत खुलेगी। सेठ जी पर उढ़ाया हुआ कीमती शाल, गले में सोने की जंजीर, हाथ में एक या दो कीमती नगों की अंगूठियाँ और जो मिल जाय। हजार के आसपास की बात है। इसलिए दोनों में से प्रत्येक चाहता है कि उसकी पारी में सेठ जी मरें तो इतनी आमदनी तो होगी।'

इस स्केच में समाज पर करारा व्यंग्य है।

शरद की पचासवीं कृति 'देश-काल-पात्र' (१९६४ ई.) संस्मरणों तथा रेखाचित्रों का नवीनतम संकलन है। इस कृति में बर्नार्ड शा का जादू, निराला की याद, एक कैदी

और एक जेल की कथा, फरिश्तों की कसम, शेरशाह की सड़क के किनारे आदि अच्छे चित्र हैं। भाषा सरस तथा प्रवाहपूर्ण है। पुस्तक की आलोचना लिखते हुए श्री देव-प्रकाश जी ने लिखा है—

> 'कैमरे की शाट दबी नहीं कि पूरा चित्र उतर जाता है। यों हर चित्र, चित्र बनने से पूर्व निगेटिव प्लेट का रूप लिये होता है और उस प्लेट से ही चित्र की उत्तमता की संभावनाएं आँकी जा सकती हैं। लेखक द्वारा प्रस्तुत देश-विदेश के साहित्यकारों एवं संघर्षशील राजनेताओं के ये संस्मरण सचमुच निगेटिव प्लेट की तरह ही बन पड़े हैं जिसे सुरक्षित रखकर किसी भी अच्छे चित्र की प्रस्तुति की जा सकती है। इनमें कहीं तो हृदय से हृदय की बातचीत है और कहीं साहित्य, कला और राजनीति की बहुरंगी झाँकियाँ।'

वस्तुत: ये संस्मरणात्मक शैली में लिखे गये रेखाचित्रों का संकलन हैं।

'देश–काल–पात्र' पुस्तक में ही 'खां साहब को सलाम' शीर्षक रेखाचित्र में बादशाह खान का एक सुन्दर चित्र इस प्रकार है—

> 'एक पठान सरदार! पठानों का ही रंग-रूप, हट्टा-कट्टा, ऊंचा, चौड़ा और तगड़ा स्वस्थ पठान! पठानों का नेता। नाम भी बादशाह खां? उम्र में बुढ़ापा तो आ गया है पर काम करने में जवानों से भी आगे। चेहरे पर झुर्रियां हैं जो निराशा की नहीं चिन्ता की हैं। चेहरा देखिए तो लाल। अंगूर और सेब के देश के हैं न? सिर पर छोटे-छोटे बाल और छोटी ही दाढ़ी भी जो अब पूरी तरह सफेद हो गई है। बदन पर कुरता, उस पर एक चादर, एक सलवार और पेशावरी जूते। कपड़ों पर थोड़ी सी नीलिमा, शायद साफ करते समय नील का प्रयोग कुछ अधिक होता होगा।'

'फ़िरिश्तों की कसम, वह एक इंसान था' में संस्मरणात्मक शैली में हिन्दी के मौखिक इतिहास 'शिवपूजन सहाय' जी का सजीव तथा करुण चित्र है जिसका एक अंश इस प्रकार है—

> 'पीले-पिचके गाल, नाटा कद, अस्थि-पंजर शरीर, साधु वेष, निरीह वाणी। खा ी का मोटा वस्त्र, झूलती सी बंडी, सिर पर बड़ी टोपी—सिर पर फैली सी, पांच फीट से कुछ ऊंचा शरीर और जितना नाटा उतना ही दुर्बल। करुणा, वेदना सब अपनी अभिव्यक्तियों के साथ विलीन हो गयीं।'

इससे पूर्व शरद् के प्रसिद्ध स्केच 'खां साहब' तथा अन्य आठ स्केचों का संग्रह 'खां साहब' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था। पहले ही स्केच 'खाँ साहब' का आरम्भ इस प्रकार हुआ है—

'अगर खां साहब अपनी दाढ़ी के बाल न कतरवाएं तो शायद वे और अच्छे लगें। यों अच्छे लगने की तो कोई कमी उनमें नहीं है। अच्छा खासा व्यक्तित्व। इकहरा लम्बा बदन। स्वास्थ्य अच्छा, इससे देखने वालों पर एक रोब भी पड़ता था। मुसलमान तो थे, परन्तु पायजामा कभी नहीं पहना। सदा घुटने तक की बनियउटी धोती। ऊपर से एक लम्बा बंद गले का सफेद दुसुती कोट, शायद कोट के नीचे गंजी या कमीज कुछ नहीं होती थी, ऐसा मेरा अनुमान है, क्योंकि एक दो बार जब कामकाज की भीड़ में उनके कोट के चौथे या पांचवें बटन खुल जाते तो सीधे उनका दबा हुआ पेट ही दिखाई पड़ने लगता था।'

दूसरे स्केच 'कर्नल, कार्टूनिस्ट, लेखक' में कर्नल दिनेश की 'आकृति ही कुछ ऐसी है कि दूसरे उनके क्रोध और खुशी में धोखा खा जायं। घुण्डीदार ठुड्डी, होठ और ठुड्डी के बीच एक काली रेखा खींचता हुआ गड्ढा, दोनों होठ काफी मोटे, निचला कुछ और अधिक और ऊपर में रोबीली मूंछ, किनारे कड़े, उमेठे हुए। यों शायद मूंछ के बाल मुलायम होते, परन्तु सप्ताह में उन्हें तीन बार कैंची से लड़ना-भिड़ना पड़ता है, इससे वे बेहयाई से अपनी नरमी भूलकर कड़े हो गये हैं। ऊपर कुछ अजीब लम्बी-सी फूली नाक, बिल्लियों की-सी चमकती और छोटी-छोटी आंखें। भौंहें कुछ घनी, परन्तु पतली लकीर-सी और चौड़ा माथा, फिर सिर पर उलटे बाल, छोटे और कड़े। यह थी उनके चेहरे की बनावट।'

'निशानियाँ' शीर्षक रेखाचित्र जिसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है इसमें ही संकलित है।

हरिजन कालूराम पर एक सजीव रेखाचित्र 'कल्लू' शीर्षक से है,

'जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है कल्लू का रंग काला है—काला कलूटा, आकर्षणहीन चेहरा। फिर भी ऐसा कि आपकी आंखें उसकी उपेक्षा नहीं कर सकतीं, उस पर नजर पड़ेगी तो आपको गौर से देखना ही पड़ेगा। केवल रंग ही तो काला है। पकी हुई जामुन का रंग।

लेकिन चेहरे की बनावट, भला क्या कहना ! काश, रंग ने सहयोग दिया होता तो लगता कि हजार में एक व्यक्तित्व है। परन्तु रंग के ही कारण उसके चेहरे की नक्काशी की महिमा भी दब जाती है ।'

'जीवन के सत्य में' एक मध्यवर्गीय पात्र का करुण जीवन-चित्र है जिसमें हम सब अपनी झलक पा सकते हैं। इसी संकलन में 'जीजी' शीर्षक भी एक सुन्दर रेखाचित्र है।

इन सभी स्केचों की विशेषता यह है कि इन सब में 'बहुत साधारण व्यक्तियों के जीवन की साधारण घटनाओं पर तनिक रंगबाजी' कर दी गई है।

साहित्यिक रेखाचित्रों के साथ-साथ सामान्य रेखाचित्र भी हैं, यही इस पुस्तक की विशेषता है।

शरद के रेखाचित्रों की लोकप्रियता इससे ही सिद्ध होती है कि उनके संकलन 'लंका महाराजिन' का द्वितीय संस्करण पुनः १९६५ में प्रकाशित हुआ है जिसको लेखक ने अपने प्यारे दोस्त 'काज़ी शाद सैयद' (शाद भाई) की स्मृति में समर्पित किया है। इस शीर्षक से ही संकलित रेखाचित्र का एक अंश इस प्रकार है—

'बहुत लम्बा शरीर, शायद साढ़े छः फुट का था। यानी उनके कुरते हम सबों के ड्यौढ़े होते थे लम्बाई में। रंग गोरा। पठानों का सा कुछ डरावना और रूखा चेहरा। नया आदमी देखे, उनकी बोली सुने, तो अवश्य ही घबड़ाए, पर हम तो उनके इस बाहरी रूप के अलावा अन्तर से भी परिचित हो चुके थे। हमें मालूम था कि इस बेल जैसे ऊपर से कठोर पुरुष के भीतर बेल का मिठासपूर्ण शीतल गूदा भी था।'

केदार, मामाजी, आजी, अम्मा जी आदि इस संकलन के अन्य उल्लेखनीय स्केच हैं जिन पर डा. धर्मवीर भारती ने संगम (१९५०) में इस प्रकार टिप्पणी लिखी थी—

'इन स्केचों के प्रमुख पात्र विभिन्न वर्गों और समाज के विभिन्न क्षेत्रों से चुने गये हैं। शरद जी का विशेष आग्रह राजनीति पर नहीं है, सीधी-सादी सामाजिक पृष्ठभूमि उन्होंने ग्रहण की है। हां, जहां राजनीति का प्रभाव प्रत्यक्ष है, वहां कलाकार का प्रचारक रूप उभर आया है, कला कमजोर पड़ गई है। लेकिन 'नेता का जुलूस' नामक स्केच काफी प्राणवान है, राजनीति के बावजूद। 'शाद भाई' का चरित्र भी बहुत सजीव है, यद्यपि थोड़े से सुधार

के बाद रानी के व्यक्तित्व को लेकर उस स्केच में बहुत रस लाया जा सकता था ।··· इन स्केचों में से मुझे लगभग वे सभी स्केच ज्यादा सशक्त लगे, जिनमें बूढ़ी नारियों का चित्रण किया गया है । 'लंका महाराजिन' विशेषतया बहुत ही सजीव है, और सही मानों में वह एक पूर्ण सफल स्केच है । 'आजी', 'अम्मा जी', 'बेटे का इलाज' आदि स्केचों में एक विशेषता यह है कि नारी-स्वभाव के मर्म-स्थलों को कथाकार ने पहचाना है और उन्हीं के सहारे वे रेखाचित्र गुम्फित किये हैं ।'

इन सशक्त रेखाचित्रों के कारण शरद जी प्रथम श्रेणी का रेखाचित्रकारों में सम्मिलित किये जा सकते हैं ।

श्री हर्षदेव मालवीय

श्री हर्षदेव मालवीय पंडित बालकृष्ण भट्ट जी के दौहित्र हैं । भट्टजी ने अपने काल में समसामयिक अनेक समस्याओं, स्थानों तथा व्यक्तियों के अनेक चित्र खींचे थे । जीवन में प्रायः कुछ ऐसे व्यक्ति, स्थान या दृश्य आते रहते हैं जो स्मृति-पटल पर अमिट छाप छोड़ जाते हैं । ऐसी घटनाओं का चित्रण ही कोई साहित्यकार यथार्थ रूप में कर देता है जिसको पढ़कर उस घटना विशेष का चित्र सामने उपस्थित हो जाता है । बालकृष्ण भट्ट भी हिन्दी गद्य के उन प्रमुख प्रारम्भिक शैलीकारों में से हैं जो छोटे-छोटे विषयों पर अपनी लेखनी के चमत्कार से चित्र उपस्थित कर देते हैं । इसी परम्परा में उनके दौहित्र हर्षदेव जी हैं ।

बहुत समय पहले ही मुझको उनके दो रेखाचित्र 'समाज' पत्रिका में पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । पहला शब्दचित्र 'लाला लूलीलाल' शीर्षक से जून १९५४ के अंक में प्रकाशित हुआ जिसको हास्य रस का रेखाचित्र कह सकते हैं । इसमें मध्यस्तरीय व्यक्ति का चित्रण है । लाला लूलीलाल एक जमींदार टाइप हैं जो जमींदारी खत्म होने से मुसीबत में हैं । जमींदारी टूटने से उनकी आय खत्म हो गई है । बहुत दिनों तक किसी प्रकार काम चलाते हैं । हाल-चाल पूछने पर वह कहते हैं, 'हाल उतर गई है, चाल बिगड़ गई है, इक्का दुलंगता फुलंगता चला आ रहा है ।'

दूसरा रेखाचित्र 'बाबू सूरजप्रसाद चौरसिया' शीर्षक से अक्टूबर १९५४ के अंक में प्रकाशित हुआ था ।

आपके लिखे शब्दचित्र प्रायः आकाशवाणी से भी प्रसारित होते रहे हैं । 'वसिष्ठ मुनि' शीर्षक रेखाचित्र ऐसे चित्रों में उल्लेखनीय है । यही रेखाचित्र नवभारत

टाइम्स के १६-६-६२ के अंक में भी प्रकाशित हुआ। क्रान्तिकारी वसिष्ठ का चित्र मालवीय जी की लेखनी से—

'देखा, लगभग आठ फुट लम्बा चमचमाता भाला लिये हुए, लंगोटा लगाये, गले में रुद्राक्ष डाले, लम्बी जटाओं और छाती तक लटकती दाढ़ी वाले एक भीमकाय आकार के साधु खड़ाऊं पहने खड़े थे। मस्तक पर चन्दन पुता था। मध्य में महावीरी थी। पान चकाचक कर खाये हुए थे और बड़ी-बड़ी चमकीली आँखें थीं। **बस इन्हीं आँखों से मैं उनको पहचान सका।'**

आपके कुछ रेखाचित्रों का संग्रह 'पुराने और पोंगल गुरु' शीर्षक से प्रकाशित हो चुका है।

आपके शब्द-चित्रों का एक उल्लेखनीय संग्रह 'डुलंगते इक्के पके आम' से प्रकाशित हो चुका है जिसमें व्यक्तियों और स्थान से संबद्ध सुन्दर रेखाचित्र हैं। 'लाला ललीलाल' वाला रेखाचित्र भी इसमें संगृहीत है, इसके अतिरिक्त दस चित्र और हैं। इनमें से अधिकतर निम्नस्तरीय जीवन बिताने वाले व्यक्तियों के हैं। चित्र 'सनिया' एक भिखारिन का है, 'नारायण और ताराचन्द' शीर्षक चित्र अच्छा प्रभाव जमाते हैं। इनमें से कुछ चित्र देखिए--

'वे सुन्दर सलोने गोरे बड़े डेलीकेट हैं। विदा होते समय वे एक हाथ उठाकर अंगुली एक खास लहजे से हिलाते हैं। 'टा टा' उनके मुख से और कभी-कभी 'बाइ बाइ' भी उनके श्रीमुख से विदाई के समय निकलता है, और कभी वे 'चीरियो' भी कहते हैं।'

(यह एक बड़े बाप के बेकार बेटे का चित्र है)

'ऐसे दिन बाबू सूरज प्रसाद चूड़ीदार पैजामा पहनते, अंगरखा पहनते, सर पर बुर्राक, कलफ की हुई कामदार दुपलिया पहनते और पार्टी में सुनहरी पान की तश्तरी लिये लोगों को पान खिलाते घूमते। बैरा महोदय धुला, दूध जैसा सफेद पेंट-कोट पहने, बहुत ही आधुनिक किस्म के इंग्लिश कट के बाल कटाए, चमकने वाले बालों पर चुहचुहाता हुआ तेल लगाये और खास नम्बर वाली बीड़ी सुलगाये दुकान के सामने स्टूल पर बैठेदु कानदार के लड़के को पढ़ा रहे थे—शाइस्ता खां, उन्होंने कुछ ऐंटे हुए गले से कहा, औरंगजेब का मामा था।'

आपके शब्द-चित्रों में चुटीला व्यंग्य अधिक मिलता है। उनका उद्देश्य है समाज की विषमता पर कारुणिक दृष्टि डालना। शैली की दृष्टि से रेखाचित्र सजीव

हैं, भाषा प्रवाहमय होती है जिसमें स्वाभाविकता तथा सरलता है। बीच बीच में पद्य खंड मिलते हैं, जैसे वसिष्ठ मुनि में—जैसे ही उन्होंने लड्डू खाना शुरू किया और कहा—

चाभो लड्डू पाओ पान,
रहो गंगा जमुना के मैदान।
मुख में लड्डू हाथ में पान
बारह वर्ष का वीर हनुमान।

साधुओं की मस्ती पर कहते हैं—

घास फूंस जे खात हैं तिन्हें सतावे काम।
दूध मलाई जे खात हैं उनकी जाने राम॥

इस प्रकार बीच-बीच में उर्दू के शेर—

यह बेकसी का आलम, यह बेकसी की दुनिया,
दिल जल रहा है फिर भी हम मुस्करा रहे हैं।

साथ ही बोलचाल में अतुकान्त कविता—

गोरा रहा न काला
राजा रहा न रानी
राम का नाम रहा

कहीं-कहीं गड़बड़रामायण के अंश—

कहें भुसुंड सुनो खगनायक,
सौ मां अब नब्बे नालायक।

जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है अधिकांश चित्र निम्नस्तरीय जीवन बिताने वाले पात्रों के हैं, कुछ मध्यवर्गीय हैं 'जैसे चढ्ढा बाबू'। अधिकांश पात्र दीर्घायु प्राप्त होने के कारण पके आम हैं अतएव पुस्तक का नाम सार्थक है।

मालवीय जी व्यंग्य-चित्र लिखने में निष्णात हैं। एक उल्लेखनीय रेखाचित्र 'बिलबिल गुरु' शीर्षक से नवभारत टाइम्स में प्रकाशित हुआ था। समाज की रूढ़ियों पर आप करारा व्यंग्य करते हैं। समाज की गलत धारणाएं उन्हें प्रिय नहीं, उन पर वे सीधी चोट करते हैं।

लक्ष्मीचन्द्र जैन

भारतीय ज्ञानपीठ के नियामक लक्ष्मीचन्द्र जी जैन की रचना 'नए रंग नए ढंग' में भी कुछ अच्छे रेखाचित्र सुरक्षित हैं। प्रथम भाग में राजेन्द्र बाबू, मौलाना

आजाद, जयप्रकाश नारायण तथा विनोबा भावे के सुन्दर तथा मार्मिक शब्द-चित्र हैं। ये छोटे-छोटे भावमय चित्र इन व्यक्तियों के व्यक्तित्व के उदात्त अंश को प्रस्तुत करते हैं। शैली सरल तथा सरस है और इनमें व्यंग्यात्मक चुटकियाँ भी भरी पड़ी हैं। तथ्य तथा व्यंग्य से भरे इन चित्रों को पढ़कर लेखक से भविष्य में अनेक भावमय तथा उच्चकोटि के रेखाचित्रों की आशा की जा सकती है।

महेन्द्र भटनागर

उदीयमान कवि, आलोचक तथा निबन्धकार श्री महेन्द्र भटनागर ने छोटे-छोटे किन्तु मार्मिक स्केच भी लिखे हैं जो कुछ समय पूर्व धार से 'विकृतियाँ' शीर्षक से संकलित हुए थे और अब 'विकृत रेखाएँ : धुंधले चित्र' शीर्षक से संकलित हुए हैं।

वस्तुतः ये समय-समय पर लिखे गये व्यंग्य-चित्रों का संकलन है जो सामाजिक विकृतियों पर आधारित है। कल्पित पात्रों पर आधारित ये व्यंग्य-शब्द-चित्र समाज की बुराइयों पर आघात करते हैं। लेखक ने स्वीकार किया है कि उसने चित्र के प्रभाव को स्पष्ट करने के लिए सांकेतिक रूप से अपनी ओर से भी कुछ रंग छिटके हैं। कुछ स्केचों की शैली आत्मप्रधान है।

'मास्टर रतनलाल' विद्यालय के अध्यापक की ज़िन्दगी का चित्र है, उसकी आर्थिक स्थिति' पर प्रकाश डालने के साथ-साथ उसके स्वयं के और मध्यमवर्गीय परिवार के सदस्यों के मनोविज्ञान पर भी हल्की सी रोशनी डाली गई है। अध्यापक के सामाजिक जीवन की विडम्बना कलेक्टर के समावेश से स्पष्ट रंगों में उभरी है।

'मेरे मित्र' में मित्रता के नकली रूप पर व्यंग्य कसा गया है। कुछ लोग पाई पाई के हिसाब पर ही मित्रता को सुरक्षित समझते हैं। इसके मूल में भी निम्न मध्यवर्गीय मनोवृति काम कर रही है जो आर्थिक अभावों के कारण बनी है।

'चन्दा मामा ! आओ, आओ' में अस्पतालों और डाक्टरों की यथार्थ स्थिति का चित्रण किया गया है। डाक्टरों के गिरे हुए नैतिक स्तर का परिचय इसमें मिलेगा। अधिकांश जनता जानती है कि इलाज की समस्या आज के युग में कितना भयावह रूप धारण कर चुकी है। इसके लिए भी दूषित आर्थिक व्यवस्था उत्तरदायी है।

'इन्कलाब का साया' में पुलिस-अधिकारियों की कामवासना को लक्ष्य कर उभरते हुए सशक्त जन-आन्दोलन को बल पहुँचाया गया है और प्रासंगिक रूप से कवि नाम के प्राणी की विकृति भी प्रस्तुत की गई है।

'रात के समय' पुरुष पिट्ठू समाज में नारी पर होने वाले अत्याचार के एक पारिवारिक पहलू को कुछ रेखाओं में समेटे हुए है।

'गोया साहब' में पाश्चात्य सभ्यता के रंगों में रंगे युवकों की कुत्सित मनोवृत्ति और फूहड़ वार्तालाप का परिचय है।

'प्रोफ़ेसर लाड' आत्म प्रदर्शनकारी एक प्रोफ़ेसर पर व्यंग्य है। 'आपका नाम प्रोफ़ेसर लाड, प्रोफ़ेसर सुगन्धी, प्रोफ़ेसर भटनागर कुछ भी रख लीजिये। उनके हुलिये जैसे आदमी आपने अनेक देखे होंगे। कत्थई टोपी, पीतल के बटन लगा बन्द कोट, पेट पर से नीचा और नंगे पैरों पर से ऊँचा पेंट, बिना मोज़े के, रबर सोल के बाटा के नीले जूते, जिनमें एक फटा है और जिसमें से पैर की एक छोटी उंगली, जिसका नाखून बढ़ा हुआ है, बाहर निकली हुई है, चेहरा भरा हुआ, गंभीर मुद्रा जो कभी-कभी मुसकराहट से हाथ मिला लेती है, कायदे कानून के बेहद मानने वाले।'

'नारी का विद्रोह'—यह नारी के जागरण का प्रतीक है, जहाँ शारीरिक यातनाओं को जब सहन न कर सकने की स्पष्ट घोषणा है, चुनौती है।

'एक रात की बात'—एक औद्योगिक नगर में रहने वाले श्रमिक की करुण कथा है जिसमें पूंजीवादी व्यवस्था के विकृत रूप की ओर संकेत है।

'मुसलमान दीखता है'—यह प्रतिक्रियावादी और संप्रदायवादी मनोवृत्ति की पृष्ठभूमि पर स्मित हास्य की लघुतम कथा है।

'वह' में दमित यौन वासनाओं का हल्का सा स्पर्श है।

'जनसेवक'—इसमें यह बताया गया है कि किस प्रकार अच्छे आन्दोलनों में स्वार्थी और घृणित लोग प्रवेश कर जाते हैं जिससे अच्छे आन्दोलनों व संस्थाओं में धीरे-धीरे घुन लगता जाता है।

जनसेवक में उन नेताओं की ओर व्यंग्य किया गया है जिन्हें दिखावा पसन्द है। 'हमेशा अपने साथ काठ का एक छोटा-सा डिब्बा लिये रहते हैं। काठ के डिब्बे से मेरा मतलब उस डिब्बे से है जिसमें सूत कातने की तकली और रुई रखी रहती है। 'महापुरुष' जब बाहर निकलते हैं तब उसे अपने साथ अवश्य रखते हैं, जैसे कोई शराबी शराब की बोतल। फर्क इतना ही है कि एक खुल्लमखुल्ला रखता है तो दूसरा लुका-छिपाकर। नशेबाज़ दोनों हैं, एक यश के नशे के पीछे है तो दूसरा सुरा के पीछे।' कुछ छींटों की बहार लीजिए,

जीभ की रफ्तार तकली की तुलना में उतनी ही तेज़ होती है जितनी कि 'तूफान मेल' की किसी सड़ियल पैसेंज ट्रेन से।

'गांधीवादी साइन बोर्ड की आड़ में न जाने कितने लोग पनप रहे हैं, गुलछर्रे उड़ा रहे हैं।'

'आजकल उनका कारोबार बन्द पड़ा है और वे भूदानी बनकर

गाँव-गाँव घूम रहे हैं। जमकर फल खाते हैं, ताज़ी हवा लेते हैं।'

'दो महाकवि'—इसमें भ्रष्ट कवियों का खाका खींचा गया है जो 'कवि' नाम को भी लांछित कर रहे हैं।

लेखक का कथन सत्य ही है कि 'सभी स्केच व्यक्ति या समाज के अंधेरे पक्ष को लेकर चले हैं और उसके प्रति पाठक की विरक्ति भावना को जागरित करते हैं।'

रामकुमार 'भ्रमर'

उदीयमान कथाकार रामकुमार 'भ्रमर' ने कहानियों (ड्यूटी मुस्कराने की, गिरस्तिन) के अतिरिक्त फुटकर लेख, वार्ता, उपन्यास आदि सभी कुछ लिखा है। आंचलिक कथाकार के रूप में रामकुमार जी ने अपनी प्रतिभा का चमत्कार कहानी, उपन्यास दोनों ही क्षेत्रों में दिखाया है। भ्रमर जी ने मार्के के अनेक शब्द चित्र भी प्रस्तुत किये हैं, जिनमें से उल्लेखनीय हैं 'भगत जी', 'प्रो. मिचलू', 'चाची गुलबदन', 'मौसी जी', 'बाबू चन्दनसहाय', 'मुईन साहब' आदि।

भगत जी—आपका बाह्यरूप देखिए भ्रमर जी के ही शब्दों में—

> 'पतझर के बूढ़े पेड़ की तरह कृशकाय, साँवला रंग, पलकें उठती-गिरतीं नीली-नीली डूबी सी, गहराई लिये छोटी-छोटी आँखें, तेल की अन्तिम शक्ति से जल रहे दिए की हिलती-डुलती लौ जैसी। बसन्त के पहले दिन खिलती लजीली मुस्कान, सपाट माथा, जवानों को चुनौती देनेवाला फुर्तीला शरीर, आधी बाँह का ग्रामीण सलूका और घुटने तक ऊँची धोती। बालों के नाम पर उनका सिर सूना है। उसी तरह उनका माथा भी चन्दन या तिलक के बगैर एकदम सूना-सा रहता है, जैसे कोई लड़की की हाल विदा किया हुआ वर ही उदास-सा मायूसी-सी समेटे हुए।'

प्रो. मिचलू—प्रो. साहब का शब्द-चित्र इस प्रकार है—

> 'प्रो. मिचलू बालों में तेल न डालते हों केवल ऐसा ही नहीं है, वे ठंड के दिनों में एक-एक माह तक नहाते भी नहीं हैं जिसके बावजूद वे तन्दुरुस्त हैं। उनका फूला-फूला मुंह जो किसी गोल कद्दू की तरह है उनके धड़ और सीने के ऊपर कुछ वैसा ही लगता है जैसे किसी बड़े घड़े के ऊपर छोटा-सा घड़ा और फिर उसके ऊपर पीतल का गोल लोटा औंधा रखा हो। प्रो. मिचलू अनेक स्थानों की सभ्यता के प्रतीक हैं। जैसा कि उनका कहना है, वे लखनऊ बहुत रहे लिहाजा

उन्हें पान खाने और खाने के बाद उसे थूकने की नवाबी आदत पड़ गयी, पर इसका मतलब यह नहीं है कि वे केवल नवाब होकर ही रह गये हों ? नहीं, उनके व्यक्तित्व के महल की दूसरी खिड़की से बनारस झाँकता है। वे भंग पीते हैं और जैसा कि होता है वे ऐसी भंग पीते हैं कि नशे में कई बार अपने बेटे को पिताजी और पत्नी को माताजी कह कर पुकार उठते हैं।'

चाची गुलबदन—चाची के रेखाचित्र का प्रारम्भिक अंश इस प्रकार है—

'गुलबदन नाम में जो नाजो-नजाकत तथा मधुरता समाई है वह चाची गुलबदन में रत्ती भर नहीं है। इस नाम को सुनिए तो कल्पना होती है जैसे यह नाम जिस महिला का है वह आवश्यकता से अधिक नाजुक, सुन्दर और छुईमुई की तरह होगी ? उसके बाल रेशम की तरह मुलायम और शरीर रबर की तरह लोचदार होगा, कुछ ऐसा लगता है जैसे पुराने कवियों की सारी उपमाएं उस नाम पर लागू होती होंगी। जैसे आँखें हिरनी जैसी, मुखड़ा चाँद जैसा, बाल बरसात की घटाओं जैसे, गला लम्बा सा, आवाज मैना जैसी, चाल मोर की तरह, आदि आदि, पर मैं जिन गुलबदन चाची की बात कर रहा हूं वह नाम भर को गुलबदन है, बाकी शरीर या उसमें के किसी अंग से यह नाम सार्थक नहीं होता।'

बाबू चन्दन सहाय—बाबू चन्दन सहाय का चेहरा देखिए—

'उनका चेहरा देखिए तो लगता है जैसे किसी फौजदारी के पुराने केस की मुड़ी-तुड़ी फाइल हो, कुछ गंदी-सी, बदरंगी-सी बेडौल। चेहरे पर चेचक के भारी दाग, किसी लोहे की चलनी के धूल-भरे छेदों की मानिन्द। चलने में कमर पर बल इस तरह पड़ता है कि पीछे चलने वाले किसी भी राहगीर को शहर में अत्यधिक फैशनेबिल लड़की आ जाने का संशय हो जाय।'

मुइन साहब—मानो आपको मुइन साहब को पहचानना है, तो कल्पना कीजिए,

'कार्पोरेशन की किसी गन्दी नाली की, जिसमें ढेर-सी बदबू भरी हो। बदबू पागल कुत्ते की तरह दौड़ रही हो। आपके सामने मुइन साहब के दाँत स्पष्ट हो जायेंगे, फिर आपको कल्पना करनी है एक सुकड़ी हुई चादर की, आपकी आँखों में अपने आप मुइन साहब के चेहरे पर पड़ी झुर्रियां स्पष्ट हो जायेंगी। इसी सिलसिले में आप आगे

सोचिए, एक मुड़े तुड़े कनस्टर के बारे में। आप देखेंगे कि आपकी आँखों में मुइन साहब का मुड़ा-तुड़ा चेहरा अंकित हो गया है। फिर आप सोचिए ऐसे खेत के बारे में जिसकी फसल जहाँ-तहाँ किसी जंगली सुअर के उत्पात के कारण तहस-नहस हो गई हो। आपको ऐसा लगेगा जैसे मुइन साहब के सिर पर बाल हैं।'

रामकुमार 'भ्रमर' जीती जागती नई से नई उपमाएं प्रस्तुत करने में सिद्धहस्त हैं, 'मौसी जी' शीर्षक शब्द-चित्र में आपकी कुछ उपमाएँ द्रष्टव्य हैं—

'उनका बन्द मुंह इस तरह खुला जैसे पान का बन्द बीड़ा खुल गया हो। और मौसी जी के मुंह की गंदगी, दाँतों का पीलापन कुछ इस तरह झाँकने लगा जैसे खुले पान के बीड़े से कत्था, चूना, सुपारी, इलायची के दाने झाँक रहे हों।

बात समाप्त होते न होते उन्होंने मुंह फैलाया, जैसे किसी केतली का ढक्कन खुल गया हो, और पान के दोनों बीड़े मुंह में डाल लिये, जैसे ढक्कन खुली केतली में अचार उंडेला जाय।'

इस प्रकार व्यंग्यात्मक रेखाचित्रों के अतिरिक्त भ्रमर जी ने व्यक्तियों के रेखा-चित्र भी लिखे, जिनमें से उल्लेखनीय है 'कुन्दनलाल जी की त्याग और तपस्या की ६० वर्षीय कहानी' जो साप्ताहिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित हुई थी। भविष्य में आपसे और अधिक सुन्दर तथा मार्के के रेखाचित्रों की आशा है।

महावीर त्यागी

श्री महावीर त्यागी भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के सिपाहियों में से हैं। यदि स्वतन्त्र भारत में प्रतिरक्षा मन्त्रालय के कार्यभार को सम्हालने वाला मन्त्री वस्तुतः सिपाही रहा हो तो वह त्यागी जी हैं। इधर संस्मरण लिखने की कला में भी त्यागी जी ने कमाल हासिल कर लिया है। संस्मरणात्मक शैली में शब्द-चित्र खींचने में भी आपकी लेखनी चमत्कार उत्पन्न करती है। कुछ समय पूर्व प्रकाशित उनके १४ संस्मरणों का संग्रह 'मेरी कौन सुनेगा' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है।

'सरदार पटेल' से कुछ अंश उद्धत हैं—

'लोग उन्हें लौह-पुरुष कहते थे पर यह पता बहुत कम को है कि लौह के पिंजड़े की तरह उनके वक्षस्थल के भीतर एक चकोर जैसा निर्दोष और बच्चों जैसा चंचल हृदय गतिमान् था। मुझे शक है कि शायद उनका दिल आँखों में हो, क्योंकि उनकी पलक भारी और पुतली

> सुस्त नजर आती थीं। मेरे एक मित्र का कहना है कि आंखों की अपेक्षा उनके दिल की झलक ओठों पर अधिक दिखाई देती थी। लोग यह भी कह सकते हैं कि 'दिल' जबान (जिह्वा) में था।'

'नेहरू : व्यक्तित्व और विचार' में त्यागी जी का शब्द-चित्र भी उल्लेखनीय है। इसका एक फड़कता हुआ वाक्य द्रष्टव्य है जिसमें उनकी शैली का चमत्कार है—

> 'पर मन की तली में वह मुस्कराती, शरमाती, धमकाती और उकसाती सूरत, छाती पर गुलाब लगाये, अभी तक ऐसी समाई हुई है कि भुलाई नहीं जाती, अब कहाँ जाऊँ ?'

कबूतरी का दूध, अम्मा बाल्टी मंगाओ, जब बापू रो पड़े, हड़ताल, बिछुआ चू पड़ा भी उल्लेखनीय हैं।

यशपाल जैन

श्री यशपाल जैन ने यात्रा-साहित्य के माध्यम से हिन्दी-साहित्य की अभिवृद्धि की है। मध्य-पूर्वी एशिया, यूरोप, पूर्वी अफ्रीका की यात्राओं का विवरण इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। इधर पिछले चीन तथा पाकिस्तान के साथ युद्ध स्थलों की यात्राओं का भी विशेष महत्त्व हो गया है। लद्दाख की रोमांचकारी यात्रा जो छह खंडों में समाप्त हुई इस दृष्टि से पठनीय है। यात्रा के मध्य दर्शनीय स्थलों का शब्दचित्रांकन यशपाल जी की लेखनी से हुआ है। उत्तराखंड का विवरण भी सुन्दर है।

यात्राओं के मध्य जाने-अनजाने अनेक व्यक्ति मिलते रहे हैं जिन पर 'कुछ अमिट रेखाएँ' शीर्षक से यशपाल की वार्ताएँ प्रसारित हुई हैं। इन वार्ताओं में अनेक व्यक्तियों का सफल चित्रांकन किया गया है इनमें से कम्बोडिया के 'चेट्टियार' का शब्द-चित्र उल्लेखनीय है।

कुछ समय पूर्व काका कालेलकर जी के अभिनन्दनार्थ प्रकाशित 'संस्कृति के परिव्राजक' ग्रन्थ में आपका 'जीवन और प्रतिभा के धनी' शीर्षक से संस्मरणात्मक रेखाचित्र प्रकाशित हुआ है।

'मधुकर' के आप सह सम्पादक थे। आपके समय में ही 'रेखाचित्रांक' प्रकाशित हुआ।

डा. प्रेमनारायण टंडन

डा. टंडन ने अनेक विधाओं के माध्यम से साहित्य भंडार को भरा है। रेखाचित्र विधा के माध्यम से लिखे गये सात शब्द-चित्रों का संकलन 'रेखाचित्र' शीर्षक

से प्रकाशित हुआ है। इस संकलन में कूकी, रोगी, मैं पत्रकार हूं, अफसर, हिन्दी लेखक, भैया साहब और हिन्दू नारी शीर्षक से रेखाचित्र हैं। प्रत्येक चित्र एक वर्ग का प्रतीक है। कूकी अपने में पृथक् है जिसमें सच्चेपन और ईमानदारी की भावना है।

'मैं पत्रकार हूं' एक व्यंग्य-चित्र है। 'अफसर' में उच्चाधिकारियों की खराबियों का विश्लेषण किया गया है।

हिन्दी लेखक का एक चित्र द्रष्टव्य है—

> 'अपने दुबले-पतले इकहरे शरीर को निर्धन मजदूरों के दुर्बल हाथों से कती-बुनी खादी की मोटी धोती और मामूली लंबे कुरते से, जो शरीर की दयनीय दुर्बलता के कारण आवश्यकता से कुछ अधिक लम्बा जान पड़ता है, ढके, विगत विद्यार्थी जीवन के अवशिष्ट चिह्न से सर के बाल अस्तव्यस्त बाहे, अनुपयुक्त वेशभूषा और पिचके गालों के कारण गोल और छोटा होते हुए भी लम्बा लगने वाला सूखा चेहरा लिये, पैर में दस-बारह आने की, पहनने वाले की करुण दशा की ओर संकेत सा करती हुई मामूली चप्पल पहने—यही है हिन्दी लेखक का पूर्णपरिचित चित्र।'

'हिन्दू नारी' में सनातनी हिन्दू समाज की नारी का चित्रण है—

> 'लगभग पाँच फीट की दुबली-पतली नारी, जिसके मन में यौवन के विकास की लालसा तो है, पर मुख पर कांति नहीं, खुलता हुआ सांवला सा रंग, और वैसी ही खिलती हुई सफ़ेद धोती धुली हुई, हाथ में चार चूड़ियां, पैर में दो एक छल्ले, मुख कुछ लम्बा, नाक पतली, आंखें न छोटी न बड़ी, काजल की कुछ कालिमा लिये, माथे पर बिंदी, कभी जरा छोटी और कभी जरा बड़ी गहरे लाल रंग की, ओंठ पतले अपनी स्वाभाविक नहीं, मान की लाली लिये हुए, चिकनाये हुए से सूखे, एड़ी तक नहीं कमर तक पहुंच सकने वाले काले-काले बाल, किंचित् भूरापन लिये हुए, ढीले बंधे बालों के बीच टेढ़ापन लिये हुए सीधी मांग की स्पष्ट रेखा सिंदूर से भरी हुई।'

'रोगी' एक संवेदना चित्र है जो करुणा से आप्लावित है। इसका एक अंश इस प्रकार है—

> 'चल होकर भी अचल सा पड़ा रहने वाला, चेतन होकर भी जड़वत् व्यवहार करने को विवश, संसार का कदाचित् सबसे निरीह और अभागा प्राणी है वह रोगी जिसके सगे संबंधी, दवा दारू करने की

बात तो दूर, जिसकी छूत से, छाया से और हवा से बचना चाहते हों।'

टंडन जी के ये रेखाचित्र समाज पर करारे व्यंग्य हैं और उसके खोखलेपन को चित्रित करते हैं।

श्री अविनाश चन्द्र

लगभग बीस वर्ष पूर्व आपके लिखे कई स्केच विभिन्न पत्रों में प्रकाशित हुए थे। आपकी एक कहानी '१२० सैकिंड' शीर्षक से हंस (फर-मार्च ४६) में प्रकाशित हुई थी जिसमें स्केच के तत्व विद्यमान थे। उसके बाद ही आपका एक उल्लेखनीय रेखाचित्र श्री गोवर्धनदास पर अपने दास बाबू शीर्षक से हंस (मई १९४६ ई.) में प्रकाशित हुआ। दास बाबू का एक चित्र द्रष्टव्य है--

> 'अपने गोवर्धनदास बाबू की बात है। वे जो खद्दर की मोटी धोती और भगवा कुर्ता पहनते हैं, पैरों में देसी जूता और सिर में विलायती एटकिंसन लगाते हैं, जिनके सामने के दो दांत मौका बे मौका बाहर निकलकर मुस्कराते हैं, जो मौका मिलने पर स्टेज पर खड़े होकर बंदेमातरम् और थोड़े दिनों में जय हिन्द की पुकार लगाते हैं, उन्हीं गोवर्धनदास बाबू की बात है।'

इधर कहीं आपका उल्लेखनीय रेखाचित्र पढ़ने को नहीं मिला।

श्री राजेन्द्रलाल हांडा

श्री राजेन्द्रलाल हांडा कथा-साहित्य के लेखकों में स्थान बना चुके हैं। उनका उल्लेखनीय ग्रन्थ 'राजधानी के अंचल से' प्रयाग से प्रकाशित हुआ था। 'मैं और मेरी मोटर' शीर्षक से आपने रोचक शैली में एक उपन्यास लिखा है। आप राष्ट्रपति महोदय के प्रेस-अटैची हैं।

रेखाचित्र लिखने की कला में आप सिद्धहस्त हैं और नये प्रयोग भी करते रहते हैं। इस विधा में ही एक प्रयोग आपका 'दिलीप भंडारी' शीर्षक से आजकल (सितम्बर १९५२) मे प्रकाशित हुआ। इससे पूर्व आजकल में ही (अक्टूबर १९५०) घर के रईस अच्छे-खासे, पढ़े-लिखे, जीविका के बारे में सोचने का जिन्हें अवसर ही नहीं मिला, ऐसे व्यक्ति पर 'वाह, कैलाश जी' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। इसी प्रकार एक कृत्रिम नाम धीरजलाल जी से 'साहित्यकार जी' शीर्षक से इस विधा में लिखा लेख 'आजकल' में सितम्बर १९५१ में प्रकाशित हुआ है। भविष्य में आपसे और अधिक रेखाचित्र प्राप्त होने की आशा है। 'दिल्ली में दस वर्ष' में पुरानी दिल्ली की वह

तस्वीर सुरक्षित है, जो हमारी आँखों से ओझल हो चुकी थी। यह दिल्ली के ही प्रेमी द्वारा अंकित भावभीना चित्र है जो मार्मिक होने के साथ व्यंग्य-चित्र संग्रह का सा आनन्द देता है।

माखनलाल चतुर्वेदी

भावात्मक गद्य-लेखन में चतुर्वेदी जी 'भारतीय आत्मा' के रूप में विख्यात हुए। 'साहित्य देवता' में कुछ ऐसे ही भावात्मक निबन्ध हैं जिनमें चित्रात्मकता है। गांधी जी के एक निबंध का अंश—

> 'एक वाणी है जो झोंपड़ियों की कराह को राजमहलों में ले जाकर टकराती है और राजमहलों के अपमानों को झोंपड़ियों के सेवा-पथ में मिले प्रभु के प्रसाद की तरह ग्रहण करती है।'

'समय के पाँव' में भी कुछ अच्छे रेखाचित्र हैं। उनके नवीन ३९ गद्य खंडों का संग्रह 'रंगों की बोली' में एक सुन्दर तथा भावमय रेखाचित्र है जिसमें मीरा की उत्कट भक्ति और अपने गोविन्द के प्रति सम्पूर्ण भावों को वाणी दी गयी है।

लक्ष्मीकांत भट्ट

बहुत वर्ष पूर्व आपका लिखा पुरुषोत्तमदास टंडन पर एक भव्य रेखाचित्र 'श्रद्धेय टंडन जी' शीर्षक से विशाल भारत में प्रकाशित हुआ था।

अक्षयकुमार जैन

अक्षयकुमार जी जैन की यात्रा-साहित्य संबंधी पुस्तकें 'दूसरी दुनिया' और 'ब्रिटेन में चार सप्ताह' में रोचक शैली में स्थानों के चित्र हैं। इनके अतिरिक्त अमिट रेखाएँ शीर्षक पुस्तक में चरित्र-निर्माण, शौर्य एवं ओजपूर्ण जीवन को प्रेरणा देने वाली जीवनियाँ हैं। इधर हाल के युद्ध में लड़े हुए वीरों–मेजर शैतानसिंह, सूबेदार जोगेन्द्र सिंह, मेजर घनसिंह थापा आदि के उदात्त जीवन का चित्रांकन भी इसमें मिलता है।

बैकुंठनाथ मेहरोत्रा

मेहरोत्रा जी के 'एक्सीडेंट' शीर्षक रेखाचित्र का आकाशवाणी से प्रसारण हुआ था जिसका एक अंश यहाँ उद्धृत है—

> 'चिलचिलाती धूप और लू के निर्मित थपेड़ों के बीच लाचार और विवश, पसीने से तर-बतर, मौसम को मन ही मन कोसता मैं

यंत्रवत् पैडिल घुमाता जा रहा था। दूर-दूर तक निर्जन अजगर की तरह पड़ी तारकोल की काली सड़क पर लपटें-सी उठ रही थीं। पिघलकर रिस आया तारकोल ऐसा हो गया था कि उस पर सवारियों के पहियों के निशान पड़ जाते थे। नंगा पैर गड़े तो तलवा फफोलों से भर जाय। सड़क के दोनों ओर, कहीं-कहीं पर ऊँघते पेड़ों के नीचे छाँह के टुकड़े चुपचाप पड़े थे। जितनी बार उनके बीच से गुजरता तो सहसा रेगिस्तान के उन यात्रियों की याद हो आती जिनके मन 'ओसिस' लिखकर हरे हो जाते होंगे।'

मुक्तिबोध

मुक्तिबोध ने भी समय-समय पर अच्छे स्केच लिखे हैं। धर्मयुग में प्रकाशित श्रद्धांजलि लेख में शमशेर बहादुर सिंह ने सूचना दी है कि साप्ताहिक 'नया खून' में वे एक कालम लिखने लगे थे। इसमें मुक्तिबोध के कई जोरदार स्केच निकले हैं।'

पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र'

उग्र जी की 'व्यक्तिगत' शीर्षक संग्रह-कहानियों में चित्रात्मकता अधिक है अतएव उन्हें 'स्केच कहना' अधिक उपयुक्त होगा।

ऋषि जैमिनी कौशिक बरुआ

बरुआ जी 'राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रंथ' के प्रबन्ध सम्पादक रहे थे। इस ग्रन्थ में गुप्त जी पर 'इकहत्तर वर्षों की अभिनन्दनीय गाथा 'शीर्षक से आपका विस्तृत लेख है।

माखनलाल चतुर्वेदी की जीवनी में कई अच्छे रेखाचित्र हैं,

'उनके संघर्षशील चेतना के पौरुषदृप्त तेज से युक्त आर्यमुख पर बस दो ही सत्य अवशेष रह गये हैं—जीवन कदर्य भेदी दृष्टि और उसके नीचे श्वेत श्मश्रु। मूंछों की सफेदी स्पष्टतया श्रमगर्व की स्वेद बूंदों-सी स्निग्ध है। अब तो माखनलाल जी की गहन गम्भीर दृष्टि से अधिक उनकी सफेद मूंछें ही उनके मुखमण्डल पर प्रधान रह गई हैं। जिन अपराजित शैलश्रृंगों ने बस उड़ती हुई सफेद बदलियों की सफेदी संजोई है उन्हीं की मानिन्द ये मूंछें अपनी जावक जय की कथा खुलकर बोलती हुई लगीं।'

'६९ वर्षों की धूप-शीत-ग्रीष्म का सेवन करते हुए माखनलाल जी के चेहरे पर एक दृढ़ भंगिमा-सी जम गई है, प्रायः ही संगीन मामलों पर सोचते रहने से उनका चेहरा साधारण शिल्प की अनुकृति सा हो गया है, फिर भी इस पत्थरवत् चेहरे पर अब भी भावनाओं का उद्रेक स्पष्ट देखा जा सकता है। और जब वे अतीत की ओर उन्मुख होते हैं तो एक प्रतीति यह मुझे हुई कि उनके पास शब्दों का भंडार नहीं है, उनके पास तो स्मृतियों का रश्मिदल विद्यमान है, उनकी उन किरणों के तीव्र प्रकाश में शब्द केवल धूलिकण की तरह उड़ते हुए दीखने लगते हैं। केवल अबोध ही यह समझता है कि वह किरण नहीं हैं, धूलिकणों की पुंजरेखा है। पर सर्वोपरि सत्य तो वही किरणरेखा है।'

भविष्य में बरुआ जी से हमको और भी शुद्ध रेखाचित्र प्राप्त होने की आशा है। ये रेखाचित्र तो उनकी जीवनी के मध्य बिखरे पड़े हैं।

हिमांशु जोशी

जोशी जी ने जैनेन्द्र जी के ५९वें जन्म दिवस पर (तीन वर्ष पूर्व) अनेक चित्र प्रस्तुत किये हैं, उनमें से एक चित्र द्रष्टव्य है,

'वैसा ही (सनातन) करघे का कुर्ता, बगुले के पंख-जैसी करघे की धोती, अहिंसक चमड़े की शोलापुरी चप्पलें, दीवार पर वे ही बाबा आदम के जमाने के पुराने चित्र, मक्खनलाल जी का मक्खन की छोटी टिकिया जैसा छोटा मकान, वही ऋषिभवन के भवनेश की भवन परित्याग कराने की रोज-रोज की धमकियाँ। विषम संवैधानिक चुनौतियों पर जैनेन्द्र जी जाएँ भी तो कहाँ?'

शैली की दृष्टि से भी यह रेखाचित्र अद्वितीय है। उपमाएँ नवीन हैं, जैसे

'शतरंज की गोटी की तरह सब्जी का टुकड़ा उठाते हैं फिर रख देते हैं। ध्यान कहीं और है, किसी दूसरी दुनिया में।'

शमशेरसिंह नरूला

नरूला जी का एक अच्छा रेखाचित्र 'मूक नहीं यह पत्थर' शीर्षक से हंस में प्रकाशित हुआ था। इस रेखाचित्र में सन्ध्या का सजीव वर्णन है, पर काव्यत्व शैली में—

'ढलती गरमियाँ, जब वर्षा की रिमझिम थम जाती है और आकाश शिशु के मन-सा निर्मल हो जाता है, जब दिन खुले-खुले और धूप मीठी-मीठी होती है, परन्तु साँझ-सवेरे छोटे हो रहे दिनों का बोझिलपन अवसादमय परछाँइयाँ बखेरता हुआ तबियत को अनमना-सा बनाता जाता है, जब वसुन्धरा की पुष्पजटित सेज की सजधज तो अभी वैसी ही होती है किन्तु नजरछाई पतझड़, हर दीठ से एक न एक बूटा कुम्हला देती है।'

अनंत गोपाल शेवड़े

शेवड़े जी की कृति 'तीसरी भूख' आत्मप्रशंसा के भूखों तथा उतावलों पर चुभने वाले व्यंग्यात्मक शैली में लिखे गये रेखाचित्रों का संग्रह है। आपने अधिकतर काल्पनिक रेखाचित्र ही लिखे हैं। इस दृष्टि से यह संग्रह उल्लेखनीय है।

'भाइयों और बहनों' में तथाकथित नेताओं पर चुभने वाले व्यंग्य हैं।

रामगोपाल विजयवर्गीय

श्री विजयवर्गीय का 'सोनिया' शीर्षक स्केच लहर (अगस्त १९४७) के अंक में प्रकाशित हुआ। 'सोनिया' ठाकुर की एकमात्र सन्तान थी। वैसे यह एक प्रेमकहानी कही जा सकती है पर एक पात्र विशेष के चरित्र पर बल देने के कारण ही यह स्केच है, जिसका एक अंश यहाँ उद्धृत है,

'आयु चौदह-पन्द्रह वर्ष लगभग होगी। श्याम वर्ण, गंभीर और सरल स्वभाव की लड़की है। एक मैली धोती, जिसका रंग उड़कर धुंधला सा पड़ गया है, पहिने रहती है। किसी से न बोलती, न किसी के किसी प्रश्न का उत्तर देती है। दोनों हाथों से घुटनों को दबाये नतमस्तक बैठी रहती है।'

मन्मथनाथ गुप्त

आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि रामधारी सिंह 'दिनकर' शीर्षक पुस्तक के आरम्भ में दिनकर का अच्छा रेखाचित्र है जिसका एक अंश इस प्रकार है—

'गोरा चिट्टा रंग, लम्बाई पाँच फुट ग्यारह इंच, भारी-भरकम शरीर, जो अब हलका और दुर्बल हो चला है, बड़ी-बड़ी आँखें, जो रचना के दिनों में चिन्तन क्लिष्ट लगती हैं पर बात करते समय

या कविता-पाठ करते समय प्रदीप्त हो उठती है। ललकार भरी बुलन्द आवाज़, तेज़ चाल और क्षिप्र बुद्धि---ये हैं वे बहिरंग विशेषताएँ जिनसे दिनकर का व्यक्तित्व बना है।'

सूर्यनारायण ठाकुर

ठाकुर साहब की पुस्तक 'दुनिया की तस्वीर' कहानियों का संग्रह है पर इसमें कुछ नितान्त स्केच मात्र हैं।

निरंजननाथ आचार्य

लेखक की कृति 'बिखरे पात' शीर्षक से प्रकाशित हुई है जिसके प्रारम्भ में लेखक ने घोषणा की है कि ये चित्र 'आकाश-गंगा से नहीं, पाँव के नीचे की धरती से चुने गये हैं।'

पुस्तक में सामान्यतः ऐसे निम्न कोटि के पात्रों का रेखांकन किया गया है जो भ्रष्ट पर बड़े व्यक्ति से भी अच्छे हो सकते हैं। एक ईमानदार चौकीदार का चित्र पठनीय है। खान अब्दुल गफ्फार खाँ की मीटिंग में गोली खाने वाले एक खान का चित्र बड़ा मार्मिक है।

रेखाचित्र सामान्यतः रोचक शैली में लिखे गये हैं जिनमें कहानी की भ्रान्ति होती है।

मदन वात्स्यायन

विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में मदन जी के स्केच प्रकाशित होते रहे हैं, जिनमें उल्लेखनीय है—नई धारा के मार्च ५२ के अंक में प्रकाशित 'कवि प्रिया' और अक्टूबर ५४ के अंक में 'नमस्तस्यै नमस्तस्यै' शीर्षक स्केच।

विष्णु अम्बालाल जोशी

जोशी जी का फल वालों के जीवन पर आधारित एक स्केच 'कुंजड़ा' शीर्षक से 'आजकल' के सितम्बर १९४५ के अंक में प्रकाशित हुआ।

भिक्खु

'अतुलचन्द्र चटर्जी' पर 'मास्टर मोशाय' शीर्षक से एक रेखाचित्र सरस्वती के जन १९५० के अंक में प्रकाशित हुआ, जिसका एक अंश इस प्रकार है—'खद्दर की

ढीली-ढाली धोती पर वैसा ही ढीला कुर्ता और ऊपर से एक सफेद चादर। उस बाहर से प्रशान्त दीखने वाली दीर्घकाया को श्वेत श्मश्रु और श्वेत परिधान के आधार कोई भी पहचान लेता है कि यह मास्टर मोशाय हैं।'

कृष्णा सोबती

रेखाचित्र की पुरानी लेखिकाओं में से हैं। हंस के नवम्बर ४३ के अंक में ही अस्पताल शीर्षक से एक स्केच प्रकाशित हुआ था जिसका एक अंश इस प्रकार है—

'सीमेन्ट के चिकने फर्श पर नर्सों की ऊँची एड़ियाँ मौत के खूनी और तीखे पैरों की तरह बीमारों की क्षीण छातियाँ चीरती हुई आर-पार हो जाती हैं।'

एक दूसरा रेखाचित्र आजकल में (अप्रैल १९५२) 'एक दिन' शीर्षक से प्रकाशित हुआ।

गोपीकृष्ण 'गोपेश'

गोपेश जी का डा. रामकुमार वर्मा पर एक अच्छा रेखाचित्र कौमुदी विशेषांक में 'सावनी-सावनी सा व्यक्तित्व' शीर्षक से संकलित हुआ है जिसमें डाक्टर साहब के सात स्मृतिचित्र हैं,

'बादलों की सुरमई कोरों के उभार और बनाव की बात है··· यह है शब्द-चित्रों का एक इन्द्रधनुष···ऐसे जाने कितने इन्द्रधनुष बन सकते हैं डाक्टर रामकुमार वर्मा के जीवन की झाँकियों से···बड़ा सावनी-सावनी सा व्यक्तित्व है उनका।'

भारती जी का शब्द-चित्र इस प्रकार है,

'पाजामा और नेवी ब्ल्यू कमीज पहनते हैं, रंग हल्का साँवला है···बाल घुंघराले होते-होते बाल-बाल बचे हैं··कद लम्बा है, दुबले-पतले ऐसे हैं···तभी तो कमीज की आस्तीन के बटन बन्द किये रहते हैं।'

विद्यानिवास मिश्र

व्यक्ति-व्यंजक निबंध-लेखकों में मिश्र जी ने अपना अच्छा स्थान बना लिया है। इस दिशा में लिखे गये आपके संग्रह हैं 'छितवन की छाँह,' तुम चंदन हम पानी', 'कदम की फूली डाल' एक चित्र द्रष्टव्य है,

'देहात में है झिनकू साहु की फूलती-फलती हुई बिरादरी जिनकी बाँस की पेटी तक मोटे-मोटे भुजायठों से, हँसुलियों से और कंठहारों से

लेकर हल्की नकवेसर, लौंग, कनफूल, बेंदी और झूमक से ठसाठस भर गई है।'

इन निबन्ध-संग्रहों में जहाँ आपने यात्रा साहित्य पर संस्मरणात्मक शैली में लिखा है, अच्छे शब्द-चित्र भी मिल जाते हैं——

'पथरीली जमीन, पत्थरों से लड़ झगड़ कर बहने वाली नदियों में बड़े-बड़े पत्थर के ढोंके, विरल पत्तों वाले पेड़ और झंखाड़ घूसर जंगल, क्षण-क्षण पहाड़ियों का चढ़ाव-उतार, लाल रेख और लाल धूलि, हरियाली का नामोनिशान नहीं, सिवा नदियों और तालाबों के श्यामल जल प्रसार में, कोसों बस्ती नहीं, और जगह-जगह लम्बे घूंघट, लम्बी डोर और लम्बीं गर्दन वाले खड़े, बिक्री की चीजों में पान सबसे अधिक सुलभ, वह पान भी अनेक विशेषताओं से मंडित।'

आपके ये संग्रह 'धरती के कुसुमों' की सजीव अलबम हैं।

रामप्रकाश कपूर

कपूर साहब की कृति 'अंजो दीदी' में ऐसे चरित्र का रेखांकन है जो भीतर नरम है। यह ऐसी महिला की कहानी है जिसके पति, पुत्र आदि धीरे-धीरे छीन लिये गये हैं और जो आश्रयहीन है। ऐसी नारी बाह्य रूप से कठोर बन जाय तो क्या आश्चर्य है।

चन्द्रमौलि बख्शी

बख्शी जी के 'संन्यासी बाबा' में एक ऐसे व्यक्ति की कथा है जो विकृत मनोदशा से पीड़ित है। कुण्ठाओं से ग्रसित व्यक्ति का अच्छा चित्र है जो अन्त में पागल हो जाता है।

रासविहारी लाल

लाल की कृति 'खंडहर बोलते' में 'वैशाली' शीर्षक स्केच अच्छा है जिसमें वैशाली को स्त्री का प्रतीक मानकर उससे ही आत्मकथा शैली में वर्णन करवाया है। वैशाली के प्राचीन वैभव का चित्रात्मक वर्णन है। इस रेखाचित्र में तत्कालीन, सभ्यता, संस्कृति तथा समाज व्यवस्था का अच्छा चित्रांकन किया गया है।

इस स्केच में एक प्रेरणाप्रद संदेश भी है—

'यदि तुम सक्रिय होना चाहते हो, निर्माण करना चाहते हो तो

क्यों न उस दीवार को ढाह दो जो आज फिर मानव-मानव के बीच उठ खड़ी हुई है।'

भवानीदयाल सन्यासी

संन्यासी जी की रचित पुस्तक 'प्रवासी की आत्मकथा' में उन व्यक्तियों की भी झाँकियां हैं जिन्होंने प्रवासी भारतीयों में राजनीतिक जागृति कराने में सक्रिय भाग लिया। राजनीतिक उद्देश्य से लिखी गई इस आत्मकथा का महत्त्व साहित्यिक भी है। अनेक महापुरुषों—गांधी, दीनबन्धु एण्ड्रूज, तिलक, गोखले, मोतीलाल, राजेन्द्रप्रसाद, पद्मसिंह शर्मा, गणेश शंकर विद्यार्थी, बनारसी दास चतुर्वेदी आदि के शब्द-चित्र भी इस ग्रन्थ में हैं।

विद्यार्थी जी का शब्द-चित्र यहाँ उद्धृत है—

'छोलदारी के अन्दर जाकर उनको देखा। कृशकाय, व्यक्त भाल, कम्बु ग्रीव, उन्नत वक्ष, ओजस्वी आंखें, तेजस्वी रूप, मेधावी मस्तिष्क और सेवासिक्त हृदय, शरीर पर सफेद खादी का कुर्ता तथा सिर पर गांधी टोपी।'

डा. कमलेश

प्रसिद्ध आलोचक, कवि तथा इन्टरव्यूकार डा. कमलेश ने अच्छे रेखाचित्र भी लिखे हैं पर इन्टरव्यू शैली में ही। पृथक् से जो कुछ रेखाचित्र लिखे हैं उनमें एक डा. रांगेय राघव पर है—

'गौर वर्ण, उन्नत ललाट और सुगठित किन्तु सुकुमार शरीर तो आकर्षक था ही, पर उनकी आंख और अंगुलियां अद्भुत थीं। आंख विशाल और आभा से दीप्त थीं पर बड़ी मोहिनी शक्ति उनमें बसी थी। देखने वाले को वे बरबस मन्त्र-मुग्ध कर लेतीं। और अगुलियां? उनकी लम्बाई, कोमलता और नुकीलापन असाधारण ही था। सिगरेट वह एक खास अदा से पीते थे। पास बैठे एक व्यक्ति का ध्यान उस अदा के साथ-साथ उनकी अंगलियों पर भी जाए बिना न रहता।

उनका परिधान कुर्ता-धोती ही रहता, पर जब कभी वह पैदल चलते तो उस चाल में गरिमा का दर्शन होता। पटलीदार धोती का सिरा हाथ में थामे मन्द-मन्द एक-सी चाल से चलना उनकी खूबी थी।'

डा. कुमार विमल

डा. विमल ने आलोचना में प्रकाशित 'डा. नगेन्द्र' शीर्षक लेख में उनका एक अच्छा शब्द-चित्र प्रस्तुत किया है, जिसका अंश यहां उद्धृत किया जा रहा है—

'न अधिक ऊंचा, न नाटा, मंझोले कद में एक अपराजेय व्यक्तित्व। प्रसन्न गम्भीर मुद्रा, आर्यों जैसी सुडौल नाक पर चश्मा और चश्मे की पारदर्शक ओट में उज्ज्वल दीप्ति से भरी हुई आंखें। खिची हुई रेखाओं-जैसे ओठों पर निश्चय और आत्मविश्वास की वर्णमाला। किन्तु, इन सभी गुणों के रहने पर भी डा. नगेन्द्र पहली नजर में मिलनसार नहीं मालूम पड़ते। मानो, इनके व्यक्तित्व के चारों ओर दर्पित आचार्यत्व का कोई लौहसार घेरा लगा हो। कहीं कोई लोच और मार्दव नहीं, किसी बवण्डर के समक्ष लचीले बेंत की तरह झुक सकने का कोई गुण नहीं। बात-बात में भृकुटियों पर सामन्ती वक्र कुंचन, उन्नत मस्तक पर दृढ़ता सूचक दप का उतार-चढ़ाव और जब-तब असहमति को व्यक्त करने के लिए रौबीले ललाट पर हलकी सिकुड़न। इसलिए नहीं कि नगेन्द्र बेतरह दम्भी हैं, बल्कि इसलिए कि इनके स्वाभिमान पर शान चढ़ी हुई है और इनके स्वभाव में आधुनिक युग की कृत्रिम सहनशीलता नहीं है।'

श्रीमती कमला रत्नम्

श्रीमती रत्नम् ने ललितादेवी शास्त्री से विशेष भेंट-विवरण में 'भारतीय आदर्श पर अडिग एक निष्ठामयी नारी' का रेखाचित्र भी प्रस्तुत किया है,

'स्वच्छ देशी परिधान में अवगुण्ठित देह, असीम लावण्य से भरा मधुमक्खी के तरल द्रव के समान सुनहरा चेहरा, आत्मा की सुगन्ध से विकसित दो नेत्र-पुष्प जो अपने दृष्टिपथ की सभी वस्तुओं को नयनसुधा से सिंचित करते थे, हीरे की कनी से मण्डित नासिका, सफेदी आ जाने पर काले का आभास देने वाले केश और उन पर अग्नि के समान जलती हुई सिन्दूर रेखा, होठों की चंचल मुस्कान को स्थिर दृष्टि से देखती हुई माथे की बड़ी-सी गोल बिन्दी जो देखने वाले के मन पर अंकित हो पानी पर पड़ी तेल की बूंद के समान बढ़ती ही जाती थी।'

(अब तो यह चित्र केवल स्मृति-चित्र मात्र ही रह गया है)

रामचन्द्र तिवारी

रामचन्द्र तिवारी ने बालसाहित्य के अन्तर्गत महापुरुषों तथा नेताओं के अच्छे शब्द-चित्र प्रस्तुत किये हैं। यात्रा-वर्णनों के अन्तर्गत अच्छे विवरण दिये हैं। दिल्ली प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशन का सभापतित्व (कवि-सम्मेलन में) महाकवि निराला ने किया था। इस अवसर पर निराला के दो चित्र आपने प्रस्तुत किये हैं---

> 'गौर वर्ण और स्वास्थ्य-लालिमा से दीप्त शरीर पर कूरवटी रंग का खद्दर का कुर्ता ऐसा लग रहा था मानो श्वेत खद्दर उनकी काया की रक्ताभता में रंग लाया हो। चौड़ा माथा, बड़े भावमय नेत्र, नीलिमापूर्ण पुतलिका, ग्रीक महापुरुष-सरीखी उन्नत शुक नासिका तथा कोमल कुंचित केश-राशि व्यक्तित्व की दिव्यता को और भी उजागर कर रहे थे। उनकी ठोड़ी उनके दृढ़ निश्चयी होने का उद्घोष कर रही थी। विधि-शिल्पी की यह अन्यतम कृति यदि अन्यतम शब्द-शिल्पी बनी तो क्या आश्चर्य है।'

कवि-सम्मेलन में विघ्न पड़ने लगा, फिर क्या था 'कौन विघ्न डाल रहा है ?' वाक्य उनके मुख से निकला। इस समय का चित्र—

> 'आंखों से निकलती चिनगारियां, क्रोध में झूलता हाथ और पहलवानों की तरह टांगों को किंचित् चौड़ा कर चुनौती का सामना करने के लिए तैयार मुद्रा---उन्हें देखकर गंगावतरण के समय डट कर खड़े महादेव के चित्र की स्मृति हो आई। शिवजी की जटाओं के स्थान पर निराला जी की केशराशि लहरा रही थी और विक्षुब्ध जनता-गंगा का क्षोभ धीरे-धीरे तिरोहित हो रहा था।'

हंसराज रहबर

हिन्दी के उदीयमान कहानीकारों में आपका स्थान है। जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं को लेकर कहानी लिखने में आप सिद्धहस्त हैं। प्रो. प्रकाशचन्द्र गुप्त के अनुसार रहबर की कहानियां जीवन की विरूपता और विरसता के स्केच हैं, पेंसिल से खिंचे अथवा क़लम और रंग की गहरी, पुष्ट, दृढ़ रेखाओं से अंकित। इनमें रहबर ने रंग बहुत कम भरे हैं और अकसर चित्रण की कठोरता से, निर्भयता से, विरसता से मन एक अवसाद से भर जाता है। 'जिन्दगी की उमंग', 'जननी', 'अर्थ-

व्यर्थ', 'बधाई', 'होनहार बिरवा', 'औरत' आदि चित्रों में समाज की कुरूपता, विडम्बना और क्रूरता पर लेखक ने भरपूर प्रहार किया है।'

प्रेमचन्द के व्यक्तित्व पर आपने अच्छा रेखाचित्र लिखा है। 'अर्थ-व्यर्थ' से एक चित्र द्रष्टव्य है—

> 'जब मैं बहुत उदास और अकेला-अकेला महसूस करता हूं तो अपने दो मंजिले कमरे के सामने ऊंची मुण्डेरी से लगकर खड़ा हो जाता हूं। नीचे चौक है जहाँ तीन तरफ़ से सड़कें आकर मिलती हैं। इस पर इस समय तांगे, मुसाफिर, मवेशी गुजरते रहते हैं। मैं न जाने क्यों अपने विचारों में व्यस्त इन्हें देखता हूं।'

कुलभूषण

कुलभूषण जी की कहानियों में भी चित्रात्मकता होती है। यात्रा-वर्णनों में भी आप रोचक शैली में विवरण प्रस्तुत करते हैं।

'अनेक देश एक इन्सान' में आपने आज के संसार का विहंगम चित्र प्रस्तुत किया है, जिसमें अदन और ख़ार्तूम, फोर्तलामी और माडुगिरी, कानो और कटसीना, न्यूयार्क और शिकागो, वाशिंगटन और नियागरा-फाल्स, लंदन और ग्लासगो, एम्स्टर्डम, उत्रेख्त और हेग, पेरिस, ब्रेमेन, फ्रांकफुर्त, हम्बुर्ग, बर्लिन, मास्को आदि नगर सम्मिलित हैं।

एक चित्रात्मक वर्णन द्रष्टव्य है—

> 'न्यूयार्क···चौतीसवीं सड़क पर सामान से भरी दुकानें, शीशे की खिड़कियों के पीछे ज़िन्दा युवतियों से कहीं सुन्दर दिखाई देने वाले माडलों के नए-नए डिजाइनों की पोशाकें, कदम-कदम वडवीज़र बियर के बिजली के विज्ञापन, 'बार' 'ग्रिल' और 'लंचियनेय' और मोटरें खड़ी करने के लिए 'पार्किंग' के स्थान, जहां एक घंटे के लिए एक डालर लेते हैं। और इन सबके बीच अनगिनत मानवता—स्त्री और पुरुष, युवक और युवतियाँ, बालक और बालिकाएँ। फुटपाथ पर ऐसी भीड़ कि कंधे से कंधा छिले, मगर ऐसा सुव्यवस्थित व्यवहार, कि कहीं किसी से तकरार नहीं, कहीं किसी से टक्कर नहीं। मानवता का समुद्र एकाएक सड़क के एक ओर रुक जाता है क्योंकि सामने बिजली के लाल अक्षरों में चेतावनी प्रकट हुई है—मत चलिए। मोटरें और बड़े-बड़े ट्रक और दूध की लारियाँ और पीले रंग की टैक्सियाँ सामने

बह निकलती हैं। एकाएक लाल अक्षर बुझ जाते हैं और उनके स्थान पर हरे अक्षर उभर आते हैं, 'चलिए'। लारियों, ट्रकों व मोटरों का बहाव रुक जाता है और फुटपाथ से रुकी हुई मानवता बह निकलती है। 'चलिए' और 'मत चलिए' के बीच सारे दिन का यातायात बँधकर सीमित हो जाता है। न्यूयार्क का जीवन नियमित हो जाता है।'

एक अमेरिकन नागरिक सन्टसन का चित्र--

'भारी भरकम और ऊँचे कद के व्यक्ति हैं, पेट कुछ बढ़ा हुआ, सिर के बाल उड़ते हुए और ऐनक के शीशों के पीछे गंभीर मगर संवेदनशील दो आँखें, जिनमें मोद की रेखा यकाकदा चमक उठती है।'

शिवानी

कहानी लेखिका शिवानी भी अच्छे स्केच लिखती हैं। संस्मरणात्मक शैली में लिखी हुई उनकी पुस्तक 'गुरुदेव और उनका आश्रम' में अनेक चित्र हैं जिनमें से कई चित्र तो वास्तव में इतने मर्मस्पर्शी हैं कि पढ़ते-पढ़ते आँखें डबडबा जाती हैं। गुरुदेव का एक रेखाचित्र इस प्रकार है--

'स्फटिक-सा गौर वर्ण, ज्वलंत ज्योति से जगमगाते विशाल नयन, गोरे ललाट पर चन्दन का शुभ्र तिलक, काला जब्बा और काली टोपी।'

क्षितिमोहन सेन का शब्द-चित्र कुछ इस प्रकार था,

'कुछ ऊँची बंधी धोती ढीला कुरता, भारी-भारी देह, चिकना चुपड़ा गोरा चेहरा। पैरों में पहनते थे खड़ाऊँ।'

रसिकविहारी ओझा 'निर्भीक'

निर्भीक जी ने सेना में भी कार्य किया है और अब जमशेदपुर में कार्य कर रहे हैं। वहीं आपने 'जमशेदपुर भोजपुरी साहित्य परिषद्' की स्थापना की। आप अच्छे रेखाचित्र भी लिखते रहे हैं, जिनका संग्रह 'सुरतिया ना बिसरे' शीर्षक से १९६४ में प्रकाशित हुआ है।

इस संग्रह के रेखाचित्रों की सबसे बड़ी विशेषता है कि यह भोजपुरी भाषा में लिखे गये हैं। मैं समझता हूं कि जनपदीय भाषाओं में कहानियां तथा उपन्यास तो लिखे गये हैं पर यह पहला रेखाचित्रों का संग्रह है जो किसी जनपदीय भाषा में लिखा गया है।

जिसकी स्मृति में यह संग्रह प्रकाशित किया है उस बेटी 'सिलवा' का चित्र इस प्रकार है---

'माथ आ देह में कच-कच तेल लगवले, हाथ-गोड़ में करिया फुदेना बन्हले, सोना के बेरा पहिरले, आँखि में काजर, लिलारप करिया टीका, एक हाथ से लोला मुंह में लवले, दोसर हाथ से झुनझुना बजावत, हाथ-गोड़ मांजत, चलना में फुदफुद फुदुकत किलकारी मारत ओकरा नजर के सामने खाढ़ हो जाला ।'

अन्य रेखाचित्रों से भी कुछ उदाहरण लिये जा सकते हैं---

'बुचुलिया । धेनुही लेखा नवल, लगभग छव फुट के जवान। गोहुंवा रंग, मुंह प माता के गोटी के दाग जवना प एक-एक पोर के घास निअन जामल दाढ़ी ।'

(बुचुलिया)

'ए तोहनी के काली के बलि चढ़ावों । बाप माई के दूध लगावें । हम तोहनी के लगुहा हई कि किविड़ी करतार स ?'

(उदेसा फूआ)

इसके अतिरिक्त मोटका बाबाजी, हाड़ के ठटर, हथिया, बथान, पगली, बाबू रामसकल सिंह, उन्हनी का फुदुक रहल बाड़ी स, लोक बाग के चाप, गंजेड़ियन कै बइठका, उदेसा फूआ, पगला तिवारी, सेठ जानकीलाल, रमेस भइया, खून के संबंध, दिल बहादुर, बनरमुहां, सीताराम भइया, बुलाकी भइया, गवर्नर साहब, रायसाहब, राधाकृष्ण राय, कबूतरन के जोड़ा, चाल चलन के लेखा-जोखा आदि हैं ।

दिलबहादुर का एक अंश इस प्रकार है---

'जेठ के खरउरिया खराइल बिआ । अलकतरा के 'पीच' सड़क बज-बज कीचड़ लेखा भइल बा । हम कारखाना के लोहा के गेट के सिकचा धइले खाड़ बानी आ ओह नेपाली छोकड़ा दिलबहादुर के आवत देख रहल जवन सहकर्मी निसपेटर के नौकर ह । उ साहेबे के पुरान पेन्ट आ कमीज पहिनले बा । पेन्ट के कमर ढीला बा एह से ओकरा के जेंवरि से बन्हले बा बाकिर उहो जेंवरि ढीला हो गइल बा एह से बांया हाथ से पकड़ले बा ।'

रेखाचित्र के क्षेत्र में निर्भीक जी से भविष्य में और भी योगदान की आशा है ।

हवलदार त्रिपाठी 'सुहृदय'

सुहृदय जी ने स्थल विशेष का वर्णन रेखाचित्र विधा से किया है। यह स्थान रांची का 'दा सोड' प्रपात है। स्थान के परिवेश में वहाँ के निवासी, उनकी वेशभूषा आदि का भी चित्रात्मक वर्णन इसमें मिलता है।

अनेक नवीन तथा सार्थक उपमाओं द्वारा चित्र उपस्थित किये गये हैं--

सड़क के लिए कुछ उपमाएँ--पनडुब्बी पक्षी की नाईं, तीर की तरह।

महाकवि बिहारी की तरह अनेक क्रिया-व्यापारों का एक स्थान पर अद्भुत संयोजन कर देते हैं--

> 'वह भागती, छिपती, सरकती, मुड़ती, ऊपर चढ़ती, नीचे उतरती।'

नारी विशेष के वर्णन में उनके वस्त्रों, केश-पाश (जूड़े) तथा आभूषणों आदि का सजीव तथा चित्रात्मक वर्णन है।

मुण्डा जाति के लोगों के बाह्य रूप का चित्रण भी मिलता है--

> 'जिनकी आँखें मिचमिची, माथे पर मयूर-पिच्छ, केश कटे हुए और पीछे की ओर लटके हुए थे।'

स्थान विशेष के रेखाचित्र खींचने की परम्परा में त्रिपाठी जी ने प्रकाशचन्द्र गुप्त तथा बेनीपुरी जी की शैली का अनुकरण करने की चेष्टा की है और एक प्रकार से उनकी परम्परा का विकास किया है।

बी. जी. वैशम्पायन

वैशम्पायन का 'आजाद की मातृभूमि की तीर्थयात्रा का वर्णन' पहले तो विप्लव में प्रकाशित हुआ था, फिर वही श्रीमती मल्लिक ने 'अमिट रेखाएँ' में संकलित किया। आजाद की ६० वर्षीय माता का चित्र--

> 'माँ की उम्र ६० से ऊपर है। शरीर दुर्बल, मुंह में एक दांत नहीं। एक आँख बहुत सिर-दर्द होने के कारण निकलवा देनी पड़ी और दूसरी से भी कम दिखाई देता है। खाना कभी बना, कभी नहीं, फिर भी अपने हाथ से दोनों वक्त पानी भरना, रोटी बनाना, बर्तनों को धोना इत्यादि संसार के सभी काम करती हैं।
>
> झोंपड़ी में एक ही कमरा है और आगे जरा-सा सहन। सारी झोंपड़ी बाँस की बनी हुई है। कारण यहाँ के जंगल में बाँस जरूरत से मिलता है। सामने आँगन में एक आम का और पपीते का पेड़

लगा हुआ है और उसके आगे बाँस की छोटी-सी किवड़िया है, जो हाते का फाटक है।'

सुरेन्द्रनाथ दीक्षित

'नई धारा' जन-१९५३ में प्रकाशित पंडित जी शीर्षक रेखाचित्र में एक ऐसे बालक के मनोभावों का चित्र है जिसकी माँ मर चुकी है और उसका पिता दूसरा विवाह करना चाहता है।

मछिन्द्रनाथ

'नई धारा' मार्च १९५६ के अंक में प्रकाशित 'घास वाली' रेखाचित्र में दो पात्रों के जीवन से स्वतन्त्रता के बाद की समस्याओं का चित्रण है।

प्रो. नागप्पा

मैसूर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष प्रो. नागप्पा जी ने भी इधर अच्छे रेखाचित्र लिखे हैं।

'ट्रेन की यात्रा' पर एक सजीव रेखाचित्र 'चलूं कि नहीं···' शीर्षक से रसवन्ती (जनवरी १९६६) में प्रकाशित हुआ जिसका कुछ अंश इस प्रकार है—

'इंजन ने ठंडे मौसम में अपने को खूब गर्म किया—उसे मीलों नो दौड़ना था—कम्बल ओढ़े बिना—सरसराती ठंडी हवा में। इंजन की घिग्घी बंध गई थी, सीटी जो बजी थी, आवाज खरखराती-सी आई, ठण्ड के कारण जुकाम से पीड़ित व्यक्ति की गर-गर सांस जैसी। इंजन ने खूब दम मारा। जैसे खिलाड़ी दौड़ने के पहले जरा पीछे दौड़कर दम लेने के बाद आगे दौड़ते हैं, वैसे ही इंजन भी गाड़ी के साथ पीछे-पीछे चला।'

दूसरा रेखाचित्र घर की सबसे बूढ़ी नौकरानी पर 'माली' शीर्षक से ६ नवम्बर, ६६ के धर्मयुग में प्रकाशित हुआ है जिसका प्रारम्भ चित्रात्मक शैली में हुआ है—

'वह घर की बूढ़ी (पुरानी) नौकरानी थी—तन सूखा, मुंह छुहारा, लटका हुआ, सिर के बाल धुनी हुई रुई, नाक मोटी गोल। माथे पर अस्सी वर्षों के अनुभव की रेखाएँ। हाथ की हड्डी मजबूत। उस पर लगे मांस के लोथड़े ढीलम-ढाले, मानो हड्डी से झगड़कर अलग हुए जाते हों। उसका कद साढ़े चार फीट लम्बा। पीठ नौ सिखुए

बच्चे के लिए 'अ' के प्रथमार्ध की शकल की-सी। वह जमीन पर बैठी रहती—उस टोकरी-सी, जिस पर उजला कपड़ा सूखने के लिए डाल दिया गया हो। हवा में उड़ते हुए उसके बाल जूड़े के बन्धन से बचने के लिए सत्याग्रह किये हुए थे। 'पिल पिल' करती हुई उसकी आँखें सुई में तागा पिरोने में हाथ का साथ देती थी। आँखों की कोर 'पिच पिच' करते हुए कीचड़ से लथपथ थीं। मुंह में पान की पीक और नाक से रेंट सदा बहती रहती।'

भविष्य में आपसे और भी अधिक सजीव रेखाचित्रों की आशा है।

श्री कुन्दनलाल उप्रेती

श्री उप्रेती ने अधिक रेखाचित्र नहीं लिखे हैं फिर भी भविष्य में आपसे आशाएँ हैं। आपका रांगेय राघव पर एक अच्छा रेखाचित्र 'फिर आऊँगा नया रूप धर' शीर्षक से रसवन्ती में प्रकाशित हुआ था—

'सामने मेज पर चाय के प्याले धुआँ उड़ा रहे थे जैसे डा. रांगेय राघव सिगरेट का धुआँ उड़ा रहे थे। मेज पर वहीं जहाँ किसी का 'पप्पू' चाय पीता था, किसी के 'आचारिया' चाय पीते थे 'आज ये प्याले उनके कोमल, सजल, तराशे ओठों से मिलने के लिए मचल रहे थे। लगता है जैसे रांगेय राघव ने अपने जीवन के खुशनुमा पहलुओं को चलाकर चाय के प्यालों में भर दिया है। देखते ही देखते प्यालों में हरकत हुई। एक तूफान उठा। प्याले चक्कर लगाने लगे। धुआं वर्तुलाकार उठने लगा। चाय-मंथन होने लगा। चाँद की तरह एक शक्ल ऊपर तैरने लगी। वो शक्ल, जो शरारत भरी आँखों से धुआँ उड़ा रही थी।'

'लम्बा शरीर, 'शार्प' चेहरा, उन्नत और स्निग्ध ललाट, लम्बी और नुकीली नाक, नक्काशी हुई मस्क्याती भँवें सतेज विशाल नेत्र जिनसे शरारत बरसती थी। पतले-पतले नाजुक गुलाबी ओंठ जिन पर बड़े अन्दाज से सिग्रेट बैठी हुई थी और उनकी ठोड़ी—सरिता की गम्भीर भंवरों को समेटती हुई। कुल मिलाकर मुझे एक इन्द्रधनुष दिखाई दे रहा था। ये ही श्री तिरुमल निम्बक्किम वीर राघवाचार्य थे।'

प्रो. कपिल

प्रो. कपिल की पुस्तक 'सूरतें और सीरतें' सीमित ६६ पृष्ठों में बारह कहानियों के रूप में 'रेखाचित्रों' का ही संकलन है, जिसके प्रारम्भ में श्री विमल रचित प्रो. कपिल का एक शब्द-चित्र भी है। कहानी का सा आनन्द भी इन रेखाचित्रों में आता है। इस पुस्तक के संबंध में डा. गुलाबराय ने लिखा था—

'शब्द-चित्र और संस्मरण मिलकर 'सूरतें और सीरतें' (स्वभाव) नाम को सार्थक करते हैं।'

आपके अनेक रेखाचित्रों में से पठनीय रेखाचित्र 'बाबू साहब का हाथी' शीर्षक से नई धारा के मई १९५० के अंक में प्रकाशित हुआ था।

आपका ही एक और संग्रह 'बारह बातें' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था।

अमरनाथ

'खण्डहर' शीर्षक से अमरनाथ जी ने एक खण्डहर पर तीन रेखाचित्र तथा खण्डहर के प्रति मन के भाव विभिन्न दृष्टिकोणों से संकलित किये हैं। भावातमक शैली अपनायी गई है।

तेजबहादुर चौधरी

तेजबहादुर जी का एक कारुणिक रेखाचित्र 'सूखी बेल' शीर्षक से स्केच स्तम्भ के अन्तर्गत 'संकेत' में संकलित किया गया था। इसका एक अंश इस प्रकार है—

> 'पुनिया का डेढ़ वर्ष का लड़का (भगवत) दुबला-पतला, सींक से हाथ-पांव, जिसके पटके हुए चूतड़ पर खाल की झुर्रियाँ, उसे जैसे मसान हो गया हो।'

प्रकाशकुमार

प्रकाशकुमार जी की 'सीता दी', 'ड्राइवर साहब' शीर्षक पुस्तकें उल्लेखनीय हैं जिनमें सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति के परिचायक उनके रेखाचित्र हैं। दहेज, विधवा विवाहादि समस्याओं की शिकार कन्याओं का चित्रण है।

रामखेलावन चौधरी

चौधरी जी की 'धुंधली रेखाएँ' पुस्तक में व्यंग्यचित्र अधिक हैं, इसमें मानव-प्रकृति का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण तो है ही साथ ही हास्य और करुण का

मिश्रण भी मिलेगा। साथ में साहित्यिकता का रंग भी भरा है जो रागोद्रेक में सहायक होगा।

भंगड़दास, कबीर, पंडित जी, नन्दू मामा, अम्मू चाचा, नवाब चाचा, नत्था चौकीदार, कल्लू मुंशी जी, ठा. गुलाबसिंह, घसीटे दादा आदि अच्छे शब्दचित्र हैं।

कुन्तल गोयल

श्रीमती कुन्तल गोयल के रेखाचित्रों का संग्रह 'कुछ रेखाएं : कुछ चित्र' शीर्षक से अभी हाल में ही प्रकाशित हुआ है जिसकी भूमिका में लेखिका ने स्पष्ट किया है—

> 'कुछ रेखाएं : कुछ चित्र' जिन्दगी के घेरे में अनुभूत भावों और विचारों से बने हुए शब्दों का परिधान पहिन कर सम्मुख आये हैं। इन शाब्दिक चित्रों में हल्के-गाढ़े रंगों का मिश्रण है। क्षण-क्षण के कड़ुवे-मीठे अनुभवों के साथ जिन्दगी की सम्पूर्णता जीयी जाती है और जिन्दगी की परिधि में सहज-सतर्क कुछ व्यक्ति ही इन क्षणों को जी पाते हैं।'

इस संग्रह में लेखिका के रेखाचित्रों के संस्मरण, ललित निबंध तथा जीवनोपयोगी लेख भी हैं। लेखिका ने अपने ही स्वयं के परिवार से पात्र चुने हैं जिनका शब्दांकन किया गया है जिनमें उल्लेखनीय है 'मेरी मां'।

शिवचन्द्र प्रताप

शिवचन्द्र जी के रेखाचित्रों का संग्रह 'बोलती तस्वीरें' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है जिस पर मूर्धन्य रेखाचित्रकार बेनीपुरी जी ने टिप्पणी लिखी है—

> 'इन शब्दचित्रों में रंगों की विविधता है और रसों की भी। भाषा में एक रवानी है और वर्णन में अपेक्षित संयम भी।'

कृष्णा हठीसिंह

रेखाचित्र शैली में कृष्णा जी ने अपनी अनुभूतियों का चित्रण जिन कहानियों में किया है उनका संग्रह 'बोलती तस्वीरें' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है। लेखिका ने स्पष्ट किया है—

> 'इस संग्रह की कहानियां उन सह-बंदियों की मेरी स्मृति में उपजी हैं जो बहुत साल पहले जेल में मेरे साथ थे। ये सच्ची कहानियां हैं, पर इनमें थोड़ा सा रंग भर दिया गया है, क्योंकि बिना रंग के

कोई भी कहानी किसी जटिल व्यक्तित्व को सही-सही प्रस्तुत नहीं कर सकती ।'

इस प्रकार वस्तुतः रेखाचित्र शैली में लिखी गई कहानियों का संकलन ही 'बोलती तस्वीरें' है ।

धर्मेन्द्र गुप्त

उदीयमान कहानीकार धर्मेन्द्र जी का एक रेखाचित्र संग्रह भी 'व्यक्ति, व्यक्ति और व्यक्ति' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है ।

किशोरीदास बाजपेयी

अन्य रेखाचित्रकारों में किशोरीदास बाजपेयी का नाम लिया जा सकता है । आपने संस्मरणात्मक लेखों में साहित्यकारों के रेखाचित्र प्रस्तुत किये हैं । एक उल्लेखनीय 'रेखाचित्र' सरस्वती के द्विवेदी स्मृति अंक में सन् १९३९ ई. में प्रकाशित हुआ था ।

अन्य रेखाचित्रों में मनोरमा गोयल का 'पटवा' (हंस १९४१), हरिकृष्ण द्विवेदी का 'पत्रकार पी' (हंस, फर-१९४२), विश्वमोहन कुमारसिंह का 'रूपा' (नई धारा, अगस्त १९५४), फणीश्वर नाथ रेणु का 'दिलबहादुर दस्यु' (नई धारा अप्रैल १९५४), मलखानसिंह सिसौदिया का 'अन्तिम मोर्चा' (हंस, अप्रैल १९४६) हर्षनाथ का 'रोटी का धर्म' (हंस), धर्मप्राण सेठ किरोड़ीमल भानमल (हंस, मई १९४४), रामनारायण श्रीवास्तव का 'जब लाश ने करवट बदली' (नया पथ, जुलाई ६५), इकराम समारी का 'और यह मजबूरी' (नया पथ, अगस्त ५५), मोहनसिंह सेंगर के कहानी संग्रह 'खून के धब्बे' में जापानी शासन के चित्र, रावी का कोको बाबू (हंस, अगस्त ४६), नन्द कुमार पाठक का 'बजरंगी' (नया पथ, मई १९५४), सत्यपाल आनन्द का 'कोनमोन' (नया पथ, जून १९५४), रामकुमार के 'यूरोप के स्केच' में डेन्मार्क के परिवार का एक चित्र (आजकल, अप्रैल १९५१), प्रेम प्रकाश गोविल के 'रूसी जीवन के दो चित्र' तथा शिवदान सिंह चौहान का कानपुर की मजदूर बस्ती पर आधारित 'लक्ष्मीपुरा' (रूपाभ, दिस. १९३८), बलवन्तसिंह का 'राजेन्द्रसिंह बेदी' (आजकल, मई १९५०), बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का 'प्रेमचन्द : एक स्मृति चित्र' (आजकल, अक्टूबर १९५२), बलभद्र दीक्षित का 'कंगले और काजी साहब' (हंस १९४१), ब्रजेन्द्र नाथ गौड़ का 'सड़कें और गलियाँ' (समाज, सित. ५४), बी. एस. खांगेकर का 'संसार की नीति' (समाज, सित. १९५४), भुवनेश्वर प्रसाद

का 'स्केच' (कहानी, अगस्त १९३९), रेल का चित्र (कहानी, सित. १९३९), धर्मवीर भारती का 'इलाचन्द्र जोशी' (प्रतीक, अक्टूबर १९५१), रामनाथ का 'रामधनी की होली' (हंस, मार्च १९४५), मिसल मिश्र का 'महरा' (हंस, अप्रैल १९४५), सुभद्रा कुमारी चौहान का 'तांगेवाला' (हंस, नव. १९४५), सज्जाद जहीर का 'रेल का सफर' (हंस, अगस्त १९४३), भगवती प्रसाद बाजपेयी का 'कुलटा' (नई धारा, मई १९५१) उल्लेखनीय हैं।

इधर अनेक पत्र-पत्रिकाओं में 'रेखाचित्र' का स्थायी स्तम्भ प्रदान किया गया है। कहानियों की पत्रिकाओं में रेखाचित्रों को स्थान दिया जाता रहा है। कहानी, नई कहानियां तथा सारिका में समय-समय पर कहानियां प्रकाशित हुई हैं। 'सरिता' में प्रोफेसर कामता प्रसाद चौधरी (कस्तूर चंद जैन), प्रिन्सिपल साहब (सुनीता अग्रवाल), फिलमसिंह एण्ड चक्रम सिंह जी (मनहर लाल चौहान) आदि पठनीय हैं। मासिक पत्रों में भी यदा-कदा अच्छे रेखाचित्र प्रकाशित होते रहते हैं। हंस की पुरानी फाइलों में तो इस प्रकार के रेखाचित्र भरे पड़े हैं जिनका उल्लेख पीछे किया जा चुका है। नई धारा, समाज, संगम, नया जीवन में भी इस प्रकार के रेखाचित्र हैं। हिन्दी की प्रमुख पत्रिका कादम्बिनी में प्रकाशित रेखाचित्रों में कुछ पठनीय रेखाचित्र इस प्रकार हैं—हिरण्मयी देवी (दिस. १९६०), वजीर मियां (नव. १९६०), हाजी कुल्फी वाला (जन. १९६१), पीपल की परी (फरवरी १९६१) हजरत तस्लीम लखनवी, भगत जी (सित. १९६२), गंगा की ये संतानें (फरवरी १९६१), मनबसिया (अगस्त १९६१), मनहर चाचा (जन. १९६१), असंख्यनामी (जुलाई १९६१)।

हिन्दी रेखाचित्र का भविष्य उज्ज्वल है।

अध्याय ६

रेखाचित्रों का वर्गीकरण

रेखाचित्रों को विषय अथवा स्वरूप की दृष्टि से कई वर्गों में विभक्त किया जा सकता है। इन दोनों तत्त्वों को एक दूसरे से नितांत भिन्न तत्त्वों के रूप में ग्रहण नहीं किया जा सकता क्योंकि इन दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। कलाकार के अपने भाव, विचार, वातावरण तथा अभिरुचि का प्रभाव उसके विषय-चयन पर पड़ता है तथा दूसरी ओर उसकी भाषा-शैली और अभिव्यक्ति विषय के अनुसार स्वरूप ग्रहण करती है। अत: विषय और उसकी अभिव्यक्ति अथवा स्वरूप अन्योन्याश्रित हैं और इन दोनों के आधार पर रेखाचित्रों का वर्गीकरण सम्भव है। इस दृष्टि से रेखाचित्र के निम्न-लिखित भेद किये जा सकते हैं—

१. मनोवैज्ञानिक
२. ऐतिहासिक
३. तथ्य या घटना प्रधान
४. वातावरण प्रधान
५. प्रभाववादी–प्रतीकवादी
६. हास्य-व्यंग्य प्रधान
७. व्यक्ति प्रधान
८. आत्मपरक

मनोवैज्ञानिक रेखाचित्र

हिन्दी में मनोवैज्ञानिक रेखाचित्र अधिक संख्या में लिखे गये हैं। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि मानव-मन को समझने तथा उसके रहस्यों का उद्घाटन करने का जो प्रयास फ्रायड, एडलर, जुंग आदि यूरोपीय मनोवैज्ञानिकों ने किया उसका प्रभाव भारतीय साहित्यकारों पर भी पड़ा। मनस्तत्त्व के इन ज्ञाताओं ने मानव के भाव-विचार एवं क्रिया-प्रतिक्रिया के मूल कारणों का पता लगाने की चेष्टा

की है । मानव के मनोवेगों तथा अनुभूतियों के प्रमुख स्रोत के रूप में उन्होंने यौनभावना की व्याख्या की। उन्होंने मानव की विकसित मानसिक स्थिति की तुलना में उसकी आदिम तथा नैसर्गिक अवस्था को महत्त्वपूर्ण माना है। मनोविज्ञान की आधुनिक उपलब्धियों ने मानव के मानसिक जीवन को समझाने की अद्भुत क्षमता प्रदान की है। इनके द्वारा मानव के विकास के अनेक मार्ग प्रकाश में आये तथा उसकी मानसिक गुत्थियों को सुलझाने के नये-नये माध्यम भी सामने आये हैं। अनेक आंतरिक तथा मार्मिक रहस्यों का उद्घाटन करने में भी मनोविज्ञान ने सहायता दी है।

अन्य कलाकारों के समान रेखाचित्रकारों ने भी मनोविज्ञान की सहायता ली तथा उन्होंने चारों ओर व्याप्त परिस्थितियों के कारण मन पर पड़ने वाले अच्छे-बुरे प्रभावों का अंकन किया। उन्होंने अपने पात्रों के राग-विराग, घृणा, द्वेष, आशा-निराशा का सफल चित्रण किया है। इन मनोवैज्ञानिक रेखाचित्रों के रचयिताओं में प. श्रीराम शर्मा, बनारसी दास चतुर्वेदी, रामवृक्ष बेनीपुरी, वृन्दावन लाल वर्मा, प्रकाश चन्द्र गुप्त, महादेवी वर्मा, देवेन्द्र सत्यार्थी तथा कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर के नाम उल्लेखनीय हैं।

पं. श्रीराम शर्मा ने 'बोलती प्रतिमा' नामक रेखाचित्र संग्रह में अनेक व्यक्तियों के ऐसे मनोवैज्ञानिक प्रसंगों को चित्रित किया है जो पाठकों के मन पर स्थायी प्रभाव डालते हैं। उन्होंने प्रतिशोध की ज्वाला में जलते किसान, सांप्रदायिक दंगों से बरबाद हुए स्त्री-बच्चों के मर्मस्पर्शी चित्र प्रस्तुत किये हैं। मनोवैज्ञानिक चित्रण की दृष्टि से बेनीपुरी के रेखाचित्र भी विशिष्ट हैं। 'लाल तारा', 'आँधी में चलो', 'बैजू मामा', 'जहाज जा रहा है', 'रेलगाड़ी', 'चक्के पर', 'जवानी' आदि रेखाचित्र मानव मनोवृत्तियों का सजीव चित्र प्रस्तुत करते हैं। प्रकाश चन्द्र गुप्त के रेखाचित्र 'अलमोड़े का बाजार' और 'उस पार', मनोवृत्ति प्रधान हैं। सत्यार्थी जी के रेखाचित्रों में 'आज मेरा जन्मदिन है', 'रेखाएँ बोल उठीं', 'सौन्दर्य बोध' जैसे रेखाचित्र मनोवैज्ञानिक स्थितियों का चित्रण करते हैं। सुरेन्द्रनाथ दीक्षित के 'पंडित जी' नामक रेखाचित्र में एक मातृ-हीन बालक की संकटपूर्ण मनोवैज्ञानिक स्थिति का चित्रण है। पहली पत्नी के स्थान पर पति दूसरी पत्नी प्राप्त कर लेता है किंतु वह स्त्री मातृहीन बच्चे की माँ का स्थान नहीं ले पाती।

ऐतिहासिक रेखाचित्र

ये रेखाचित्र किसी ऐतिहासिक पात्र के स्वरूप तथा मानसिक स्थिति को प्रस्तुत करते हैं। ऐसे रेखाचित्रों में पात्रों के साथ घटनाएँ भी इतिहास से ली जाती

हैं। जिस युग तथा परिस्थिति को चुना जाता है उसका स्वाभाविक तथा आकर्षक चित्रण करना ऐतिहासिक रेखाचित्र में अभीष्ट होता है। प्रो. प्रकाश चन्द्र गुप्त ने ऐतिहासिक रेखाचित्रों की रचना की है जिनमें 'शेरशाह की सड़क' तथा 'देहली दरवाजा' प्रसिद्ध हैं। बनारसी दास चतुर्वेदी द्वारा लिखे गये कुछ रेखाचित्र भी इस कोटि में आते हैं पर उनका झुकाव जीवनी की ओर अधिक है। गांधी जी तथा ऐण्डरूज के रेखाचित्रों में युग-निर्माताओं के बाह्य स्वरूप का वर्णन करने के साथ-साथ उनके स्वभाव तथा अभिरुचि का परिचय भी दिया है। उनके जीवन की अनेक ऐतिहासिक घटनाएँ इन रेखाचित्रों में सुरक्षित हैं। इनको पढ़कर ऐसा प्रतीत होता है कि हम उन महापुरुषों के युग में विचरण कर रहे हैं।

तथ्य या घटनाप्रधान रेखाचित्र

तथ्य प्रधान रेखाचित्र में कलाकार पात्रों के वार्तालाप द्वारा तथ्यों की ओर इंगित करता है। ये पात्र सजीव और निर्जीव दोनों प्रकार के हो सकते हैं। इस कार्य के लिए संबोधन शैली की सहायता भी ली जाती है। इस प्रकार के रेखाचित्र बेनीपुरी, प्रकाश चन्द्र गुप्त तथा प्रेम नारायण टंडन ने लिखे हैं। बेनीपुरी जी के हँसिया और हथौड़ा, गेहूँ और गुलाब, नई संस्कृति की ओर, कुदाल आदि रेखाचित्र, गुप्तजी के इक्केवाला, बुद्धिजीवी, नया नगर, मिट्टी के पुतले नामक रेखाचित्र तथा टंडन जी के हिन्दी लेखक, भैया साहब, पत्रकार तथा अफ़सर रेखाचित्र इसी कोटि के हैं।

घटना प्रधान रेखाचित्रों में घटना का महत्त्व होता है जिसका चित्रण न्यूनतम शब्दों में किया जाता है। 'रिपोर्ताज' को घटना प्रधान रेखाचित्रों का एक रूप कहा जा सकता है। घटना का वास्तविक स्वरूप दिखलाने के लिए कलाकार को उसके हर पहलू से परिचित होना आवश्यक है। वह घटना का विवरण देने के लिए कथोपकथन शैली को अपना सकता है। इसमें पात्रों का बाह्य चित्रण इतना ही आवश्यक है जितना उनके मानसिक घात-प्रतिघात का विवेचन। वह स्वयं निस्संग रहकर उनका विवेचन करता है। इस प्रकार के रेखाचित्रों की रचना प्रकाशचन्द्र गुप्त ने विशेष रूप से की है।

वातावरण प्रधान रेखाचित्र

इस प्रकार के रेखाचित्र विभिन्न पात्रों तथा घटनाओं के माध्यम से एक विशेष प्रकार के वातावरण को प्रस्तुत करते हैं। वातावरण की प्रधानता किसी परिस्थिति या भावना पर बल देने के लिए होती है। यह भावना प्रकृति-प्रेम या

राष्ट्र-प्रेम की हो सकती है। किसी व्यक्ति की परोपकारिता वृत्ति या मानव-प्रेम भी इसका प्रेरक हो सकती है। प्रेमचंद की कहानी 'पूस की रात' इस प्रकार के रेखाचित्र का आदर्श उदाहरण बन सकता है। बेनीपुरी जी के प्रकृति सौन्दर्य प्रधान रेखाचित्र इस कोटि में रखे जा सकते हैं जिनमें 'ये मनोरम दृश्य' तथा 'पहली वर्षा' उल्लेखनीय हैं। 'ये मनोरम दृश्य' में उन्होंने अनेक प्राकृतिक दृश्यों का सुन्दर वर्णन किया है। ये दृश्य-वर्णन पाठक को एक अतीन्द्रिय आनन्द प्रदान करते हैं। इन वर्णनों को पढ़ते समय थोड़ी देर के लिए पाठक भौतिक संसार को भूल जाता है। बेनीपुरी जी के राष्ट्रीयता की भावना से प्रेरित रेखाचित्रों में 'शहीदों की चिताओं पर, 'इन्कलाब ज़िन्दाबाद' तथा 'नींव की ईंट' प्रमुख हैं। प्रकाश चन्द्र गुप्त का 'सीमांतपूर्व' रेखाचित्र भी इसी भावना से ओतप्रोत है। परोपकारिता की दृष्टि से बनारसीदास जी का 'बंधुवर नवीन जी' महत्त्वपूर्ण रेखाचित्र है। इसमें लेखक ने दिखलाया है कि नवीन जी किस प्रकार प्रत्येक संकट-ग्रस्त व्यक्ति की सेवा के लिए सदैव तत्पर रहते थे। बेनीपुरी जी का बलदेवसिंह नामक रेखाचित्र भी परोपकारिता के वातावरण की सृष्टि करता है। कोई भी व्यक्ति बलदेवसिंह से सहायता प्राप्त कर सकता था, फिर चाहे उसके लिए सहायक को कुछ भी करना पड़े। उनकी वेश-भूषा और रूपरेखा का बेनीपुरी जी ने सूक्ष्मतापूर्वक वर्णन किया है। अपनी परोपकारिता वृत्ति के कारण बेचारा बलदेवसिंह अपने जीवन से भी हाथ धो बैठता है। 'माटी की मूरतें' में संगृहीत इस प्रकार के रेखाचित्र अपने प्रकार की अद्भुत कृतियाँ हैं।

प्रभाववादी-प्रतीकवादी रेखाचित्र

जब रेखाचित्रकार किसी विशेष सत्य या तथ्य का प्रभाव पाठक के मन पर डालना चाहता है तब वह उसे अधिक पुष्ट और चटकीला बना देता है। बेनीपुरी जी के प्रसिद्ध रेखाचित्र 'गेहूँ और गुलाब' में अनेक सत्यों की प्रभावशाली व्यंजना की गई है। इसमें गेहूँ मानव की शारीरिक भूख तथा गुलाब उसकी मानसिक भूख का प्रतीक है। इन दोनों क्षुधाओं की निवृत्ति ही मानव को पूर्णता की ओर ले जा सकती है। अकेली भौतिक उन्नति जो आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों पर निर्भर है, जीवन के लिए पर्याप्त नहीं है, उसके साथ सांस्कृतिक उन्नति भी आवश्यक है। इस प्रकार गेहूँ और गुलाब भौतिक और मानसिक जगत के प्रतिनिधि हैं, दोनों जीवन के लिए अनिवार्य हैं यही प्रभाव उत्पन्न करने की चेष्टा इस रेखाचित्र में की गई है।

व्यंग्य प्रधान रेखाचित्र

व्यंग्य का सहारा उस समय लिया जाता है जब किसी सामयिक कुरीति या बुरी परम्परा के विरोध की आवश्यकता होती है। अस्वस्थ रीति या परंपरा के निवारण हेतु आलोचना के स्थान पर व्यंग्य का प्रयोग बिना कटुता उत्पन्न किये उद्देश्य को सफल कर देता है। जो कार्य खंडन के द्वारा दीर्घकाल में नहीं हो पाता वह इस शैली से थोड़े से प्रयास से संभव है। इस प्रकार के रेखाचित्रों के रचयिताओं में श्री जयनाथ नलिन का नाम प्रमुख है। उन्होंने अनेक भारतीय तथा विदेशी नेताओं, लेखकों तथा महापुरुषों को अपनी लेखनी का निशाना बनाया है। लेखक की व्यंग्य प्रधान शैली इसमें सफल हुई है। अनेक नवीन उपमाओं ने चमत्कार उत्पन्न कर दिया है। महापुरुषों के बाह्य स्वरूप का हास्यमय वर्णन, उनकी विचारधारा की व्यंग्यपूर्ण आलोचना पाठक के हृदय में गुदगुदी उत्पन्न कर देती है। उन्हें पढ़कर पाठकों के मन प्रफुल्लित ही नहीं होते, वरन् उन्हें नये परिप्रेक्ष्य से विचार करने की प्रेरणा मिलती है। हर्षदेव मालवीय ने इस क्षेत्र में सफलता प्राप्त की है। 'पंडित पाते प्रसाद' इसका उदाहरण है। ये पंडित जी हर स्थान पर सम्मान पाने का असफल प्रयास एवं 'ग्रीकाचार्य' की विचित्र उपाधि द्वारा लोगों पर रौब जमाने का प्रयत्न करते हैं। उनके स्वरूप और वार्तालाप का वर्णन पढ़कर अनायास हँसी आ जाती है।

इस क्षेत्र में भी अनेक पुराने तथा नये साहित्यकारों ने लिखा है। वरिष्ठ साहित्यकारों में पद्म श्री हरिशंकर शर्मा, श्री बेढब बनारसी, अन्नपूर्णानन्द, अमृतलाल नागर आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

हरिशंकर शर्मा

शर्मा जी हिन्दी के वरिष्ठ कवि तथा पत्रकार हैं। 'हास्य-व्यंग्य' के क्षेत्र में आपकी नूतन देन है। 'पिंजरापोल' तथा 'चहचहाते चिड़िया घर' आपके उल्लेखनीय संग्रह हैं। 'पिंजरापोल' में कई व्यंग्यात्मक रेखाचित्र हैं। 'पंक्चुअलटी' शीर्षक रेखाचित्र तो मधुकर के 'रेखाचित्रांक' में प्रकाशित हुआ था। आपके व्यंग्यात्मक रेखाचित्र हास्य निबन्धों के संग्रह में ही सकलित हैं। आपकी लेखनी ने सम्पादक, लीडर, पुजारी, महन्त आदि किसी को नहीं छोड़ा है।

बेढब बनारसी

हास्य-व्यंग्य के निबंधों में बेढब जी अग्रणी हैं। सम्पूर्णानन्द जी ने लिखा था, 'बेढब जी की कविताएँ, उनकी कहानियाँ, उनके नोट, उनके चुटकुले और चुटकियाँ, उनके निबंध और एकांकी सभी हास्य-व्यंग्य और विनोद के उत्कृष्ट नमूने हैं।' आपके 'उपहार' में हास्यरसात्मक शब्द-चित्र हैं।

'जब मैं मर गया था' शीर्षक संग्रह में कुछ रेखाचित्र संकलित हैं। इसमें वकील साहब का एक चित्र द्रष्टव्य है,

'रंग वैसा ही जैसा बहुत टाइप किये कारबन पेपर का होता है। सिर के बालों ने असहयोग कर दिया है, केवल चुन्दी के बाल इनकी भक्ति में इनका साथ दे रहे हैं, जो इनके सिर के बीच उजली पताका के समान लहराया करती है। सफेद लोहे की कमानी का चश्मा इनकी आँखों पर रहता है जो आगे नाक की ओर खिसका रहता है, सम्भवतः इस भय से कि इनकी गहरी आँखों में कहीं धँस न जाय। यद्यपि इनका जन्म उन्नीसवीं शती में हुआ था फिर भी इन्होंने नवयुग की निशानी मूंछों का साफ करना उचित समझा। दाँत कुछ हैं कुछ नहीं। इन्होंनेटूटे दाँतों के स्थान पर नया बनवाना उचित नहीं समझा जिसके परिणाम स्वरूप प्राण-वायु अधिक से अधिक इनके फेफड़ों में प्रवेश करती है और इस अवस्था में भी इनका फेफड़ा काफी जोरदार है।'

अन्य उल्लेखनीय संग्रह हैं, बनारसी एक्का, हुक्का पानी, मसूरी वाली आदि। 'बनारसी एक्का' में प्रोफेसर पांडुरंग चपरगटकर एक अच्छा स्केच है।

प्रो. साहब का बाह्य रूप इस प्रकार है,

'बिलकुल पीला रंग, छिपकिली-सा पतला और फुरतीला शरीर और गड्ढों में धँसी छोटी-छोटी आंखें उनके नाम को सार्थक कर रही थीं।' एक दूसरा चित्र इस प्रकार है, 'पहले-पहल जब मैं प्रोफेसर साहब से मिला, तब वह हवा में अपने दाहिने हाथ की उँगलियां नचा रहे थे, जैसे लखनऊ की भठियारिनें अपने वाग्युद्ध के समय हाथ चमकाया करती हैं। उनकी नये फुटबाल के समान खल्वाट खोपड़ी पर दो खटमल क्रीडा कर रहे थे। उनकी आंखें किसी सुदूर नीरव क्षितिज गगनांगन में विचरण कर रही थीं। मैं एक घण्टा सैंतीस मिनट और ग्यारह सैकण्ड तक बैठा रहा। उनका हाथ नहीं थका, उनकी आंखें पथराये नेत्र के समान एकटक थीं।'

अन्नपूर्णानन्द

हास्य-व्यंग्य के क्षेत्र में अन्नपूर्णानन्द जी भी पुराने लेखक हैं। आपकी कृतियों में उल्लेखनीय हैं—'मंगल मोद', 'महाकवि चच्चा', 'मगन रहु चोला', 'मेरी हजामत' आदि। 'मगन रहु चोला' में पं. बिलवासी मिश्र का सुन्दर स्केच है।

अमृतलाल नागर

नागर जी प्रसिद्ध उपन्यासकार हैं, 'सेठ बांकेमल' आपकी पठनीय कृति है। केशव चन्द्र वर्मा द्वारा सम्पादित 'आधुनिक हिन्दी हास्य-व्यंग्य' में आपका 'डांग्डर मोंगाराम' शीर्षक स्केच संकलित है।

कृष्णचन्द्र

'फूल और पत्थर' संग्रह कृष्णचन्द्र के ६ व्यंग्यात्मक रेखाचित्र हैं। 'अखबारी ज्योतिषी' में पत्रकार की किरकिरी की गई है, 'जम्मन शहीद' में महान नेताओं पर कटु व्यंग्य हैं, 'मेरा दोस्त' में मित्रों की कलई खोली गई है। सेठजी, जनतंत्र दिवस भी अच्छे हैं। लेखनी-चित्र के साथ-साथ यथास्थान व्यंग्य-चित्र भी हैं।

जयनाथ नलिन

नलिन जी के मार्के के लिखे हुए रेखाचित्रों का संग्रह 'शतरंज के मुहरे' शीर्षक से बहुत पहले ही प्रकाशित हो चुका था। हिन्दी में लिखे गये व्यंग्यात्मक शब्द-चित्रों का यह संभवतः पहला संग्रह है। 'शतरंज के मुहरे' में जिनके व्यक्तित्वों का चित्रण किया गया है उनको लेखक ने वस्तुतः ईमानदारी से अध्ययन का विषय बनाया है। २३ रेखाचित्र चार भागों में विभाजित हैं। आपका संग्रह 'बिखरते बादल' भी है।

(१) अन्तर्राष्ट्रीय

इसके अन्तर्गत छह रेखाचित्र हैं—

१. १—'सफेद हाथी'—शीर्षक से वेवल का रेखाचित्र है जिसका एक अंश इस प्रकार है,

> 'लार्ड वेवल में श्री शुक्राचार्य विराजमान हैं, इसलिए पुराणभक्त पोंगापंथी आपसे प्रेम अवश्य करेंगे। आप में राणा सांगा समाये हैं, फिर राजपूत आप पर निछावर क्यों न हों। आपकी आंखों में रणजीतसिंह झांक रहे हैं, तो सिख आपके साथ निश्चय ही रहेंगे। आपके चोले में जायसी अपना जलवा दिखा रहे हैं, भला हिन्दी-कवि क्यों न आपके नाम पर लट्टू हो जायं। अब किसकी मजाल है, जो इनके रूप की उपेक्षा करे। हो सकता है, अज्ञान के कारण लोग इनकी महत्ता न पहचानें, पर जीवन-मुक्त होने के बाद तो इनका गान गाया ही जायगा।'

१. २–चिकना घड़ा––इसमें चा वल का रेखाचित्र है जिसका एक अंश इस प्रकार है,

'मिचमिची आंखें, गोलगप्पों से गाल, सांप की बांबी-जैसा मुंह और उसमें फन पटकती हुई घायल सर्पिणी जैसी जिह्वा! चाहते हैं एक ही फुफकार से विरोधियों को भस्म कर दें, पर सांप खिलाने वाले संपेरे भला कब डरने लगे!'

१. ३–छिपा रुस्तम––इस शीर्षक से स्टालिन का पठनीय शब्द-चित्र है,

'सिर पर छंटी हुई दूबड़ा घास जैसे छोटे-छोटे बाल, न हंसते न रोते गोलमटोल गाल, मुंह पर छाया डालने वाली कंटीली झाड़ियों-जैसी मूंछें और उनके बीच संतरी की तरह सावधान पाइप! अगर धोखे से कोई भाव, रास्ता भूलकर आनन पर आना भी चाहेगा, तो गुमसुम गाल उसे ग़ायब कर देंगे। शरारत भरी राजनीतिक मुसकान ओठों पर झलकने की कोशिश भी करे तो मक्कार मूंछें उसे अपनी धुंधली छाया में छिपा लेंगी। आवेश-भरा विचार मुंह पर आने के लिए छटपटाये और आये बिना न माने तो भी कोई उसकी झलक तक नहीं देख सकता। श्रीमान पाइपसिंह चौबीस घंटे आठ पहर मुंह के दरवाजे पर धुआं उड़ाते हुए पहरा देते रहते हैं।'

१. ४–ढिंढोरची––इस शीर्षक से एमरी का रेखाचित्र है जिसका एक अंश इस प्रकार है,

'आपके अनाकर्षक चौड़े चेहरे से जीवन में रसीली घटनाओं का अभाव तो प्रकट होता ही है, साथ ही दमन और सख्ती का भी एलान वह चेहरा करता है। कठोर और ठुके हुए सिर में अंधविश्वास और लंगड़ी बुद्धि ठोक-ठोक कर भरी है। पतली और आभाहीन आंखों से बदला लेने की प्रवृत्ति प्रकट होती है। मुख पर हंसी का सदा अभाव रहता है और वह ऊसर कठोर टीले की तरह रूखापन प्रकट करता है। नाक के मध्य से गालों पर खिची हुई और मुंह के दोनों सिरों को छूनेवाली गहरी रेखाएं कर्मों की कठोरता की दो पगडंडी हैं।'

१. ५–पिछलग्गू प्रेमिका––इसमें च्यांग काई शेक का रेखाचित्र है,

'समय की रेगिस्तानी प्यास आपके गालों के रस को चूस गई है। गालों पर काल के गहरे चुम्बनों के निशानों की मुहरें लगी हैं। माथे

पर किस्मत की पैंसिल कितनी ही टेढ़ी-तिरछी लकीरें खींच भागी है। ओठों को मिलाने वाली रेखा के आस-पास चीनी राष्ट्र की धुंधली उदासी खेलती है, मस्तक पर निराशा डण्ड पेलती है। कान मैडम च्यांग की मानभरी तीखी-मीठी आदर्श वाणी सुनने को सदा चौकन्ने और ओठ 'सरकार हुकुम' कहने के लिए आकुल। नाक कम्युनिज्म की तेज़ाबी गंध से रात-दिन परेशान है और इरादों में इसे चिनगारी के समान मसल डालने का मज़ाकिया अरमान है।'

१. ६—झक्खी दार्शनिक—इसमें बर्नार्ड शा का रेखाचित्र है।

(२) भारतीय—इस स्तम्भ में आठ रेखाचित्र हैं—

२.१—पाकिस्तानी बादशाह शीर्षक से जिन्ना का शब्द चित्र है।

२.२—हिसाबी नेता—इस शीर्षक से पट्टाभि सीतारमैया का रेखाचित्र है,

'नई पतीली की तली जैसी चमचमाती खल्वाट खोपड़ी, खोपड़ी की सीमा में घुसता हुआ सपाट माथा, मुंह पर पत्थर-काल की तितर-बितर झाड़ीनुमा मूंछ और लम्बा कद—शारीरिक रूप में यही आपकी परिभाषा है। शारीरिक रूप में ईश्वर ने जो भी बख्शीश आपको दी है, सब अभी ज्यों-की-त्यों सुरक्षित है। — दिमाग से हिसाबी, हृदय से भावनाहीन, भावुकता में कंगाल और कर्मशीलता में रोमांटिक। स्वभाव के मजाकिया और विचारों में घुटे हुए गुरू।'

२.३—वर्धाब्राण्ड—इसमें राजगोपालाचार्य जी का रेखाचित्र है,

'छोटा सा साँवला बदन, घुटा हुआ सिर, आँखों पर काला चश्मा—इस खिलौने को जानते हैं? आप हैं श्री राजगोपालाचार्य, वर्धाब्राण्ड मेड इन मडरास, शुद्ध स्वदेशी, भारतीय काटेज इण्डस्ट्रीज का आदर्श नमूना—बहुत बढ़िया खिलौना। देशभक्ति की चाबी जब कसकर भरी होती है तो आप गाँधी जी की बहुत अच्छी नकल करते दिखते हैं। छींकने-डकारने, खांसने-खखारने, दाँत चमकाने और कान खुजलाने, सभी में कमाल का एक्टिंग करते हैं। कभी-कभी ओवर एक्टिंग भी हो जाता है, पर इनकी ईमानदारी पर शक नहीं किया जा सकता। घुटे सिर पर आप जब चादर का पल्ला ओढ़ते हैं, तो कम से कम फोटो में अवश्य गाँधी जी का भ्रम हो ही जाता है।'

२.४—यह बहुरूपिया—इसमें फजलुल हक का रेखाचित्र है।

२.५—क्रान्ति का दूत—इसमें एम. एन. राय का रेखाचित्र है।

२.६–भाग्य का हैटा—इसमें सुन्दरलाल का रेखाचित्र है, जिसका एक अंश इस प्रकार है—

'व्याख्यान में दोनों हाथ कंधों की सीध में फैलाकर जब जोश में आकर स्टेज पर पैर पटकते हैं, तो गजब का ठुमका लगता है। जब भारतीयों की बुद्धि पर आलोचना करते हैं, तो खिसियाकर किसी का मुंह नोच लेना चाहते हैं। जब इस्लाम धर्म के तत्त्वों का बयान करते हैं, गद्‌गद हो जाते हैं।'

२.७–पंजाब की नाक—इस शीर्षक से सर छोटूराम का रेखाचित्र है,

'इकहरा लम्बा शरीर, पतली खिची हुई आँखें, पतले-पतले ओठ, सफद खस्सी आर्यसमाजी मूछें, चेहरे पर उम्र के पैरों के निशान, छोटा-सा मुंह, और धारीदार चेहरे पर एक लम्बी-सी ऊंची-सी मोटी-सी नाक। जैसे कटे हुए खेत में बिटौरा खड़ा हो। सिर पर बड़ा साफा, धड़ में अचकन, टांगों में तंग पाजामा आप पहनते हैं। आप जूते और मोजे भी पहनते हैं।'

२.८–पालतू चीता—इस शीर्षक से सरदार पटेल का शब्दचित्र है,

'वास्तव में, आप लौहपुरुष ही हैं। शरीर तो लोहे का है ही, दिल और दिमाग में भी लोहा ही लोहा जमा है। टाटा स्टील कम्पनी ने आपको नहीं गढ़ा और न उससे आपको, लोहे की कमी पड़ जाने पर, लोहे के इंजेक्शन ही मिलते हैं। तारीफ तो यह है कि अहमदाबाद के मिलमालिकों द्वारा श्रद्धा और भक्ति से भरा सेब और अंगूरों का रस आपके शरीर में पहुँचकर लोहा बन जाता है।'

(३) साहित्यिक

३.१–आम बिना रस का—इसके अन्तर्गत पं. शान्तिप्रिय द्विवेदी का रेखाचित्र है। यह रेखाचित्र सफल कहा जा सकता है,

'शरीर से आप इकहरे-छरहरे हैं और वजन में हल्के-फुल्के। भर्ते के लिए भूभल में भूने हुए भण्टे की तरह आपकी सुंती हुई पिंडलियाँ हैं। कंधों से लटकती हुई पतली-पतली वीर भुजाएँ—जैसे हवा निकले हुए साइकिल के ट्यूब। फिर भी इतनी वजनी कि सुकुमार कंधे झुक-झुक जाते हैं। कमर की ओर निकला हुआ सीना, जुलाब लिया हुआ-सा

पेट और पतली कमरिया से मिलकर आपके धड़ का निर्माण हुआ है। कंधों के बीच में पतली-सी गर्दन पर बुद्धि के भार से भरा हुआ सिर जरा एक ओर को झुका रहता है। बुद्धि के भार से या किसी कंधे के प्रति विशेष प्रेम-पक्षपात से, यह जानना कठिन है। हाँ, हर समय भय यही बना रहता है कि अब बैलेंस बिगड़ा। यह है हमारे द्विवेदी जी का मांसल रूप।'

३.२–कसरती कलाकार—इस शीर्षक से भगवती बाबू का रेखाचित्र है,

'हाँ, तो आपका बड़ा-सा सिर है और पेट भी बहुत तन्दुरुस्त है, इकलौते बेटे की तरह बड़े प्यार-दुलार से पाला-पोसा हुआ। आपकी मोटी खोपड़ी में यह न समझें कि अक्ल भी मोटी ही निवास करती है, बुद्धि आपकी निहायत बारीक है और कल्पना आपकी बे-हिसाब महीन।'

३.३–हिन्दी का चरखा—इस शीर्षक से हिन्दी के वरिष्ठ रेखाचित्रकार पं. बनारसीदास चतुर्वेदी का रेखाचित्र है,

'घासलेट घी की तरह आप प्रसिद्ध हैं और प्याज की तरह फायदेमन्द। हींग के बघार की तरह मशहूर इनके कार्यकलाप हैं, सनकियों के समान इनके वार्तालाप हैं। कई मुड़चिरे साहित्यिक कह देते हैं––चतुर्वेदी हिन्दी के लिए अभिशाप हैं। यह इतना ही गलत है, जितना अहिंसा से स्वाधीनता प्राप्ति का विश्वास।'

३.४–विचारक जी—इसके अन्तर्गत प्रसिद्ध उपन्यासकार एवं विचारक जैनेन्द्र जी का रेखाचित्र है।

३.५–हरफन मौला––इस शीर्षक से बाबू गुलाबराय जी का रेखाचित्र है।

(४) अन्य

'इस विविध कोटि में असल कम्युनिस्ट, श्रीमती सलवार, भविष्य का स्वप्न, मूँछों की मरम्मत शीर्षक चार रेखाचित्र हैं।'

'अभी हाल में 'बिखरते साये' शीर्षक से आपका नया संकलन प्रकाशित हुआ। डॉ. नलिन का यह संग्रह इसलिए विशेष महत्त्व का है कि इसके चित्र 'जातिवाचक' हैं। शब्दचित्र ऐसे टाइपचरित्र हैं, जिनमें विलक्षण, असामान्य वैयक्तिक रंग है। इसमें क्लोज अप्स भी हैं, स्केच भी हैं।'

श्रीमती रजनी पनिक्कर

श्रीमती रजनी पनिक्कर ने कहानी-साहित्य में अच्छा स्थान बना लिया है। कहानी के साथ-साथ आपने अच्छे रेखाचित्र भी लिखे हैं। ये रेखाचित्र व्यंग्यात्मक अधिक हैं। उदाहरणार्थ, हिन्दुस्तान, दिनांक ६-११-१९६० में प्रकाशित उनका 'श्रीमती सुमन सोनी' शीर्षक रेखाचित्र लिया जा सकता है। उसका शब्द-चित्र इस प्रकार है—

> 'देखने में तो वह श्रीमती और कुमारी के बीच-सी लगती हैं। यानी इकहरा शरीर, मझोला कद, कभी जूड़ा और कभी पोनी-टेल। आयु तीस वर्ष के लगभग। चाल में कुमारियों वाली फुर्ती और तेजी है। बातचीत करते समय कभी गृहिणी वाली ऐसी मुद्रा बना लेती हैं कि उन्हें श्रीमती मानने पर लोग मजबूर हो जाते हैं।'

उनके आन्तरिक व्यक्तित्व पर भी प्रकाश डाला गया है,

> 'नौकरानी का कहना है कि चाय बच जाय तो मालकिन नाली में बहा देती हैं, परन्तु उसे नहीं देतीं। उनका कहना है, नौकरों को उतना ही मिलना चाहिए जितना उनके साथ ठहराया गया हो।···लता मंगेश्कर के सामने गानेवाली नहीं ठहरती, तो सुमन सोनी के सामने कोई बात करने वाली नहीं ठहर सकती।'

श्रीमती पनिक्कर का एक दूसरा शब्द-चित्र श्रीमती ममता मेहरा शीर्षक से प्रकाशित हुआ है—

> 'विस्फारित-सी आँखें, गेहुँआ रंग, लम्बा मुख जो लिपस्टिक और कानों के टाप्स के बिना किसी पुरुष का चेहरा लगता है। उन्होंने यह भेद जान लिया है कि औरत की मुस्कराहट से हजारों काम सिद्ध हो जाते हैं, जो अन्यथा बहुत परिश्रम लेते हैं।··इधर कुछ दिनों से वह माथे पर दो चार लटें ढीली छोड़कर रखती हैं। ओठों पर लिपस्टिक भड़कीले नारंगी रंग की लगाती हैं। केशों में तेल नहीं डालतीं। तारों की छाँह में घर की छत पर घूमती रहती हैं।···'

डा. बरसानेलाल चतुर्वेदी

प्रसिद्ध हास्य-व्यंग्यकार डा. बरसानेलाल चतुर्वेदी ने गद्य तथा पद्य दोनों माध्यमों से साहित्य-भण्डार भरा है। डा. चतुर्वेदी ने कुछ व्यंग्यात्मक रेखाचित्र भी लिखे हैं जिनमें उल्लेखनीय हैं, डा. रोगीलाल गोलीवाला, श्री लाड़ली प्रसाद, उपन्यासकार मिस्टर सम्पत। ये सभी उनके 'मिस्टर खोये खोये' शीर्षक पुस्तक में संकलित हैं। 'मिस अलका' कहानी विधा की ओर झुका हुआ उनका सफल रेखाचित्र है,

'सुबह का सारा टाइम आइने के सत्संग में ही व्यतीत होता है। बालों का डिजाइन नित्य बदलती थीं। तंग सलवार, पारदर्शी कमीज, तेज लिपिस्टक, हाथ में वैनिटी बेग यही उनकी वेशभूषा थी। इतनी पतली कि बहुत दिनों की भूखी बछिया।'

आपका ही लिखा 'आडीटर साहब का शुभागमन' हास्य स्केच भी पठनीय है।

डा. संसारचन्द्र

डाक्टर संसारचंद्र जी के कुछ अच्छे व्यंग्य-चित्र 'सोने के दांत' शीर्षक पुस्तक में संकलित हैं।

महावीर अधिकारी

अधिकारी जी का एक स्केच 'बकलमखुद' उल्लेखनीय है। बाबू धनीराम का शब्द-चित्र इसमें प्रस्तुत किया गया है,

'तूती की तरह बारीक आवाज, लम्बी पतली सुराहीदार गर्दन और किस तरह अपने आपे से बेखबर होकर वे दाद दिया करते थे।

एक बार योग-साधना का भूत उन पर सवार हुआ और वह तब तक नहीं उतरा जब तक उनका अच्छा खासा गद्दर शरीर १०० नम्बर के सूत की तरह बारीक न हो गया।'

परदेशी

परदेशी जी का 'श्री मुरारी प्रसाद' जी पर एक शब्द-चित्र है। उनके ही शब्दों में,

'श्री मुरारी प्रसाद जी परस्पर विरोधी बातों से युक्त एक ऐसे मांस पिंड हैं कि वर्षों उनके साथ रहने पर भी मैं यह निर्णय नहीं कर सका कि वे होशियार मूर्ख हैं या सीधे-सादे मूर्ख।...शरीर से कुछ स्थूल हैं और बुद्धि की दृष्टि से स्थूलकाय। पेशे से पत्रकार हैं। एक समाचार पत्र के कार्यालय में उत्तरदायी पद पर नियुक्त हैं।'

इस शब्द-चित्र में एक अधकचरे तथा सर्वथा अयोग्य पत्रकार पर चोट की गई है।

नवभारत टाइम्स के ३१ मार्च, १९५७ के अंक में प्रकाशित उनका 'बेचारा पांडे' शीर्षक स्केच भी पठनीय है। पांडे भी क्या है,

'लम्बा कद, छरहरा शरीर, सांवला रंग, कमीज के बटन खुले, बाल बिखरे, स्वयं कुछ उखड़े-उखड़े और सब मिलाकर सीकिया पहलवान। ऐसे व्यक्तित्व के एम. ए. तथा महान् पत्रकार पांडे को अन्त में छोटी-सी पान-सिगरेट की दुकान खोलनी पड़ी।'

वीरेन्द्रमोहन रतूड़ी

रतूड़ी जी का लिखा एक हास्य स्केच नवभारत टाइम्स में 'भीमसेन जी' शीर्षक से पढ़ा था,

'वैसे वे बड़े मजेदार आदमी हैं। ठेठ आबनूसी रंग, तुंदियल शरीर और हाथी जैसी आंखें। बातें भी वे ऐसी ही करते हैं। यह नाम भी उनका भीम का एक्टिंग करने के उपलक्ष्य में मिला था।'

प्रभाकर सोनवलकर

प्रभाकर जी के स्केचों में उनका 'निद्रानन्दन सुकुल' शीर्षक हास्य स्केच उल्लेखनीय है जिसका प्रारम्भ इस प्रकार होता है,

'बस स्टैंड की बैंच पर निर्जीव ढेर के समान फैले हुए सुकुल जी को श्रीमती सुकुल अलार्म टाइमपीस की सहायता से जगाने का असफल प्रयत्न कर रही थीं।'

र. स. केलकर

आपके व्यंग्यपूर्ण रेखाचित्रों में से 'सम्मान समारोह' पठनीय है। कंटक जी साहित्यकार के स्केच का एक अंश इस प्रकार है'

'पैंतालीस डिग्री के ऐंगल के वे (नेताजी) यह भी देख रहे थे कि जनता उनके देखने को कहीं देख तो नहीं रही है। दूसरा वह फोटो था जिसमें वे व्यास पीठ पर 'माइक' के सामने खड़े भाषण दे रहे थे और उनके ऊपरी दाँत, जो नीचे के दाँतों के समान ही दिखावे के थे, यानी नकली थे, नीचे वाले ओंठ पर चुनाव के लिए खड़े उम्मीदवार की भांति बढ़ आये थे, मानो वे अपने मुहावरे के सत्य को सिद्ध करने के लिए मैदान में उतर आये हों।'

आपके इक्कीस व्यंग्यात्मक शब्द-चित्रों का संग्रह 'कुत्ते की दुम' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है।

देवराज दिनेश

देवराज दिनेश कवि होने के नाते व्यंग्यकार भी हैं। काव्य के माध्यम से ही नहीं गद्य में भी आपने तीखी व्यंग्यात्मक रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। आपका 'मास्टर गोकुलचन्द लायलपुरी' शीर्षक रेखाचित्रप्रसिद्ध है जिसका प्रारम्भ इस प्रकार होता है,

> 'मंगोल और हूण दोनों नस्लों को मिलाकर अगर कोई चेहरा तैयार किया जा सकता है तो वह चेहरा है मास्टर गोकुलचन्द लायलपुरी का। इस चेहरे पर लगाइए हिटलरकट मूँछें और सिर पर ढीली-ढाली पगड़ी। कम मोहरी का पंजाबी पाजामा, कमीज और उस पर खुले गले का कोट।···किसी स्कूल में शायद वह हिन्दी के मास्टर थे।'

सूर्यनारायण सक्सेना

सक्सेना जी के अनेक व्यंग्यात्मक रेखाचित्रों में 'बहन जी' शीर्षक पठनीय है,

> 'याचकता कभी किसी युग में या आज के युग में भी भले ही कुछ लोगों के लिए असम्मान, अपमान या अवगुण हो, पर कुछ लोग हमेशा इतने परमहंस होते हैं कि उनको एक नहीं, बारबार आपकी पतलून माँग लेने में या चाय की पत्तियां आपके घर से मंगवा लेने में कभी संकोच नहीं होता।···हाँ, तो भारतीय योगी और अमरीकी सेल्समैन का जीता जागता सम्मिश्रण हैं, हमारी और हमारी श्रीमती जी की 'बहन जी' बल्कि हम से अधिक उन्हीं की।'

रोशनलाल सुरीरवाला

सुरीरवाला हास्य-व्यंग्य के क्षेत्र में अपनी प्रथम पुस्तक 'खाट की हजामत' से ही स्थान बना चुके हैं। आपके लिखे व्यंग्यात्मक रेखाचित्र दूसरे संग्रह 'लंगड़ी भित्र' में संगृहीत हैं। उल्लेखनीय स्केच हैं पत्नी, भुर्ता, श्री दशरथ नन्दन बी. ए., निद्रा बिहारीलाल, नयनसुख, विनोद-प्रिय मुंशी तनसुखराय, बीसवीं सदी के अप्रतिम वीर मि. पी. के. राणा। दशरथ नन्दन जी का परिचय इस प्रकार है,

> 'केवल गर्दन तक लम्बे बालों वाली एक अत्यधिक आधुनिका जब सीट रिक्त न होने के कारण खड़े-खड़े ही चलने को विवश हो गई, तो टेसू को खपंच जैसे हाथ पैरों वाले, सवा पसली, गौर वर्ण, ऊँची नाक, बड़ी आँख, पतले ओठ, श्मश्रुहीन मुख और बारीक आवाज के एक मात्र स्वामी बाबू दशरथ नन्दन बी. ए. थे।'

मोहनलाल गुप्त

गुप्त जी का 'आर्यसमाजी श्वशुर' शीर्षक व्यंग्यात्मक स्केच 'आधुनिक हिन्दी हास्य व्यंग्य' में संकलित है। इसी संग्रह में लक्ष्मीकांत वर्मा का 'प्रोफ़ेसर राही : सौन्दर्य बोध के मूड में' भी संकलित है।

हास्य-व्यंग्य के क्षेत्र में सक्रिय अनेक लेखक इस विधा में भी लिखते रहते हैं।

व्यक्ति प्रधान रेखाचित्र

किसी व्यक्ति के बाह्य और आंतरिक स्वरूप का चित्रण रेखाचित्र का प्रमुख उद्देश्य होता है। रेखाचित्रकार किसी एक व्यक्ति को चुनकर विभिन्न घटनाओं के द्वारा उसके चरित्र के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करता है। यदि रेखाचित्र को साहित्य की एक व्यक्ति प्रधान विधा कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। व्यक्ति प्रधान रेखाचित्रों के निर्माताओं में श्रीराम शर्मा, बनारसीदास चतुर्वेदी, श्रीमती सत्यवती मल्लिक, जयनाथ नलिन, बेनीपुरी, जगदीश चन्द्र माथुर, टंडन तथा सर्वोच्च स्थान पर महादेवी जी हैं।

पं. श्री राम शर्मा के व्यक्ति प्रधान रेखाचित्र ठाकुर की आन, हरनामदास, चंदा और रतना की अम्मा, पीताम्बर, अपराधी आदि हैं। बनारसीदास चतुर्वेदी के रेखाचित्रों में प्रिंस क्रोपाटकिन, भगवानदास, गोबिल, पालीवाल, पथिक जी आदि प्रधान हैं। रवीन्द्रनाथ ठाकुर तथा एण्ड्रूज पर लिखे गये उनके रेखाचित्र साहित्य की अमूल्य निधि हैं। श्रीमती सत्यवती मल्लिक द्वारा संपादित 'अमिट रेखाएँ' व्यक्ति-प्रधान रेखाचित्रों का सुन्दर संग्रह है जिसमें भारत तथा विदेश के महान् पुरुषों और नारियों के चरित्र का चित्रण किया गया है। जयनाथ नलिन की रचना 'शतरंज के मोहरे' व्यक्ति प्रधान रेखाचित्रों का प्रभावशाली संग्रह है। इसमें उन्होंने भारतीय महापुरुषों के साथ विदेशी महापुरुषों तथा राजनीतिज्ञों का भी चित्रण किया है। बेनीपुरी जी के 'सूरज भैया', 'बलदेवसिंह', 'बैजू मामा', 'बुधिया' आदि रेखाचित्र इसी श्रेणी में आते हैं। जगदीश चन्द्र माथुर ने 'दस तसवीरें' में अपने जीवन को प्रभावित करने वाले कई व्यक्तियों के—जिनमें अध्यापक, सरकारी अधिकारी, कलाकार तथा इतिहासवेत्ता सम्मिलित हैं—रेखाचित्र खींचे हैं। इनमें प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री अमरनाथ झा तथा रंगमंच के कुशल अभिनेता शिशिर भादुड़ी के रेखाचित्र प्रभावशाली हैं। श्री माथुर ने इन व्यक्तिप्रधान रेखाचित्रों को 'चरितलेख' की संज्ञा दी है। प्रेमनारायण टंडन तथा कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर ने भी अनेक रेखाचित्र इस कोटि के लिखे हैं। पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी के 'रामलाल पंडित' तथा 'कुंज बिहारी' रेखाचित्र भी इसी श्रेणी के हैं।

आत्मपरक रेखाचित्र

लेखक जब किसी निजी जीवन का चित्रांकन भी किसी रेखाचित्र के साथ कर देता है तो वे इस कोटि में लिये जा सकते हैं। महादेवी जी के रेखाचित्र प्रायः इस प्रकार के हैं जिनमें लेखिका सर्वत्र पात्रों के साथ है। ऐसे रेखाचित्र प्रायः संस्मरणात्मक शैली में लिखे जाते हैं।

रेखाचित्रों की अनेक कोटियां हो सकती हैं। जब किसी निर्जीव पदार्थ में चेतना का आरोप कर उसकी भावना और विचारों को प्रकट करना होता है तो इसे आभ्यंतरिक प्रणाली कहा जाता है। इसमें किसी वस्तु का भावगत चित्रण होता है, वस्तुगत कम। इस प्रकार के रेखाचित्र प्रकाश चन्द्र गुप्त ने विशेष रूप से लिखे हैं, जैसे 'शेरशाह की सड़क', 'देहली दरवाजा', 'लेटर बाक्स', 'राजा की मंडी' आदि। निर्जीव वस्तुओं के माध्यम से लेखक ने अनेक ऐतिहासिक, राजनीतिक तथा मनोवैज्ञानिक तथ्यों का रहस्योद्घाटन किया है।

अध्याय ७

उपसंहार

रेखाचित्र का स्वतन्त्र विधा के रूप में इतिहास प्रस्तुत किया गया है। प्रारम्भ में कहानी के अन्तर्गत ही इस विधा को सम्मिलित कर लिया जाता था पर अब स्पष्ट हो चुका है कि 'रेखाचित्र' कहानी की अपेक्षा एक ठोस और यथार्थवादी भूमि पर निर्मित होता है। यथार्थ परिस्थितियों से प्रभावित होकर लेखक अपने अनुभवों को सीधे शब्दों में तीव्रता के साथ व्यक्त कर देना चाहता है। अब तो एक ही व्यक्ति कहानी भी लिखता है और रेखाचित्र भी, और लिखने से पूर्व उसको स्पष्ट ज्ञान होता है कि वह कौन सी विधा का उपयोग कर रहा है। संकलन में भी कहानी के साथ रेखाचित्र पहले प्रायः दे दिये जाते थे, अब कम दिये जाते हैं।

रेखाचित्र वस्तुतः 'कहानी' और 'निबन्ध' की मध्यवर्तिनी भूमि पर स्थित हैं। व्यक्तिव्यंजक निबंध को गद्यगीत, रेखाचित्र, रिपोर्ताज, फैंटसी तथा क्रीडापरक निबंध इन पांच भागों में विभाजित किया जा सकता है। इस प्रकार मोटे तौर पर निबंध के अन्तर्गत 'रेखाचित्र' समाहित हो जाते हैं। इस दृष्टि से अब स्पष्ट हो गया है कि 'रेखाचित्र' न पूरी तरह से कहानी है और न निबंध किन्तु इन दोनों के तत्त्वों का उसमें समावेश अवश्य हो जाता है।

'रेखाचित्र' के लिए शब्दचित्र प्रायः प्रयुक्त होता रहा है। इस विधा के माध्यम से लेखक 'भोगे-अनभोगे' क्षणों की रेखाएं खींचता है विविध रंग-चित्रों के रूप में। लेखकविशेष की व्यक्तिगत रुचि तथा शैली भेद से ही रेखाएं अधिक स्पष्ट तथा गहरी होती जाती हैं और उनमें रंग भरने का अनुपात भी घटता-बढ़ता रहता है।

हमें प्रसन्नता है कि अनेक रेखाचित्रकारों ने इस विधा को कला के रूप में स्वीकार किया है और साधना द्वारा सजीव चित्र उपस्थित किये हैं। हिन्दी में एक शतक से अधिक समर्थ लेखक इस विधा में लिख रहे हैं यह कम सन्तोष की बात नहीं है, हिन्दी की उपभाषाओं, जैसे भोजपुरी में भी 'निर्भीक' जी ने बड़ी निर्भीकता से रेखाचित्र प्रस्तुत कर उप-भाषाओं की सामर्थ्य की सूचना भी दी है। भविष्य में अधिकाधिक लेखक इस ओर प्रवृत्त होंगे। हिन्दी में अन्य भाषाओं, विशेषकर भारतीय

भाषाओं का रेखाचित्र साहित्य अनूदित होकर आना चाहिए। किसी भी महान् अथवा लघु चरित्र का व्यक्तित्व इस विधा के माध्यम से ही प्रस्तुत किया जा सकता है। कोई भी अन्य गद्य विधा व्यक्तित्व को इतना सुस्पष्ट रूप प्रदान नहीं कर पाती जितना रेखाचित्र। विद्यार्थियों को प्रेरणाप्रद साहित्य भी इस विधा के माध्यम से ही हम प्रदान कर सकते हैं, इस संभावना की ओर भी दृष्टि डालनी होगी। विश्व-साहित्य में से चुनकर भी रेखाचित्र साहित्य को हिन्दी में लाना होगा जिससे यह विधा और अधिक समर्थ हो सके।

लेखक को इस विधा में कम से कम शब्दों में सजीव से सजीव रूप-विधान और छोटे-से-छोटे वाक्य में अधिक से अधिक तीव्र और मर्मस्पर्शी भाव-व्यंजना भरनी पड़ती है। इस दृष्टि से हम महादेवी जी तथा बेनीपुरी जी के रेखाचित्रों को सगर्व विश्वसाहित्य के समक्ष रख सकते हैं। श्री बनारसीदास चतुर्वेदी तथा प्रो. प्रकाश चन्द्र गुप्त इस विधा के सर्जनात्मक तथा आलोचनात्मक दोनों पक्षों को साधिकार सम्हाले हुए हैं। व्यक्ति-चित्र लेख की दृष्टि से श्री जगदीश चन्द्र माथुर की 'दस तस्वीरें' अन्यतम कृति है। प्रमुख रेखाचित्रकारों का शैलीगत अध्ययन साथ ही साथ किया गया है। भविष्य में कभी इस अध्ययन का ही आलोचनात्मक तथा शैलीगत विवेचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जा सकेगा।

अनेक उदीयमान साहित्यकारों से आशा है कि भविष्य में इस विधा के माध्यम से हिन्दी का साहित्य-भंडार वे भरते रहेंगे। दर्जनों पत्र-पत्रिकाओं से सैकड़ों रेखाचित्रों को हम अब भी इकट्ठा कर सकते हैं जिनकी विस्तृत तालिका अपेक्षित है। निश्चित रूप से 'रेखाचित्र' का भविष्य उज्ज्वल है।

परिशिष्ट

रेखाचित्र-साहित्य

१. अज्ञेय	—अरे यायावर रहेगा याद, १९५३
२. अन्नपूर्णानन्द	—मंगल मोद, मगन रह चोला, महाकवि चच्चा, मेरी हजामत।
३. अश्क, उपेन्द्रनाथ	—मंटो : मेरा दुश्मन, १९५६
	—रेखाएँ और चित्र, प्रथम संस्करण।
	—संकेत
४. उपाध्याय, भगवतशरण	—ठूठा आम, प्रथम संस्करण
	—वो दुनिया
५. ओंकार शरद	—खां साहब, प्रथम संस्करण
	—देश काल पात्र, १९६४, राजरंजना प्रकाशन, इलाहाबाद।
	—लंका महाराजिन, १९५०, द्वितीय सं. १९६५, राजरंजना प्रकाशन, इलाहाबाद।
६. ओझा, रसिक बिहारी निर्भीक	—सुरतिया न बिसरे, १९६४, जमशेदपुर भोजपुरी साहित्य परिषद।
७. कपिल	—सूरतें और सीरतें, अजंता प्रेस, पटना।
८. कुलभूषण	—अनेक देश एक इन्सान, १९५९, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।
अ. केलकर र. श.	—कुत्ते की दुम, भारतीय ज्ञानपीठ काशी, १९६७।
९. कौशल्यायन, भदन्त आनन्द	—जो लिखना पड़ा
	—बहानेबाजी, प्रथम सं. १९५५, नीलाभ प्रकाशन गृह, इलाहाबाद।
१०. कृष्णचन्द्र	—फूल और पत्थर, प्रथम संस्करण।

११. गुप्त, प्रकाशचन्द्र —रेखाचित्र, १९४०, शारदा प्रेस, इलाहाबाद ।
—पुरानी स्मृतियाँ, १९४७ ।
—विशाख, १९५७ ।
—नये स्केच
—रेखाचित्र, १९६२, विद्यार्थी ग्रन्थागार ।
१२. गुप्त, सियारामशरण —झूठ-सच, १९९६ संवत्, साहित्य सदन, चिरगाँव ।
१३. गुलाबराय —जीवन और जगत, प्र. सं. १९६२, शिवलाल अग्रवाल एंड कं. आगरा ।
—मेरी असफलताएँ, १९५७, पंचम सं. १९६०, साहित्य रत्न भंडार, आगरा ।
—मेरे निबन्ध, १९५५, गयाप्रसाद एंड सन्स, आगरा ।
१४. गोयल, कुन्तल —कुछ रेखाएँ : कुछ चित्र, १९६७, जैन पब्लिशिंग हाउस, अम्बिकापुर ।
१५. गोविन्ददास —चेहरे जाने पहचाने, १९६६, भारती विश्व प्रकाशन, दिल्ली ।
—स्मृति कण, १९५९ ।
१६. चतुर्वेदी, बरसानेलाल —मिस्टर खोये-खोये, प्रथम स. ।
१७. चतुर्वेदी, बनारसीदास —प्रिंस क्रोपाटकिन, १९४०, साधना मन्दिर गिरगांव, बम्बई ।
—रेखाचित्र, १९५२, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी ।
—संस्मरण, १९५२, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी ।
—सेतु-बंध, १९६२, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली ।
—हमारे आराध्य, प्रथम सं. १९५२, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी ।
—रंगों की बोली, प्र. सं. ।
१८. चतुर्वेदी, माखनलाल —समय के पाँव, प्रथम सं. ।
—साहित्य देवता ।
१९. चौधरी, रामखेलावन —धुंधली रेखाएँ, प्रथम सं. ।
२०. जैन, अक्षयकुमार —दूसरी दुनिया
—ब्रिटेन में चार दिन

२१. जैन, लक्ष्मीचन्द्र —नए रंग नए ढंग, भा. ज्ञानपीठ, काशी १९६२।
अ. जैन, विजयचन्द्र —चेहरे, प्रगतिशील प्रकाशन, दिल्ली—६।
२२. जैनेन्द्र —ये और वे, १९५४, पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली।
२३. टंडन, प्रेमनारायण —रेखाचित्र, १९५९, हिन्दी साहित्य भंडार, लखनऊ।
२४. त्यागी, महावीर —मेरी कौन सुनेगा।
२५. द्विवेदी, शान्तिप्रिय —पथ-चिह्न, प्रथम सं. १९४६, चौखम्भा विद्या भवन, वाराणसी।
—वृन्त और विकास, १९५९, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी।
—स्मृतियाँ और कृतियाँ।
२६. दिनकर —वट पीपल, १९६१, उदयाचल, पटना—४।
२७. नगेन्द्र —चेतना के बिम्ब, यंत्रस्थ।
२८. नलिन, जयनाथ —बिखरते बादल,
—बिखरते साये, नेशनल पं. हाउस, दिल्ली।
—शतरंज के मोहरे, प्रथम सं.।
२९. नागर, अमृतलाल —सेठ बांकेमल, १९६०, किताब महल, इलाहाबाद।
३०. नागर, शिवचन्द्र —महादेवी—विचार और व्यक्तित्व, प्रथम सं.।
३१. निराला —कुल्ली भाट, सन् १९३९, गंगा पुस्तकमाला कार्यालय, लखनऊ।
—चतुरी चमार, किताब महल, इलाहाबाद।
—बिल्लेसुर बकरिहा, सन् १९५८, किताब महल, इलाहाबाद।
३२. प्रभाकर, कन्हैयालाल —जिन्दगी मुस्कराई, १९५३, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी।
—दीप जले शंख बज, १९५९, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी।
—बाजे पायलिया के घुंघरू, द्वि. सं. १९६३, ज्ञानपीठ, काशी।
—माटी हो गई सोना, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी।
३३. प्रभाकर, विष्णु —कुछ शब्द, कुछ रेखाएँ, १९६५, सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली।

—जाने पहचाने, विश्वविद्यालय प्रकाशन, काशी ।
—हँसते निर्झर दहकती भट्टी, प्रथम सं. ।

३४. बख्शी, पदुमलाल पन्नालाल—कुछ, प्रथम सं. ।

३५. बजाज, जमनालाल —स्मरणांजलि, प्रथम सं., सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली ।

३६. बेढव बनारसी —जब मैं मर गया, बनारसी एक्का, मसूरीवाली, हुक्कपानी ।

३७. बेनीपुरी, रामवृक्ष —गेहूँ-गुलाब, १९५०, प्र. सं., लहेरिया सराय ।
—मांटी की मूरतें, १९४६ अजन्ता प्रेस, पटना ।
—मील के पत्थर, दूसरी बार, १९६१, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली ।
—लाल तारा, १९४०, नये रूप में, १९५३ ।
(गेहूँ और गुलाब, माटी की मूरतें तथा लाल तारा) सभी बेनीपुरी ग्रंथावली, पहला खंड, बेनीपुरी प्रकाशन, पटना–६ ।

३८. भट्ट, उदयशंकर —वह जो मैंने देखा ।

३९. भटनागर, महेन्द्र —विकृत रेखाएँ—धुंधले चित्र, सन् १९६६, कृष्णा ब्रादर्स, अजमेर ।

४०. भारतीय, सत्यजीवन वर्मा —एलबम या शब्द-चित्रावली, सन् १९४९, शारदा प्रेस, प्रयाग ।

४१. मल्लिक, सत्यवती —अमिट रेखाएँ, सन् १९५५, सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली ।

४२. माथुर, जगदीशचन्द्र —दस तस्वीरें, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली ।

४३. मावलंकर, ग. वा. —मानवता के झरने, १९६५, हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, वर्धा ।
—मेरे संस्मरण ।

४४. मिश्र, विद्यानिवास —कदम की फूली डाल, प्रथम सं. ।

४५. मुंशी, लीलावती —रेखाचित्र (अनु. शिवचन्द्र नागर) १९५२ ।

४६. रांगेय राघव —पाँच गधे, सन् १९५९, राजपाल एंड सन्ज़, दिल्ली ।

४७. राजा राधिकारमण सिंह —टूटा तारा, १९४० ।
—सावनी समां, १९३८ ।

	—सूरदास, १९४० ।
४८. राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ	—पं. वासुदेवशरण, सन् १९५९ ।
४९. वर्मा, महादेवी	—अतीत के चलचित्र, सन् १९४१, भारती भण्डार, इलाहाबाद ।
	—स्मृति की रेखाएँ, भारती भंडार, इलाहाबाद ।
	—पथ के साथी, सन् १९५६, भारती भण्डार, इलाहाबाद ।
५०. वासुदेवशरण	—पृथिवी पुत्र, सन् १९४९, दूसरी बार, १९६०, राम प्रसाद एंड सन्स, आगरा ।
५१. विद्यावाचस्पति, इन्द्र	—मैं इनका ऋणी हूँ, सन् १९५९, सस्ता साहित्य मंडल, देहली ।
५२. व्यास, विनोदशंकर	—प्रसाद और उनके समकालीन, १९६०, हिन्दी साहित्य कुटीर, वाराणसी ।
५३. शर्मा, पद्मसिंह	—पद्म पराग ।
५४. शर्मा, रामविलास	—विराम चिह्न, सन् १९५७, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा ।
५५. शर्मा, विनयमोहन	—रेखा और रंग, शिवलाल अग्रवाल एंड कं., आगरा ।
५६. शर्मा, श्रीराम	—जंगल के जीव, सन् १९४९, विशाल भारत बुक डिपो, कलकत्ता ।
	—प्राणों का सौदा, सन् १९३९, विशाल भारत बुक डिपो, कलकत्ता ।
	—बोलती प्रतिमा, सन् १९३७, हिन्दी साहित्य सदन, किरथरा, मक्खनपुर ।
	—वे जीते कैसे हैं, सन् १९५७, नाथूराम प्रेमी, हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर, बम्बई–४ ।
५७. शर्मा, हरिशंकर	—चहचहाते चिड़ियाघर, पिंजरा पोल ।
५८. शास्त्री, चतुरसेन	—अन्तस्तल
५९. शिवचन्द्रप्रताप	—बोलती तस्वीरें, प्रथम सं. ।
६०. शिवपूजन सहाय	—वे दिन वे लोग, सन् १९६५, राजकमल प्रकाशन ।

६१. शिवानी —गुरुदेव और उनका आश्रम, प्रथम सं.।
६२. शेवड़े, अनन्त गोपाल —तीसरी भूख, प्रथम सं.।
६३. संसारचन्द —सोने के दाँत, प्रथम सं.।
६४. सांकृत्यायन, राहुल —सरदार पृथ्वीसिंह, तृतीय संस्करण, सं. २०१२, ज्ञानमण्डल काशी।
६५. सत्यार्थी, देवेन्द्र —कला के हस्ताक्षर, रेखाएं बोल उठीं, १९४९।
६६. सुमित्रानन्दन पन्त —स्मृतिचित्र, राज कमल प्रकाशन, दिल्ली।
६७. सुरीरवाला, रोशनलाल —लंगड़ी भिन्न, सन् १९६४, भारत प्रकाशन मन्दिर, अलीगढ़।
६८. हठीसिंह, कृष्णा —बोलती तस्वीरें, सन् १९६६, सस्ता साहित्य मण्डल, दिल्ली।
६९. हांडा, राजेन्द्रलाल —दिल्ली में दस वर्ष, १९५१, विद्या प्रकाशन भवन, नयी दिल्ली।

पत्र-पत्रिकाएं

आलोचना—आधुनिक इतिहास विशेषांक
आजकल
कल्पना
कहानी
कादम्बिनी
कौमुदी—डा. वर्मा विशेषांक
चांद
जनवाणी
धर्मयुग
नई धारा
नया जीवन
नया पथ
नया साहित्य
नवनीत
नवभारत टा., रविवारीय
प्रतीक
विशाल भारत—शहीद अंक
प्राची
मधुकर—रेखाचित्रांक १९४६
माधुरी
रसवन्ती
रूपाभ
लहर
संगम
समाज
सरस्वती
सरिता
हंस, पुरानी फाइलें
विशेष रूप से 'रेखाचित्रांक'
मार्च १९३९
हिन्दुस्तान

निबन्धों तथा सहायक ग्रन्थों की सूची

१. आज का भारतीय साहित्य,—साहित्य अकादमी, दिल्ली।

२. उपाध्याय, विश्वम्भर नाथ,—हिन्दी में रेखाचित्र, आलोचना, इतिहास विशेषांक १९६६।

३. गुप्त प्रकाशचन्द्र —आज का हिन्दी साहित्य, सन् १९६६, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।
आधुनिक हिन्दी साहित्य : एक दृष्टि, १९५२ आलोक प्रकाशन, बीकानेर।

४. चुघ, सत्यपाल —रेखाचित्र कला, सम्मेलन पत्रिका का कला अंक।

५. चौहान, रामगोपालसिंह —आधुनिक हिन्दी साहित्य, सन् १९६४, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

६. चौहान, शिवदानसिंह —साहित्यानुशीलन, सन् १९५५, आत्माराम एंड सन्स, दिल्ली।

७. त्रिगुणायत, गोविन्द —शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त, सन् १९५९, भारती साहित्य मंदिर, दिल्ली।

८. नगेन्द्र —विचार और विश्लेषण, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।

९. प्रसाद, शिवनन्दन —साहित्य के रूप और तत्व, सन् १९५४, पुस्तक भंडार, पटना-४।

१०. माथुर, जगदीश चन्द्र —दस तस्वीरें—भूमिका भाग।

११. मिश्र, भगीरथ —काव्य शास्त्र, द्वितीय सं., सन् १९६३।

१२. मिश्र, विश्वनाथ प्रसाद —हिन्दी का सामयिक साहित्य सं., २०२१, वाणी वितान प्रकाशन, वाराणसी।

१३. यशपाल —तुमने क्यों कहा था मैं सुन्दर हूं, भूमिका भाग केवल, मई १९५९, विप्लव कार्यालय, लखनऊ।

१४. रांग्रा, रणवीर —हिन्दी उपन्यास में चरित्र चित्रण का विकास, सन् १९६१, भारती साहित्य मन्दिर, दिल्ली।

१५. वार्ष्णेय, कुसुम —निराला का कथा साहित्य, १९६३, मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद।

१६. शर्मा, मक्खनलाल —रेखाचित्र : पिछला दशक, प्रगति विशेषांक, साहित्य

सन्देश, १९५८।

१७. शर्मा, रामविलास —कविता में चित्र, माधुरी, अक्टूबर सन् १९३७।

१८. शर्मा, विनयमोहन —'रेखा और रंग' की भूमिका, सन् १९६४।

१९. शुक्ल, रामचन्द्र —कला और आधुनिक प्रवृत्तियां, हिन्दी समिति, ल.।

२०. शुक्ल, विश्वनाथ —रेखाचित्र और संस्मरण, साहित्य सन्देश का साहित्य शास्त्र विशेषांक।

२१. शुक्ल, श्रीवल्लभ —हिन्दी के वैयक्तिक निबंध, सन् १९६३, साहित्य भवन प्रा. लि., इलाहाबाद।

२२. सिंह, कृपाशंकर —हिन्दी रेखाचित्र, सन् १९६४, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

23. Gardiner, A. G. —Certain People of Importance, J. M. Dent & Sons, London.
—Pebbles on the Shore.
—Pillars of Society.
—Prophets, Priests and Kings.

24. Karl Beckson & Arthur Gauz —A Reader's Guide to Literary Terms, 1961.

25. Murphy, Gwendolen —A Cabinet of Characters, 1925, O.U.P. London.

26. Thrall, W. F. —A Handbook to Literature, 1961, Odysscey Press, New York.

27. Washington Irving —The Sketch Book.

28. Yellow, H. L. —A Handbook of Literary Terms, 1959 Augus & Robertson, London.

हिन्दी समिति के [illegible]
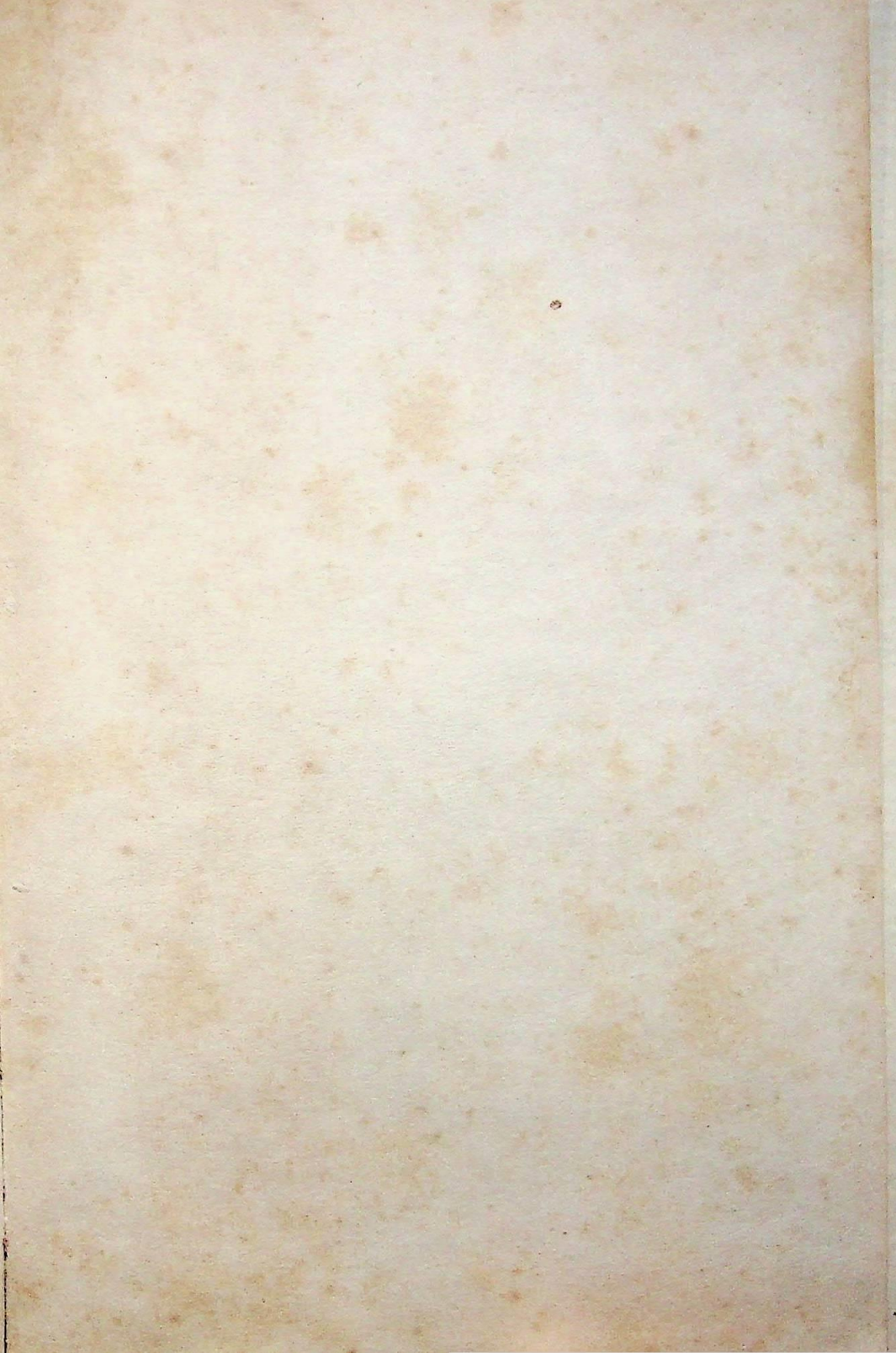
पुस्तक	मूल्य
धर्मशास्त्र का इतिहास भाग १, २, ३	५४·००
डेवलपमेन्ट आफ बुद्धिज़्म इन उत्तर प्रदेश (अंग्रेजी)	८·००
उत्तर प्रदेश में बौद्ध धर्म का विकास	६·००
बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास	१२·००
हरिवंश पुराण का सांस्कृतिक विवेचन	४·५०
प्रमुख स्मृतियों का अध्ययन	६·५०
भारतीय नीति शास्त्र	२०·००
हिन्दी उपन्यास कला	६·५०
भाषा विज्ञान ?र भाषण (दो भाग)	२०·५०
भाषा	७·५०
संगीत शास्त्र	८·५०
भारत का संगीत सिद्धान्त	६·५०
कला और आधुनिक प्रवृत्तियां	४·००
संस्कृत नाटककार	४·५०
रंगमंच	११·५०
भारतीय और पाश्चात्य रंगमंच	२२·५०
इन्डियन कल्चर ऐट ए ग्लांस	३०·००
हलायुध कोश	२५·००
उर्दू-हिन्दी शब्द-कोश	१६·००
विश्व मानवता की ओर	७·००